

दैवत-संहिता

तृतीयो भागः

लेखक

पं० श्रीपाद दामोदर सातवळेकर,

अध्यक्ष, स्वाध्याय-मण्डल, औन्ध, [जि० सातारा]

संवत् २००५, सन १९४८

मुद्रक तथा प्रकाशक— वसंत श्रीपाद सातवळेकर, B. A.
भारत-मुद्रणालय, स्वाध्याय-मण्डल, औंध (जि. सातारा)

दैवत-संहिता- तृतीय भाग

'दैवत-संहिता' के प्रथम भागमें 'अग्नि-इन्द्र-सोम-मरुत्' इन चार देवताओंके ७५७१ मंत्र छपे, और द्वितीय भागमें ' अश्विनौ आयुः-रुद्र-उषा- अदिति-आदित्याः ' इन छः देवताओंके ६९१५ मंत्र छप चुके हैं। इस तरह इन दो विभागोंमें १४४८६ मंत्र छपे हैं जो ग्राहकोंके पास पहुंच चुके हैं।

अब यह दैवत-संहिताका तीसरा भाग ग्राहकोंके सन्मुख उपस्थित किया जाता है, जिसमें छोटे मोटे सवासौ देवताएँ हैं और इनके प्रायः ३७७१ मंत्र यहां देवतानुसार संगृहित हुए हैं जो प्रत्येक देवताशीर्षकके नीचे पाठक देख सकते हैं। इसका ब्यौरा यह है-

तृतीय भागमें वैदिक देवता

इस दैवत-संहिताके तृतीय विभागमें निम्न लिखित देवताएँ और उनके मंत्र आचुके हैं—

१० वायुः ११९
वायुस्त्वष्टा १
वाय्वन्तरिक्षे ३
२ वरुणः १५२
इन्द्राणी-वरुणानी-अग्नाय्यः १
वरुणमित्रार्यमणः... ६
३ वास्तोष्पतिः ८७
४ वेनः... ९
५ विश्वकर्मा ३४
६ सदसस्पतिः ५
७ अहिः, अहिर्बुध्न्यः ४
८ बृहस्पतिः ९६
९ ब्रह्मणस्पतिः ६१
१० पुरुषः १७२
११ आत्मा १९४
१२ ब्रह्म ८३
१३ अध्यात्मम् ४२८
१४ कः (प्रजापतिः) ४६
प्रजापतिः, हरिश्चन्द्रः, चर्म, सोमो वा १
प्रजापत्यादयः १
वनस्पतिः, प्रजापतिः ७
१५ जीवः ७
१६ वाक् २५
१७ श्रद्धा ५
१८ ज्ञानम् १२
१९ संज्ञानम् १८

२० मनः १२
२१ मन आवर्तनम् १२
२२ असुनीतिः ६
२३ हस्तः २
२४ मन्युः २०
२५ भाववृत्तम् २३
२६ आशीः १३
२७ होत्राशिषः ६
२८ पथ्या स्वस्तिः ८
२९ अभिशापः ४
३० दम्पती ८
३१ दम्पत्याशिषः ९
३२ वधूवासःसंस्पर्शनिन्दा २
३३ कामः ५३
३४ रतिः ६
३५ रेतः ४
३६ निर्ऋतिः १०
३७ पृथिवी १२
पृथिवीद्यवन्तरिक्षसोमपूष-पथ्यास्वस्तयः १
पृथिवीसवितारौ ४
माता भूमिः ६३
३८ द्यावापृथिवी ६७
द्युभूम्यश्विनः १
३९ ऋभवः ९८
४० क्षेत्रपतिः ४
४१ पणयः ६

४२ मायाभेदः ३
४३ ब्रह्मजाया १८
४४ गौः ३३३
४५ अश्वः ८२
४६ हरिः १४
४७ दधिक्रा २५
४८ सरमा ५
४९ शुनः, शुनासीरौ ४
५० श्वानौ ३
५१ तार्क्ष्यः ३
५२ श्येनः ११
५३ शकुन्तः ६
५४ अक्षाः ६
५५ अक्षकितवनिन्दा ९
५६ कृषिः १
५७ मश्चनः १
५८ अरण्यानी ६
५९ सीता ७
६० रथः ५
६१ रथाङ्गानि ४
६२ दुन्दुभिः २६
६३ द्रुघणः, इन्द्रो वा १२
६४ संग्रामाशिषः २२
६५ अत्रिः ४
६६ विश्वामित्रः ३
६७ वामदेवः २
६८ वसिष्ठपुत्राः, इन्द्रो वा ९

*

६९ वसिष्ठः ५
७० वसिष्ठाशीः १
७१ रोमशा १
७२ अङ्गिरःपित्रथर्वभृगुसोमाः १
७३ उपाध्यायः १
७४ भावयव्यः ६
७५ प्रजापतिः हरिश्चन्द्रः चर्म सोमो वा १ (प्रकरण १४ देखो)
७६ स्वनयः–अस्य दानस्तुतिः ७
७७ सोमकः साहदेव्यः २
७८ पुरुमीळ्हो वैददश्विः, तरन्तो वा २
७९ तरन्तमहिषी शशीयसी ४
८० रथवीतिदार्भ्यः ३
८१ सुदासः पैजवनः ४
८२ राजा २१
८३ बृबुस्तक्षा २
८४ सार्ञ्जयः प्रस्तोकः ४
८५ आसङ्गः ५
८६ विभिन्दुः २
८७ पाकस्थामा कौरयाणः ४
८८ कुरुङ्गः ३
८९ कशुश्चैद्यः ३
९० तिरिन्दिरः पार्शव्यः ३
९१ त्रसदस्युः पौरुकुत्स्यः २
९२ चित्रः २
९३ वरुः सौषाम्णिः ३
९४ पृथुश्रवाः कानीतः ४
९५ श्रुतर्वा आर्क्षः ३
९६ ऐन्द्रो वसुक्रः ५
९७ देव्यः, इंद्राणीवरुणान्यग्नाय्यः २
९८ कुरुश्रवणत्रासदस्यवः २
९९ उपमश्रवा मैत्रातिथिः ४
१०० असमातिः ५
१०१ सावर्णिः (दानं) ४
१०२ ऋक्षाश्वमेधौ ६
१०३ उर्वशी ९
१०४ पुरूरवा ९
१०५ दक्षिणा दक्षिणादातारो वा ११
१०६ शत्रुसेनामोहनम् २
१०७ शत्रुनाशनम् ७०
१०८ श्रेयः–प्राप्तिः ५
१०९ बल–प्राप्तिः ३
११० वर्चः–प्राप्तिः ३
१११ ऊर्जः–प्राप्तिः ३
११२ अनुमतिः ६
११३ केवलः पतिः ५
११४ मधुविद्या २४
११५ अध्यापकविघ्नशमनम् २
११६ अतिथि–सत्कारः ७३
११७ विद्युत् ४
११८ कामिनीमनोऽभिमुखीकरणम् २
११९ रयिसंवर्धनम् २
१२० शितिपाद् अविः ६
१२१ विश्वजित् ४
१२२ तारके १
१२३ मेखलाबंधनम् ५
१२४ राष्ट्रसभा ३
१२५ विवाह–प्रकरणम् १८१
१२६ परिशिष्टानि ४६१

उपदेवताओंके साथ ये सब देवताएं प्रायः १५० है।

इन १२६ देवताओंके कुल मंत्र ३७७१ यहां संगृहीत हुए हैं।

इन देवताओंके मन्त्रोंमें वायु वरुण आदि देवता अन्तरिक्षस्थ हैं। वास्तोष्पति, विश्वकर्मा, ब्रह्मणस्पति, बृहस्पति, पुरुष, आत्मा, ब्रह्म आदि देवताएँ विश्वके निर्माणकर्ता परमेश्वरका बोध विशेष रीतिसे कराते हैं, गौण भावसे अन्यान्य उपदेश भी बताते हैं, यह तो इनका अर्थ देखनेसे सब कोई जान सकते हैं। इन देवताओंमें 'विश्व–कर्मा' पद विश्वके कर्ताका ज्ञान देता है, 'वास्तोष्पति' का स्पष्ट आशय वस्तुका स्वामी अर्थात् विश्वरूपी वस्तुका अधिपति है। 'बृहस्पति और ब्रह्मणस्पति' ये पद ज्ञानपति परमात्माके बोधक हैं। 'पुरुष–आत्मा–ब्रह्म' ये पद तो स्पष्ट परमात्माके वाचक हैंही। इस तरह ये देवताएँ सृष्टिकर्ता परमात्माका वर्णन कर रहीं है, अतः इनको यहां इकट्ठा करके क्रमपूर्वक रखा है।

इसके पश्चात् 'अध्यात्म' देवता है। वस्तुतः अध्यात्म पदका अर्थ आत्माका सम्बन्ध बताता है, और इन सूक्तोंका देवता अथर्व-सर्वानुक्रमणीमें 'अध्यात्म' ही दिया है, तथापि यहांके अध्यात्म देवताके सबके सब सूक्त आत्मापरक नहीं प्रतीत होते। पर इनके अर्थका विचार करनेके समय इसका विशेष स्पष्टीकरण हम करेंगे। निःसंदेह यह सत्य है कि इन सूक्तोंके बहुत मन्त्र आत्माकी शक्तिकाही वर्णन कर रहे हैं। इसीलिये हमने इनको यहां इकट्ठा किया है।

इसके पश्चात् 'कः, जीवः' ये दो देवताएँ आत्मावाचक स्पष्टही हैं। 'कः' का अर्थ प्रजापति शतपथ ब्राह्मणने दियाही है। इसलिये येभी परमात्मपरकही मन्त्र हैं। इस तरह ये सब सूक्त परमात्माका वर्णन कर रहे हैं।

इसके पश्चात् 'वाक्, श्रद्धा, ज्ञानं, संज्ञानं, मनः, मन आवर्तनं, असु–नीतिः, हस्तः, मन्युः (क्रोध अथवा उत्साह)' ये देवताएँ मनुष्यकी आन्तरिक शक्तियाँही हैं। मानवमें कौनसी शक्तियाँ हैं और उनका विकास किस तरह हो सकता है, यह विचार इन सूक्तोंमें किया है। इसलिये इनका संग्रह एक स्थानपर यहां किया है। 'आशीः (आशीर्वाद), स्वस्ति (कल्याण), शाप' इनका सम्बन्ध मानवकी उन्नति अवनतिके साथ है इसलिये इनको साथ साथ रख दिया है।

इसके नंतर 'दम्पती (पति-पत्नी), काम, रति, ईशः इन देवताओंका सम्बन्ध गृहस्थीके निज विषयके साथ है, इस-

लिये इनको यहाँ एक स्थानपर रखा है। पाठक इन देवताके नामोंसेही जान सकते हैं कि इनमें कौनसा विषय है और गृहस्थी जीवनके साथ इनका क्या संबंध है।

इसके पश्चात् '**पृथ्वी, मातृभूमि,**' ये देवताएँ हैं। मातृभूमिकी भक्तिका उत्तम वर्णन यहाँ दिया है जो प्रत्येक पाठकके लिये हृदयंगम हो सकता है।

इसके नंतर '**ऋभवः** (शिल्पी), **क्षेत्रपति** (खेतका स्वामी), **पणयः** (उद्यमी, व्यापारी, अथवा चोर आदि), **मायाभेदः** (शिल्पविशेष)' ये देवताएं यहांके पृथ्वीके ऊपरके कार्य कर्ताओंके वाचक हैं। पृथ्वीके ऊपर रहनेवाले जनोंमेंही इनका होना संभव है, इसलिये इनको यहां एक स्थानपर रखा है।

'**ब्रह्मजाया**' (ब्राह्मण-स्त्री), **गौः**, **अश्वः**, **हरिः** (लाल घोडा), **दधिक्रा** (श्वेत घोडा), **सरमा** (कुत्ती), **शुनः**, **शुनासीरौ श्वानौ**, **तार्क्ष्यः** (गरुड), **श्येनः** (श्येन पक्षी), **शकुन्तः**' ये देवताएँ पशुओं और पक्षियोंमेंसे हैं। इनके नामोंसे इनका बोध होता है। इस कारण इन मंत्रोंको यहाँ एक स्थानपर रख दिया है। '**अक्षाः** (जुवेके पांसे), **अक्षकितवनिन्दा** (जुआ और जुआरेकी निन्दा)' ये मंत्र इस दुष्ट व्यसनसे दूर रहनेका उपदेश दे रहे है।

'**कृषिः**, (खेती), **अरण्यानी** (वन), सीता (हलकी रेषा)' इनका संबंध कृषिके साथ और वृक्ष वनस्पति औषधियोंके साथ है इसलिये इनको एक स्थानपर रखा है।

इसके नंतर '**रथ, रथाङ्गानि, दुन्दुभिः, संग्रामाशिषः।** आदिका संबंध युद्धके साथ है। मानवी जीवनमें कभी कभी युद्ध अनिवार्य होता है, इसलिये ये मंत्र एक साथ यहां रखे हैं।

इसके पश्चात् '**अत्रिः, विश्वामित्रः, वामदेवः**' आदि १५ ऋषियोंके वर्णनके मंत्र हैं। और इनके पश्चात् '**स्वनयः, सोमकः**' आदि ३० राजाओंके वर्णनपरक मन्त्र हैं।

इसके नंतर '**शत्रुसेनासंमोहनम्**' यह युद्धविषयक सूक्त है। शत्रुसेनाको मोहित करना, उसको कुछ भी न सूझे ऐसा करना और इसके पश्चात् '**शत्रुसेनाका नाश**' करना है। इसके करनेपरही '**श्रेय, बल और वर्चस् और ऊर्जसूकी प्राप्ति**' हो सकती है, अतः ये सूक्त यहां एकत्र दिये हैं।

इसके पश्चात् '**अनुमति**' सूक्त है, अनुकूल मतिका संपादन संगठनके लिये अत्यंत आवश्यक होता है। '**केवलः पतिः**' यह सूक्त एक पतिकी एकही स्त्री हो, अनेक स्त्रियां न हों, यह भाव दर्शानेवाला है। '**मधुविद्या**' मीठा आचरण करनेके लिये प्रवृत्त करनेवाली है। इसके अनंतर '**अतिथि-सत्कार**' का प्रकरण है जो गृहस्थोंका धर्म बता रहा है। '**रयि-संवर्धनं**' धनके संवर्धनका मार्ग बता रहा है। '**विश्वजित्**' सब विश्व जीतनेका यज्ञ है। '**मेखलाबंधनम्**' सिद्ध और कटिबद्ध होनेकी सूचना दे रहा है। '**राष्ट्र-सभा**' राष्ट्रके शासन करनेवाली सभा है। सभाके द्वारा राज्यका शासन चलाया जावे, किसी एकको इच्छासेही न चले, इस विषयका यह सूक्त अत्यंत विचार करनेयोग्य है।

इसके पश्चात् अनेक परिशिष्ट-सूक्त हैं जो विविध विषयोंके उपयुक्त निर्देश देते हैं।

पाठक इस संगतिकरणका विचार करेंगे तो उनके मनमें यह भाव स्पष्ट होगा कि मन्त्र-संग्रहका जो क्रम यहां रखा है वह परस्पर सुसंबंधित है। प्रायः परस्पर संबंधित विषयही यहां इकट्ठे किये गये हैं। तथापि जिस समय इन मंत्रोंके अर्थ किये जायँगे, उस समय अर्थकी अनुकूलतासे मंत्रोंको इधर उधर करना पडेगा। इस समय देवताबोधसे जो परस्पर संबंध दीखता है, वही सामने रखकर हमने ये मंत्र इकट्ठे किये और ये प्रकरण बनाये हैं। जब अर्थ किया जायगा उस समय अर्थानुसार इस क्रममें न्यूनाधिक परिवर्तन अवश्यमेव करना होगा और उसी समय जो प्रकरण बनेंगे, वे ठीक होंगे।

यहां केवल मंत्रही रखे हैं, उनके पुनरुक्त मंत्र, पाठभेद, उपमा, विशेषण आदिकी तालिकाएं यहां नहीं हैं जैसी कि, दैवतसंहिताके अन्य प्रथमके दो विभागोंमें दिये हैं। इसका कारण यह है कि ये छोटे छोटे मंत्र-संग्रह हैं। जो पाठक इनको पढेंगे वे इनको उसी समय जान सकते हैं। तथा अर्थ बननेके बाद इसमें परिवर्तन करना पडेगा। इसलिये ये तालिकाएं यहां नहीं दी है।

मंत्रोंका अर्थ होनेके पूर्व मंत्रसूचीकी भी आवश्यकता नहीं है, देवतासूचीसेही कार्य चल सकता है, इसलिये मंत्रसूची भी नहीं दी है, जो अर्थ करनेके पश्चात् दी जायगी।

हमें पूर्ण आशा है कि पाठक इस तृतीय विभागके देवताओंके मंत्र-संग्रहके अध्ययनसे वेदविज्ञानकी जानकारी प्राप्त करेंगे और वैदिक धर्मको जानकर कृतकृत्य होंगे।

औन्ध, (जि. सातारा)
१५ चैत्र संवत् २००५

निवेदन-कर्ता,
श्रीपाद दामोदर सातवळेकर,
अध्यक्ष, स्वाध्याय-मंडल.

दैवत-संहिता-तृतीय भाग

देवता-सूची।



दैवत-संहिता ।

[ऋग्यजुःसामाथर्वणां संहितानां सर्वान् मन्त्रान् देवतानुसारेण संगृह्य निर्मिता ।]

११ वायुः ।

॥ १ ॥ (ऋ० १।२।१-३)

(१-३) मधुच्छन्दा वैश्वामित्रः । गायत्री ।

वायवा याहि दर्शते॒मे सोमा॒ अरं॑कृताः । तेषां॑ पाहि श्रु॒धी हव॑म् १

वाय॑ उ॒क्थेभि॑र्जरन्ते॒ त्वामच्छा॑ जरि॒तारः॑ । सु॒तसो॑मा अह॒र्विदः॑ २

वायो॒ तव॑ प्रपृ॒ञ्चती॒ धेना॑ जिगाति दा॒शुषे॑ । उ॒रू॒ची सोम॑पीतये ३ ३

॥ २ ॥ (ऋ० १।२३।१)

(४) मेधातिथिः काण्वः । गायत्री ।

ती॒व्राः सोमा॑स॒ आ ग॑ह्या॒शीर्व॑न्तः सु॒ता इ॒मे । वायो॒ तान् प्रस्थि॑तान् पिब १

॥ ३ ॥ (ऋ० १।१३४।१-६)

(५-१४) परुच्छेपो दैवोदासिः । अत्यष्टिः, ६ अष्टिः ।

आ त्वा॒ जुवो॑ रारहा॒णा अ॒भि प्रयो॒ वायो॒ वह॑न्त्वि॒ह पू॒र्वपी॑तये॒ सोम॑स्य पू॒र्वपी॑तये ।

ऊ॒र्ध्वा ते॒ अनु॑ सू॒नृता॒ मन॑स्तिष्ठतु जान॒ती ।

नि॒युत्व॑ता॒ रथे॒ना या॑हि दा॒वने॒ वायो॑ म॒खस्य॑ दा॒वने॑ १ ५

मन्द॑न्तु त्वा म॒न्दिनो॑ वाय॒विन्द॑वो॒ऽस्मत् क्रा॒णास॑ः सु॒कृ॑ता अ॒भिद्य॑वो॒ गोभि॑ः क्रा॒णा अ॒भिद्य॑वः ।

यद्ध॑ क्रा॒णा इ॒रध्यै॒ दक्षं॒ सच॑न्त ऊ॒तयः॑ ।

स॒ध्री॒ची॒ना नि॒युतो॑ दा॒वने॒ धिय॒ उप॑ ब्रुवत ईं॒ धियः॑ २

वा॒युर्यु॑ङ्क्ते॒ रोहि॑ता वा॒युर॑रु॒णा वा॒यू रथे॑ अजि॒रा धु॒रि वोळ्ह॑वे॒ वहि॑ष्ठा धु॒रि वोळ्ह॑वे ।

प्र बो॑धया॒ पुर॑न्धिं जा॒र आ स॑स॒तीमि॑व ।

प्र च॑क्षय॒ रोद॑सी वासयो॒षसः॒ श्रव॑से वासयो॒षसः॑ ३ ७

तुभ्यमुषासः शुचयः परावति भद्रा वस्त्रा तन्वते दंसु रश्मिषु चित्रा नव्येषु रश्मिषु ।
तुभ्यं धेनुः सबर्दुघा विश्वा वसूनि दोहते ।
अजनयो मरुतो वक्षणाभ्यो दिव आ वक्षणाभ्यः ४
तुभ्यं शुक्रासः शुचयस्तुरण्यवो मदेषूग्रा इषणन्त भुर्वण्यपामिषन्त भुर्वणि ।
त्वां त्सारी दसमानो भगमीट्टे तक्ववीये ।
त्वं विश्वस्माद्भुवनात् पासि धर्मणा ऽसुर्यात् पासि धर्मणा ५
त्वं नो वायवेषामपूर्व्यः सोमानां प्रथमः पीतिमर्हसि सुतानां पीतिमर्हसि ।
उतो विहुत्मतीनां विशां ववर्जुषीणाम् ।
विश्वा इत् ते धेनवो दुह्र आशिरं घृतं दुह्रत आशिरम् ६ १०

॥ ४ ॥ (ऋ० १।१३५।१-३,९) अत्यष्टिः ।

स्तीर्णं बर्हिरुप नो याहि वीतये सहस्रेण नियुता नियुत्वते शतिनीभिर्नियुत्वते ।
तुभ्यं हि पूर्वपीतये देवा देवाय येमिरे ।
प्र ते सुतासो मधुमन्तो अस्थिरन् मदाय क्रत्वे अस्थिरन् १
तुभ्यायं सोमः परिपूतो अद्रिभिः स्पार्हा वसानः परि कोशमर्षति शुक्रा वसानो अर्षति ।
तवायं भाग आयुषु सोमो देवेषु हूयते । वह वायो नियुतो याह्यस्मयुर्जुषाणो याह्यस्मयुः २
आ नो नियुद्भिः शतिनीभिरध्वरं सहस्रिणीभिरुप याहि वीतये वायो हव्यानि वीतये ।
तवायं भाग ऋत्वियः सरश्मिः सूर्ये सचा । अध्वर्युभिर्भरमाणा अयंसत वायो शुक्रा अयंसत ३
धन्वश्चिद्ये अनाशवो जीराश्चिदगिरौकसः । सूर्यस्येव रश्मयो दुर्नियन्तवो हस्तयोर्दुर्नियन्तवः ९ १४

॥ ५ ॥ (ऋ० २।४१।१-२) ×

(१५-१६) गृत्समदः (आंगिरसः शौनहोत्रः पश्चाद्) भार्गवः शौनकः । गायत्री ।

वायो ये ते सहस्रिणो रथासस्तेभिरा गहि । नियुत्वान्त्सोमपीतये १
नियुत्वान् वायवा गह्ययं शुक्रो अयामि ते । गन्तासि सुन्वतो गृहम् २

॥ ६ ॥ (ऋ० ४।४६।१)

(१७-२३) वामदेवो गौतमः । गायत्री ।

अग्रं पिबा मधूनां सुतं वायो दिविष्टिषु । त्वं हि पूर्वपा असि १

॥ ७ ॥ (ऋ० ४।४७।१) अनुष्टुप् ।

वायो शुक्रो अयामि ते मध्वो अग्रं दिविष्टिषु । आ याहि सोमपीतये स्पार्हो देव नियुत्वता १ * १८

× ऋ० २, ४१, १-२; = वा० य० २७।३२, २९; सा० ६००। * ऋ० ४, ४७, १ = वा० य० २७, ३०; सा० १६२८।

॥ ८ ॥ (ऋ० ४।४८।१-५) अनुष्टुप्।

विहि होत्रा अवीता विपो न रायो अर्यः । वायवा चन्द्रेण रथेन याहि सुतस्य पीतये १
निर्युवाणो अशस्ती नियुत्वाँ इन्द्रसारथिः । वायवा चन्द्रेण रथेन याहि सुतस्य पीतये २ २०
अनु कृष्णे वसुधिती येमाते विश्वपेशसा । वायवा चन्द्रेण रथेन याहि सुतस्य पीतये ३
वहन्तु त्वा मनोयुजो युक्तासो नवतिर्नव । वायवा चन्द्रेण रथेन याहि सुतस्य पीतये ४
वायो शतं हरीणां युवस्व पोष्याणाम् । उत वा ते सहस्रिणो रथ आ यातु पाजसा ५

॥ ९ ॥ (ऋ० ५।५१।५)
(२४) स्वस्त्यात्रेयः । उष्णिक्।

वायवा याहि वीतये जुषाणो हव्यदातये । पिबा सुतस्यान्धसो अभि प्रयः ६

॥ १० ॥ (ऋ० ७।९०।१-४) +
(२५-३३) मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । त्रिष्टुप्।

प्र वीरया शुचयो दद्रिरे वा मध्वर्युभिर्मधुमन्तः सुतासः ।
वह वायो नियुतो याह्यच्छा पिबा सुतस्यान्धसो मदाय १ २५

ईशानाय प्रहुतिं यस्त आनट् शुचिं सोमं शुचिपास्तुभ्यं वायो ।
कृणोषि तं मर्त्येषु प्रशस्तं जातोजातो जायते वाज्यस्य २

राये नु यं जज्ञतू रोदसीमे राये देवी धिषणा धाति देवम् ।
अध वायुं नियुतः सश्चत स्वा उत श्वेतं वसुधितिं निरेके ३

उच्छन्नुषसः सुदिना अरिप्रा उरु ज्योतिर्विविदुर्दीध्यानाः ।
गव्यं चिदूर्वमुशिजो वि वव्रु स्तेषामनु प्रदिवः सस्रुरापः ४

॥ ११ ॥ (ऋ० ७।९१।१,३) ※

कुविदङ्ग नमसा ये वृधासः पुरा देवा अनवद्यास आसन् ।
ते वायवे मनवे बाधितायाऽवासयन्नुषसं सूर्येण १

पीवोअन्नाँ रयिवृधः सुमेधाः श्वेतः सिषक्ति नियुतामभिश्रीः ।
ते वायवे समनसो वि तस्थु र्विश्वेन्नरः स्वपत्यानि चक्रुः २ ३०

॥ १२ ॥ (ऋ० ७।९२।१,३,५) ×

आ वायो भूष शुचिपा उप नः सहस्रं ते नियुतो विश्ववार ।
उपो ते अन्धो मद्यमयामि यस्य देव दधिषे पूर्वपेयम् १ ३१

+ ऋ० ७, ९०, १, ३ = वा० य० ३३, ७०; २७, २४। ※ ऋ० ७, ९१, ३ = वा० य० २७, २३।
× ऋ० ७, ९२, १, ३, ५ = वा० य० ७, ७; २७, २७-२८।

प्र याभिर्यासि दाश्वांसमच्छा नियुद्भिर्वायविष्टये दुरोणे ।
नि नो रयिं सुभोजसं युवस्व नि वीरं गव्यमश्व्यं च राधः ३

आ नो नियुद्भिः शतिनीभिरध्वरं सहस्रिणीभिरुप याहि यज्ञम् ।
वायो अस्मिन्त्सवने मादयस्व यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ५

॥ १३ ॥ (ऋ० ८।२६।२०-२५)

(३४-३९) विश्वमना वैयश्वः, व्यश्वो वाऽऽङ्गिरसः । उष्णिक्, २० अनुष्टुप् । २१, २५ गायत्री ।

युक्ष्वा हि त्वं रथासहा युवस्व पोष्या वसो । आन्नो वायो मधु पिबा॒स्माकं सवना गहि २०
तव वायवृतस्पते त्वष्टुर्जामातरद्भुत । अवांस्या वृणीमहे +२१ ३५
त्वष्टुर्जामातरं वय॒मीशानं राय ईमहे । सुतावन्तो वायुं द्युम्ना जनासः २२
वायो याहि शिवा दिवो वहस्वा सु स्वश्व्यम् । वहस्व महः पृथुपक्षसा रथे २३
त्वां हि सुप्सरस्तमं नृषदनेषु हूमहे । ग्रावाणं नाश्वपृष्ठं मंहना २४
स त्वं नो देव मनसा वायो मन्दानो अग्रियः । कृधि वाजाँ अपो धियः २५

॥ १४ ॥ (ऋ० ८।४६।२५-२८, ३२)

(४०-४४) वशोऽश्व्यः । २५-२८ प्रगाथः = (बृहती + सतो बृहती), ३२ पंक्तिः ।

आ नो वायो महे तने याहि मखाय पाजसे ।
वयं हि ते चकृमा भूरि दावने सद्यश्चिन्महि दावने २५ ४०

यो अश्वेभिर्वहते वस्त उस्रा॒स्त्रिः सप्त सप्ततीनाम् ।
एभिः सोमेभिः सोमसुद्भिः सोमपा दानाय शुक्रपूतपाः २६

यो म इमं चिदु त्मना॒मन्दच्चित्रं दावने ।
अरट्वे अक्षे नहुषे सुकृत्वनि सुकृत्तराय सुक्रतुः २७

उचथ्ये३ वपुषि यः स्वरा॒लुत वायो घृतस्नाः ।
अश्वेषितं रजेषितं शुनेषितं प्राज्म तदिदं नु तत् २८

शतं दासे बल्बूथे विप्रस्तरुक्ष आ ददे ।
ते ते वायविमे जना मदन्तीन्द्रगोपा मदन्ति देवगोपाः ३२

॥ १५ ॥ (ऋ० ८।१०१।९-१०)

(४५-४६) जमदग्निर्भार्गवः । प्रगाथः - (विषमा बृहती+समा सतो बृहती)।

आ नो यज्ञं दिविस्पृशं वायो याहि सुमन्मभिः ।
अन्तः पवित्र उपरि श्रीणानो३ ऽयं शुक्रो अयामि ते *९ ४५

+ ऋ० ८, २६, २१ = वा० य० २७, ३४ । * ऋ० ८, १०१, ९ = वा० य० ३३, ८५ ।

वेत्यध्वर्युः पथिभी रजिष्ठैः प्राति हव्यानि वीतये।
अधा नियुत्व उभयस्य नः पिब शुचिं सोमं गवाशिरम् १०

॥ १६ ॥ (ऋ० १०।१६८।१-४)
(४७-५०) अनिलो वातायनः। त्रिष्टुप्।

वातस्य नु महिमानं रथस्य रुजन्नेति स्तनयन्नस्य घोषः।
दिविस्पृग्यात्यरुणानि कृण्वन्नुतो एति पृथिव्या रेणुमस्यन् १
सं प्रेरते अनु वातस्य विष्ठा ऐनं गच्छन्ति समनं न योषाः।
ताभिः सयुक् सरथं देव ईयते ऽस्य विश्वस्य भुवनस्य राजा २
अन्तरिक्षे पथिभिरीयमानो न नि विशते कतमच्चनाहः।
अपां सखा प्रथमजा ऋतावा क्व स्विज्जातः कुत आ बभूव ३
आत्मा देवानां भुवनस्य गर्भो यथावशं चरति देव एषः।
घोषा इदस्य शृण्विरे न रूपं तस्मै वाताय हविषा विधेम ४ ५०

॥ १७ ॥ (ऋ० १०।१८६।१-३) ×
(५१-५३) उलो वातायनः। गायत्री।

वात आ वातु भेषजं शंभु मयोभु नो हृदे । प्र ण आयूंषि तारिषत् १
उत वात पिताऽसि न उत भ्रातोत नः सखा । स नो जीवातवे कृधि २
यददो वात ते गृहे३ ऽमृतस्य निधिर्हितः । ततो नो देहि जीवसे ३

॥ १८ ॥ [५४-६६] (वा० य० ५।५ [पूर्वार्धः])

आपतये त्वा परिपतये गृह्णामि तनूनप्त्रे शाक्वराय शक्वन ओजिष्ठाय ५

॥ १९ ॥ (वा० य० ६।१६)

वायो वे स्तोकानाम् १६ ५५

॥ २० ॥ (वा० य० ११।३९)

सं ते वायुर्मातरिश्वा दधातूत्तानाया हृदयं यद्विकस्तम्।
यो देवानां चरसि प्राणथेन कस्मै देव वषडस्तु तुभ्यम् ३९

॥ २१ ॥ (वा० य० १४।८, १२, १४)

प्राणं मे पाह्यपानं मे पाहि व्यानं मे पाहि ८ ५७

× ऋ० १०, १८६, १ [उत्तरार्धः]- ३ = ऋ० १, २५, १२; ४, २९, ६; वा० य० २३, ३१; अथर्व० २, ४, ६; ४, १०,६; १२, २, १३; १४, २, ६७; १९, ३४, ४; २०, १३७, ३; सा० १८४०-४२।

विश्वकर्मा त्वा सादयत्वन्तरिक्षस्य पृष्ठे व्यचस्वतीं प्रथस्वतीमन्तरिक्षं यच्छान्तरिक्षं
दृꣳहान्तरिक्षं मा हिꣳसीः । विश्वस्मै प्राणायापानाय व्यानायोदानाय प्रतिष्ठायै चरित्राय।
वायुष्ट्वाभि पातु मह्या स्वस्त्या छर्दिषा शन्तमेन तया देवतयाऽङ्गिरस्वद् ध्रुवा सीद १२
विश्वकर्मा त्वा सादयत्वन्तरिक्षस्य पृष्ठे ज्योतिष्मतीम् ।
विश्वस्मै प्राणायापानाय व्यानाय विश्वं ज्योतिर्यच्छ ।
वायुष्टेऽधिपतिस्तया देवतयाऽङ्गिरस्वद् ध्रुवा सीद १४

॥ २२ ॥ (वा० य० १५।६४)

परमेष्ठी त्वा सादयतु दिवस्पृष्ठे व्यचस्वतीं प्रथस्वतीं दिवं यच्छ दिवं दृꣳह दिवं मा हिꣳसीः ।
विश्वस्मै प्राणायापानाय व्यानायोदानाय प्रतिष्ठायै चरित्राय ।
सूर्यस्त्वाऽभि पातु मह्या स्वस्त्या छर्दिषा शन्तमेन तया देवतयाऽङ्गिरस्वद् ध्रुवे सीदतम् ६४ ६०

॥ २३ ॥ (वा० य० १८।४५)

समुद्रोऽसि नभस्वानार्द्रदानुः शम्भूर्मयोभूरभि मा वाहि स्वाहा मारुतोऽसि मरुतां गणः
शम्भूर्मयोभूरभि मा वाहि स्वाहाऽवस्यूरसि दुवस्वाञ्छम्भूर्मयोभूरभि मा वाहि स्वाहा ४५

॥ २४ ॥ (वा० य० १९।४२ सोमसहचारी वायुः ।)

पवमानः सो अद्य नः पवित्रेण विचर्षणिः । यः पोता स पुनातु मा ४२

॥ २५ ॥ (वा० य० २०।१५)

यदि दिवा यदि नक्तमेनाꣳसि चकृमा वयम् । वायुर्मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्वꣳहसः १५

॥ २६ ॥ (वा० य० २७।३१, ३३)

वायुरग्रेगा यज्ञप्रीः साकं गन्मनसा यज्ञम् । शिवो नियुद्भिः शिवाभिः ३१
एकया च दशभिश्च स्वभूते द्वाभ्यामिष्टये विꣳशती च ।
तिसृभिश्च वहसे त्रिꣳशता च नियुद्भिर्वायविह ता वि मुञ्च +३३ ६५

॥ २७ ॥ (वा० य० ३३।५५)

प्र वायुमच्छा बृहती मनीषा बृहद्रयिं विश्ववारꣳ रथप्राम् ।
द्युतद्यामा नियुतः पत्यमानः कविः कविमियक्षसि प्रयज्यो ×५५

॥ २८ ॥ (अथर्व० २।१५।१-६)

(६७-८९) ब्रह्मा । प्राणः, अपानः, आयुः । त्रिपाद्गायत्री ।

यथा द्यौश्च पृथिवी च न बिभीतो न रिष्यतः । एवा मे प्राण मा बिभेः १ ६७

+...मिश्चा सुहुते...विंशत्या...।... वियुभिर्वाय इह...॥ अथर्व० ७।४।१। × ऋ० ६, ४९, ४ ।

यथाऽहंश्च रात्रीं च न बिभीतो न रिष्यतः । एवा मे प्राण मा बिभेः २
यथा सूर्यश्च चन्द्रश्च न बिभीतो न रिष्यतः । एवा मे प्राण मा बिभेः ३
यथा ब्रह्म च क्षत्रं च न बिभीतो न रिष्यतः । एवा मे प्राण मा बिभेः ४ ७०
यथा सत्यं चानृतं च न बिभीतो न रिष्यतः । एवा मे प्राण मा बिभेः ५
यथा भूतं च भव्यं च न बिभीतो न रिष्यतः । एवा मे प्राण मा बिभेः ६

॥ २९ ॥ (अथर्व० २।१६।१-५)

प्राणः। १, ३ एकपादासुरी त्रिष्टुप्, २ एकपादासुरी उष्णिक्, ४-५ द्विपदासुरी गायत्री।

प्राणापानौ मृत्योर्मा पातं स्वाहा १। द्यावापृथिवी उपश्रुत्या मा पातं स्वाहा २
सूर्य चक्षुषा मा पाहि स्वाहा ३। अग्ने वैश्वानर विश्वैर्मा देवैः पाहि स्वाहा ४
विश्वंभर विश्वेन मा भरसा पाहि स्वाहा ५ ७७

॥ ३० ॥ (अथर्व० २।१७।१-७)

प्राणः। १-६ एकपादासुरी त्रिष्टुप्, ७ आसुरी उष्णिक्।

ओजोऽस्योजो मे दाः स्वाहा १। सहोऽसि सहो मे दाः स्वाहा २
बलमसि बलं मे दाः स्वाहा ३। आयुरस्यायुर्मे दाः स्वाहा ४
श्रोत्रमसि श्रोत्रं मे दाः स्वाहा ५। चक्षुरसि चक्षुर्मे दाः स्वाहा ६
परिपाणमसि परिपाणं मे दाः स्वाहा ७

॥ ३१ ॥ (अथर्व० १३।४।३२) प्राजापत्यानुष्टुप्।

स वै वायोरजायत तस्माद्वायुरजायत ३२ ८५

॥ ३२ ॥ (अथर्व० २।२०।१-५)

(८६-९१) अथर्वा। १-४ निचृद्विषमा गायत्री, ५ भुरिग्विषमा।

वायो यत् ते तपस्तेन तं प्रति तप यो३ऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः १
वायो यत् ते हरस्तेन तं प्रति हर यो३ऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः २
वायो यत् तेऽर्चिस्तेन तं प्रत्यर्च यो३ऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ३
वायो यत् ते शोचिस्तेन तं प्रति शोच यो३ऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ४
वायो यत् ते तेजस्तेन तमतेजसं कृणु यो३ऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ५ ९०

॥ ३३ ॥ (अथर्व० ५।२४।८) चतुष्पदाति शक्वरी।

वायुरन्तरिक्षस्याधिपतिः स मावतु।
अस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् कर्मण्यस्यां पुरोधायामस्यां प्रतिष्ठायामस्यां
चित्त्यामस्यामाकूत्यामस्यामाशिष्यस्यां देवहूत्यां स्वाहा ८ ९१

॥ ३४ ॥ (अथर्व० ६।८९।२)

अथर्वा । (वातः) । अनुष्टुप् ।

शोचयामसि ते हार्दिं शोचयामसि ते मनः । वातं धूम इव सध्र्य१ङ् मामेवान्वेतु ते मनः २ ९१

॥ ३५ ॥ (अथर्व० ४।४०।६)

(९२) शुक्रः । त्रिष्टुप् ।

येऽ३न्तरिक्षाज्जुह्वति जातवेदो व्यध्वाया दिशोऽभिदासन्त्यस्मान् ।
वायुमृत्वा ते पराञ्चो व्यथन्तां प्रत्यगेनान् प्रतिसरेण हन्मि ६

॥ ३६ ॥ (अथर्व० ११।४।१-२६)

(९४-११९) भार्गवो वैदर्भिः । (प्राणः) । अनुष्टुप्; १ शङ्कुमती; ८ पथ्यापङ्क्तिः; १४ निचृत्; १५ भुरिक्; २० अनुष्टुब्गर्भा त्रिष्टुप्; २१ मध्ये ज्योतिर्जगती; २२ त्रिष्टुप्; २६ बृहतीगर्भा ।

प्राणाय नमो यस्य सर्वमिदं वशे । यो भूतः सर्वस्येश्वरो यस्मिन्त्सर्वं प्रतिष्ठितम् १
नमस्ते प्राण क्रन्दाय नमस्ते स्तनयित्नवे । नमस्ते प्राण विद्युते नमस्ते प्राण वर्षते २ ९५
यत् प्राण स्तनयित्नुनाभिक्रन्दत्योषधीः । प्र वीयन्ते गर्भान् दधतेऽथो बह्वीर्वि जायन्ते ३
यत् प्राण ऋतावागतेऽभिक्रन्दत्योषधीः । सर्वं तदा प्र मोदते यत् किं च भूम्यामधि ४
यदा प्राणो अभ्यवर्षीद्वर्षेण पृथिवीं महीम् । पशवस्तत् प्र मोदन्ते महो वै नो भविष्यति ५
अभिवृष्टा ओषधयः प्राणेन समवादिरन् । आयुर्वै नः प्रातीतरः सर्वा नः सुरभीरकः ६
नमस्ते अस्त्वायते नमो अस्तु परायते । नमस्ते प्राण तिष्ठत आसीनायोत ते नमः ७ १००
नमस्ते प्राण प्राणते नमो अस्त्वपानते ।
पराचीनाय ते नमः प्रतीचीनाय ते नमः सर्वस्मै त इदं नमः ८
या ते प्राण प्रिया तनूर्यो ते प्राण प्रेयसी । अथो यद्भेषजं तव तस्य नो धेहि जीवसे ९
प्राणः प्रजा अनु वस्ते पिता पुत्रमिव प्रियम् । प्राणो ह सर्वस्येश्वरो यच्च प्राणति यच्च न १०
प्राणो मृत्युः प्राणस्तक्मा प्राणं देवा उपासते । प्राणो ह सत्यवादिनमुत्तमे लोक आ दधत् ११
प्राणो विराट् प्राणो देष्ट्री प्राणं सर्व उपासते । प्राणो ह सूर्यश्चन्द्रमाः प्राणमाहुः प्रजापतिम् १२ १०५
प्राणापानौ व्रीहियवावनड्वान् प्राण उच्यते । यवे ह प्राण आहितोऽपानो व्रीहिरुच्यते १३
अपानति प्राणति पुरुषो गर्भे अन्तरा । यदा त्वं प्राण जिन्वस्यथ स जायते पुनः १४
प्राणमाहुर्मातरिश्वानं वातो ह प्राण उच्यते । प्राणे ह भूतं भव्यं च प्राणे सर्वं प्रतिष्ठितम् १५
आथर्वणीराङ्गिरसीर्दैवीर्मनुष्यजा उत । ओषधयः प्र जायन्ते यदा त्वं प्राण जिन्वसि १६
यदा प्राणो अभ्यवर्षीद्वर्षेण पृथिवीं महीम् । ओषधयः प्र जायन्तेऽथो याः काश्च वीरुधः १७ ११०

यस्तें प्राणेदं वेदु यस्मिंश्चासि प्रतिष्ठितः। सर्वे तस्मैं बुलिं हरानुमुष्मिंल्लोक उत्तमे १८

यथा प्राण बलिहृतस्तुभ्यं सर्वाः प्रजा इमाः। एवा तस्मैं बलिं हरान् यस्त्वा शृणवंत् सुश्रवः १९

अन्तर्गर्भश्चरति देवतास्वाभूतो भूतः स उं जायते पुनः।
स भूतो भव्यं भविष्यत् पिता पुत्रं प्र विवेशा शचीभिः २०

एकं पादं नोत्खिदति सलिलाद्धंस उच्चरंन्।
यदुङ्ग स तमुत्खिदेन्नैवाद्य न श्वः स्यान्न रात्री नाहः स्यान्न व्युच्छेत् कुदा चन २१

अष्टाचक्रं वर्तत एकनेमि सहस्राक्षरं प्र पुरो नि पुश्चा।
अर्धेन विश्वं भुवनं जजान यदस्यार्धं कतमः स केतुः २२ ११५

यो अस्य विश्वजन्मन ईशे विश्वस्य चेष्टतः। अन्येषु क्षिप्रधन्वने तस्मैं प्राण नमोऽस्तु ते २३

यो अस्य सर्वजन्मन ईशे सर्वस्य चेष्टतः। अतन्द्रो ब्रह्मणा धीरः प्राणो मानु तिष्ठतु २४

ऊर्ध्वः सुप्तेषु जागार ननु तिर्यङ् नि पद्यते। न सुप्तमस्य सुप्तेष्वनु शुश्राव कश्चन २५

प्राण मा मत् पर्यावृतो न मदुन्यो भविष्यसि।
अपां गर्भमिव जीवसे प्राण बुध्नामि त्वा मयि २६

वायु-सहचारी देवगणः।

(१) वायुस्त्वष्टा।

॥ ३७ ॥ (अथर्व० ३।२०।१०)

(१२०) वसिष्ठः। अनुष्टुप्।

गोसनिं वाचमुदेयं वर्चसा माभ्युदिहि। आ रुन्धां सर्वतो वायुस्त्वष्टा पोषं दधातु मे १० १२०

(२) वाय्वन्तरिक्षे।

॥ ३८ ॥ (अथर्व० ४।३९।२-४)

(१२१-२३) अङ्गिराः। २,४ संस्तारपंक्तिः, ३ त्रिपदा महाबृहती।

पृथिवी धेनुस्तस्यां अग्निर्वत्सः। सा मेऽग्निना वत्सेनेषमूर्जं कामं दुहाम्।
आयुः प्रथमं प्रजां पोषं रयिं स्वाहा २

अन्तरिक्षे वायवे समनमन्त्स आर्ध्नोत्। यथान्तरिक्षे वायवे समनमन्नेवा मह्यं संनमः सं नमन्तु ३

अन्तरिक्षं धेनुस्तस्यां वायुर्वत्सः। सा मे वायुना वत्सेनेषमूर्जं कामं दुहाम्।
आयुः प्रथमं प्रजां पोषं रयिं स्वाहा ४ १२३

---

१२ वरुणः।

॥ १ ॥ (ऋ० १।२४।६-१५)+

(१-३१) शुनःशेप आजीगर्तिः स कृत्रिमो वैश्वामित्रो देवरातः । त्रिष्टुप् ।

नहि ते क्षत्रं न सहो न मन्युं वयश्चनामी पतयन्त आपुः ।
नेमा आपो अनिमिषं चरन्ती-र्न ये वातस्य प्रमिनन्त्यभ्वम् ॥ ६

अबुध्ने राजा वरुणो वनस्यो-र्ध्वं स्तूपं ददते पूतदक्षः ।
नीचीनाः स्थुरुपरि बुध्न एषा-मस्मे अन्तर्निहिताः केतवः स्युः ॥ ७ १२५

उरुं हि राजा वरुणश्चकार सूर्याय पन्थामन्वेतवा उ ।
अपदे पादा प्रतिधातवेऽक-रुतापवक्ता हृदयाविधश्चित् ॥ ८

शतं ते राजन् भिषजः सहस्र-मुर्वी गभीरा सुमतिष्टे अस्तु ।
बाधस्व दूरे निरृतिं पराचैः कृतं चिदेनः प्र मुमुग्ध्यस्मत् ॥ ९

अमी य ऋक्षा निहितास उच्चा नक्तं ददृश्रे कुह चिद् दिवेयुः ।
अदब्धानि वरुणस्य व्रतानि विचाकशच्चन्द्रमा नक्तमेति ॥ १०(५)

तत् त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमान-स्तदा शास्ते यजमानो हविर्भिः ।
अहेळमानो वरुणेह बोध्यु-रुशंस मा न आयुः प्र मोषीः ॥ ११

तदिन्नक्तं तद् दिवा मह्यमाहु-स्तदयं केतो हृद आ वि चष्टे ।
शुनःशेपो यमह्वद् गृभीतः सो अस्मान् राजा वरुणो मुमोक्तु ॥ १२ १३०

शुनःशेपो ह्यह्वद् गृभीत-स्त्रिष्वादित्यं द्रुपदेषु बद्धः ।
अवैनं राजा वरुणः ससृज्याद् विद्वाँ अदब्धो वि मुमोक्तु पाशान् ॥ १३

अव ते हेळो वरुण नमोभि-रव यज्ञेभिरीमहे हविर्भिः ।
क्षयन्नस्मभ्यमसुर प्रचेता राजन्नेनांसि शिश्रथः कृतानि ॥ १४

उदुत्तमं वरुण पाशमस्म-दवाधमं वि मध्यमं श्रथाय ।
अथा वयमादित्य व्रते तवा-नागसो अदितये स्याम ॥ १५(१०)१३३

+ ऋ. १।२४।८,११,१५= वा. य. ८,२३; १२,१२, १८,४९; २१,२ ।

॥ २ ॥ (ऋ० १।२५।१-२१) गायत्री ।+

यच्चिद्धि ते विशो यथा प्र देव वरुण व्रतम् । मिनीमसि द्यविद्यवि १

मा नो वधाय हत्नवे जिहीळानस्य रीरधः । मा हृणानस्य मन्यवे २ १३९

वि मृळीकाय ते मनो रथीरश्वं न संदितम् । गीर्भिर्वरुण सीमहि ३

परा हि मे विमन्यवः पतन्ति वस्यइष्टये । वयो न वसतीरुप ४

कदा क्षत्रश्रियं नर मा वरुणं करामहे । मृळीकायोरुचक्षसम् ५(१५)

तदित् समानमाशाते वेनन्ता न प्र युच्छतः । धृतव्रताय दाशुषे ६

वेदा यो वीनां पद मन्तरिक्षेण पतताम् । वेद नावः समुद्रियः ७

वेद मासो धृतव्रतो द्वादश प्रजावतः । वेदा य उपजायते ८

वेद वातस्य वर्तनि मुरोर्ऋष्वस्य बृहतः । वेदा ये अध्यासते ९

नि षसाद धृतव्रतो वरुणः पस्त्या३स्वा । साम्राज्याय सुक्रतुः १०(२०)

अतो विश्वान्यद्भुता चिकित्वाँ अभि पश्यति । कृतानि या च कर्त्वा ११

स नो विश्वाहा सुक्रतु रादित्यः सुपथा करत् । प्र ण आयूंषि तारिषत् १२

बिभ्रद् द्रापिं हिरण्ययं वरुणो वस्त निर्णिजम् । परि स्पशो नि षेदिरे १३

न यं दिप्सन्ति दिप्सवो न द्रुह्वाणो जनानाम् । न देवमभिमातयः १४

उत यो मानुषेष्वा यशश्चक्रे असाम्या । अस्माकमुदरेष्वा १५(२५)

परा मे यन्ति धीतयो गावो न गव्यूतीरनु । इच्छन्तीरुरुचक्षसम् १६

सं नु वोचावहै पुन र्यतो मे मध्वाभृतम् । होतेव क्षदसे प्रियम् १७ १५०

दर्शं नु विश्वदर्शतं दर्शं रथमधि क्षमि । एता जुषत मे गिरः १८

इमं मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृळय । त्वामवस्युरा चके १९

त्वं विश्वस्य मेधिर दिवश्च ग्मश्च राजसि । स यामनि प्रति श्रुधि २०

उदुत्तमं मुमुग्धि नो वि पाशं मध्यमं चृत । अवाधमानि जीवसे २१(३१)

॥ ३ ॥ (ऋ० २।२८।१-११)

(३२-४२) कूर्मो गार्त्समदो, गृत्समदो वा । (१० दुःस्वप्ननाशिनी) । त्रिष्टुप् ।

इदं कवेरादित्यस्य स्वराजो विश्वानि सान्त्यभ्यस्तु मह्ना ।
अति यो मन्द्रो यजथाय देवः सुकीर्तिं भिक्षे वरुणस्य भूरेः १

तव व्रते सुभगासः स्याम स्वाध्यो वरुण तुष्टुवांसः ।
उपायन उषसां गोमतीना मग्नयो न जरमाणा अनु द्यून् २ १५१

+ ऋ. १,२५,१०; १९= वा. य. १०,२७; २१,१; सा. १५८५ ।

तव स्याम पुरुवीरस्य शर्मन्नुरुशंसस्य वरुण प्रणेतः ।
यूयं नः पुत्रा अदितेरदब्धा अभि क्षमध्वं युज्याय देवाः ॥ ३ १५७

प्र सीमादित्यो असृजद् विधर्ताँ ऋतं सिन्धवो वरुणस्य यन्ति ।
न श्राम्यन्ति न वि मुचन्त्येते वयो न पप्तू रघुया परिज्मन् ॥ ४(३५)

वि मच्छ्रथाय रशनामिवाग ऋध्याम ते वरुण खामृतस्य ।
मा तन्तुश्छेदि वयतो धियं मे मा मात्रा शार्यपसः पुर ऋतोः ॥ ५

अपो सु म्यक्ष वरुण भियसं मत् सम्राळृतावोऽनु मा गृभाय ।
दामेव वत्साद् वि मुमुग्ध्यंहो नहि त्वदारे निमिषश्चनेशे ॥ ६

मा नो वधैर्वरुण ये त इष्टावेनः कृण्वन्तमसुर भ्रीणन्ति ।
मा ज्योतिषः प्रवसथानि गन्म वि षू मृधः शिश्रथो जीवसे नः ॥ ७

नमः पुरा ते वरुणोत नूनमुतापरं तुविजात ब्रवाम ।
त्वे हि कं पर्वते न श्रितान्यप्रच्युतानि दूळभ व्रतानि ॥ ८

परं ऋणा सावीरध मत्कृतानि माऽहं राजन्नन्यकृतेन भोजम् ।
अव्युष्टा इन्नु भूयसीरुषास आ नो जीवान् वरुण तासु शाधि ॥ ९(४०)

यो मे राजन् युज्यो वा सखा वा स्वप्ने भयं भीरवे मह्यमाह ।
स्तेनो वा यो दिप्सति नो वृको वा त्वं तस्माद्वरुण पाह्यस्मान् ॥ १०

माऽहं मघोनो वरुण प्रियस्य भूरिदाव्न आ विदं शूनमापेः ।
मा रायो राजन्त्सुयमादव स्थां बृहद्वदेम विदथे सुवीराः ॥ ११ १६५

॥ ४ ॥ (ऋ० ५।८५।१-८)
(४३-५०) अत्रिर्भौमः । त्रिष्टुप् ।

प्र सम्राजे बृहदर्चा गभीरं ब्रह्म प्रियं वरुणाय श्रुताय ।
वि यो जघान शमितेव चर्मोपस्तिरे पृथिवीं सूर्याय ॥ १

वनेषु व्य१न्तरिक्षं ततान वाजमर्वत्सु पय उस्रियासु ।
हृत्सु क्रतुं वरुणो अप्स्व१ग्निं दिवि सूर्यमदधात् सोममद्रौ ॥ २

नीचीनबारं वरुणः कवन्धं प्र ससर्ज रोदसी अन्तरिक्षम् ।
तेन विश्वस्य भुवनस्य राजा यवं न वृष्टिर्व्युनत्ति भूम ॥ ३(४५)१६८

* ऋ. ५।८५।२= वा. य. ४।३१

उनत्ति भूमिं पृथिवीमुत द्यां यदा दुग्धं वरुणो वष्ट्यादित्।
समभ्रेण वसत पर्वतास—स्तविषीयन्तः श्रथयन्त वीराः ४

इमामू ष्वासुरस्य श्रुतस्य मही मायां वरुणस्य प्र वोचम्।
मानेनेव तस्थिवाँ अन्तरिक्षे वि यो ममे पृथिवीं सूर्येण ५ १७०

इमामू नु कवितमस्य मायां महीं देवस्य नकिरा दधर्ष।
एकं यदुद्ना न पृणन्त्येनी—रासिञ्चन्तीरवनयः समुद्रम् ६

अर्यम्यं वरुण मित्र्यं वा सखायं वा सदमिद् भ्रातरं वा।
वेशं वा नित्यं वरुणारणं वा यत् सीमागश्चकृमा शिश्रथस्तत् ७

कितवासो यद्रिरिपुर्न दीवि यद् वा घा सत्यमुत यन्न विद्म।
सर्वा ता वि ष्य शिथिरेव देवा—धा ते स्याम वरुण प्रियासः ८(५०)

॥ ५ ॥ (ऋ० ७।८६।१-८)
(५१-७७) मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः। त्रिष्टुप्।

धीरा त्वस्य महिना जनूंषि वि यस्तस्तम्भ रोदसी चिदुर्वी।
प्र नाकमृष्वं नुनुदे बृहन्तं द्विता नक्षत्रं पप्रथच्च भूम १

उत स्वया तन्वा३ सं वदे तत् कदा न्व१न्तर्वरुणे भुवानि।
किं मे हव्यमहृणानो जुषेत कदा मृळीकं सुमना अभि ख्यम् २ १७५

पृच्छे तदेनो वरुण दिदृक्षू—पो एमि चिकितुषो विपृच्छम्।
समानमिन्मे कवयश्चिदाहु—रयं ह तुभ्यं वरुणो हृणीते ३

किमाग आस वरुण ज्येष्ठं यत् स्तोतारं जिघांससि सखायम्।
प्र तन्मे वोचो दूळभ स्वधावो ऽव त्वानेना नमसा तुर इयाम् ४

अव द्रुग्धानि पित्र्या सृजा नो ऽव या वयं चकृमा तनूभिः।
अव राजन् पशुतृपं न तायुं सृजा वत्सं न दाम्नो वसिष्ठम् ५(५५)

न स स्वो दक्षो वरुण ध्रुतिः सा सुरा मन्युर्विभीदको अचित्तिः।
अस्ति ज्यायान् कनीयस उपारे स्वप्नश्चनेदनृतस्य प्रयोता ६

अरं दासो न मीळ्हुषे करा—ण्यहं देवाय भूर्णयेऽनागाः।
अचेतयदचितो देवो अर्यो गृत्सं राये कवितरो जुनाति ७

अयं सु तुभ्यं वरुण स्वधावो हृदि स्तोम उपश्रितश्चिदस्तु।
शं नः क्षेमे शमु योगे नो अस्तु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ८ १८१

॥ ६ ॥ (ऋ० ७।८७।१-७)

रदत् पथो वरुणः सूर्याय प्राणांसि समुद्रिया नदीनाम् ।
सर्गो न सृष्टो अर्वतीर्ऋतायञ्चकार महीरवनीरहभ्यः ॥ १

आत्मा ते वातो रज आ नवीनोत् पशुर्न भूर्णिर्यवसे ससवान् ।
अन्तर्मही बृहती रोदसीमे विश्वा ते धाम वरुण प्रियाणि ॥ २

परि स्पशो वरुणस्य स्मदिष्टा उभे पश्यन्ति रोदसी सुमेके ।
ऋतावानः कवयो यज्ञधीराः प्रचेतसो य इषयन्त मन्म ॥ ३

उवाच मे वरुणो मेधिराय त्रिः सप्त नामाघ्न्या बिभर्ति ।
विद्वान् पदस्य गुह्या न वोचद्युगाय विप्र उपराय शिक्षन् ॥ ४ १८५

तिस्रो द्यावो निहिता अन्तरस्मिन् तिस्रो भूमीरुपराः षड्विधानाः ।
गृत्सो राजा वरुणश्चक्र एतं दिवि प्रेङ्खं हिरण्ययं शुभे कम् ॥ ५

अव सिन्धुं वरुणो द्यौरिव स्थाद् द्रप्सो न श्वेतो मृगस्तुविष्मान् ।
गम्भीरशंसो रजसो विमानः सुपारक्षत्रः सतो अस्य राजा ॥ ६

यो मृळयाति चक्रुषे चिदागो वयं स्याम वरुणे अनागाः ।
अनु व्रतान्यदितेर्ऋधन्तो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥ ७(६५)

॥ ७ ॥ (ऋ० ७।८८।१-७) [७ पाशविमोचनी]।

प्र शुन्ध्युवं वरुणाय प्रेष्ठां मतिं वसिष्ठ मीळ्हुषे भरस्व ।
य ईमर्वाञ्चं करते यजत्रं सहस्रामघं वृषणं बृहन्तम् ॥ १

अधा न्वस्य संदृशं जगन्वानग्नेरनीकं वरुणस्य मंसि ।
स्व१र्यदश्मन्नधिपा उ अन्धोऽभि मा वपुर्दृशये निनीयात् ॥ २ १९०

आ यद्रुहाव वरुणश्च नावं प्र यत् समुद्रमीरयाव मध्यम् ।
अधि यदपां स्नुभिश्चराव प्र प्रेङ्ख ईङ्खयावहै शुभे कम् ॥ ३

वसिष्ठं ह वरुणो नाव्याधादृषिं चकार स्वपा महोभिः ।
स्तोतारं विप्रः सुदिनत्वे अह्नां यान्नु द्यावस्ततनन् यादुषासः ॥ ४

क१ त्यानि नौ सख्या बभूवुः सचावहे यदवृकं पुरा चित् ।
बृहन्तं मानं वरुण स्वधावः सहस्रद्वारं जगमा गृहं ते ॥ ५(७०)

य आपिर्नित्यो वरुण प्रियः सन् त्वामागांसि कृणवत् सखा ते ।
मा त एनस्वन्तो यक्षिन् भुजेम यन्धि ष्मा विप्रः स्तुवते वरूथम् ॥ ६ १९४

ध्रुवासु त्वासु क्षितिषु क्षियन्तो व्य१स्मत् पाशं वरुणो मुमोचत्।
अवो वन्वाना अदितेरुपस्थाद् यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ७ १९५

॥ ८ ॥ (ऋ० ७।८९।१-५) गायत्री, ५ जगती।

मो षु वरुण मृन्मयं गृहं राजन्नहं गमम् । मृळा सुक्षत्र मृळय १
यदेमि प्रस्फुरन्निव दृतिर्न ध्मातो अद्रिवः । मृळा सुक्षत्र मृळय २
क्रत्वः समह दीनता प्रतीपं जगमा शुचे । मृळा सुक्षत्र मृळय ३(७५)
अपां मध्ये तस्थिवांसं तृष्णाविदज्जरितारम् । मृळा सुक्षत्र मृळय ४
यत् किं चेदं वरुण दैव्ये जने ऽभिद्रोहं मनुष्या३श्चरामसि।
अचित्ती यत् तव धर्मा युयोपिम मा नस्तस्मादेनसो देव रीरिषः ×५ २००

॥ ९ ॥ (ऋ० ८।४१।१-१०)
(७८-८७) नाभाकः काण्वः। महापङ्क्तिः।

अस्मा ऊ षु प्रभूतये वरुणाय मरुद्भ्यो ऽर्चा विदुष्टरेभ्यः।
यो धीता मानुषाणां पश्वो गाइव रक्षति नभन्तामन्यके समे १
तमू षु समना गिरा पितॄणां च मन्मभिः।
नाभाकस्य प्रशस्तिभि-र्यः सिन्धूनामुपोदये सप्तस्वसा स मध्यमो नभन्तामन्यके समे २
स क्षपः परि षस्वजे न्यु१स्रो मायया दधे स विश्वं परि दर्शतः।
तस्य वेनीरनु व्रत-मुषस्तिस्रो अवर्धयन् नभन्तामन्यके समे ३(८०)
यः ककुभो निधारयः पृथिव्यामधि दर्शतः।
स माता पूर्व्यं पदं तद्वरुणस्य सप्त्यं स हि गोपाइवेर्यो नभन्तामन्यके समे ४
यो धर्ता भुवनानां य उस्राणामपीच्या३ वेद नामानि गुह्या।
स कविः काव्या पुरु रूपं द्यौरिव पुष्यति नभन्तामन्यके समे ५ २०५
यस्मिन् विश्वानि काव्या चक्रे नाभिरिव श्रिता।
त्रितं जूती सपर्यत व्रजे गावो न संयुजे युजे अश्वाँ अयुक्षत नभन्तामन्यके समे ६
य आस्वत्क आशये विश्वा जातान्येषाम्।
परि धामानि मर्मृशद् वरुणस्य पुरो गये विश्वे देवा अनु व्रतं नभन्तामन्यके समे ७
स समुद्रो अपीच्य-स्तुरो द्यामिव रोहति नि यदासु यजुर्दधे।
स माया अर्चिना पदा ऽस्तृणान्नाकमारुह-न्नभन्तामन्यके समे ८(८५)२०८

× ऋ ७, ८९, ५ = अथर्व. ६, ५१, ३।

यस्यं श्वेता विंचक्षणा तिस्रो भूमीरधिक्षितः ।
त्रिरुत्तराणि पप्रतुर्वरुणस्य ध्रुवं सदुः स सप्तानामिरज्यति नभन्तामन्यके समे ९
यः श्वेताँ अधिनिर्णिजश्चक्रे कृष्णाँ अनु व्रता ।
स धाम पूर्व्यं ममे यः स्कम्भेन वि रोदसी अजो न द्यामधारयन्नभन्तामन्यके समे १० ११०

॥ १० ॥ (ऋ० ८।४२।१-३)
(८८-९०) नाभाकः काण्वः, अर्चनाना आत्रेयो वा। त्रिष्टुप्।

अस्तभ्नाद् द्यामसुरो विश्ववेदा अमिमीत वरिमाणं पृथिव्याः ।
आसीदुद् विश्वा भुवनानि सम्राड् विश्वेत् तानि वरुणस्य व्रतानि *१
एवा वन्दस्व वरुणं बृहन्तं नमस्या धीरममृतस्य गोपाम् ।
स नः शर्म त्रिवरूथं वि यंसत् पातं नो द्यावापृथिवी उपस्थे २
इमां धियं शिक्षमाणस्य देव क्रतुं दक्षं वरुण सं शिशाधि ।
ययाति विश्वा दुरिता तरेम सुतर्माणमधि नावं रुहेम ३(९०)

॥ ११ ॥ (ऋ० ८।६९।११ उत्तरार्धस्य- १२)
(९१-९२) प्रियमेध आङ्गिरसः । पंक्तिः ।

वरुण इदिह क्षयत् तमापो अभ्यनूषत वत्सं संशिश्वरीरिव (उत्तरार्धः) ११
सुदेवो असि वरुण यस्य ते सप्त सिन्धवः । अनुक्षरन्ति काकुदं सूर्म्यं सुषिरामिव १२ ११५

॥ १२ ॥ (ऋ० १०।१२४।५, ७-८)
(९३-९५) अग्नि-वरुण-सोमाः । त्रिष्टुप्, ७ जगती ।

निर्माया उ त्ये असुरा अभूवन् त्वं च मा वरुण कामयासे ।
ऋतेन राजन्ननृतं विविञ्चन् मम राष्ट्रस्याधिपत्यमेहि ५
कविः कवित्वा दिवि रूपमासजदप्रभूती वरुणो निरपः सृजत् ।
क्षेमं कृण्वाना जनयो न सिन्धवस्ता अस्य वर्णं शुचयो भरिभ्रति ७
ता अस्य ज्येष्ठमिन्द्रियं सचन्ते ता ईमा क्षेति स्वधया मदन्तीः ।
ता ईं विशो न राजानं वृणाना बीभत्सुवो अप वृत्राददतिष्ठन् ८(९५)

॥ १३ ॥ [९६-१००] (वा० य० ४।३६)

वरुणस्योत्तम्भनमसि वरुणस्य स्कम्भसर्जनी स्थो वरुणस्य ऋतसदन्यसि
वरुणस्य ऋतसदनमसि वरुणस्य ऋतसदनमा सीद ३६ ११९

---

* ऋ. ८।४२।१=वा. य. ८।३०

॥ १४ ॥ (वा० य० ८।२३ [तृ. च.] ।)

नमो वरुणायाभिष्ठितो वरुणस्य पाशः २३ २२०

॥ १५ ॥ (वा० य० १०।७)

सधमादो द्युम्निनीराप एता अनाधृष्टा अपस्यो वसानाः ।
पस्त्यासु चक्रे वरुणः सधस्थमपाꣳ शिशुर्मातृतमास्वन्तः ७

॥ १६ ॥ (वा० य० २०।७१-७२)

सविता वरुणो दधद्यजमानाय दाशुषे । आदत्त नमुचेर्वसु सुत्रामा बलमिन्द्रियम् ७१
वरुणः क्षत्रमिन्द्रियं भगेन सविता श्रियम् । सुत्रामा यशसा बलं दधाना यज्ञमाशत ७२(१००)

॥ १७ ॥ (अथर्व० १।३।३)
(१०१-१९) अथर्वा । पथ्यापंक्तिः ।

विद्मा शरस्य पितरं वरुणं शतवृष्ण्यम् ।
तेना ते तन्वे३ शं करं पृथिव्यां ते निषेचनं बहिष्टे अस्तु बालिति ३

॥ १८॥ (अथर्व० १।१०।१-४)
१-२ त्रिष्टुप्, ३ ककुम्मती अनुष्टुप्, ४ अनुष्टुप्।

अयं देवानामसुरो वि राजति वशा हि सत्या वरुणस्य राज्ञः ।
ततस्परि ब्रह्मणा शाशदान उग्रस्य मन्योरुदिमं नयामि १ २२५

नमस्ते राजन् वरुणास्तु मन्यवे विश्वं ह्युग्र निचिकेषि द्रुग्धम् ।
सहस्रमन्यान् प्र सुवामि साकं शतं जीवाति शरदस्तवायम् २
यदुवक्थानृतं जिह्वया वृजिनं बहु । राज्ञस्त्वा सत्यधर्मणो मुञ्चामि वरुणादहम् ३
मुञ्चामि त्वा वैश्वानरादर्णवान्महतस्परि । सजातानुग्रेहा वद ब्रह्म चाप चिकीहि नः ४(१०५)

॥ १९ ॥ (अथर्व० १।२०।३) अनुष्टुप्।

इतश्च यदमुतश्च यद्वधं वरुण यावय। वि महच्छर्म यच्छ वरीयो यावया वधम् ३

॥ २० ॥ (अथर्व० ४।१५।१२) पञ्चपदानुष्टुब्गर्भा भुरिक्।

अपो निषिञ्चन्नसुरः पिता नः श्वसन्तु गर्गरा अपां वरुणाव नीचीरपः सृज ।
वदन्तु पृश्निबाहवो मण्डूका इरिणानु १२ २३०

॥ २१ ॥ (अथर्व० ५।११।१-११)

(प्रश्नोत्तरम्)। त्रिष्टुप्, १ भुरिक्, ३ पङ्क्तिः, ६ पञ्चपदा अतिशक्वरी,
११ त्र्यवसाना षट्पदा अत्यष्टिः।

कथं महे असुरायाब्रवीरिह कथं पित्रे हरये त्वेषनृम्णः।
पृश्निं वरुण दक्षिणां ददावान् पुनर्मघ त्वं मनसाचिकित्सीः १

न कामेन पुनर्मघो भवामि सं चक्षे कं पृश्निमेतामुपाजे।
केन नु त्वमथर्वन् काव्येन केन जातेनासि जातवेदाः २

सत्यमहं गभीरः काव्येन सत्यं जातेनास्मि जातवेदाः।
न मे दासो नार्यो महित्वा व्रतं मीमाय यदहं धरिष्ये ३(११०)

न त्वदन्यः कवितरो न मेधया धीरतरो वरुण स्वधावन्।
त्वं ता विश्वा भुवनानि वेत्थ स चिन्नु त्वज्जनो मायी बिभाय ४

त्वं ह्य१ङ्ग वरुण स्वधावन् विश्वा वेत्थ जनिमा सुप्रणीते।
किं रजस एना परो अन्यदस्त्येना किं परेणावरममुर ५ २३५

एकं रजस एना परो अन्यदस्त्येना पर एकेन दुर्णशं चिदर्वाक्।
तत् ते विद्वान् वरुण प्र ब्रवीम्यधोवचसः पणयो भवन्तु
नीचैर्दासा उप सर्पन्तु भूमिम् ६

त्वं ह्य१ङ्ग वरुण ब्रवीषि पुनर्मघेष्ववद्यानि भूरि।
मो षु पणीँरभ्ये३तावतो भून्मा त्वा वोचन्नराधसं जनासः ७

मा मा वोचन्नराधसं जनासः पुनस्ते पृश्निं जरितर्ददामि।
स्तोत्रं मे विश्वमा याहि शचीभिरन्तर्विश्वासु मानुषीषु दिक्षु ८(११५)

आ ते स्तोत्राण्युद्यतानि यन्त्वन्तर्विश्वासु मानुषीषु दिक्षु।
देहि नु मे यन्मे अदत्तो असि युज्यो मे सप्तपदः सखाऽसि ९

समा नौ बन्धुर्वरुण समा जा वेदाहं तद्यन्नावेषा समा जा।
ददामि तद्यत्ते अदत्तो अस्मि युज्यस्ते सप्तपदः सखाऽस्मि १०

देवो देवाय गृणते वयोधा विप्रो विप्राय स्तुवते सुमेधाः।
अजीजनो हि वरुण स्वधावन्नथर्वाणं पितरं देवबन्धुम्।
तस्मा उ राधः कृणुहि सुप्रशस्तं सखा नो असि परमं च बन्धुः ११ २४१

॥ २२ ॥ (अथर्व० ५।२४।४) चतुष्पदाऽतिशक्वरी ।

वरुणोऽपामधिपतिः स मावतु ।
अस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् कर्मण्यस्यां पुरोधायामस्यां प्रतिष्ठायामस्यां
चित्त्यामस्यामाकूत्यामस्यामाशिष्यस्यां देवहूत्यां स्वाहा ४(११९)

॥ २३ ॥ (अथर्व० ५।१।१-९)
(१२०-३७) बृहद्दिवोऽथर्वा । त्रिष्टुप्, ५ पराबृहती त्रिष्टुप्, ७ विराट्, ९ त्र्यवसाना षट्पदा अत्यष्टिः ।

ऋधङ्मन्त्रो योनिं य आबभूवामृतासुर्वर्धमानः सुजन्मा ।
अदब्धासुर्भ्राजमानोऽहेव त्रितो धर्ता दाधार त्रीणि १
आ यो धर्माणि प्रथमः ससाद ततो वपूंषि कृणुषे पुरूणि ।
धास्युर्योनिं प्रथम आ विवेशा यो वाचमनुदितां चिकेत २
यस्ते शोकाय तन्वं रिरेच क्षरद्धिरण्यं शुचयोऽनु स्वाः ।
अत्रा दधेते अमृतानि नामास्मे वस्त्राणि विश एरयन्ताम् ३ १४५
प्र यदेते प्रतरं पूर्व्यं गुः सदःसद आतिष्ठन्तो अजुर्यम् ।
कविः शुषस्य मातरा रिहाणे जाम्यै धुर्यं पतिमेरयेथाम् ४
तदू षु ते महत् पृथुज्मन्नमः कविः काव्येना कृणोमि ।
यत् सम्यञ्चावभियन्तावभि क्षामत्रा मही रोधचक्रे वावृधेते ५
सप्त मर्यादाः कवयस्ततक्षुस्तासामिदेकामभ्यंहुरो गात् ।
आयोर्ह स्कम्भ उपमस्य नीडे पथां विसर्गे धरुणेषु तस्थौ ६(१२५)
उतामृतासुर्व्रत एमि कृण्वन्नसुरात्मा तन्वस्तत्सुमद्गुः ।
उत वा शक्रो रत्नं दधात्यूर्जया वा यत् सचते हविर्दाः ७
उत पुत्रः पितरं क्षत्रमीडे ज्येष्ठं मर्यादमह्वयन्त्स्वस्तये ।
दर्शन्नु ता वरुण यास्ते विष्ठा आवर्वृततः कृणवो वपूंषि ८
अर्धमर्धेन पयसा पृणक्ष्यर्धेन शुष्म वर्धसे अमुर ।
अविं वृधाम शग्मियं सखायं वरुणं पुत्रमदित्या इषिरम् ।
कविशस्तान्यस्मै वपूंष्यवोचाम रोदसी सत्यवाचा ९

॥ २४ ॥ (अथर्व० ५।२।१-९) त्रिष्टुप्, ९ भुरिक्परातिजागता त्रिष्टुप् ।

तदिदास भुवनेषु ज्येष्ठं यतो जज्ञ उग्रस्त्वेषनृम्णः ।
सद्यो जज्ञानो नि रिणाति शत्रूननु यदेनं मदन्ति विश्व ऊमाः १ १५२

वावृधानः शवसा भूर्योजाः शत्रुर्दासाय भियसं दधाति ।
अव्यनच्च व्यनच्च सस्नि सं ते नवन्त प्रभृता मदेषु २(१३०)
त्वे क्रतुमपि पृञ्चन्ति भूरि द्विर्यदेते त्रिर्भवन्त्यूमाः ।
स्वादोः स्वादीयः स्वादुना सृजा समदः सु मधु मधुनाभि योधीः ३
यदि चिन्नु त्वा धना जयन्तं रणेरणे अनुमदन्ति विप्राः ।
ओजीयः शुष्मिन्त्स्थिरमा तनुष्व मा त्वा दभन् दुरेवासः कशोकाः ४ २५५
त्वया वयं शाशद्महे रणेषु प्रपश्यन्तो युधेन्यानि भूरि ।
चोदयामि त आयुधा वचोभिः सं ते शिशामि ब्रह्मणा वयांसि ५
नि तद्दधिषेऽवरे परे च यस्मिन्नाविथावसा दुरोणे ।
आ स्थापयत मातरं जिगत्नुमत इन्वत कर्वराणि भूरि ६.
स्तुष्व वर्ष्मन् पुरुवर्त्मानं समृभ्वाणमिनतममाप्तमाप्त्यानाम् ।
आ दर्शति शवसा भूर्योजाः प्र सक्षति प्रतिमानं पृथिव्याः ७(१३५)
इमा ब्रह्म बृहद्दिवः कृणवदिन्द्राय शूषमग्रियः स्वर्षाः ।
महो गोत्रस्य क्षयति स्वराजा तुरश्चिद्विश्वमर्णवत् तपस्वान् ८
एवा महान् बृहद्दिवो अथर्वावोचत्स्वां तन्व१मिन्द्रमेव ।
स्वसारौ मातरिभ्वरी अरिप्रे हिन्वन्ति चैने शवसा वर्धयन्ति च ९ २६०

॥ २५ ॥ (अथर्व० १।१४।१-४)

(१३८-१४१) भृग्वङ्गिराः । यमो (वा) । अनुष्टुप्, १ ककुम्मती अनुष्टुप्; ३ चतुष्पाद्विराट् ।

भगमस्या वर्च आदिष्यधि वृक्षादिव स्रजम् । महाबुध्न इव पर्वतो ज्योक् पितृष्वास्ताम् १
एषा ते राजन् कन्या३ वधूर्नि धूयतां यम । सा मातुर्बध्यतां गृहेऽथो भ्रातुरथो पितुः २
एषा ते कुलपा राजन्तामु ते परि दद्मसि । ज्योक् पितृष्वासाता आ शीर्ष्णः समोप्यात् ३(१४०)
असितस्य ते ब्रह्मणा कश्यपस्य गयस्य च । अन्तःकोशमिव जामयोऽपि नह्यामि ते भगम् ४

॥ २६ ॥ (अथर्व० ४।१६।१-९)

(१४२-१५०) ब्रह्मा । वरुणः, सत्यानृतान्वीक्षणम् । त्रिष्टुप्, १ अनुष्टुप्, ५ भुरिक्, ७ जगती,
८ त्रिपान्महाबृहती, ९ विराण्नाम त्रिपाद्गायत्री ।

बृहन्नेषामधिष्ठाता अन्तिकादिव पश्यति । य स्तायन्मन्यते चरन्त्सर्वं देवा इदं विदुः १
यस्तिष्ठति चरति यश्च वञ्चति यो निलायं चरति यः प्रतङ्कम् ।
द्वौ संनिषद्य यन्मन्त्रयेते राजा तद्वेद वरुणस्तृतीयः २ २६६

उतेयं भूमिर्वरुणस्य राज्ञ उतासौ द्यौर्बृहती दूरेअन्ता।
उतो समुद्रौ वरुणस्य कुक्षी उतास्मिन्नल्प उदके निलीनः ३
उत यो द्यामतिसर्पात् परस्तान्न स मुच्यातै वरुणस्य राज्ञः।
दिव स्पशः प्र चरन्तीदमस्य सहस्राक्षा अति पश्यन्ति भूमिम् ४(१४५)
सर्वं तद्राजा वरुणो वि चष्टे यदन्तरा रोदसी यत् परस्तात्।
संख्याता अस्य निमिषो जनानामक्षानिव श्वघ्नी नि मिनोति तानि ५
ये ते पाशा वरुण सप्तसप्त त्रेधा तिष्ठन्ति विषिता रुशन्तः।
छिनन्तु सर्वे अनृतं वदन्तं यः सत्यवाद्यति तं सृजन्तु ६ २७०
शतेन पाशैरभि धेहि वरुणैनं मा ते मोच्यनृतवाङ् नृचक्षः।
आस्तां जाल्म उदरं श्रंसयित्वा कोश इवाबन्धः परिकृत्यमानः ७
यः समाम्योऽ३ वरुणो यो व्याम्योऽ३ यः संदेश्योऽ३ वरुणो यो विदेश्यः।
यो दैवो वरुणो यश्च मानुषः ८
तैस्त्वा सर्वैरभि ष्यामि पाशैरसावामुष्यायणामुष्याः पुत्र। तानु ते सर्वाननुसंदिशामि ९(१५०)

॥ २७ ॥ (अथर्व० ४।४०।३)
(१५१) शुक्रः। त्रिष्टुप्।

ये पश्चाज्जुह्वति जातवेदः प्रतीच्या दिशोऽभिदासन्त्यस्मान्।
वरुणमृत्वा ते पराञ्चो व्यथन्तां प्रत्यगेनान् प्रतिसरेण हन्मि ३

॥ २८ ॥ (अथर्व० १०।५।१०)
(१५२) सिन्धुद्वीपः। त्र्यवसाना पञ्चपदा विपरीतपादलक्ष्मा बृहती।

वरुणस्य भाग स्थ। अपां शुक्रमापो देवीर्वर्चो अस्मासु धत्त।
प्रजापतेर्वो धाम्नास्मै लोकाय सादये १०

वरुण-सहचारी देवगणः।

(१) इन्द्राणीवरुणान्यग्नाय्यः।

॥ २९ ॥ (ऋ० १।२२।१२)
मेधातिथिः काण्वः। गायत्री।

इहेन्द्राणीमुप ह्वये वरुणानीं स्वस्तये। अग्नायीं सोमपीतये १२ २७६

(२) वरुणामित्रार्यमणः।

॥ २२ ॥ (ऋ० १।४१।१-३,७-९)
(१५३-५८) कण्वो घौरः। गायत्री।

यं रक्षन्ति प्रचेतसो वरुणो मित्रो अर्यमा । नू चित् स दभ्यते जनः ※१ २७७
यं बाहुतेव पिप्रति पान्ति मर्त्यं रिषः । अरिष्टः सर्व एधते २
वि दुर्गा वि द्विषः पुरो घ्नन्ति राजान एषाम् । नयन्ति दुरिता तिरः ३
कथा राधाम सखायः स्तोमं मित्रस्यार्यम्णः । महि प्सरो वरुणस्य ७
मा वो घ्नन्तं मा शपन्तं प्रति वोचे देवयन्तम् । सुम्नैरिद् व आ विवासे ८
चतुरश्चिद् ददमानाद् बिभीयादा निधातोः । न दुरुक्ताय स्पृहयेत् ९(१५९)

---

१३ वास्तोष्पतिः।

॥ १ ॥ (ऋ० ७।५४।१-३)
(१—४) मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः। त्रिष्टुप्।

वास्तोष्पते प्रति जानीह्यस्मान्त्स्वावेशो अनमीवो भवा नः।
यत् त्वेमहे प्रति तन्नो जुषस्व शं नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे १(१६०)
वास्तोष्पते प्रतरणो न एधि गयस्फानो गोभिरश्वेभिरिन्दो।
अजरासस्ते सख्ये स्याम पितेव पुत्रान् प्रति नो जुषस्व २
वास्तोष्पते शग्मया संसदा ते सक्षीमहि रण्वया गातुमत्या।
पाहि क्षेम उत योगे वरं नो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ३

॥ २ ॥ (ऋ० ७।५५।१) गायत्री।

अमीवहा वास्तोष्पते विश्वा रूपाण्याविशन्। सखा सुशेव एधि नः १ २८६

※ ऋ. १,४१,१=सा. १८५।

॥ ३ ॥ (ऋ० ८।१७।१४)

(५) इरिम्बिठिः काण्वः। (इंद्रो वा)। बृहती।

वास्तोष्पते ध्रुवा स्थूणांसत्रं सोम्यानाम्।
द्रप्सो भेत्ता पुरां शश्वतीनामिन्द्रो मुनीनां सखा ×१४(५)

॥ ४ ॥ [६-८] (वा० य० ३।४१-४३)+

गृहा मा बिभीत मा वेपध्वमूर्जं बिभ्रत एमसि।
ऊर्जं बिभ्रद्वः सुमनाः सुमेधा गृहानैमि मनसा मोदमानः ४१
येषामध्येति प्रवसन् येषु सौमनसो बहुः। गृहानुप ह्वयामहे ते नो जानन्तु जानतः ४२
उपहूता इह गाव उपहूता अजावयः। अथो अन्नस्य कीलाल उपहूतो गृहेषु नः।
क्षेमाय वः शान्त्यै प्रपद्ये शिवꣳ शग्मꣳ शंयोः शंयोः ४३ १९०

॥ ५ ॥ (अथर्व० ३।१२।१-९)

(९-५२) ब्रह्मा। शाला, वास्तोष्पतिः। त्रिष्टुप्, २ विराड् जगती, ३ बृहती, ६ शक्वरीगर्भा जगती, ७ आर्षी अनुष्टुप्, ८ भुरिक्, ९ अनुष्टुप्।

इहैव ध्रुवां नि मिनोमि शालां क्षेमे तिष्ठाति घृतमुक्षमाणा।
तां त्वा शाले सर्ववीराः सुवीरा अरिष्टवीरा उप सं चरेम १
इहैव ध्रुवा प्रति तिष्ठ शालेऽश्वावती गोमती सूनृतावती।
ऊर्जस्वती घृतवती पयस्वत्युच्छ्रयस्व महते सौभगाय २(१०)
धरुण्य॒सि शाले बृहच्छन्दाः पूतिधान्या।
आ त्वा वत्सो गमेदा कुमार आ धेनवः सायमास्पन्दमानाः ३
इमां शालां सविता वायुरिन्द्रो बृहस्पतिर्नि मिनोतु प्रजानन्।
उक्षन्तूद्ना मरुतो घृतेन भगो नो राजा नि कृषिं तनोतु ४
मानस्य पत्नि शरणा स्योना देवी देवेभिर्निमितास्यग्रे।
तृणं वसाना सुमना असस्त्वमथास्मभ्यं सहवीरं रयिं दाः ५ १९५
ऋतेन स्थूणामधि रोह वंशोग्रो विराजन्नप वृङ्क्ष्व शत्रून्।
मा ते रिषन्नुपसत्तारो गृहाणां शाले शतं जीवेम शरदः सर्ववीराः ६
एमां कुमारस्तरुण आ वत्सो जगता सह। एमां परिस्रुतः कुम्भ आ दध्नः कलशैरगुः ७(१५)
पूर्णं नारि प्र भर कुम्भमेतं घृतस्य धारामभूतेन संभृताम्।
इमां पातॄनमृतेना समङ्ग्धीष्टापूर्तमभि रक्षात्येनाम् ८
इमा आपः प्र भराम्ययक्ष्मा यक्ष्मनाशनीः। गृहानुप प्र सीदाम्यमृतेन सहाग्निना ९ १९९

× सा. २७५। + अथर्व. ७,६०,१,३ पाठभेदेन,५।

॥ ६ ॥ (अथर्व० ५।९।१-८)

वास्तोष्पतिः, आत्मा । १,५ दैवी बृहती; २,६ दैवी त्रिष्टुप्; ३,४ दैवी जगती; ७ विराडुष्णिग्बृहतीगर्भा पञ्चपदा जगती, ८ पुरस्कृतित्रिष्टुब्बृहतीगर्भा चतुष्पदा त्र्यवसाना जगती ।

दिवे स्वाहा १ । पृथिव्यै स्वाहा २ । अन्तरिक्षाय स्वाहा ३
अन्तरिक्षाय स्वाहा ४ । दिवे स्वाहा ५ । पृथिव्यै स्वाहा ६
सूर्यो मे चक्षुर्वातः प्राणो३ऽन्तरिक्षमात्मा पृथिवी शरीरम् ।
अस्तृतो नामाहमयमस्मि स आत्मानं नि दधे द्यावापृथिवीभ्यां गोपीथाय ७
उदायुरुद्बलमुत्कृतमुत्कृत्यामुन्मनीषामुदिन्द्रियम् ।
आयुष्कृदायुष्पत्नी स्वधावन्तौ गोपा मे स्तं गोपायतं मा ।
आत्मसदौ मे स्तं मा मा हिंसिष्टम् ८(२५)२०७

॥ ७ ॥ (अथर्व० ५।१०।१-८)

१-६ यवमध्या त्रिपदा गायत्री; ७ यवमध्या ककुप्; ८ पुरोधृतिद्व्यनुष्टुब्गर्भा पराष्टिस्त्र्यवसाना चतुष्पदातिजगती ।

अश्मवर्म मेऽसि यो मा प्राच्या दिशोऽघायुरभिदासात् । एतत् स ऋच्छात् १
अश्मवर्म मेऽसि यो मा दक्षिणाया दिशोऽघायुरभिदासात् । एतत् स ऋच्छात् २
अश्मवर्म मेऽसि यो मा प्रतीच्या दिशोऽघायुरभिदासात् । एतत् स ऋच्छात् ३
अश्मवर्म मेऽसि यो मोदीच्या दिशोऽघायुरभिदासात् । एतत् स ऋच्छात् ४
अश्मवर्म मेऽसि यो मा ध्रुवाया दिशोऽघायुरभिदासात् । एतत् स ऋच्छात् ५(३०)
अश्मवर्म मेऽसि यो मोर्ध्वाया दिशोऽघायुरभिदासात् । एतत् स ऋच्छात् ६
अश्मवर्म मेऽसि यो मा दिशामन्तर्देशेभ्योऽघायुरभिदासात् । एतत् स ऋच्छात् ७
बृहता मन उप ह्वये मातरिश्वना प्राणापानौ ।
सूर्याच्चक्षुरन्तरिक्षाच्छ्रोत्रं पृथिव्याः शरीरम् । सरस्वत्या वाचमुप ह्वयामहे मनोयुजा ८

॥ ८ ॥ (अथर्व० ५।२६।१-१२)

वास्तोष्पतिः, १ अग्निः, २ सविता, ३,११ इन्द्रः, ४ निविदः, ५ मरुतः, ६ अदितिः, ७ विष्णुः, ८ त्वष्टा, ९ भगः, १० सोमः, १२ अश्विनौ, बृहस्पतिः । १,५ द्विपदार्षी उष्णिक्; २,४,६,७,८,१०,११ द्विपदा प्राजापत्या बृहती; ३ त्रिपदा विराड् गायत्री; ९ त्रिपदा पिपीलिकमध्या पुरउष्णिक्; (१-११ एकावसानाः) १२ परातिशक्वरी, चतुष्पदा गायत्री ।

यजूंषि यज्ञे समिधः स्वाहाऽग्निः प्रविद्वानिह वो युनक्तु १
युनक्तु देवः सविता प्रजानन्नस्मिन् यज्ञे महिषः स्वाहा २(३५)२१७

इन्द्र उक्थामदान्यस्मिन् यज्ञे प्रविद्वान् युनक्तु सुयुजः स्वाहा ३ ३१८
प्रैषा यज्ञे निविदः स्वाहा शिष्टाः पत्नीभिर्वहतेह युक्ताः ४
छन्दांसि यज्ञे मरुतः स्वाहा मातेव पुत्रं पिपृतेह युक्ताः ५
एयमगन् बर्हिषा प्रोक्षणीभिर्यज्ञं तन्वानादितिः स्वाहा ६
विष्णुर्युनक्तु बहुधा तपांस्यस्मिन् यज्ञे सुयुजः स्वाहा ७(४०)
त्वष्टा युनक्तु बहुधा नु रूपा अस्मिन् यज्ञे सुयुजः स्वाहा ८
भगो युनक्त्वाशिषो न्व१स्मा अस्मिन् यज्ञे प्रविद्वान् युनक्तु सुयुजः स्वाहा ९
सोमो युनक्तु बहुधा पयांस्यस्मिन् यज्ञे सुयुजः स्वाहा १०
इन्द्रो युनक्तु बहुधा वीर्या॒ण्यस्मिन् यज्ञे सुयुजः स्वाहा ११
अश्विना ब्रह्मणा यातमर्वाञ्चौ वषट्कारेण यज्ञं वर्धयन्तौ ।
बृहस्पते ब्रह्मणा याह्यर्वाङ् यज्ञो अयं स्व॒रिदं यजमानाय स्वाहा १२(४५)

॥ ९ ॥ (अथर्व० ७।६०।१-७)

गृहाः, वास्तोष्पतिः । अनुष्टुप् , १ पराऽनुष्टुप् त्रिष्टुप् ।

ऊर्जं बिभ्रद्वसुवनिः सुमेधा अघोरेण चक्षुषा मित्रियेण ।
गृहानैमि सुमना वन्दमानो रमध्वं मा बिभीत मत् १
इमे गृहा मयोभुव ऊर्जस्वन्तः पयस्वन्तः । पूर्णा वामेन तिष्ठन्तस्ते नो जानन्त्वायतः २
येषामध्येति प्रवसन् येषु सौमनसो बहुः । गृहानुप ह्वयामहे ते नो जानन्त्वायतः ३ ३३०
उपहूता भूरिधनाः सखायः स्वादुसंमुदः । अक्षुध्या अतृष्या स्त गृहा माऽस्मद्बिभीतन ४
उपहूता इह गाव उपहूता अजावयः । अथो अन्नस्य कीलाल उपहूतो गृहेषु नः ५
सूनृतावन्तः सुभगा इरावन्तो हसामुदाः । अतृष्या अक्षुध्या स्त गृहा माऽस्मद्बिभीतन ६
इहैव स्त माऽनु गात विश्वा रूपाणि पुष्यत। ऐष्यामि भद्रेणा सह भूयांसो भवता मया ७(५२)

॥ १० ॥ (अथर्व० ६।७३।३)

(५३) अथर्वा । भुरिक् ।

इहैव स्त माप यात्माध्यस्मत् पूषा परस्तादपथं वः कृणोतु ।
वास्तोष्पतिरनु वो जोहवीतु मयि सजाता रमतिर्वो अस्तु ३

॥ ११ ॥ (अथर्व० ६।१०६।१-३)

(५४-५६) प्रमोचनः । दूर्वाशाला । अनुष्टुप् ।

आयने ते परायणे दूर्वा रोहतु पुष्पिणीः । उत्सो वा तत्र जायतां ह्रदो वा पुण्डरीकवान् १ ३३६

अपामिदं न्ययनं समुद्रस्य निवेशनम् । मध्ये ह्रदस्य नो गृहाः पराचीना मुखा कृधि २
हिमस्य त्वा जरायुणा शाले परि व्ययामसि । शीतह्रदा हि नो भुवोऽग्निष्कृणोतु भेषजम्३(५६)

॥ १२ ॥ (अथर्व० ९।३।१-३१)

(५७-८७) भृग्वङ्गिराः । शाला । अनुष्टुप् ; ६ पथ्यापङ्क्तिः; ७ परोष्णिक्; १५ त्र्यवसाना पञ्चपदातिशक्वरी; १७ प्रस्तारपङ्क्तिः; २१ आस्तारपङ्क्तिः; २५,३१ त्रिपदा प्राजापत्या बृहती; २६ साम्नी त्रिष्टुप् ; २७-३० प्रतिष्ठानाम गायत्री; (२५-३१ एकावसाना त्रिपदा) ।

उपमितां प्रतिमितामथो परिमितामुत । शालाया विश्ववाराया नद्धानि वि चृतामसि १
यत् ते नद्धं विश्ववारे पाशो ग्रन्थिश्च यः कृतः ।
बृहस्पतिरिवाहं बलं वाचा वि स्रंसयामि तत् २. ३४०
आ ययाम सं बबर्ह ग्रन्थींश्चकार ते दृढान् । परूंषि विद्वांछस्तेवेन्द्रेण वि चृतामसि ३
वंशानां ते नहनानां प्राणाहस्य तृणस्य च । पक्षाणां विश्ववारे ते नद्धानि वि चृतामसि ४(६०)
संदंशानां पलदानां परिष्वञ्जल्यस्य च । इदं मानस्य पत्न्या नद्धानि वि चृतामसि ५
यानि तेऽन्तः शिक्यान्याबेधू रण्याय कम् ।
प्र ते तानि चृतामसि शिवा मानस्य पत्नी न उद्धिता तन्वे भव ६
हविर्धानमग्निशालं पत्नीनां सदनं सदः । सदो देवानामसि देवि शाले ७
अक्षुमोपशं विततं सहस्राक्षं विषूवति । अवनद्धमभिहितं ब्रह्मणा वि चृतामसि ८
यस्त्वा शाले प्रतिगृह्णाति येन चासि मिता त्वम् ।
उभौ मानस्य पत्नि तौ जीवतां जरदष्टी ९(६५)
अमुत्रैनमा गच्छताद् दृढा नद्धा परिष्कृता । यस्यास्ते विचृतामस्यङ्गमङ्गं परुष्परुः १०
यस्त्वा शाले निमिमाय संजभार वनस्पतीन् । प्रजायै चक्रे त्वा शाले परमेष्ठी प्रजापतिः ११
नमस्तस्मै नमो दात्रे शालापतये च कृण्मः । नमोऽग्नये प्रचरते पुरुषाय च ते नमः १२ ३५०
गोभ्यो अश्वेभ्यो नमो यच्छालायां विजायते। विजावति प्रजावति वि ते पाशांश्चृतामसि १३
अग्निमन्तश्छादयसि पुरुषान् पशुभिः सह । विजावति प्रजावति वि ते पाशांश्चृतामसि १४(७०)
अन्तरा द्यां च पृथिवीं च यद् व्यचस्तेन शालां प्रति गृह्णामि त इमाम् ।
यदन्तरिक्षं रजसो विमानं तत् कृण्वेऽहमुदरं शेवधिभ्यः ।
तेन शालां प्रति गृह्णामि तस्मै १५
ऊर्जस्वती पयस्वती पृथिव्यां निमिता मिता । विश्वान्नं बिभ्रती शाले मा हिंसीः प्रतिगृह्णतः १६ ३५४

तृणैरावृता पलदान् वसाना रात्रीव शाला जगतो निवेशनी।
मिता पृथिव्यां तिष्ठसि हस्तिनीव पद्वती १७ ३५५
इटस्य ते वि चृताम्यपिनद्धमपोर्णुवन्। वरुणेन समुब्जितां मित्रः प्रातर्व्युब्जतु १८
ब्रह्मणा शालां निमितां कविभिर्निमितां मिताम्।
इन्द्राग्नी रक्षतां शालाममृतौ सोम्यं सदः १९(७५)
कुलायेऽधि कुलायं कोशे कोशः समुब्जितः। तत्र मर्तो वि जायते यस्माद्विश्वं प्रजायते २०
या द्विपक्षा चतुष्पक्षा षट्पक्षा या निमीयते।
अष्टापक्षां दशपक्षां शालां मानस्य पत्नीमग्निर्गर्भ इवा शये २१
प्रतीचीं त्वा प्रतीचीनः शाले प्रैम्यहिंसतीम्। अग्निर्ह्य१न्तरापश्च ऋतस्य प्रथमा द्वाः २२ ३६०
इमा आपः प्र भराम्ययक्ष्मा यक्ष्मनाशनीः। गृहानुप प्र सीदाम्यमृतेन सहाग्निना २३
मा नः पाशं प्रति मुचो गुरुर्भारो लघुर्भव। वधूमिव त्वा शाले यत्रकामं भरामसि २४(८०)
प्राच्या दिशः शालाया नमो महिम्ने स्वाहा देवेभ्यः स्वाह्येभ्यः २५
दक्षिणाया दिशः शालाया नमो महिम्ने स्वाहा देवेभ्यः स्वाह्येभ्यः २६
प्रतीच्या दिशः शालाया नमो महिम्ने स्वाहा देवेभ्यः स्वाह्येभ्यः २७
उदीच्या दिशः शालाया नमो महिम्ने स्वाहा देवेभ्यः स्वाह्येभ्यः २८
ध्रुवाया दिशः शालाया नमो महिम्ने स्वाहा देवेभ्यः स्वाह्येभ्यः २९(८५)
ऊर्ध्वाया दिशः शालाया नमो महिम्ने स्वाहा देवेभ्यः स्वाह्येभ्यः ३०
दिशोदिशः शालाया नमो महिम्ने स्वाहा देवेभ्यः स्वाह्येभ्यः ३१ ३६१

१४ वेनः।

॥ १ ॥ (ऋ० १०।१२३।१-८)+

(१—८) वेनो भार्गवः । त्रिष्टुप् ।

अयं वेनश्चोदयत् पृश्निगर्भा ज्योतिर्जरायू रजसो विमाने ।
इममपां संगमे सूर्यस्य शिशुं न विप्रा मतिभी रिहन्ति ॥ १ ॥ ३७०
समुद्रादूर्मिमुदियर्ति वेनो नभोजाः पृष्ठं हर्यतस्य दर्शि ।
ऋतस्य सानावधि विष्टपि भ्राट् समानं योनिमभ्यनूषत व्राः ॥ २ ॥
समानं पूर्वीरभि वावशाना स्तिष्ठन् वत्सस्य मातरः सनीळाः ।
ऋतस्य सानावधि चक्रमाणा रिहन्ति मध्वो अमृतस्य वाणीः ॥ ३ ॥
जानन्तो रूपमकृपन्त विप्रा मृगस्य घोषं महिषस्य हि ग्मन् ।
ऋतेन यन्तो अधि सिन्धुमस्थु र्विदद्गन्धर्वो अमृतानि नाम ॥ ४(५) ॥
अप्सरा जारमुपसिष्मियाणा योषा बिभर्ति परमे व्योमन् ।
चरत्प्रियस्य योनिषु प्रियः स न्त्सीदत् पक्षे हिरण्यये स वेनः ॥ ५ ॥
नाके सुपर्णमुप यत् पतन्तं हृदा वेनन्तो अभ्यचक्षत त्वा ।
हिरण्यपक्षं वरुणस्य दूतं यमस्य योनौ शकुनं भुरण्युम् ॥ ६ ॥
ऊर्ध्वो गन्धर्वो अधि नाके अस्थात् प्रत्यङ् चित्रा बिभ्रदस्यायुधानि ।
वसानो अत्कं सुरभिं दृशे कं स्व१र्ण नाम जनत प्रियाणि ॥ ७ ॥
द्रप्सः समुद्रमभि यज्जिगाति पश्यन् गृध्रस्य चक्षसा विधर्मन् ।
भानुः शुक्रेण शोचिषा चकान स्तृतीये चक्रे रजसि प्रियाणि ॥ ८ ॥

॥ २ ॥ (वा० य० ३३।२१)

तं प्रत्नथा ऽयं वेनः ॥ ११ ॥ ×९ ३७८

+ ऋ १०।१२३।१, ६—८ = वा. य. ७, १६; सा. ३२०; १८४६-४८।

× वा य. ३३, ३३; ४७; ५८, ७३।

१५ विश्वकर्मा।

॥ १ ॥ (ऋ० १०।८१।१-७)+

(१-१४) विश्वकर्मा भौवनः। त्रिष्टुप्, २ विराड्रूपा।

य इमा विश्वा भुवनानि जुह्व॒दृषिर्होता न्यसीदत् पिता नः।
स आशिषा द्रविणमिच्छमानः प्रथमच्छदवराँ आ विवेश १
किं स्विदासीदधिष्ठानमारम्भणं कतमत् स्वित् कथासीत्।
यतो भूमिं जनयन् विश्वकर्मा वि द्यामौर्णोन्महिना विश्वचक्षाः २ ३८०
विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतोबाहुरुत विश्वतस्पात्।
सं बाहुभ्यां धमति सं पतत्रै॒र्द्यावाभूमी जनयन् देव एकः ३
किं स्विद्वनं क उ स वृक्ष आस यतो द्यावापृथिवी निष्टतक्षुः।
मनीषिणो मनसा पृच्छतेदु त॒द्यदध्यतिष्ठद् भुवनानि धारयन् ४
या ते धामानि परमाणि यावमा या मध्यमा विश्वकर्मन्नुतेमा।
शिक्षा सखिभ्यो हविषि स्वधावः स्वयं यजस्व तन्वं वृधानः ५(५)
विश्वकर्मन् हविषा वावृधानः स्वयं यजस्व पृथिवीमुत द्याम्।
मुह्यन्त्वन्ये अभितो जनास इहास्माकं मघवा सूरिरस्तु ६
वाचस्पतिं विश्वकर्माणमूतये मनोजुवं वाजे अद्या हुवेम।
स नो विश्वानि हवनानि जोषद् विश्वशम्भूरवसे साधुकर्मा ७ ३८५

॥ २ ॥ (ऋ० १०।८२।१-७) त्रिष्टुप्।*

चक्षुषः पिता मनसा हि धीरो घृतमेने अजनन्नम्नमाने।
यदेदन्ता अददृहन्त पूर्व आदिद् द्यावापृथिवी अप्रथेताम् १
विश्वकर्मा विमना आद्विहाया धाता विधाता परमोत संदृक्।
तेषामिष्टानि समिषा मदन्ति यत्रा सप्तऋषीन् पर एकमाहुः २
यो नः पिता जनिता यो विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा।
यो देवानां नामधा एक एव तं संप्रश्नं भुवना यन्त्यन्या ३(१०)
त आयजन्त द्रविणं समस्मा ऋषयः पूर्वे जरितारो न भूना।
असूर्ते सूर्ते रजसि निषत्ते ये भूतानि समकृण्वन्निमानि ४ ३८९

+ वा० य० १७, १७-२३। ऋ० १०, ८१, ६ = सा० १५८९। * वा. य. १७,२५-३१।

परो दिवा पर एना पृथिव्या परो देवेभिरसुरैर्यदस्ति ।
कं स्विद्गर्भं प्रथमं दध्र आपो यत्र देवाः समपश्यन्त विश्वे ५ ३९०
तमिद्गर्भं प्रथमं दध्र आपो यत्र देवाः समगच्छन्त विश्वे ।
अजस्य नाभावध्येकमर्पितं यस्मिन् विश्वानि भुवनानि तस्थुः ६
न तं विदाथ य इमा जजानान्यद्युष्माकमन्तरं बभूव ।
नीहारेण प्रावृता जल्प्या चासुतृप उक्थशासश्चरन्ति ७(१४)

॥ ३ ॥ [१५-२२] (वा० य० ५।११)

विश्वकर्मा त्वाऽऽदित्यैरुत्तरतः पातु ११

॥ ४ ॥ (वा० य० ८।४६,५४)×

विश्वकर्मन् हविषा वर्धनेन त्रातारमिन्द्रमकृणोरवध्यम् ।
तस्मै विशः समनमन्त पूर्वीरयमुग्रो विहव्यो यथासत् ॥
उपयामगृहीतोऽसीन्द्राय त्वा विश्वकर्मण एष ते योनिरिन्द्राय त्वा विश्वकर्मणे ४६
विश्वकर्मा दीक्षायाम् ५३ ३९५

॥ ५ ॥ (वा० य० ११।४३)

विश्वकर्मणे स्वाहा ४३

॥ ६ ॥ (वा० य० १४।९,११,१४)

विश्वकर्मा वयः परमेष्ठी छन्दः ९
विश्वकर्मा त्वा सादयत्वन्तरिक्षस्य पृष्ठे व्यचस्वतीं प्रथस्वतीमन्तरिक्षं यच्छान्तरिक्षं
दृꣳहान्तरिक्षं मा हिꣳसीः १२(२०)
विश्वकर्मा त्वा सादयत्वन्तरिक्षस्य पृष्ठे ज्योतिष्मतीम् १४

॥ ७ ॥ (वा० य० १७।३२)

विश्वकर्मा ह्यजनिष्ट देव आदिद् गन्धर्वो अभवद् द्वितीयः ।
तृतीयः पिता जनितौषधीनामपां गर्भं व्यदधात् पुरुत्रा ३२

॥ ८ ॥ (अथर्व० २।३५।१-५)

(२३-२७) अङ्गिराः । त्रिष्टुप् , १ बृहतीगर्भा; ४-५ भुरिक् ।

ये भक्षयन्तो न वसून्यानृधुर्यानग्नयो अन्वतप्यन्त धिष्ण्याः ।
या तेषामवया दुरिष्टिः स्विष्टिं नस्तां कृणवद् विश्वकर्मा १
यज्ञपतिमृषय एनसाहुर्निर्भक्तं प्रजा अनुतप्यमानम् ।
मधव्यान्त्स्तोकानप यान् रराध सं नष्टेभिः सृजतु विश्वकर्मा २ ४०१

× वा. य. ८।४५ [दृ. च.] ।

अवान्यान्त्सोमपान् मन्यमानो यज्ञस्य विद्वान्त्समये न धीरः।
यदेनश्चकृवान् बद्ध एष तं विश्वकर्मन् प्र मुञ्चा स्वस्तये ३(२५)
घोरा ऋषयो नमो अस्त्वेभ्यश्चक्षुर्यदेषां मनसश्च सत्यम्।
बृहस्पतये महिष द्युमन्नमो विश्वकर्मन् नमस्ते पाह्य१स्मान् ४
यज्ञस्य चक्षुः प्रभृतिर्मुखं च वाचा श्रोत्रेण मनसा जुहोमि।
इमं यज्ञं विततं विश्वकर्मणा देवा यन्तु सुमनस्यमानाः ५ ४०५

॥ ९ ॥ (अथर्व० ६।१२२।१-५)
(२८-३२) भृगुः। त्रिष्टुप्, ४—५ जगती।

एतं भागं परि ददामि विद्वान् विश्वकर्मन् प्रथमजा ऋतस्य।
अस्माभिर्दत्तं जरसः परस्तादच्छिन्नं तन्तुमनु सं तरेम १
ततं तन्तुमन्वेके तरन्ति येषां दत्तं पित्र्यमायनेन।
अबन्ध्वेके ददतः प्रयच्छन्तो दातुं चेच्छिक्षान्त्स स्वर्ग एव २
अन्वारभेथामनुसंरभेथामेतं लोकं श्रद्दधानाः सचन्ते।
यद्वां पक्वं परिविष्टमग्नौ तस्य गुप्तये दम्पती सं श्रयेथाम् ३(३०)
यज्ञं यन्तं मनसा बृहन्तमन्वारोहामि तपसा सयोनिः।
उपहूता अग्ने जरसः परस्तात् तृतीये नाके सधमादं मदेम ४
शुद्धाः पूता योषितो यज्ञिया इमा ब्रह्मणा हस्तेषु प्रपृथक् सादयामि।
यत्काम इदमभिषिञ्चामि वोऽहमिन्द्रो मरुत्वान्त्स ददातु तन्मे ५ ४१०

॥ १० ॥ (अथर्व० १९।१७।७)
(३३-३४) अथर्वा। अतिजगती।

विश्वकर्मा मा सप्तऋषिभिरुदीच्या दिशः पातु तस्मिन् क्रमे तस्मिञ्छ्रये तां पुरं प्रैमि।
स मा रक्षतु स मा गोपायतु तस्मा आत्मानं परि ददे स्वाहा ७

॥ ११ ॥ (अथर्व० १९।१८।७) द्विपदा प्राजापत्या त्रिष्टुप्।

विश्वकर्माणं ते सप्तऋषिवन्तमृच्छन्तु। ये माघायव उदीच्या दिशोऽभिदासात् ७ ४११



१६ सदसस्पतिः ।

॥ १ ॥ (ऋ० १।१८।६-९)

(१-४) मेधातिथिः काण्वः । (९ नराशंसो वा) । गायत्री ।

सदसस्पतिमद्भुतं प्रियमिन्द्रस्य काम्यम् । सनिं मेधामयासिषम् ६*

यस्मादृते न सिध्यति यज्ञो विपश्चितश्चन । स धीनां योगमिन्वति ७

आदृध्नोति हविष्कृतिं प्राञ्चं कृणोत्यध्वरम् । होत्रा देवेषु गच्छति ८

नराशंसं सुधृष्टम मपश्यं सप्रथस्तमम् । दिवो न सद्ममखसम् ९ ४१६

१७ अहिः, अहिर्बुध्न्यः ।

॥ १ ॥ (ऋ० २।३१।६)+

(१) गृत्समद (आङ्गिरसः शौनहोत्रः पश्चाद्) भार्गवः शौनकः । जगती ।

उत वः शंसमुशिजामिव श्म स्यहिर्बुध्न्योऽज एकपादुत ।
त्रित ऋभुक्षाः सविता चनो दधेऽपां नपादाशुहेमा धिया शमि ६

॥ २ ॥ (ऋ० ७।३४।१६-१७)

(१-३) मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । द्विपदा विराट् ।

अब्जामुक्थैरहिं गृणीषे बुध्ने नदीनां रजःसु षीदन् १६

मा नोऽहिर्बुध्न्यो रिषे धा न्मा यज्ञो अस्य स्रिधदृतायोः १७

॥ ३ ॥ (वा० य० ३४।५३)×

उत नोऽहिर्बुध्न्यः शृणो त्वज एकपात् पृथिवी समुद्रः ।
विश्वे देवा ऋतावृधो हुवानाः स्तुता मन्त्राः कविशस्ता अवन्तु ५३ ४१०

* वा. य. ३२,१३; सा. १७१ ।

+ दै० [विश्वे देवाः] १६३ । × दै० [विश्वे देवाः] ३९१ ।

१८ बृहस्पतिः ।

॥ १ ॥ (ऋ० १।१३९।१०)

(१) परुच्छेपो दैवोदासिः । अत्यष्टिः ।

होता यक्षद् वनिनो वन्त वार्यं बृहस्पतिर्यजति वेन उक्षभिः पुरुवारेभिरुक्षभिः ।
जगृभ्मा दूरआदिशं श्लोकमद्रेरध त्मना ।
अधारयदररिन्दानि सुक्रतुः पुरू सद्मानि सुक्रतुः १०(१)

॥ २ ॥ (ऋ० १।१९०।१-८)

(२-९) अगस्त्यो मैत्रावरुणिः । त्रिष्टुप् ।

अनर्वाणं वृषभं मन्द्रजिह्वं बृहस्पतिं वर्धया नव्यमर्कैः ।
गाथान्यः सुरुचो यस्य देवा आशृण्वन्ति नवमानस्य मर्ताः १ ४२२
तमृत्विया उप वाचः सचन्ते सर्गो न यो देवयतामसर्जि ।
बृहस्पतिः स ह्यञ्जो वरांसि विभ्वाभवत् समृते मातरिश्वा २
उपस्तुतिं नमस उद्यतिं च श्लोकं यंसत् सवितेव प्र बाहू ।
अस्य क्रत्वाहन्यो३ यो अस्ति मृगो न भीमो अरक्षसस्तुविष्मान् ३
अस्य श्लोको दिवीयते पृथिव्यामत्यो न यंसद् यक्षभृद् विचेताः ।
मृगाणां न हेतयो यन्ति चेमा बृहस्पतेरहिमायाँ अभि द्यून् ४(५)

ये त्वा देवोस्रिकं मन्यमानाः पापा भद्रमुपजीवन्ति पज्राः ।
न दूढ्ये३ अनु ददासि वामं बृहस्पते चयस इत् पियारुम् ५
सुप्रैतुः सूयवसो न पन्था दुर्नियन्तुः परिप्रीतो न मित्रः ।
अनर्वाणो अभि ये चक्षते नो ऽपीवृता अपोर्णुवन्तो अस्थुः ६
सं यं स्तुभोऽवनयो न यन्ति समुद्रं न स्रवतो रोधचक्राः ।
स विद्वाँ उभयं चष्टे अन्तर्बृहस्पतिस्तर आपश्च गृध्रः ७
एवा महस्तुविजातस्तुविष्मान् बृहस्पतिर्वृषभो धायि देवः ।
स नः स्तुतो वीरवद् धातु गोमद् विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् ८ ४१९

॥ ३ ॥ (ऋ० २।२३।२-४,६-८,१०,१२-१६,१८)
(१०-२५) गृत्समदः शौनकः । जगती, १५ त्रिष्टुप् ।

देवाश्चित् ते असुर्य प्रचेतसो बृहस्पते यज्ञियं भागमानशुः ।
उस्रा इव सूर्यो ज्योतिषा महो विश्वेषामिज्जनिता ब्रह्मणामसि २(१०)४३०

आ विबाध्या परिरापस्तमांसि च ज्योतिष्मन्तं रथमृतस्य तिष्ठसि ।
बृहस्पते भीममममित्रदम्भनं रक्षोहणं गोत्रभिदं स्वर्विदम् ३

सुनीतिभिर्नयसि त्रायसे जनं यस्तुभ्यं दाशान्न तमंहो अश्नवत् ।
ब्रह्मद्विषस्तपनो मन्युमीरसि बृहस्पते महि तत् ते महित्वनम् ४

त्वं नो गोपाः पथिकृद् विचक्षण-स्तव व्रताय मतिभिर्जरामहे ।
बृहस्पते यो नो अभि ह्वरो दधे स्वा तं मर्मर्तु दुच्छुना हरस्वती ६

उत वा यो नो मर्चयादनागसो ऽरातीवा मर्तः सानुको वृकः ।
बृहस्पते अप तं वर्तया पथः सुगं नो अस्यै देववीतये कृधि ७

त्रातारं त्वा तनूनां हवामहे ऽवस्पर्तरधिवक्तारमस्मयुम् ।
बृहस्पते देवनिदो नि बर्हय मा दुरेवा उत्तरं सुम्नमुन्नशन् ८(१५)

त्वया वयमुत्तमं धीमहे वयो बृहस्पते पप्रिणा सस्निना युजा ।
मा नो दुःशंसो अभिदिप्सुरीशत प्र सुशंसा मतिभिस्तारिषीमहि १०

अदेवेन मनसा यो रिषण्यति शासामुग्रो मन्यमानो जिघांसति ।
बृहस्पते मा प्रणक् तस्य नो वधो नि कर्म मन्युं दुरेवस्य शर्धतः १२

भरेषु हव्यो नमसोपसद्यो गन्ता वाजेषु सनिता धनंधनम् ।
विश्वा इदर्यो अभिदिप्स्वो३ मृधो बृहस्पतिर्वि ववर्हा रथाँ इव १३

तेजिष्ठया तपनी रक्षसस्तप ये त्वा निदे दधिरे दृष्टवीर्यम् ।
आविस्तत् कृष्व यदसत् त उक्थ्यं१ बृहस्पते वि परिरापो अर्दय १४

बृहस्पते अति यदर्यो अर्हाद् द्युमद् विभाति क्रतुमज्जनेषु ।
यद्दीदयच्छवस ऋतप्रजात तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम् +१५(१०)४४०

मा नः स्तेनेभ्यो ये अभि द्रुहस्पदे निरामिणो रिपवोऽन्नेषु जागृधुः ।
आ देवानामोहते वि व्रयो हृदि बृहस्पते न परः साम्नो विदुः १६

तव श्रिये व्यजिहीत पर्वतो गवां गोत्रमुदसृजो यदङ्गिरः ।
इन्द्रेण युजा तमसा परीवृतं बृहस्पते निरपामौब्जो अर्णवम् १८ ४४१

+ वा. य. २६,३ ।

॥ ४ ॥ (ऋ० २।२४।१,१०) जगती ।

सेमामविड्ढि प्रभृतिं य ईशिषे ऽया विधेम नवया महा गिरा ।
यथा नो मीढ्वान्त्स्तवते सखा तव बृहस्पते सीषधः सोत नो मतिम् १

विभु प्रभु प्रथमं मेहनावतो बृहस्पतेः सुविदत्राणि राध्या ।
इमा सातानि वेन्यस्य वाजिनो येन जना उभये भुञ्जते विशः १०

॥ ५ ॥ (ऋ० २।३०।९) त्रिष्टुप् ।

यो नः सनुत्य उत वा जिघत्नु रभिख्याय तं तिगितेन विध्य ।
बृहस्पत आयुधैर्जेषि शत्रून् द्रुहे रीषन्तं परि धेहि राजन् ९(२५)

॥ ६ ॥ (ऋ० ३।६२।४-६)
(२६-२८) विश्वामित्रो गाथिनः । गायत्री ।

बृहस्पते जुषस्व नो हव्यानि विश्वदेव्य । रास्व रत्नानि दाशुषे ४
शुचिमर्कैर्बृहस्पतिं मध्वरेषु नमस्यत । अनाम्योज आ चके ५
वृषभं चर्षणीनां विश्वरूपमदाभ्यम् । बृहस्पतिं वरेण्यम् ६

॥ ७ ॥ (ऋ० ४।५०।१-९)*
(२९-३७) वामदेवो गौतमः । त्रिष्टुप् , १० जगती ।

यस्तस्तम्भ सहसा वि ज्मो अन्तान् बृहस्पतिस्त्रिषधस्थो रवेण ।
तं प्रत्नास ऋषयो दीध्यानाः पुरो विप्रा दधिरे मन्द्रजिह्वम् १

धुनेतयः सुप्रकेतं मदन्तो बृहस्पते अभि ये नस्ततस्रे ।
पृषन्तं सृप्रमदब्धमूर्वं बृहस्पते रक्षतादस्य योनिम् २(३०)४५०

बृहस्पते या परमा परावद त आ त ऋतस्पृशो नि षेदुः ।
तुभ्यं खाता अवता अद्रिदुग्धा मध्वः श्चोतन्त्यभितो विरप्शम् ३

बृहस्पतिः प्रथमं जायमानो महो ज्योतिषः परमे व्योमन् ।
सप्तास्यस्तुविजातो रवेण वि सप्तरश्मिरधमत् तमांसि ४

स सुष्टुभा स ऋक्वता गणेन वलं रुरोज फलिगं रवेण ।
बृहस्पतिरुस्रिया हव्यसूदः कनिक्रदद् वावशतीरुदाजत् ५

एवा पित्रे विश्वदेवाय वृष्णे यज्ञैर्विधेम नमसा हविर्भिः ।
बृहस्पते सुप्रजा वीरवन्तो वयं स्याम पतयो रयीणाम् ६ ४५४

---

* ऋ. ४, ५०, १-६, १०-११ = अथर्व. २०, ८८, १-६; दै० [इन्द्रः] ३३२३-२४ । ऋ. ५,४२,७-९, ४३,१२ (बृहस्पतिः) = दै० [विश्वे देवाः] २६६-६८, २८८ ।

स इद् राजा प्रतिजन्यानि विश्वा शुष्मेण तस्थावभि वीर्येण ।
बृहस्पतिं यः सुभृतं बिभर्ति वल्गूयति वन्दते पूर्वभाजम् ७ ४५५
स इत् क्षेति सुधित ओकसि स्वे तस्मा इळा पिन्वते विश्वदानीम् ।
तस्मै विशः स्वयमेवा नमन्ते यस्मिन् ब्रह्मा राजनि पूर्व एति ८
अप्रतीतो जयति सं धनानि प्रतिजन्यान्युत या सजन्या ।
अवस्यवे यो वरिवः कृणोति ब्रह्मणे राजा तमवन्ति देवाः ९(३७)

॥ ८ ॥ (ऋ० ६।७३।१-३) ×
(३८-४०) भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । त्रिष्टुप् ।

यो अद्रिभित् प्रथमजा ऋतावा बृहस्पतिराङ्गिरसो हविष्मान् ।
द्विबर्हज्मा प्राघर्मसत् पिता न आ रोदसी वृषभो रोरवीति १
जनाय चिद् य ईवत उ लोकं बृहस्पतिर्देवहूतौ चकार ।
घ्नन् वृत्राणि वि पुरो दर्दरीति जयञ्छत्रूँरमित्रान् पृत्सु साहन् २
बृहस्पतिः समजयद् वसूनि महो व्रजान् गोमतो देव एषः ।
अपः सिषासन्त्स्व1रप्रतीतो बृहस्पतिर्हन्त्यमित्रमर्कैः ३ ४६०

॥ ९ ॥ (ऋ० ७।९७।२, ४-८)
(४१-४६) मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । त्रिष्टुप् ।

आ देव्या वृणीमहेऽवांसि बृहस्पतिर्नो मह आ सखायः ।
यथा भवेम मीळ्हुषे अनागा यो नो दाता परावतः पितेव २(४१)
स आ नो योनिं सदतु प्रेष्ठो बृहस्पतिर्विश्ववारो यो अस्ति ।
कामो रायः सुवीर्यस्य तं दात् पर्षन्नो अति सश्चतो अरिष्टान् ४
तमा नो अर्कममृताय जुष्टमिमे धासुरमृतासः पुराजाः ।
शुचिक्रन्दं यजतं पस्त्यानां बृहस्पतिमनर्वाणं हुवेम ५
तं शग्मासो अरुषासो अश्वा बृहस्पतिं सहवाहो वहन्ति ।
सहश्चिद् यस्य नीलवत् सधस्थं नभो न रूपमरुषं वसानाः ६
स हि शुचिः शतपत्रः स शुन्ध्युर्हिरण्यवाशीरिषिरः स्वर्षाः ।
बृहस्पतिः स स्वावेश ऋष्वः पुरू सखिभ्य आसुतिं करिष्ठः ७(४५)
देवी देवस्य रोदसी जनित्री बृहस्पतिं वावृधतुर्महित्वा ।
दक्षाय्याय दक्षता सखायः करद् ब्रह्मणे सुतरा सुगाधा ८ ४६१

× अथर्व. २०, ९०, १-३ ।

॥ १ ॥ ऋ० १०।६७।१-१२)+

(४७-७०) अयास्य आङ्गिरसः । त्रिष्टुप् ।

इमां धियं सप्तशीर्ष्णीं पिता न ऋतप्रजातां बृहतीमविन्दत् ।
तुरीयं स्विज्जनयद् विश्वजन्यो ऽयास्य उक्थमिन्द्राय शंसन् १
ऋतं शंसन्त ऋजु दीध्याना दिवस्पुत्रासो असुरस्य वीराः ।
विप्रं पदमङ्गिरसो दधाना यज्ञस्य धाम प्रथमं मनन्त २
हंसैरिव सखिभिर्वावदद्भि- रश्मन्मयानि नहना व्यस्यन् ।
बृहस्पतिरभिकनिक्रदद्गा उत प्रास्तौदुच्च विद्वाँ अगायत् ३
अवो द्वाभ्यां पर एकया गा गुहा तिष्ठन्तीरनृतस्य सेतौ ।
बृहस्पतिस्तमसि ज्योतिरिच्छ- न्नुदुस्रा आकर्वि हि तिस्र आवः ४(५०)४७०
विभिद्या पुरं शयथेमपाचीं निस्त्रीणि साकमुदधेरकृन्तत् ।
बृहस्पतिरुषसं सूर्यं गा- मर्कं विवेद स्तनयन्निव द्यौः ५
इन्द्रो वलं रक्षितारं दुघानां करेणेव वि चकर्ता रवेण ।
स्वेदाञ्जिभिराशिरमिच्छमानो ऽरोदयत् पणिमा गा अमुष्णात् ६
स ईं सत्येभिः सखिभिः शुचद्भि- र्गोधायसं वि धनसैरदर्दः ।
ब्रह्मणस्पतिर्वृषभिर्वराहै- र्घर्मस्वेदेभिर्द्रविणं व्यानट् ७
ते सत्येन मनसा गोपतिं गा इयानास इषणयन्त धीभिः ।
बृहस्पतिर्मिथोअवद्यपेभि- रुदुस्रिया असृजत स्वयुग्भिः ८
तं वर्धयन्तो मतिभिः शिवाभिः सिंहमिव नानदतं सधस्थे ।
बृहस्पतिं वृषणं शूरसातौ भरेभरे अनु मदेम जिष्णुम् ९(५५)
यदा वाजमसनद्विश्वरूप- मा द्यामरुक्षदुत्तराणि सद्म ।
बृहस्पतिं वृषणं वर्धयन्तो नाना सन्तो बिभ्रतो ज्योतिरासा १०
सत्यामाशिषं कृणुता वयोधै कीरिं चिद्ध्यवथ स्वेभिरेवैः ।
पश्चा मृधो अप भवन्तु विश्वा- स्तद् रोदसी शृणुतं विश्वमिन्वे ११
इन्द्रो मह्ना महतो अर्णवस्य वि मूर्धानमभिनदर्बुदस्य ।
अहन्नहिमरिणात् सप्त सिन्धून् देवैर्द्यावापृथिवी प्रावतं नः १२(५८)४७८

+ अथर्व० २०, ९१, १-१२ ।

॥ ११ ॥ (ऋ० १०।६८।१-१२)×

उदप्रुतो न वयो रक्षमाणा वावदतो अभ्रियस्येव घोषाः ।
गिरिभ्रजो नोर्मयो मदन्तो बृहस्पतिमभ्यर्का अनावन् १(५९)
सं गोभिराङ्गिरसो नक्षमाणो भग इवेदर्यमणं निनाय ।
जने मित्रो न दंपती अनक्ति बृहस्पते वाजयाशूँरिवाजौ २ ४८०

साध्वर्या अतिथिनीरिषिराः स्पार्हाः सुवर्णा अनवद्यरूपाः ।
बृहस्पतिः पर्वतेभ्यो वितूर्या निर्गा ऊपे यवमिव स्थिविभ्यः ३
आप्रुषायन् मधुन ऋतस्य योनिमवक्षिपन्नर्क उल्कामिव द्योः ।
बृहस्पतिरुद्धरन्नश्मनो गा भूम्या उद्नेव वि त्वचं बिभेद ४
अप ज्योतिषा तमो अन्तरिक्षादुद्नः शीपालमिव वात आजत् ।
बृहस्पतिरनुमृश्या वलस्याभ्रमिव वात आ चक्र आ गाः ५
यदा वलस्य पीयतो जसुं भेद्बृहस्पतिरग्नितपोभिरर्कैः ।
वह्निर्न जिह्वा परिविष्टमाददाविर्निधीँरकृणोदुस्रियाणाम् ६
बृहस्पतिरमत हि त्यदासां नाम स्वरीणां सदने गुहा यत् ।
आण्डेव भित्त्वा शकुनस्य गर्भमुदुस्रियाः पर्वतस्य त्मनाजत् ७(६५)

अश्नापिनद्धं मधु पर्यपश्यन्मत्स्यं न दीन उदनि क्षियन्तम् ।
निष्टज्जभार चमसं न वृक्षाद्बृहस्पतिर्विरवेणा विकृत्य ८
सोषामविन्दत्स स्वः सो अग्निं अर्केण वि बबाधे तमांसि ।
बृहस्पतिर्गोवपुषो वलस्य निर्मज्जानं न पर्वणो जभार ९
हिमेव पर्णा मुषिता वनानि बृहस्पतिनाकृपयद्वलो गाः ।
अनानुकृत्यमपुनश्चकार यात्सूर्यामासा मिथ उच्चरातः १०
अभि श्यावं न कृशनेभिरश्वं नक्षत्रेभिः पितरो द्यामपिंशन् ।
रात्र्यां तमो अदधुर्ज्योतिरहन् बृहस्पतिर्भिनदद्रिं विदद्गाः ११
इदमकर्म नमो अभ्रियाय यः पूर्वीरन्वानोनवीति ।
बृहस्पतिः स हि गोभिः सो अश्वैः स वीरेभिः स नृभिर्नो वयो धात् १२(७०)४९०

× अथर्व. २०, १६, १-१२ ।

॥ १२ ॥ (ऋ० १०।१०३।४) ×
(७१) अप्रतिरथ ऐन्द्रः। त्रिष्टुप्।

बृहस्पते परि दीया रथेन रक्षोहाऽमित्राँ अपबाधमानः।
प्रभञ्जन्त्सेनाः प्रमृणो युधा जयन्नस्माकमेध्यविता रथानाम् ४ ४९१

॥ १३ ॥ (ऋ० १०। १८२ । १-३)
(७२-७४) तपुर्मूर्धा बार्हस्पत्यः। त्रिष्टुप्।

बृहस्पतिर्नयतु दुर्गहा तिरः पुनर्नेषदघशंसाय मन्म।
क्षिपदशस्तिमप दुर्मतिं हन्नथा करद्यजमानाय शं योः १
नराशंसो नोऽवतु प्रयाजे शं नो अस्त्वनुयाजो हवेषु। क्षिपदशस्तिमप दुर्मतिं० २
तपुर्मूर्धा तपतु रक्षसो ये ब्रह्मद्विषः शरवे हन्तवा उ। क्षिपदशस्तिमप दुर्मतिं० ३

॥ १४ ॥ [७५-८३] (वा० य० २।१३)

बृहस्पतिर्यज्ञमिमं तनोत्वरिष्टं यज्ञꣳसमिमं दधातु १३(७५)

॥ १५ ॥ (वा० य० ४।७,२१)

बृहस्पतये हविषा विधेम स्वाहा ७। बृहस्पतिष्ट्वा सुम्ने रम्णातु २१

॥ १६ ॥ (वा० य० ६।८)

रेवती रमध्वं बृहस्पते धारया वसूनि।

॥ १७ ॥ (वा० य० ७। ४७)

बृहस्पतये त्वा मह्यं वरुणो ददातु ४७

॥ १८ ॥ (वा० य० ९।१०-११ पूर्वार्धः)

देवस्याहꣳसवितुः सवे सत्यसवसो बृहस्पतेरुत्तमं नाकꣳरुहेयम्।
देवस्याहꣳसवितुः सवे सत्यप्रसवसो बृहस्पतेरुत्तमं नाकमरुहम्॥ १०(८०)५००
बृहस्पते वाजं जय बृहस्पतये वाचं वदत बृहस्पतिं वाजं जापयत ११

॥ १९ ॥ (वा० य० १०।५)

बृहस्पतये स्वाहा ५

॥ २० ॥ (वा० य० ३६।२)

यन्मे छिद्रं चक्षुषो हृदयस्य मनसो वातितृण्णं बृहस्पतिर्मे तद्दधातु।
शं नो भवतु भुवनस्य यस्पतिः २(८३)

× वा. य. १७, ३६; अथर्व. १९, १३, ८; सा. १८५२।

॥ २१ ॥ (अथर्व० ७।८।१)

(८४) उपरिबभ्रवः । त्रिष्टुप् ।

भद्रादधि श्रेयः प्रेहि बृहस्पतिः पुरएता ते अस्तु ।
अथेममस्या वर आ पृथिव्या आरेशत्रुं कृणुहि सर्ववीरम् १ ५०४

॥२२ ॥ (अथर्व० १९ ।१८।१०)

(८५) अथर्वा । द्विपदा प्राजापत्या त्रिष्टुप् ।

बृहस्पतिं ते विश्वदेववन्तमृच्छन्तु । ये माघायव ऊर्ध्वाया दिशोऽभिदासात् १०(८५)

बृहस्पति-सहचारी देवगणः ।

(१) बृहस्पतिसवितारौ, बृहस्पत्यादयः ।

॥ २३ ॥ [८६-८७] (वा० य० २७।८-९)×

बृहस्पते सवितर्बोधयैनꣳ संशितं चित्सन्तरासꣳ सꣳ शिशाधि ।
वर्धयैनं महते सौभगाय विश्व एनमनु मदन्तु देवाः ८
अमुत्रभूयादध यद्यमस्य बृहस्पते अभिशस्तेरमुञ्चः ।
प्रत्यौहतामश्विना मृत्युमस्माद् देवानामग्ने भिषजा शचीभिः ९ ५०७

(२) त्विषिः, बृहस्पतिः ।

॥ २४ ॥ (अथर्व० ६।३८।१-४)

(८८-९४) अथर्वा (वर्चस्कामः) । त्रिष्टुप् ।

सिंहे व्याघ्र उत या पृदाकौ त्विषिरग्नौ ब्राह्मणे सूर्ये या ।
इन्द्रं या देवी सुभगा जजान सा न ऐतु वर्चसा संविदाना १
या हस्तिनि द्वीपिनि या हिरण्ये त्विषिरप्सु गोषु या पुरुषेषु । इन्द्रं या देवी सुभगा० २
रथे अक्षेष्वृषभस्य वाजे वाते पर्जन्ये वरुणस्य शुष्मे । इन्द्रं या देवी सुभगा० ३(९०)
राजन्ये दुन्दुभावायतायामश्वस्य वाजे पुरुषस्य मायौ । इन्द्रं या देवी सुभगा० ४

॥ २५ ॥ (अथर्व० ६।३९।१-३)

१ जगती, २ त्रिष्टुप्, ३ अनुष्टुप्

यशो हविर्वर्धतामिन्द्रजूतं सहस्रवीर्यं सुभृतं सहस्कृतम् ।
प्रसर्स्राणमनु दीर्घाय चक्षसे हविष्मन्तं मा वर्धय ज्येष्ठतातये १
अच्छा न इन्द्रं यशसं यशोभिर्यशस्विनं नमसाना विधेम ।
स नो रास्व राष्ट्रमिन्द्रजूतं तस्य ते रातौ यशसः स्याम २ ५१३

× अथर्व० ७, १६, १ (पाठभेदेन); ५३, १; दै० [आयुर्वेदः] १४३ ।

यशा इन्द्रो यशा अग्निर्यशाः सोमो अजायत। यशा विश्वस्य भूतस्याहमस्मि यशस्तमः ३ ※

(३) बृहस्पतिः (इन्द्रः, द्यावापृथिवी, सविता)।

॥२६॥ (अथर्व० ६।५८।१-२)
(यशस्कामः)। १ जगती, २ प्रस्तारपङ्क्तिः।

यशसं मेन्द्रो मघवान् कृणोतु यशसं द्यावापृथिवी उभे इमे।
यशसं मा देवः सविता कृणोतु प्रियो दातुर्दक्षिणाया इह स्याम् १
यथेन्द्रो द्यावापृथिव्योर्यशस्वान् यथाऽऽप ओषधीषु यशस्वतीः।
एवा विश्वेषु देवेषु वयं सर्वेषु यशसः स्याम २(९६)

---

१९ ब्रह्मणस्पतिः।

॥ १ ॥ (ऋ० १।१८।१-३)×
(१-३) मेधातिथिः काण्वः। गायत्री।

सोमानं स्वरणं कृणुहि ब्रह्मणस्पते। कक्षीवन्तं य औशिजः १ ५१७
यो रेवान् यो अमीवहा वसुवित् पुष्टिवर्धनः। स नः सिषक्तु यस्तुरः २
मा नः शंसो अररुषो धूर्तिः प्रणङ्मर्त्यस्य। रक्षा णो ब्रह्मणस्पते ३

॥ २ ॥ (ऋ० १।४०।१-८)+
(४-११) कण्वो घौरः। प्रगाथः=[विषमा बृहती+समा सतोबृहती।]

उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते देवयन्तस्त्वेमहे।
उप प्र यन्तु मरुतः सुदानव इन्द्र प्राशूर्भवा सचा १
त्वामिद्धि सहसस्पुत्र मर्त्य उपब्रूते धने हिते।
सुवीर्यं मरुत आ स्वश्व्यं दधीत यो व आचके २ (५)
प्रैतु ब्रह्मणस्पतिः प्र देव्येतु सूनृता।
अच्छा वीरं नर्यं पङ्क्तिराधसं देवा यज्ञं नयन्तु नः ३
यो वाघते ददाति सूनरं वसु स धत्ते अक्षिति श्रवः।
तस्मा इळां सुवीरामा यजामहे सुप्रतूर्तिमनेहसम् ४ ५२३

※ अथ.६,५८,३।× वा. य. ३,२८-३०; सा. १३९। + ऋ. १,४०,१,३,५=वा. य. ३३,८९;३४,५६-५७; सा. ५६।

प्र नूनं ब्रह्मणस्पति- र्मन्त्रं वदत्युक्थ्यम् ।
यस्मिन्निन्द्रो वरुणो मित्रो अर्यमा देवा ओकांसि चक्रिरे ५ ५२४
तमिद् वोचेमा विदथेषु शंभुवं मन्त्रं देवा अनेहसम् ।
इमां च वाचं प्रतिहर्यथा नरो विश्वेद् वामा वो अश्नवत् ६
को देवयन्तमश्नव- ज्जनं को वृक्तबर्हिषम् ।
प्रप्र दाश्वान् पस्त्याभिरस्थिता- न्तर्वावत् क्षयं दधे ७(१०)
उप क्षत्रं पृञ्चीत हन्ति राजभि- र्भये चित् सुक्षितिं दधे ।
नास्य वर्ता न तरुता महाधने नार्भे अस्ति वज्रिणः ८

॥ ३ ॥ (ऋ० २।२३।१,५,९,११,१७,१९)×
(१२-३८) गृत्समद (आङ्गिरसः शौनहोत्रः पश्चात्) भार्गवः । जगती, । १५,१९ त्रिष्टुप् ।

गणानां त्वा गणपतिं हवामहे कविं कवीनामुपमश्रवस्तमम् ।
ज्येष्ठराजं ब्रह्मणां ब्रह्मणस्पत आ नः शृण्वन्नूतिभिः सीद सादनम् १
न तमंहो न दुरितं कुतश्चन नारातयस्तितिरुर्न द्वयाविनः ।
विश्वा इदस्माद् ध्वरसो वि बाधसे यं सुगोपा रक्षसि ब्रह्मणस्पते ५
त्वया वयं सुवृधा ब्रह्मणस्पते स्पार्हा वसु मनुष्या ददीमहि ।
या नो दूरे तळितो या अरातयो ऽभि सन्ति जम्भया ता अनप्नसः । ९ ५३०
अनानुदो वृषभो जग्मिराहवं निष्टप्ता शत्रुं पृतनासु सासहिः ।
असि सत्य ऋणया ब्रह्मणस्पत उग्रस्य चिद् दमिता वीळुहर्षिणः ११(१५)
विश्वेभ्यो हि त्वा भुवनेभ्यस्परि त्वष्टाऽजनत् साम्नःसाम्नः कविः ।
स ऋणचिदृणया ब्रह्मणस्पति- र्द्रुहो हन्ता मह ऋतस्य धर्तरि १७
ब्रह्मणस्पते त्वमस्य यन्ता सूक्तस्य बोधि तनयं च जिन्व ।
विश्वं तद् भद्रं यदवन्ति देवा बृहद् वदेम विदथे सुवीराः १९

॥ ४ ॥ (ऋ० २।२४।२-९,११,१३-१५) जगती ।

यो नन्त्वान्यनमन्न्योजसोता- दर्दर्मन्युना शम्बराणि वि ।
प्राच्यावयदच्युता ब्रह्मणस्पति- रा चाविशद् वसुमन्तं वि पर्वतम् २
तद् देवानां देवतमाय कर्त्व- मश्रथ्नन् दृळ्हाव्रदन्त वीळिता ।
उद्गा आजदभिनद् ब्रह्मणा वल- मगूहत् तमो व्यचक्षयत् स्वः ३ ५३५

× ऋ. २,२३,१ (प्रथमः पादः); १९ = ऋ. २,२४,१६; वा. य. २३,१९ (प्रथमः पादः); ३४,५८ ।

अश्मास्यमवतं ब्रह्मणस्पति-र्मधुधारमभि यमोजसाऽतृणत् ।
तमेव विश्वे पपिरे स्वर्दृशो बहु साकं सिसिचुरुत्समुद्रिणम् ४(२०)
सना ता का चिद् भुवना भवीत्वा माद्भिः शरद्भिर्दुरो वरन्त वः ।
अयतन्ता चरतो अन्यदन्यदि-द्या चकार वयुना ब्रह्मणस्पतिः ५
अभिनक्षन्तो अभि ये तमानशु-र्निधिं पणीनां परमं गुहा हितम् ।
ते विद्वांसः प्रतिचक्ष्यानृता पुन-र्यत उ आयन् तदुदीयुराविशम् ६
ऋतावानः प्रतिचक्ष्यानृता पुन-रात आ तस्थुः कवयो महस्पथः ।
ते बाहुभ्यां धमितमग्निमश्मनि नकिः षो अस्त्यरणो जहुर्हि तम् ७
ऋतज्येन क्षिप्रेण ब्रह्मणस्पति-र्यत्र वष्टि प्र तदश्नोति धन्वना ।
तस्य साध्वीरिषवो याभिरस्यति नृचक्षसो दृशये कर्णयोनयः ८ ५४०
स संनयः स विनयः पुरोहितः स सुष्टुतः स युधि ब्रह्मणस्पतिः ।
चाक्ष्मो यद् वाजं भरते मती धना-दित् सूर्यस्तपति तप्यतुर्वृथा ९(२५)
योऽवरे वृजने विश्वथा विभु-र्महामु रण्वः शवसा ववक्षिथ ।
स देवो देवान् प्रति पप्रथे पृथु विश्वेदु ता परिभूर्ब्रह्मणस्पतिः ११
उताशिष्ठा अनु शृण्वन्ति वह्नयः सभेयो विप्रो भरते मती धना ।
वीळुद्वेषा अनु वश ऋणमाददिः स ह वाजी समिथे ब्रह्मणस्पतिः १२
ब्रह्मणस्पतेरभवद् यथावशं सत्यो मन्युर्महि कर्मा करिष्यतः ।
यो गा उदाजत् स दिवे वि चाभजन् महीव रीतिः शवसाऽसरत् पृथक् १४
ब्रह्मणस्पते सुयमस्य विश्वहा रायः स्याम रथ्यो३ वयस्वतः ।
वीरेषु वीराँ उप पृङ्धि नस्त्वं यदीशानो ब्रह्मणा वेषि मे हवम् १५

॥ ५ ॥ (ऋ० २।२५।१-५)

इन्धानो अग्निं वनवद् वनुष्यतः कृतब्रह्मा शूशुवद् रातहव्य इत् ।
जातेन जातमति स प्र सर्सृते यंयं युजं कृणुते ब्रह्मणस्पतिः १(३०)
वीरेभिर्वीरान् वनवद् वनुष्यतो गोभी रयिं पप्रथद् बोधति त्मना ।
तोकं च तस्य तनयं च वर्धते यंयं युजं कृणुते ब्रह्मणस्पतिः २
सिन्धुर्न क्षोदः शिमीवाँ ऋघायतो वृषेव वध्रीँरभि वष्ट्योजसा ।
अग्नेरिव प्रसितिर्नाह वर्तवे यंयं युजं कृणुते ब्रह्मणस्पतिः ३ ५४८

तस्मा अर्षन्ति दिव्या असश्चतः स सत्वभिः प्रथमो गोषु गच्छति ।
अनिभृष्टतविषिर्हन्त्योजसा यंयं युजं कृणुते ब्रह्मणस्पतिः ४ ५४९
तस्मा इद्विश्वे धुनयन्त सिन्धवो ऽच्छिद्रा शर्म दधिरे पुरूणि ।
देवानां सुम्ने सुभगः स एधते यंयं युजं कृणुते ब्रह्मणस्पतिः ५

॥ ६ ॥ (ऋ० २।२६।१-४)

ऋजुरिच्छंसो वनवद् वनुष्यतो देवयन्निददेवयन्तमभ्यसत् ।
सुप्रावीरिद् वनवत् पृत्सु दुष्टरं यज्वेदयज्योर्वि भजाति भोजनम् १(३५)
यजस्व वीर प्र विहि मनायतो भद्रं मनः कृणुष्व वृत्रतूर्ये ।
हविष्कृणुष्व सुभगो यथाऽससि ब्रह्मणस्पतेरव आ वृणीमहे २
स इज्जनेन स विशा स जन्मना स पुत्रैर्वाजं भरते धना नृभिः ।
देवानां यः पितरमाविवासति श्रद्धामना हविषा ब्रह्मणस्पतिम् ३
यो अस्मै हव्यैर्घृतवद्भिरविधत् प्र तं प्राचा नयति ब्रह्मणस्पतिः ।
उरुष्यतीमंहसो रक्षती रिषो३ ऽहोश्चिदस्मा उरुचक्रिरद्भुतः ४ ५५४

॥ ७ ॥ (ऋ० १०।१५५।२-३)

(३९-४०) शिरिम्बिठो भारद्वाजः । अनुष्टुप् ।

चत्तो इतश्चत्तामुतः सर्वा भ्रूणान्यारुषी । अराय्यं ब्रह्मणस्पते तीक्ष्णशृङ्गोदृषन्निहि २
अदो यद्दारु प्लवते सिन्धोः पारे अपूरुषम् । तदा रभस्व दुर्हणो तेन गच्छ परस्तरम् ३(४०)

॥ ८ ॥ (ऋ० ९।८३।१)

(४१) पवित्र आङ्गिरसः । [पवमानः सोमः] जगती ।

पवित्रं ते विततं ब्रह्मणस्पते प्रभुर्गात्राणि पर्येषि विश्वतः ।
अतप्ततनूर्न तदामो अश्नुते शृतास इद्वहन्तस्तत् समाशत १

॥ ९ ॥ (ऋ० १०।६७।७)

(४२) अयास्य आङ्गिरसः । [बृहस्पतिः] त्रिष्टुप् ।

स ईं सत्येभिः सखिभिः शुचद्भि र्गोधायसं वि धनसैरदर्दः ।
ब्रह्मणस्पतिर्वृषभिर्वराहै र्घर्मस्वेदेभिर्द्रविणं व्यानट् ७ ५५८

॥ १० ॥ (ऋ० १०।१७४।१)
(४३) अभीवर्त आङ्गिरसः। अनुष्टुप्।

अभीवर्तेन हविषा येनेन्द्रो अभिवावृते।
तेनास्मान् ब्रह्मणस्पतेऽभि राष्ट्राय वर्तय १(४३)

॥ ११ ॥ (वा० य० ३४।५५)

सप्त ऋषयः प्रतिहिताः शरीरे सप्त रक्षन्ति सदमप्रमादम्।
सप्तापः स्वपतो लोकमीयुस्तत्र जागृतो अस्वप्नजौ सत्रसदौ च देवौ ५५ ५६०

॥१२॥ (अथर्व० १।२९।१-६)
(४५-५०) वसिष्ठः (अभीवर्तमणिः)। अनुष्टुप्।

अभीवर्तेन मणिना येनेन्द्रो अभिवावृधे। तेनास्मान् ब्रह्मणस्पतेऽभि राष्ट्राय वर्धय १
अभिवृत्य सपत्नानभि या नो अरातयः। अभि पृतन्यन्तं तिष्ठाभि यो नो दुरस्यति २
अभि त्वा देवः सविताभि सोमो अवीवृधत्। अभि त्वा विश्वा भूतान्यभीवर्तो यथाससि ३
अभीवर्तो अभिभवः सपत्नक्षयणो मणिः। राष्ट्राय मह्यं बध्यतां सपत्नेभ्यः पराभुवे ४
उदसौ सूर्यो अगादुदिदं मामकं वचः। यथाऽहं शत्रुहोऽसान्यसपत्नः सपत्नहा ५
सपत्नक्षयणो वृषाभिराष्ट्रो विषासहिः। यथाऽहमेषां वीराणां विराजानि जनस्य च ६(५०)

॥१३॥ (अथर्व० ६।६।१)
(५१-५३) अथर्वा। अनुष्टुप्।

यो३ऽस्मान् ब्रह्मणस्पतेऽदेवो अभिमन्यते। सर्वं तं रन्धयासि मे यजमानाय सुन्वते १ ५६७

॥१४॥ (अथर्व० ७।५६।४) विराट् प्रस्तारपंक्तिः।

अयं यो वक्रो विपरुर्व्यङ्गो मुखानि वक्रा वृजिना कृणोषि।
तानि त्वं ब्रह्मणस्पत इषीकामिव सं नमः ४

॥१५॥ (अथर्व० १९।२४।१) अनुष्टुप्।

येन देवं सवितारं परि देवा अधारयन्। तेनेमं ब्रह्मणस्पते परि राष्ट्राय धत्तन १

॥१६॥ (अथर्व० ६।१०१।१-३)
(५४-५६) अथर्वाङ्गिराः। अनुष्टुप्।

आ वृषायस्व श्वसिहि वर्धस्व प्रथयस्व च। यथाऽङ्गं वर्धतां शेपस्तेन योषितमिज्जहि १
येन कृशं वाजयन्ति येन हिन्वन्त्यातुरम्। तेनास्य ब्रह्मणस्पते धनुरिवा तानया पसः २
आऽहं तनोमि ते पसो अधि ज्यामिव धन्वनि। क्रमस्वर्श इव रोहितमनवग्लायता सदा ३(५६)

॥ १७ ॥ (अथर्व० ८।६।१५)

(५७) मातृनामा । त्र्यवसाना सप्तपदा शक्वरी ।

येषां पश्चात् प्रपदानि पुरः पार्ष्णीः पुरो मुखा ।
खलजाः शकधूमजा उरुण्डा ये च मट्मटाः कुम्भमुष्का अयाशवः ।
तानस्या ब्रह्मणस्पते प्रतीबोधेन नाशय १५(५७)

॥ १८ ॥ (अथर्व० १९।८।६)

(५८) गार्ग्यः । त्रिष्टुप् ।

इमा या ब्रह्मणस्पते विषूचीर्वात ईरते । सध्रीचीरिन्द्र ताः कृत्वा मह्यं शिवतमास्कृधि ६

॥ १९ ॥ (अथर्व० १९।६१।१)

(५९-६१) ब्रह्मा । विराट्पथ्याबृहती ।

तनूस्तन्वा मे सहे दुतः सर्वमायुरशीय । स्योनं मे सीद पुरुः पृणस्व पवमानः स्वर्गे १

॥ २० ॥ (अथर्व० १९।६२।१) अनुष्टुप् ।

प्रियं मा कृणु देवेषु प्रियं राजसु मा कृणु । प्रियं सर्वस्य पश्यत उत शूद्र उतार्ये २

॥ २१ ॥ (अथर्व० १९।६३।१) विराडुपरिष्टाद्बृहती ।

उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते देवान् यज्ञेन बोधय ।
आयुः प्राणं प्रजां पशून् कीर्तिं यजमानं च वर्धय १(६१) ५७७

---

२० पुरुषः ।

॥ १ ॥ (ऋ० १०।९०।१-१६) ×

(१-५८) नारायणः । अनुष्टुप्, १६ त्रिष्टुप् ।

सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् । स भूमिं विश्वतो वृत्वा ऽत्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् १
पुरुष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भव्यम् । उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति २
एतावानस्य महिमा ऽतो ज्यायाँश्च पूरुषः । पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ३
त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः पादोऽस्येहाभवत्पुनः । ततो विष्वङ् व्यक्रामत् साशनानशने अभि ४
तस्माद्विराळजायत विराजो अधि पूरुषः । स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः ५(५)
यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत । वसन्तो अस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः ६
तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन् पुरुषं जातमग्रतः । तेन देवा अयजन्त साध्या ऋषयश्च ये ७
तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः संभृतं पृषदाज्यम् । पशून्ताँश्चक्रे वायव्या नारण्यान्ग्राम्याश्च ये ८ ५८५

× वा० य० ३१।१-१६; अथर्व० ७।५।१,४; सा० ६१७-६२१ ।

तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे । छन्दांसि जज्ञिरे तस्मा—द्यजुस्तस्मादजायत ९
तस्मादश्वा अजायन्त ये के चोभयादतः । गावो ह जज्ञिरे तस्मात् तस्माज्जाता अजावयः १०
यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन् । मुखं किमस्य कौ बाहू का ऊरू पादा उच्येते ११
ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः । ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत १२
चन्द्रमा मनसो जात—श्चक्षोः सूर्यो अजायत । मुखादिन्द्रश्चाग्निश्च प्राणाद्वायुरजायत १३ ५९०
नाभ्या आसीदन्तरिक्षं शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत । पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रा—त्तथा लोकाँ अकल्पयन् १४
सप्तास्यासन्परिधय—स्त्रिः सप्त समिधः कृताः । देवा यद्यज्ञं तन्वाना अबध्नन्पुरुषं पशुम् १५
यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवा—स्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् ।
ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः १६(१६)

॥२॥ (अथर्व० १९।६,१-६,९,११,१६) ×

सहस्रबाहुः पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् । स भूमिं विश्वतो वृत्वाऽत्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् १
त्रिभिः पद्भिर्द्यामरोहत् पादस्येहाभवत् पुनः । तथा व्यक्रामद्विष्वङ्ङशनानशने अनु २ ५९५
तावन्तो अस्य महिमानस्ततो ज्यायांश्च पूरुषः । पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ३
पुरुष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम् । उतामृतत्वस्येश्वरो यदन्येनाभवत्सह ४(२०)
यत् पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन् । मुखं किमस्य किं बाहू किमूरू पादा उच्येते ५
ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्योऽभवत् । मध्यं तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत ६
विराडग्रे समभवद् विराजो अधि पूरुषः । स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः ९
तं यज्ञं प्रावृषा प्रौक्षन्पुरुषं जातमग्रशः । तेन देवा अयजन्त साध्या वसवश्च ये ११
मूर्ध्नो देवस्य बृहतो अंशवः सप्त सप्ततीः । राज्ञः सोमस्याजायन्त जातस्य पुरुषादधि १६ ६०१

॥ ३ ॥ (अथर्व० १०।२।१-३३)

पार्ष्णिसूक्तम्, पुरुषः, ब्रह्मप्रकाशनम् । अनुष्टुप्; १-४;७,८ त्रिष्टुप् ६,११ जगती; २८ भुरिग्बृहती ।

केन पार्ष्णी आभृते पूरुषस्य केन मांसं संभृतं केन गुल्फौ ।
केनाङ्गुलीः पेशनीः केन खानि केनोच्छ्लङ्खौ मध्यतः कः प्रतिष्ठाम् १

कस्मान्नु गुल्फावधरावकृण्वन्नष्ठीवन्तावुत्तरौ पूरुषस्य ।
जङ्घे निर्ऋत्य न्यदधुः क्व स्विज्जानुनोः संधी क उ तच्चिकेत २
चतुष्टयं युज्यते संहितान्तं जानुभ्यामूर्ध्वं शिथिरं कबन्धम् ।
श्रोणी यदूरू क उ तज्जजान याभ्यां कुसिन्धं सुदृढं बभूव ३(१८)

× अथर्व० १९।६।७-८,१०,१२-१५= ऋ० १०।९०।१३-१४,६,१०,९,८,१५।

कति देवाः कतमे त आसन् य उरो ग्रीवाश्चिक्युः पूरुषस्य ।
कति स्तनौ व्यदधुः कः कफोडौ कति स्कन्धान् कति पृष्टीरचिन्वन् ४
को अस्य बाहू समभरद् वीर्यं करवादिति । अंसौ को अस्य तद्देवः कुसिन्धे अध्या दधौ ५(३०)
कः सप्त खानि वि ततर्द शीर्षणि कर्णाविमौ नासिके चक्षणी मुखम् ।
येषां पुरुत्रा विजयस्य मह्मनि चतुष्पादो द्विपदो यन्ति यामम् ६
हन्वोर्हि जिह्वामदधात् पुरूचीमधा महीमधि शिश्राय वाचम् ।
स आ वरीवर्ति भुवनेष्वन्तरपो वसानः क उ तच्चिकेत ७
मस्तिष्कमस्य यतमो ललाटं ककाटिकां प्रथमो यः कपालम् ।
चित्वा चित्यं हन्वोः पूरुषस्य दिवं रुरोह कतमः स देवः ८ ३१०
प्रियाप्रियाणि बहुला स्वप्नं संबाधतन्द्यः । आनन्दानुग्रो नन्दांश्च कस्माद् वहति पूरुषः ९
आर्तिरवर्तिर्निर्ऋतिः कुतो नु पुरुषेऽमतिः । राद्धिः समृद्धिरव्यृद्धिर्मतिरुदितयः कुतः १०(३५)
को अस्मिन्नापो व्यदधाद्विषूवृतः पुरूवृतः सिन्धुसृत्याय जाताः ।
तीव्रा अरुणा लोहिनीस्ताम्रधूम्रा ऊर्ध्वा अवाचीः पुरुषे तिरश्चीः ११
को अस्मिन् रूपमदधात् को मह्मानं च नाम च ।
गातुं को अस्मिन् कः केतुं कश्चरित्राणि पूरुषे १२
को अस्मिन् प्राणमवयत् को अपानं व्यानमु । समानमस्मिन् को देवोऽधि शिश्राय पूरुषे १३
को अस्मिन् यज्ञमदधादेको देवोऽधि पूरुषे ।
को अस्मिन्त्सत्यं कोऽनृतं कुतो मृत्युः कुतोऽमृतम् १४
को अस्मै वासः पर्यदधात् को अस्यायुरकल्पयत् ।
बलं को अस्मै प्रायच्छत् को अस्याकल्पयज्जवम् १५(४०)
केनापो अन्वतनुत केनाहरकरोद्रुचे । उषसं केनान्वैन्ध केन सायंभवं ददे १६
को अस्मिन् रेतो न्यदधात् तन्तुरा तायतामिति ।
मेधां को अस्मिन्नध्यौहत् को बाणं को नृतो दधौ १७
केनेमां भूमिमौर्णोत् केन पर्यभवद्दिवम् । केनाभि मह्ना पर्वतान् केन कर्माणि पूरुषः १८ ३२०
केन पर्जन्यमन्वेति केन सोमं विचक्षणम् । केन यज्ञं च श्रद्धां च केनास्मिन् निहितं मनः १९
केन श्रोत्रियमाप्नोति केनेमं परमेष्ठिनम् । केनेममग्निं पूरुषः केन संवत्सरं ममे २०
ब्रह्म श्रोत्रियमाप्नोति ब्रह्मेमं परमेष्ठिनम् । ब्रह्मेममग्निं पूरुषो ब्रह्म संवत्सरं ममे २१(४६)

केन॑ दे॒वाँ अनु॑ क्षियति॒ केन॒ दैव॑जनी॒र्विश॑: । केने॒दम॒न्यन्नक्ष॑त्रं॒ केन॒ सत्क्ष॒त्रमु॑च्यते २२
ब्रह्म॑ दे॒वाँ अनु॑ क्षियति॒ ब्रह्म॒ दैव॑जनी॒र्विश॑: । ब्रह्मे॒दम॒न्यन्नक्ष॑त्रं॒ ब्रह्म॒ सत्क्ष॒त्रमु॑च्यते २३
केने॒यं भूमि॒र्विहि॑ता॒ केन॒ द्यौरुत्त॑रा हि॒ता । केने॒दमू॒र्ध्वं ति॒र्यक् चा॒न्तरि॑क्षं॒ व्यचो॑ हि॒तम् २४
ब्रह्म॑णा॒ भूमि॒र्विहि॑ता॒ ब्रह्म॒ द्यौरुत्त॑रा हि॒ता । ब्रह्मे॒दमू॒र्ध्वं ति॒र्यक् चा॒न्तरि॑क्षं॒ व्यचो॑ हि॒तम् २५(५०)
मू॒र्धान॑मस्य सं॒सीव्याथ॑र्वा॒ हृद॑यं च॒ यत् । म॒स्ति॒ष्कादू॒र्ध्वः प्रैर॑य॒त् पव॑मा॒नोऽधि॑ शीर्ष॒तः २६
तद्वा अथ॑र्वण॒: शिरो॑ देवको॒शः समु॑ब्जितः । तत् प्रा॒णो अ॒भि र॑क्षति॒ शिरो॒ अन्न॒मथो॒ मन॑: २७
ऊ॒र्ध्वो नु सृ॒ष्टा३स्ति॒र्यङ् नु सृ॒ष्टा३: सर्वा॒ दिश॒: पुरु॑ष॒ आ ब॑भू॒वाँ३ ।
पुरं॒ यो ब्रह्म॑णो॒ वेद॒ यस्या॒: पुरु॑ष॒ उच्य॑ते २८ ६३०
यो वै॒ तां ब्रह्म॑णो॒ वेदा॒मृते॒नावृ॑तां॒ पुर॑म् । तस्मै॒ ब्रह्म॑ च ब्रा॒ह्माश्च॒ चक्षु॑: प्रा॒णं प्र॒जां द॑दुः २९
न वै॒ तं चक्षु॑र्जहाति॒ न प्रा॒णो ज॒रस॑: पु॒रा । पुरं॒ यो ब्रह्म॑णो॒ वेद॒ यस्या॒: पुरु॑ष॒ उच्य॑ते ३०(५५)
अ॒ष्टाच॑क्रा॒ नव॑द्वारा दे॒वानां॒ पूर॑यो॒ध्या । तस्यां॑ हिर॒ण्यय॒: कोश॑: स्व॒र्गो ज्योति॒षावृ॑तः ३१
तस्मि॒न् हिर॒ण्यये॒ कोशे॒ त्र्य॑रे॒ त्रिप्र॑तिष्ठिते । तस्मि॒न् यद्य॒क्षमा॑त्म॒न्वत् तद्वै ब्र॑ह्मविदो॑ विदुः ३२
प्र॒भ्राज॑मानां॒ हरि॑णीं॒ यश॑सा॒ संप॑रीवृताम् । पुरं॑ हिर॒ण्ययीं॒ ब्रह्मा वि॑वे॒शाप॑राजिताम् ३३

॥ ४ ॥ [५९-७४] (वा० य० ३१।१८-२२)

वेदा॒हमे॒तं पुरु॑षं म॒हान्त॑मादि॒त्यव॑र्णं॒ तम॑सः प॒रस्ता॑त् ।
तमे॒व वि॑दि॒त्वाति॑ मृ॒त्युमे॑ति॒ नान्यः पन्था॑ विद्य॒तेऽय॑नाय १८
प्र॒जाप॑तिश्चरति॒ गर्भे॑ अ॒न्तरजा॑यमानो बहु॒धा वि जा॑यते ।
तस्य॒ योनिं॒ परि॑ पश्यन्ति॒ धीरा॒स्तस्मि॑न् ह तस्थु॒र्भुव॑नानि॒ विश्वा॑ १९(६०)
यो दे॒वेभ्य॑ आ॒तप॑ति॒ यो दे॒वानां॑ पु॒रोहि॑तः ।
पूर्वो॒ यो दे॒वेभ्यो॑ जा॒तो नमो॑ रु॒चाय॒ ब्राह्म॑ये २०
रुचं॑ ब्रा॒ह्मं ज॒नय॑न्तो दे॒वा अग्रे॒ तद॑ब्रुवन् ।
यस्त्वै॒वं ब्रा॑ह्म॒णो वि॒द्यात् तस्य॑ दे॒वा अ॑स॒न् वशे॑ २१
श्रीश्च॑ ते ल॒क्ष्मीश्च॒ पत्न्या॑वहोरा॒त्रे पा॒र्श्वे नक्ष॑त्राणि रू॒पम॒श्विनौ॒ व्यात्त॑म् ।
इ॒ष्णन्नि॑षाणा॒मुं म॑ इषाण सर्वलो॒कं म॑ इषाण २२ ६४०

॥ ५ ॥ (वा० य० ३२।१-१०)

तदे॒वाग्निस्तदा॑दि॒त्यस्तद्वा॒युस्तदु॑ च॒न्द्रमा॑: । तदे॒व शु॒क्रं तद्ब्रह्म॒ ता आप॒: स प्र॒जाप॑तिः १
सर्वे॑ निमे॒षा ज॑ज्ञिरे वि॒द्युत॒: पुरु॑षा॒दधि॑ । नैन॑मू॒र्ध्वं न ति॒र्यञ्चं॒ न मध्ये॒ परि॑ जग्रभत् २(६५)

न तस्य॑ प्रति॒मा अ॑स्ति॒ यस्य॑ नाम॑ म॒हद्यश॑ः ।
हि॒र॒ण्य॒ग॒र्भ इत्ये॒ष मा मा॑ हिꣳसी॒दित्ये॒षा यस्मा॒न्न जा॒त इत्ये॒षः ३(६६)

ए॒षो ह॑ दे॒वः प्र॒दिशो॒ऽनु॒ सर्वा॒ः पूर्वो॑ ह जा॒तः स उ॒ गर्भे॑ अ॒न्तः ।
स ए॒व जा॒तः स ज॑नि॒ष्यमा॑णः प्र॒त्यङ् जना॑स्तिष्ठति स॒र्वतो॑मुखः ४

यस्मा॑ज्जा॒तं न पु॒रा किं च॒नैव य आ॑ब॒भूव॒ भुव॑नानि॒ विश्वा॑ ।
प्र॒जाप॑तिः प्र॒जया॑ सꣳररा॒णस्त्रीणि॒ ज्योतीꣳषि सचते॒ स षो॑ड॒शी ५ ६४५

येन॒ द्यौरु॒ग्रा पृ॑थि॒वी च॑ दृ॒ढा येन॒ स्व॒ स्तभि॒तं येन॒ नाक॑ः ।
यो अ॒न्तरि॑क्षे॒ रज॑सो वि॒मान॒ः कस्मै॑ दे॒वाय॑ ह॒विषा॑ विधेम ६

यं क्रन्द॑सी॒ अव॑सा तस्तभा॒ने अ॒भ्यैक्षे॑तां॒ मन॑सा॒ रेज॑माने ।
यत्राधि॒ सूर॒ उदि॑तो वि॒भाति॒ कस्मै॑ दे॒वाय॑ ह॒विषा॑ विधेम । आपो॑ ह॒ यद्बृ॑ह॒तीर्यश्चि॒दाप॑ः ७(७०)

वे॒नस्तत् प॑श्यन्निहि॑तं॒ गुहा॒ सद्यत्र॒ विश्वं॒ भव॒त्येक॑नीडम् ।
तस्मि॑न्नि॒दꣳ सं च॒ वि चैति॒ सर्वꣳ स ओत॒ः प्रोत॑श्च वि॒भूः प्र॒जासु॑ ८

प्र तद्वो॑चेद॒मृतं॒ नु वि॒द्वान् ग॑न्ध॒र्वो धाम॒ विभृ॑तं॒ गुहा॒ सत् ।
त्रीणि॑ प॒दानि॒ निहि॑ता॒ गुहा॑स्य॒ यस्तानि॒ वेद॒ स पि॒तुः पि॒ताऽस॑त् ९

स नो॒ बन्धु॑र्जनि॒ता स वि॑धा॒ता धामा॑नि॒ वेद॒ भुव॑नानि॒ विश्वा॑ ।
यत्र॑ दे॒वा अ॒मृत॑मानशा॒नास्तृ॒तीये॒ धाम॑न्न॒ध्यैर॑यन्त १० ६५०

॥ ६ ॥ (वा० य० ८।५३)

भूर्भुव॒ः स्व॒ः सु॒प्र॒जाः प्र॒जाभि॑ः स्याम सु॒वीरा॑ वी॒रैः सु॒पोषा॒ः पोषै॑ः ५३

॥ ७ ॥ (वा० य० ३६।२१)

यतो॑–यतः स॒मीह॑से॒ ततो॑ नो॒ अभ॑यं कुरु ।
शं न॑ः कुरु प्र॒जाभ्योऽभ॑यं नः प॒शुभ्य॑ः २२

॥ ८ ॥ (वा० य० ४०।१७)

हि॒र॒ण्मये॑न॒ पात्रे॑ण स॒त्यस्यापि॑हितं॒ मुख॑म् ।
यो॒ऽसावा॑दि॒त्ये पुरु॑ष॒ः सो॒ऽसाव॒हम् । ओ३म् खं ब्रह्म॑ १७(७६)

॥ ९ ॥ (अथर्व० ६।६१।१-३)

(७७-१०५) अथर्वा । रुद्रः (विश्वस्रष्टा) । १ त्रिष्टुप्, २-३ भुरिक् ।

मह्य॒मापो॒ मधु॑म॒देर॑यन्तां॒ मह्यं॒ सूरो॑ अभर॒ज्ज्योति॑षे॒ कम् ।
मह्यं॑ दे॒वा उ॒त विश्वे॑ त॒पोजा॒ मह्यं॑ दे॒वः स॑वि॒ता व्यचो॑ धात् १ ६५४

अहं विवेच पृथिवीमुत द्यामहमृतूंरजनयं सप्त साकम् ।
अहं सत्यमनृतं यद्वदाम्यहं दैवीं परि वाचं विशश्च २ ६५५
अहं जजान पृथिवीमुत द्यामहमृतूंरजनयं सप्त सिन्धून् ।
अहं सत्यमनृतं यद्वदामि यो अग्नीषोमावजुषे सखाया ३

॥ १० ॥ (अथर्व० ८।९।१-२६)

(कश्यपः, सर्वे ऋषयः, छन्दांसि च); विराट् । त्रिष्टुप्, २ पङ्क्तिः, ३ आस्तारपङ्क्तिः, ४-५, २३, २५-२६ अनुष्टुप्; ८, ११-१२, २२ जगती, ९ भुरिक्, १४ चतुष्पदातिजगती ।

कुतस्तौ जातौ कतमः सो अर्धः कस्माल्लोकात् कतमस्याः पृथिव्याः ।
वत्सौ विराजः सलिलादुदैतां तौ त्वा पृच्छामि कतरेण दुग्धा १(८०)
यो अक्रन्दयत् सलिलं महित्वा योनिं कृत्वा त्रिभुजं शयानः ।
वत्सः कामदुघो विराजः स गुहा चक्रे तन्वः पराचैः २
यानि त्रीणि बृहन्ति येषां चतुर्थं वियुनक्ति वाचम् ।
ब्रह्मैनद् विद्यात् तपसा विपश्चिद् यस्मिन्नेकं युज्यते यस्मिन्नेकम् ३
बृहतः परि सामानि षष्ठात् पञ्चाधि निर्मिता ।
बृहद्बृहत्या निर्मितं कुतोऽधि बृहती मिता ४ ६६०
बृहती परि मात्राया मातुर्मात्राधि निर्मिता । माया ह जज्ञे मायाया मायाया मातली परि ५
वैश्वानरस्य प्रतिमोपरि द्यौर्यावद्रोदसी विबबाधे अग्निः ।
ततः षष्ठादामुतो यन्ति स्तोमा उदितो यन्त्यभि षष्ठमह्नः ६(८५)
षट् त्वा पृच्छाम ऋषयः कश्यपेमे त्वं हि युक्तं युयुक्षे योग्यं च ।
विराजमाहुर्ब्रह्मणः पितरं तां नो वि धेहि यतिधा सखिभ्यः ७
यां प्रच्युतामनु यज्ञाः प्रच्यवन्त उपतिष्ठन्त उपतिष्ठमानाम् ।
यस्या व्रते प्रसवे यक्षमेजति सा विराडृषयः परमे व्योमन् ८
अप्राणैति प्राणेन प्राणतीनां विराट् स्वराजमभ्येति पश्चात् ।
विश्वं मृशन्तीमभिरूपां विराजं पश्यन्ति त्वे न त्वे पश्यन्त्येनाम् ९
को विराजो मिथुनत्वं प्र वेद क ऋतून् क उ कल्पमस्याः ।
क्रमान् को अस्याः कतिधा विदुग्धान् को अस्या धाम कतिधा व्युष्टीः १०
इयमेव सा या प्रथमा व्यौच्छदास्वितरासु चरति प्रविष्टा ।
महान्तो अस्यां महिमानो अन्तर्वधूर्जिगाय नवगज्जनित्री ११ ६६७

छन्दःपक्षे उषसा पेपिशाने समानं योनिमनु सं चरेते ।
सूर्यपत्नी सं चरतः प्रजानती केतुमती अजरे भूरिरेतसा १२(९१)
ऋतस्य पन्थामनु तिस्र आगुस्त्रयो घर्मा अनु रेत आगुः ।
प्रजामेका जिन्वत्यूर्जमेका राष्ट्रमेका रक्षति देवयूनाम् १३
अग्नीषोमावदधुर्या तुरीयासीद् यज्ञस्य पक्षावृषयः कल्पयन्तः ।
गायत्रीं त्रिष्टुभं जगतीमनुष्टुभं बृहदर्कीं यजमानाय स्वराभरन्तीम् १४ ६७०
पञ्च व्युष्टीरनु पञ्च दोहा गां पञ्चनाम्नीमृतवोऽनु पञ्च ।
पञ्च दिशः पञ्चदशेन क्लृप्तास्ता एकमूर्ध्नीरभि लोकमेकम् १५
षड् जाता भूता प्रथमजर्तस्य षडु सामानि षडहं वहन्ति ।
षड्योगं सीरमनु सामसाम षडाहुर्द्यावापृथिवीः षडुर्वीः १६(९५)
षडाहुः शीतान् षडु मास उष्णानृतुं नो ब्रूत यतमोऽतिरिक्तः ।
सप्त सुपर्णाः कवयो नि षेदुः सप्त च्छन्दांस्यनु सप्त दीक्षाः १७
सप्त होमाः समिधो ह सप्त मधूनि सप्तर्तवो ह सप्त ।
सप्ताज्यानि परि भूतमायन् ताः सप्तगृध्रा इति शुश्रुमा वयम् १८
सप्त च्छन्दांसि चतुरुत्तराण्यन्यो अन्यस्मिन्नध्यार्पितानि ।
कथं स्तोमाः प्रति तिष्ठन्ति तेषु तानि स्तोमेषु कथमार्पितानि १९ ६७५
कथं गायत्री त्रिवृतं व्याप कथं त्रिष्टुप् पञ्चदशेन कल्पते
त्रयस्त्रिंशेन जगती कथमनुष्टुप् कथमेकविंशः २०
अष्ट जाता भूता प्रथमजर्तस्याष्टेन्द्रर्त्विजो दैव्या ये ।
अष्टयोनिरदितिरष्टपुत्राष्टमीं रात्रिमभि हव्यमेति २१(१००)
इत्थं श्रेयो मन्यमानेदमागमं युष्माकं सख्ये अहमस्मि शेवा ।
समानजन्मा क्रतुरस्ति वः शिवः स वः सर्वाः सं चरति प्रजानन् २२
अष्टेन्द्रस्य षड्यमस्य ऋषीणां सप्त सप्तधा । अपो मनुष्या३नोषधीस्ताँ उ पञ्चानु सेचिरे २३
केवलीन्द्राय दुदुहे हि गृष्टिर्वशं पीयूषं प्रथमं दुहाना ।
अथातर्पयच्चतुरश्चतुर्धा देवान् मनुष्याँ३ असुरानुत ऋषीन् २४
को नु गौः क एकऋषिः किमु धाम का आशिषः। यक्षं पृथिव्यामेकवृदेकर्तुः कतमो नु सः २५
एको गौरेक एकऋषिरेकं धामैकधाशिषः । यक्षं पृथिव्यामेकवृदेकर्तुर्नाति रिच्यते २६ ६८१

॥ ११ ॥ (अथर्व० ८।१०।१-६७)

(१०६-१०९) अथर्वाचार्यः । विराट् । (षट् पर्यायाः) ।

१-१३, [प्रथमः पर्यायः] १ त्रिपदार्ची पङ्क्तिः; २-७ याजुषी जगती; ३,९ साम्न्यनुष्टुप्; आर्च्यनुष्टुप्; ७, १३ विराड् गायत्री; ११ साम्नी बृहती ।

विराड् वा इदमग्र आसीत् तस्या जातायाः सर्वमबिभेदियमेवेदं भविष्यतीति १
सोदक्रामत् सा गार्हपत्ये न्यक्रामत् २
गृहमेधी गृहपतिर्भवति य एवं वेद ३ सोदक्रामत् साऽऽहवनीये न्यक्रामत् ४
यन्त्यस्य देवा देवहूतिं प्रियो देवानां भवति य एवं वेद ५(११०)
सोदक्रामत् सा दक्षिणाग्नौ न्यक्रामत् ६
यज्ञर्तो दक्षिणीयो वासतेयो भवति य एवं वेद ७
सोदक्रामत् सा सभायां न्यक्रामत् ८ ६९०
यन्त्यस्य सभां सभ्यो भवति य एवं वेद ९
सोदक्रामत् सा समितौ न्यक्रामत् १०
यन्त्यस्य समितिं सामित्यो भवति य एवं वेद ११
सोदक्रामत्सामन्त्रणेन्यक्रामत् १२
यन्त्यस्यामन्त्रणमामन्त्रणीयो भवति य एवं वेद १३(११८)

१-१० [द्वितीयः पर्यायः] १ त्रिपदा साम्न्यनुष्टुप् ; २ उष्णिग्गर्भा चतुष्पदोपरिष्टाद्विराड्बृहती; ३ एकपदा याजुषी गायत्री; ४ एकपदा साम्नी पङ्क्तिः; ५ विराड् गायत्री; ६ आर्च्यनुष्टुप्; ७ साम्नी पङ्क्तिः; ८ आसुरी गायत्री, साम्न्यनुष्टुप्, १० साम्नी बृहती ।

सोदक्रामत्साऽन्तरिक्षे चतुर्धा विक्रान्तातिष्ठत् १
तां देवमनुष्या अब्रुवन्नियमेव तद्वेद यदुभय उपजीवेमेमामुप ह्वयामहा इति २
तामुपाह्वयन्त ३ ऊर्ज एहि स्वध एहि सूनृत एहीरावत्येहीति ४
तस्या इन्द्रो वत्स आसीद् गायत्र्यभिधान्यभ्रमूधः ५ ७००
बृहच्च रथन्तरं च द्वौ स्तनावास्तां यज्ञायज्ञियं च वामदेव्यं च द्वौ ६
ओषधीरेव रथन्तरेण देवा अदुह्रन् व्यचो बृहता ७(१२५)
अपो वामदेव्येन यज्ञं यज्ञायज्ञियेन ८ ओषधीरेवास्मै रथन्तरं दुहे व्यचो बृहत् ९
अपो वामदेव्यं यज्ञं यज्ञायज्ञियं य एवं वेद १०

१-८ [तृतीयः पर्यायः] १ चतुष्पदा विराडनुष्टुप्; २ आर्चीं त्रिष्टुप्; ३,५,७ चतुष्पदा प्राजापत्या पङ्क्तिः; ४,६,८ आर्चीं बृहती ।

सोदक्रामत् सा वनस्पतीनागच्छत् तां वनस्पतयोऽघ्नत सा संवत्सरे समभवत् १
तस्माद् वनस्पतीनां संवत्सरे वृक्णमपि रोहति वृश्चतेऽस्याप्रियो भ्रातृव्यो य एवं वेद २(१३०)
सोदक्रामत् सा पितॄनागच्छत् तां पितरोऽघ्नत सा मासि समभवत् ३
तस्मात् पितृभ्यो मास्युपमास्यं ददति प्र पितृयाणं पन्थां जानाति य एवं वेद ४
सोदक्रामत् सा देवानागच्छत् तां देवा अघ्नत सार्धमासे समभवत् ५ ७१०
तस्माद् देवेभ्योऽर्धमासे वषट् कुर्वन्ति प्र देवयानं पन्थां जानाति य एवं वेद ६
सोदक्रामत् मनुष्याँ३नागच्छत् तां मनुष्या३ अघ्नत सा सद्यः समभवत् ७(१३५)
तस्मान्मनुष्ये३भ्य उभयद्युरुप हरन्त्युपास्य गृहे हरन्ति य एवं वेद ८

(१-१६; १-१६) [चतुर्थः पञ्चमौ प्रयायौ] २२,२३ २६,२९ (प्र०) चतुष्पदा साम्नी जगती; २२-२४, २८-२९ (द्वि०) साम्नी बृहती, २२, २६.(तृ०) साम्न्युष्णिक् २२-२३, २६,२९ (च०) आर्च्यनुष्टुप्; २३ (तृ०) आर्चीं गायत्री; २४-२५, २८ (प्र०) चतुष्पदा उष्णिक्; २४ (तृ०) प्राजापत्यानुष्टुप्ः २४-२५, २७ आर्चीं त्रिष्टुप्, २५-२६ (द्वि०) साम्न्युष्णिक् २५, २७-२८ (तृ०) विराड् गायत्री; २७ (प्र०) चतुष्पदा प्राजापत्या जगती; २७ (द्वि०) साम्नी बृहती त्रिष्टुप्; २८ (च०) त्रिपदा ब्राह्मी भुरिग्गायत्री; २९ (तृ०) साम्न्युष्टुप्

सोदक्रामत् सासुरानागच्छत् तामसुरा उपाह्वयन्त माय एहीति १
तस्या विरोचनः प्राह्रादिर्वत्स आसीदयस्पात्रं पात्रम् २
तां द्विमूर्धार्त्व्यो३ ऽधोक् तां मायामेवाधोक् ३
तां मायामसुरा उप जीवन्त्युपजीवनीयो भवति य एवं वेद ४(१४०)
सोदक्रामत सा पितॄनागच्छत् तां पितर उपाह्वयन्त स्वध एहीति ५
तस्या यमो राजा वत्स आसीद् रजतपात्रं पात्रम् ६
तामन्तको मार्त्यवोऽधोक् तां स्वधामेवाधोक् ७ ७२०
तां स्वधां पितर उप जीवन्त्युपजीवनीयो भवति य एवं वेद ८
सोदक्रामत् सा मनुष्या३नागच्छत् तां मनुष्या३ उपाह्वयन्तेरावत्येहीति ९(१४५)
तस्या मनुर्वैवस्वतो वत्स आसीत् पृथिवी पात्रम् १०
तां पृथी वैन्योऽधोक् तां कृषिं च सस्यं चाधोक् ११

ते कृषिं च सस्यं च मनुष्या३ उप जीवन्ति कृष्टराधिरुपजीवनीयो भवति य एवं वेद १२
सोदक्रामत् सा सप्तऋषीनागच्छत् तां सप्तऋषय उपाह्वयन्त ब्रह्मण्वत्येहीति १३
तस्याः सोमो राजा वत्स आसीच्छन्दः पात्रम् १४(१५०)

तां बृहस्पतिराङ्गिरसोऽधोक् तां ब्रह्म च तपश्चाधोक् १५
तद् ब्रह्म च तपश्च सप्तऋषय उप जीवन्ति ब्रह्मवर्चस्यु पजीवनीयो भवति य एवं वेद १६
सोदक्रामत् सा देवानागच्छत् तां देवा उपाह्वयन्तोर्ज एहीति १ ७३०
तस्या इन्द्रो वत्स आसीच्चमसः पात्रम् २ तां देवः सविताधोक् तामूर्जामेवाधोक् ३(१५५)
तामूर्जां देवा उप जीवन्त्युपजीवनीयो भवति य एवं वेद ४
सोदक्रामत् सा गन्धर्वाप्सरस आगच्छत् तां गन्धर्वाप्सरस उपाह्वयन्त पुण्यगन्ध एहीति ५
तस्याश्चित्ररथः सौर्यवर्चसो वत्स आसीत् पुष्करपर्णं पात्रम् ६
तां वसुरुचिः सौर्यवर्चसोऽधोक् तां पुण्यमेव गन्धमधोक् ७
तं पुण्यं गन्धं गन्धर्वाप्सरस उप जीवन्ति पुण्यगन्धिरुपजीवनीयो भवति य एवं वेद ८(१६०)

सोदक्रामत् सेतरजनानागच्छत् तामितरजना उपाह्वयन्त तिरोध एहीति ९
तस्याः कुबेरो वैश्रवणो वत्स आसीदामपात्रं पात्रम् १०
तां रजतनाभिः काबेरकोऽधोक् तां तिरोधामेवाधोक् ११ ७४०
तां तिरोधामितरजना उप जीवन्ति तिरो धत्ते सर्वं पाप्मानमुपजीवनीयो भवति य एवं वेद १२
सोदक्रामत् सा सर्पानागच्छत् तां सर्पा उपाह्वयन्त विषवत्येहीति १३(१६५)

तस्यास्तक्षको वैशालेयो वत्स आसीदलाबुपात्रं पात्रम् १४
तां धृतराष्ट्र ऐरावतोऽधोक् तां विषमेवाधोक् १५
तद्विषं सर्पा उप जीवन्त्युपजीवनीयो भवति य एवं वेद १६

१-४ [षष्ठः पर्यायः] १ द्विपदा विराड् गायत्री; २ द्विपदा साम्नी त्रिष्टुप्; ३ द्विपदा प्राजापत्यानुष्टुप्; ४ द्विपदार्च्युष्णिक्

तद् यस्मा एवं विदुषेऽलाबुनाभिषिञ्चेत् प्रत्याहन्यात् १
न च प्रत्याहन्यान्मनसा त्वा प्रत्याहन्मीति प्रत्याहन्यात् २(१७०)
यत् प्रत्याहन्ति विषमेव तत् प्रत्याहन्ति ३ विषमेवास्याप्रियं भ्रातृव्यमनुविषिच्यते य एवं वेद ४

॥ ११ ॥ (अथर्व० १९।७२।१)

(१४०) भृग्वङ्गिरा ब्रह्मा । परमात्मा देवाश्च । त्रिष्टुप् ।

यस्मात् कोशादुदभराम वेदं तस्मिन्नन्तरव दध्म एनम् ।
कृतमिष्टं ब्रह्मणो वीर्येण तेन मा देवास्तपसावतेह १ ७५०

२१ आत्मा। (१९४)

॥ १ ॥ (ऋ० ३।२६।७-८)*

(१-२) गाथिनो विश्वामित्रः । त्रिष्टुप् ।

अग्निरस्मि जन्मना जातवेदा घृतं मे चक्षुरमृतं म आसन् ।
अर्कस्त्रिधातू रजसो विमानो ऽजस्रो घर्मो हविरस्मि नाम ७
त्रिभिः पवित्रैरपुपोद्ध्यर्कं हृदा मतिं ज्योतिरनु प्रजानन् ।
वर्षिष्ठं रत्नमकृत स्वधाभि-रादिद् द्यावापृथिवी पर्यपश्यत् ८

॥ २ ॥ (ऋ० ४।४२।१-६)

(३-८) त्रसदस्युः पौरुकुत्स्यः । त्रिष्टुप् ।

मम द्विता राष्ट्रं क्षत्रियस्य विश्वायोर्विश्वे अमृता यथा नः ।
क्रतुं सचन्ते वरुणस्य देवा राजामि कृष्टेरुपमस्य वव्रेः १
अहं राजा वरुणो मह्यं ता-न्यसुर्याणि प्रथमा धारयन्त ।
क्रतुं सचन्ते वरुणस्य देवा राजामि कृष्टेरुपमस्य वव्रेः २
अहमिन्द्रो वरुणस्ते महित्वो-र्वी गभीरे रजसी सुमेके ।
त्वष्टेव विश्वा भुवनानि विद्वा-न्त्समैरयं रोदसी धारयं च ३(५)
अहमपो अपिन्वमुक्षमाणा धारयं दिवं सदन ऋतस्य ।
ऋतेन पुत्रो अदितेर्ऋतावो-त त्रिधातु प्रथयद् वि भूम ४
मां नरः स्वश्वा वाजयन्तो मां वृताः समरणे हवन्ते ।
कृणोम्याजिं मघवाहमिन्द्र इयर्मि रेणुमभिभूत्योजाः ५
अहं ता विश्वा चकरं नकिर्मा दैव्यं सहो वरते अप्रतीतम् ।
यन्मा सोमासो ममदन्यदुक्थो-भे भयेते रजसी अपारे ६

* ऋ. ३।२६।७ वा. य. १८।६६ सा. ६।१३

॥ ३ ॥ (ऋ० १०।११९।१-१३)
(९-२१) लव ऐन्द्रः । । गायत्री ।

इति वा इति मे मनो गामश्वं सनुयामिति । कुवित् सोमस्यापामिति १
प्र वाता इव दोधत उन्मा पीता अयंसत । कुवित् सोमस्यापामिति २(१०)७६०
उन्मा पीता अयंसत रथमश्वा इवाशवः । कुवित् सोमस्यापामिति ३
उप मा मतिरस्थित वाश्रा पुत्रमिव प्रियम् । कुवित् सोमस्यापामिति ४
अहं तष्टेव वन्धुरं पर्यचामि हृदा मतिम् । कुवित् सोमस्यापामिति ५
नहि मे अक्षिपच्चना ऽच्छान्त्सुः पञ्च कृष्टयः । कुवित् सोमस्यापामिति ६
नहि मे रोदसी उभे अन्यं पक्षं चन प्रति । कुवित् सोमस्यापामिति ७(१५)
अभि द्यां महिना भुव मभीइमां पृथिवीं महीम् । कुवित् सोमस्यापामिति ८
हन्ताहं पृथिवीमिमां नि दधानीह वेह वा । कुवित् सोमस्यापामिति ९
ओषमित् पृथिवीमहं जङ्घनानीह वेह वा । कुवित् सोमस्यापामिति १०
दिवि मे अन्यः पक्षोइ ऽधो अन्यमचीकृषम् । कुवित् सोमस्यापामिति ११
अहमस्मि महामहो ऽभिनभ्यमुदीषितः । कुवित् सोमस्यापामिति १२(२०)७७०
गृहो याम्यरंकृतो देवेभ्यो हव्यवाहनः । कुवित् सोमस्यापामिति १३

॥ ४ ॥ (ऋ० १०।१२४।२-४)
(२२-२४) अग्निः । त्रिष्टुप् ।

अदेवाद्देवः प्रचता गुहा यन् प्रपश्यमानो अमृतत्वमेमि ।
शिवं यत् सन्तमशिवो जहामि स्वात् सख्यादरणीं नाभिमेमि २
पश्यन्नन्यस्या अतिथिं वयाया ऋतस्य धाम वि मिमे पुरूणि ।
शंसामि पित्रे असुराय शेव मयज्ञियाद्यज्ञियं भागमेमि ३
बह्वीः समा अकरमन्तरस्मि न्निन्द्रं वृणानः पितरं जहामि ।
अग्निः सोमो वरुणस्ते च्यवन्ते पर्यावर्द्राष्ट्रं तदवाम्यायन् ४

॥ ५ ॥ (ऋ० १०।१२५।१-८)+
(२५-३२) वागाम्भृणिः । त्रिष्टुप्, २ जगती ।

अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चराम्य हमादित्यैरुत विश्वदेवैः ।
अहं मित्रावरुणोभा बिभर्म्य हमिन्द्राग्नी अहमश्विनोभा १(२५)

+ अथर्व. ४।३०।१-८ ।

अहं सोममाहनसं बिभर्म्यहं त्वष्टारमुत पूषणं भगम् ।
अहं दधामि द्रविणं हविष्मते सुप्राव्ये३ यजमानाय सुन्वते २
अहं राष्ट्री संगमनी वसूनां चिकितुषी प्रथमा यज्ञियानाम् ।
तां मा देवा व्यदधुः पुरुत्रा भूरिस्थात्रां भूर्यावेशयन्तीम् ३
मया सो अन्नमत्ति यो विपश्यति यः प्राणिति य ईं शृणोत्युक्तम् ।
अमन्तवो मां त उप क्षियन्ति श्रुधि श्रुत श्रद्धिवं ते वदामि ४
अहमेव स्वयमिदं वदामि जुष्टं देवेभिरुत मानुषेभिः ।
यं कामये तंतमुग्रं कृणोमि तं ब्रह्माणं तमृषिं तं सुमेधाम् ५
अहं रुद्राय धनुरा तनोमि ब्रह्मद्विषे शरवे हन्तवा उ ।
अहं जनाय समदं कृणोम्यहं द्यावापृथिवी आ विवेश ६(३०)७८०
अहं सुवे पितरमस्य मूर्धन् मम योनिरप्स्वन्तः समुद्रे ।
ततो वि तिष्ठे भुवनानु विश्वोतामूं द्यां वर्ष्मणोप स्पृशामि ७
अहमेव वात इव प्र वाम्यारभमाणा भुवनानि विश्वा ।
परो दिवा पर एना पृथिव्यैतावती महिना सं बभूव ८

॥ ६ ॥ (ऋ० १०।१३९।४-६)

(३३—३५) विश्वावसुर्देवगन्धर्वः । त्रिष्टुप् ।

विश्वावसुं सोम गन्धर्वमापो ददृशुषीस्तदृतेना व्यायन् ।
तदन्ववैदिन्द्रो रारहाण आसां परि सूर्यस्य परिधीँरपश्यत् ४
विश्वावसुरभि तन्नो गृणातु दिव्यो गन्धर्वो रजसो विमानः ।
यद्वा घा सत्यमुत यन्न विद्म धियो हिन्वानो धिय इन्नो अव्याः ५
सस्निमविन्दच्चरणे नदीनामपावृणोद्दुरो अश्मव्रजानाम् ।
प्रासां गन्धर्वो अमृतानि वोचदिन्द्रो दक्षं परि जानादहीनाम् ६(३५)

॥ ७ ॥ (ऋ० १०।१५९।१-६)×

(३६—४१) शची पौलोमी । अनुष्टुप् ।

उदसौ सूर्यो अगादुदयं मामको भगः । अहं तद्विद्वला पतिमभ्यसाक्षि विषासहिः १

× ऋ. १०।१५९।१= अथर्व. १।२९।५ (पूर्वार्धः), दै. [ब्रह्मणस्पतिः] १९।४९ पूर्वार्धः ।

अहं केतुरहं मूर्धा ऽहमुग्रा विवाचनी। ममेदनु क्रतुं पतिः सेहानाया उपाचरेत् २
मम पुत्राः शत्रुहणो ऽथो मे दुहिता विराट्।
उताहमस्मि संजया पत्यौ मे श्लोक उत्तमः ३
येनेन्द्रो हविषा कृत्व्य भवद् द्युम्न्युत्तमः। इदं तदक्रि देवा असपत्ना किलाभुवम् ४
असपत्ना सपत्नघ्नी जयन्त्यभिभूवरी। आवृक्षमन्यासां वर्चो राधो अस्थेयसामिव ५(४०)७९०
समजैषमिमा अहं सपत्नीरभिभूवरी। यथाहमस्य वीरस्य विराजानि जनस्य च ६

॥ ८ ॥ (ऋ० १०।१८९।१-३)×

(४१-४४) सार्पराज्ञी। (सूर्यो वा)। गायत्री।

आयं गौः पृश्निरक्रमी दसदन्मातरं पुरः । पितरं च प्रयन्त्स्वः १
अन्तश्चरति रोचना ऽस्य प्राणादपानती । व्यख्यन्महिषो दिवम् २
त्रिंशद्धाम वि राजति वाक् पतङ्गाय धीयते । प्रति वस्तोरह द्युभिः ३

॥ ९ ॥ (४५-७०) (वा० य० ७।२८)

आत्मने मे वर्चोदा वर्चसे पवस्व २८(४५)

॥ १० ॥ (वा० य० १८।३, २९)

आत्मा च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ३ आत्मा यज्ञेन कल्पताम् २९

॥ ११ ॥ (वा० य० २०।७ [उत्तरार्धः], ३२)

आत्मा क्षत्रमुरो मम ७
यो भूतानामधिपतिर्यस्मिँल्लोका अधि श्रिताः।
य ईशे महतो महाँस्तेन गृह्णामि त्वामहं मयि गृह्णामि त्वामहम् ३२

॥ १२ ॥ (वा० य० ३२।११,१६) ✱

परीत्य भूतानि परीत्य लोकान् परीत्य सर्वाः प्रदिशो दिशश्च।
उपस्थाय प्रथमजामृतस्यात्मनात्मानमभि सं विवेश ११(५०)
परि द्यावापृथिवी सद्य इत्वा परि लोकान् परि दिशः परि स्वः।
ऋतस्य तन्तुं विततं विचृत्य तदपश्यत् तदभवत् तदासीत् १२
सदसस्पतिमद्भुतं प्रियमिन्द्रस्य काम्यम्। सनिं मेधामयासिषं स्वाहा १३
यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते। तया मामद्य मेधयाऽग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा १४

× वा० य० ३।६-८; अथर्व० ६।३१—१।३; २०।४८।४—६।

✱ ऋ० १।१८।६; तै० [सदसस्पतिः] १६,१; वा० य० ३२,१-१०; तै० [पुरुषः] ६४-७३।

मेधां मे वरुणो ददातु मेधामग्निः प्रजापतिः ।
मेधामिन्द्रश्च वायुश्च मेधां धाता ददातु मे स्वाहा १५
इदं मे ब्रह्म च क्षत्रं चोभे श्रियमश्नुताम् ।
मयि देवा दधतु श्रियमुत्तमां तस्यै ते स्वाहा १६(५५)

॥ १३ ॥ (वा० य० ४०।१-२५)

ईशा वास्यमिदꣳ सर्वं यत् किं च जगत्यां जगत् ।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम् १
कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतꣳ समाः। एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे २
असुर्या नाम ते लोका अन्धेन तमसावृताः ।
ताँस्ते प्रेत्यापि गच्छन्ति ये के चात्महनो जनाः ३
अनेजदेकं मनसो जवीयो नैनद्देवा आप्नुवन् पूर्वमर्शत् ।
तद्धावतोऽन्यानत्येति तिष्ठत् तस्मिन्नपो मातरिश्वा दधाति ४
तदेजति तन्नैजति तद्दूरे तद्वन्तिके । तदन्तरस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य बाह्यतः ५(६०)८१०
यस्तु सर्वाणि भूतान्यात्मन्नेवानुपश्यति । सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न वि चिकित्सति ६
यस्मिन्त्सर्वाणि भूतान्यात्मैवाभूद् विजानतः ।
तत्र को मोहः कः शोक एकत्वमनुपश्यतः ७
स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरꣳ शुद्धमपापविद्धम् ।
कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूर्याथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः ८
अन्धं तमः प्र विशन्ति येऽसंभूतिमुपासते ।
ततो भूय इव ते तमो य उ सम्भूत्याꣳ रताः ९
अन्यदेवाहुः सम्भवादन्यदाहुरसम्भवात् । इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षिरे १०(६५)
संभूतिं च विनाशं च यस्तद्वेदोभयꣳ सह ।
विनाशेन मृत्युं तीर्त्वा संभूत्यामृतमश्नुते ११
अन्धं तमः प्र विशन्ति येऽविद्यामुपासते ।
ततो भूय इव ते तमो य उ विद्यायाꣳ रताः १२
अन्यदेवाहुर्विद्याया अन्यदाहुरविद्यायाः । इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षिरे १३
विद्यां चाविद्यां च यस्तद्वेदोभयꣳ सह । अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययामृतमश्नुते १४ ८१९

वायुरनिलममृतमथेदं भस्मान्तꣳ शरीरम् ।
ओ३म् क्रतो स्मर । क्लिबे स्मर । कृतꣳ स्मर १५(७०)८२०

॥ १४ ॥ (अथर्व० २।२।१-५)

(७१-७५) मातृनामा । गन्धर्वाप्सरसः [भुवनस्पतिसूक्तम्] । त्रिष्टुप्, १ विराड्जगती, ४ त्रिपाद्विराण्नाम्नी गायत्री, ५ भुरिगनुष्टुप् ।

दिव्यो गन्धर्वो भुवनस्य यस्पतिरेक एव नमस्यो विक्ष्वीड्यः ।
तं त्वा यौमि ब्रह्मणा दिव्य देव नमस्ते अस्तु दिवि ते सधस्थम् १
दिवि स्पृष्टो यजतः सूर्यत्वगवयाता हरसो दैव्यस्य
मृडाद्गन्धर्वो भुवनस्य यस्पतिरेक एव नमस्यः सुशेवाः २
अनवद्याभिः समु जग्म आभिरप्सरास्वपि गन्धर्व आसीत् ।
समुद्र आसां सदनं म आहुर्यतः सद्य आ च परा च यन्ति ३
अभ्रिये दिद्युन्नक्षत्रिये या विश्वावसुं गन्धर्वं सचध्वे ।
ताभ्यो वो देवीर्नम इत्कृणोमि ४
याः क्लन्दास्तमिषीचयोऽक्षकामा मनोमुहः । ताभ्यो गन्धर्वपत्नीभ्योऽप्सराभ्योऽकरं नमः ५(७५)

॥ १५ ॥ (अथर्व० २।१।१-५)

(७६-८८) वेनः । त्रिष्टुप्, ३ जगती ।

वेनस्तत् पश्यत् परमं गुहा यद्यत्र विश्वं भवत्येकरूपम् ।
इदं पृश्निरदुहज्जायमानाः स्वर्विदो अभ्यनूषत व्राः १
प्र तद्वोचेदमृतस्य विद्वान् गन्धर्वो धाम परमं गुहा यत् ।
त्रीणि पदानि निहिता गुहास्य यस्तानि वेद स पितुष्पितासत् २
स नः पिता जनिता स उत बन्धुर्धामानि वेद भुवनानि विश्वा ।
यो देवानां नामध एक एव तं संप्रश्नं भुवना यन्ति सर्वा ३
परि द्यावापृथिवी सद्य आयमुपातिष्ठे प्रथमजामृतस्य ।
वाचमिव वक्तरि भुवनेष्ठा धास्युरेष नन्वेषो अग्निः ४
परि विश्वा भुवनान्यायमृतस्य तन्तुं विततं दृशे कम् ।
यत्र देवा अमृतमानशानाः समाने योनावध्यैरयन्त ५(८०)८३०

॥१६॥ (अथर्व० ४।२।१-८)
त्रिष्टुप्; ६ पुरोऽनुष्टुप्; ७ उपरिष्टाज्ज्योतिः ।

य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः ।
योऽ३स्येशे द्विपदो यश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम　१　८३१
यः प्राणतो निमिषतो महित्वैको राजा जगतो बभूव ।
यस्य च्छायामृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम　२
यं क्रन्दसी अवतश्चस्कभाने भियसाने रोदसी अह्वयेथाम् ।
यस्यासौ पन्था रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम　३
यस्य द्यौरुर्वी पृथिवी च मही यस्याद उर्व१न्तरिक्षम् ।
यस्यासौ सूरो विततो महित्वा कस्मै देवाय हविषा विधेम　४
यस्य विश्वे हिमवन्तो महित्वा समुद्रे यस्य रसामिदाहुः ।
इमाश्च प्रदिशो यस्य बाहू कस्मै देवाय हविषा विधेम　५(८५)
आपो अग्रे विश्वमावन् गर्भं दधाना अमृता ऋतज्ञाः ।
यासु देवीष्वधि देव आसीत् कस्मै देवाय हविषा विधेम　६
हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् ।
स दाधार पृथिवीमुत द्यां कस्मै देवाय हविषा विधेम　७
आपो वत्सं जनयन्तीर्गर्भमग्रे समैरयन् ।
तस्योत जायमानस्योल्ब आसीद्धिरण्ययः कस्मै देवाय हविषा विधेम　८

॥ १७ ॥ (अथर्व० ७।१।१-२)
(८९-१४१) अथर्वा (ब्रह्मवर्चसकामः)। त्रिष्टुप् , २ विराड् जगती ।

धीती वा ये अनयन् वाचो अग्रं मनसा वा येऽवदन्नृतानि ।
तृतीयेन ब्रह्मणा वावृधानास्तुरीयेणामन्वत नाम धेनोः　१
स वेद पुत्रः पितरं स मातरं स सूनुर्भुवत् स भुवत् पुनर्मघः ।
स द्यामौर्णोदन्तरिक्षं स्व१ः स इदं विश्वमभवत् स आऽभवत्　२(९०)८४०

॥ १८ ॥ (अथर्व० ७।२।१) त्रिष्टुप् ।

अथर्वाणं पितरं देवबन्धुं मातुर्गर्भं पितुरसुं युवानम् ।
य इमं यज्ञं मनसा चिकेत प्र णो वोचस्तमिहेह ब्रवः　१

॥१९॥ (अथर्व० ७।३।१)

अया विष्ठा जनयन् कर्वराणि स हि घृणिरुरुर्वराय गातुः ।
स प्रत्युदैद् धरुणं मध्वो अग्रं स्वया तन्वा तन्वमैरयत १ ८४२

॥ २० ॥ (अथर्व० ७।५।१-५)

त्रिष्टुप्, ३ पंक्तिः, ४ अनुष्टुप्।

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् ।
ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः १
यज्ञो बभूव स आ बभूव स प्र जज्ञे स उ वावृधे पुनः ।
स देवानामधिपतिर्बभूव सो अस्मासु द्रविणमा दधातु २
यद्देवा देवान् हविषाऽयजन्तामर्त्यान् मनसामर्त्येन ।
मदेम तत्र परमे व्योमन् पश्येम तदुदितौ सूर्यस्य ३(९५)
यत् पुरुषेण हविषा यज्ञं देवा अतन्वत । अस्ति नु तस्मादोजीयो यद्विहव्येनेजिरे ४
मुग्धा देवा उत शुनायजन्तोत गोरङ्गैः पुरुधाऽयजन्त ।
य इमं यज्ञं मनसा चिकेत प्र णो वोचस्तमिहेह ब्रवः ५

॥ २१ ॥ (अथर्व० १०।७।१-४४)

स्कम्भः, आत्मा वा। त्रिष्टुप्; १ विराड् जगती; २,८ भुरिक्; ७,१३ परोष्णिक्, १०,१४,१६,१८-१९ उपरिष्टाद् बृहती; ११-१२,१५,२०,२२,३९ उपरिष्टाज्ज्योतिर्जगती; १७ त्र्यवसाना षट्पदा जगती; २१ बृहतीगर्भानुष्टुप्; २३-३०,३७,४० अनुष्टुप्; ३१ मध्येज्योतिर्जगती; ३२,३४,३६ उपरिष्टाद्विराड् बृहती; ३३ पराविराडनुष्टुप्; ३५ चतुष्पदा जगती; ३८,४२-४३ त्रिष्टुप्; ४१ आर्षी त्रिपदा गायत्री; ४४ एकावसाना आर्च्यनुष्टुप्।

कस्मिन्नङ्गे तपो अस्याधि तिष्ठति कस्मिन्नङ्ग ऋतमस्याध्याहितम् ।
क्व व्रतं क्व श्रद्धाऽस्य तिष्ठति कस्मिन्नङ्गे सत्यमस्य प्रतिष्ठितम् १
कस्मादङ्गाद् दीप्यते अग्निरस्य कस्मादङ्गात् पवते मातरिश्वा ।
कस्मादङ्गाद् वि मिमीतेऽधि चन्द्रमा मह स्कम्भस्य मिमानो अङ्गम् २
कस्मिन्नङ्गे तिष्ठति भूमिरस्य कस्मिन्नङ्गे तिष्ठत्यन्तरिक्षम् ।
कस्मिन्नङ्गे तिष्ठत्याहिता द्यौः कस्मिन्नङ्गे तिष्ठत्युत्तरं दिवः ३(१००)८५०
क्व प्रेप्सन् दीप्यत ऊर्ध्वो अग्निः क्व प्रेप्सन् पवते मातरिश्वा ।
यत्र प्रेप्सन्तीरभियन्त्यावृतः स्कम्भं तं ब्रूहि कतमः स्विदेव सः ४

क्वा॒॑र्धमा॒सा: क्व॑ यन्ति॒ मासा॑: संवत्स॒रेण॑ स॒ह सं॑वि॒दा॒नाः।
यत्र॒ यन्त्यृ॒तवो॒ यत्रा॑र्त॒वाः स्क॒म्भं तं ब्रू॑हि क॒त॒मः स्वि॑दे॒व सः ५ ८५९

क्व॑ प्रेप्स॑न्ती युव॒ती विरू॑पे अहोरा॒त्रे द्र॑वतः संविदा॒ने। यत्र॒ प्रेप्स॑न्तीरभि॒यन्त्याप॑: स्क॒म्भं० ६

यस्मि॑न्त्स्त॒ब्ध्वा प्र॒जाप॑तिर्लो॒कान्त्सर्वाँ॒ अधा॑रयत्। स्क॒म्भं तं ब्रू॑हि० ७

यत् प॑र॒मम॑व॒मं यच्च॑ मध्य॒मं प्र॒जाप॑तिः स॒सृ॒जे वि॒श्वरू॑पम्।
किय॑ता स्क॒म्भः प्र वि॑वेश॒ तत्र॒ यन्न प्रावि॑श॒त् किय॒त् तद्ब॑भूव ८(१०५)

किय॑ता स्क॒म्भः प्र वि॑वेश भू॒तं किय॑द् भवि॒ष्यद॒न्वाश॑येऽस्य।
एकं॒ यद॒ङ्गमकृ॑णोत् सहस्र॒धा किय॑ता स्क॒म्भः प्र वि॑वेश॒ तत्र॑ ९

यत्र॑ लो॒कांश्च॒ कोशां॒श्चापो॒ ब्रह्म॒ जना॑ वि॒दुः। अस॑च्च॒ यत्र॒ सच्चा॒न्त स्क॒म्भं० १०

यत्र॒ तप॑: परा॒क्रम्य॑ व्र॒तं धा॒रय॒त्युत्त॑रम्। ऋ॒तं च॒ यत्र॑ श्र॒द्धा चापो॒ ब्रह्म॑ स॒माहि॑ताः स्क॒म्भं० ११

यस्मि॑न् भूमि॑र॒न्तरि॑क्षं॒ द्यौर्यस्मि॑न्न॒ध्याहि॑ता।
यत्रा॒ग्निश्च॒न्द्र॒माः सूर्यो॒ वात॒स्तिष्ठ॒न्त्यार्पि॑ताः स्क॒म्भं० १२

यस्य॒ त्रय॑स्त्रिंशद् दे॒वा अङ्गे॒ सर्वे॑ स॒माहि॑ताः। स्क॒म्भं तं ब्रू॑हि क॒त॒मः स्वि॑दे॒व सः १३ ८६०

यत्र॒ ऋष॑यः प्रथम॒जा ऋच॒: साम॒ यजु॑र्म॒ही। ए॒क॒र्षिर्यस्मि॒न्नार्पि॑तः स्क॒म्भं० १४

यत्रा॒मृतं॑ च मृ॒त्युश्च॒ पुरु॒षेऽधि॑ स॒माहि॑ते।
स॒मु॒द्रो यस्य॑ ना॒ड्य१: पुरु॒षेऽधि॑ स॒माहि॑ताः स्क॒म्भं० १५

यस्य॒ चत॑स्रः प्र॒दिशो॑ ना॒ड्य१स्तिष्ठ॑न्ति प्रथ॒माः। य॒ज्ञो यत्र॒ परा॑क्रान्तः स्क॒म्भं० १६

ये पुरु॑षे॒ ब्रह्म॑ वि॒दुस्ते वि॑दुः परमे॒ष्ठिन॑म्। यो वेद॑ परमे॒ष्ठिनं॒ यश्च॒ वेद॑ प्र॒जाप॑तिम्।
ज्ये॒ष्ठं ये ब्राह्म॑णं वि॒दुस्ते स्क॒म्भम॑नु॒संवि॑दुः १७

यस्य॒ शिरो॑ वैश्वान॒रश्चक्षु॒रङ्गि॑र॒सोऽभ॑वन्। अङ्गा॑नि॒ यस्य॑ या॒तव॑: स्क॒म्भं० १८(११५)

यस्य॒ ब्रह्म॒ मुख॑मा॒हुर्जि॒ह्वां म॑धुक॒शामु॒त। वि॒राज॒मूधो॒ यस्या॒हुः स्क॒म्भं० १९

यस्मा॒दृचो॑ अ॒पात॑क्षन् य॒जुर्यस्मा॑द॒पाक॑षन्।
सामा॑नि॒ यस्य॒ लोमा॑न्यथर्वा॒ङ्गिर॑सो॒ मुखं॑ स्क॒म्भं० २०

अ॒स॒च्छा॒खां॑ प्र॒तिष्ठ॑न्तीं पर॒ममि॑व॒ जना॑ विदुः। उ॒तो सन्म॑न्य॒न्तेऽव॑रे॒ ये ते॒ शाखा॑मु॒पास॑ते २१

यत्रा॑दि॒त्याश्च॑ रु॒द्राश्च॒ वस॑वश्च स॒माहि॑ताः।
भू॒तं च॒ यत्र॒ भव्यं॑ च॒ सर्वे॑ लो॒काः प्रति॑ष्ठिताः स्क॒म्भं० २२

यस्य॒ त्रय॑स्त्रिंशद् दे॒वा नि॒धिं रक्ष॑न्ति स॒र्वदा। नि॒धिं तम॒द्य को वे॑द॒ यं दे॑वा अभि॒रक्ष॑थ २३(१२०)८७०

यत्र देवा ब्रह्मविदो ब्रह्म ज्येष्ठमुपासते। यो वै तान् विद्यात् प्रत्यक्षं स ब्रह्मा वेदिता स्यात् २४(१११)
बृहन्तो नाम ते देवा येऽसतः परि जज्ञिरे। एकं तदङ्गं स्कम्भस्यासदाहुः परो जनाः २५
यत्र स्कम्भः प्रजनयन् पुराणं व्यवर्तयत्। एकं तदङ्गं स्कम्भस्य पुराणमनुसंविदुः २६
यस्य त्रयस्त्रिंशद् देवा अङ्गे गात्रा विभेजिरे।
तान् वै त्रयस्त्रिंशद् देवानेके ब्रह्मविदो विदुः २७
हिरण्यगर्भं परममनत्युद्यं जना विदुः। स्कम्भस्तदग्रे प्रासिञ्चद्धिरण्यं लोके अन्तरा २८
स्कम्भे लोकाः स्कम्भे तपः स्कम्भेऽध्यृतमाहितम्।
स्कम्भ त्वा वेद प्रत्यक्षमिन्द्रे सर्वं समाहितम् २९
इन्द्रे लोका इन्द्रे तप इन्द्रेऽध्यृतमाहितम्। इन्द्रं त्वा वेद प्रत्यक्षं स्कम्भे सर्वं प्रतिष्ठितम् ३०
नाम नाम्ना जोहवीति पुरा सूर्यात् पुरोषसः।
यदजः प्रथमं संबभूव स ह तत् स्वराज्यमियाय यस्मान्नान्यत् परमस्ति भूतम् ३१
यस्य भूमिः प्रमान्तरिक्षमुतोदरम्। दिवं यश्चक्रे मूर्धानं तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः ३२
यस्य सूर्यश्चक्षुश्चन्द्रमाश्च पुनर्णवः। अग्निं यश्चक्र आस्यं१ तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः ३३(१३०)८८०
यस्य वातः प्राणापानौ चक्षुरङ्गिरसोऽभवन्।
दिशो यश्चक्रे प्रज्ञानीस्तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः ३४
स्कम्भो दाधार द्यावापृथिवी उभे इमे स्कम्भो दाधारोर्व१न्तरिक्षम्।
स्कम्भो दाधार प्रदिशः षडुर्वीः स्कम्भ इदं विश्वं भुवनमा विवेश ३५
यः श्रमात् तपसो जातो लोकान्त्सर्वान्त्समानशे।
सोमं यश्चक्रे केवलं तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः ३६
कथं वातो नेलयति कथं न रमते मनः। किमापः सत्यं प्रेप्सन्तीर्नेलयन्ति कदा चन ३७
महद्यक्षं भुवनस्य मध्ये तपसि क्रान्तं सलिलस्य पृष्ठे।
तस्मिञ्छ्रयन्ते य उ के च देवा वृक्षस्य स्कन्धः परित इव शाखाः ३८(१३५)
यस्मै हस्ताभ्यां पादाभ्यां वाचा श्रोत्रेण चक्षुषा।
यस्मै देवाः सदा बलिं प्रयच्छन्ति विमितेऽमितं स्कम्भं तं ब्रूहि कतमः स्विदेव सः ३९
अप तस्य हतं तमो व्यावृत्तः स पाप्मना।
सर्वाणि तस्मिन् ज्योतींषि यानि त्रीणि प्रजापतौ ४०
यो वेतसं हिरण्ययं तिष्ठन्तं सलिले वेद। स वै गुह्यः प्रजापतिः ४१ ८८८

तन्त्रमेके युवती विरूपे अभ्याक्रामं वयतः षण्मयूखम् ।
प्रान्या तन्तूंस्तिरते धत्ते अन्या नाप वृञ्जाते न गमातो अन्तम् ४२
तयोरहं परिनृत्यन्त्योरिव न वि जानामि यतरा परस्तात् ।
पुमानेनद् वयत्युद्गृणत्ति पुमानेनद्वि जभाराधि नाके ४३
इमे मयूखा उप तस्तभुर्दिवं सामानि चक्रुस्तसराणि वातवे ४४(१४१)८९१

॥ २२ ॥ (अथर्व० १०।८।१-४४)

(१४२-१८५) कुत्सः । [ज्येष्ठब्रह्मवर्णनम्]। त्रिष्टुप्; १ उपरिष्टाद्विराड्बृहती; २ बृहतीगर्भानुष्टुप्; ५ भुरिगनुष्टुप् ;
६, १४, १९-२१,२३, २५, २९, ३१-३४, ३७-३८, ४१, ४३ अनुष्टुप्; ७ पराबृहती; १० अनुष्टुब्गर्भा;
११जगती; १२ पुरोबृहती त्रिष्टुब्गर्भाऽऽर्षी पङ्क्तिः; १५, २७ भुरिग्बृहती;
२२ पुर उष्णिक्; २६ द्व्युष्णिग्गर्भानुष्टुप् ; ३० भुरिक्;
३९ बृहतीगर्भा; ४२ त्रिराड् गायत्री ।

यो भूतं च भव्यं च सर्वं यश्चाधितिष्ठति । स्व१र्यस्य च केवलं तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः १
स्कम्भेनेमे विष्टभिते द्यौश्च भूमिश्च तिष्ठतः । स्कम्भ इदं सर्वमात्मन्वद्यत् प्राणन्निमिषच्च यत् २
तिस्रो ह प्रजा अत्यायमायन् न्य१न्या अर्कमभितोऽविशन्त ।
बृहन् ह तस्थौ रजसो विमानो हरितो हरिणीरा विवेश ३
द्वादश प्रधयश्चक्रमेकं त्रीणि नभ्यानि क उ तच्चिकेत ।
तत्राहतास्त्रीणि शतानि शङ्कवः षष्टिश्च खीला अविचाचला ये ४(१४५)
इदं सवितर्वि जानीहि षड् यमा एक एकजः ।
तस्मिन् हापित्वमिच्छन्ते य एषामेक एकजः ५
आविः सन्निहितं गुहा जरन्नाम महत् पदम् । तत्रेदं सर्वमार्पितमेजत् प्राणत् प्रतिष्ठितम् ६
एकचक्रं वर्तत एकनेमि सहस्राक्षरं प्र पुरो नि पश्चा ।
अर्धेन विश्वं भुवनं जजान यदस्यार्धं क्व१ तद् बभूव ७
पञ्चवाही वहत्यग्रमेषां प्रष्टयो युक्ता अनुसंवहन्ति ।
अयातमस्य ददृशे न यातं परं नेदीयोऽवरं दवीयः ८
तिर्यग्बिलश्चमस ऊर्ध्वबुध्नस्तस्मिन् यशो निहितं विश्वरूपम् ।
तदासत ऋषयः सप्त साकं ये अस्य गोपा महतो बभूवुः ९
या पुरस्ताद् युज्यते या च पश्चाद् या विश्वतो युज्यते या च सर्वतः ।
यया यज्ञः प्राङ् तायते तां त्वा पृच्छामि कतमा सर्चाम् १० ९०१

यदेजति पतति यच्च तिष्ठति प्राणदप्राणन्निमिषच्च यद् भुवत् ।
तद्दाधार पृथिवीं विश्वरूपं तत् संभूय भवत्येकमेव ११ १०२
अनन्तं विततं पुरुत्रानन्तमन्तवच्चा समन्ते ।
ते नाकपालश्चरति विचिन्वन् विद्वान् भूतमुत भव्यमस्य १२
प्रजापतिश्चरति गर्भे अन्तरदृश्यमानो बहुधा वि जायते ।
अर्धेन विश्वं भुवनं जजान यदस्यार्धं कतमः स केतुः १३
ऊर्ध्वं भरन्तमुदकं कुम्भेनेवोदहार्यम् । पश्यन्ति सर्वे चक्षुषा न सर्वे मनसा विदुः १४(१५५)
दूरे पूर्णेन वसति दूर ऊनेन हीयते ।
महद् यक्षं भुवनस्य मध्ये तस्मै बलिं राष्ट्रभृतो भरन्ति १५
यतः सूर्य उदेत्यस्तं यत्र च गच्छति । तदेव मन्येऽहं ज्येष्ठं तदु नात्येति किं चन १६
ये अर्वाङ् मध्य उत वा पुराणं वेदं विद्वांसमभितो वदन्ति ।
आदित्यमेव ते परि वदन्ति सर्वे अग्निं द्वितीयं त्रिवृतं च हंसम् १७
सहस्राह्ण्यं वियतावस्य पक्षौ हरेर्हंसस्य पततः स्वर्गम् ।
स देवान्त्सर्वानुरस्युपदद्य संपश्यन् याति भुवनानि विश्वा १८
सत्येनोर्ध्वस्तपति ब्रह्मणाऽर्वाङ् वि पश्यति ।
प्राणेन तिर्यङ् प्राणति यस्मिन् ज्येष्ठमधि श्रितम् १९(१६०)११०
यो वै ते विद्यादरणी याभ्यां निर्मथ्यते वसु ।
स विद्वान् ज्येष्ठं मन्येत स विद्याद् ब्राह्मणं महत् २०
अपादग्रे समभवत् सो अग्रे स्व१राभरत् । चतुष्पाद् भूत्वा भोग्यः सर्वमादत्त भोजनम् २१
भोग्यो भवदथो अन्नमदद् बहु । यो देवमुत्तरावन्तमुपासातै सनातनम् २२
सनातनमेनमाहुरुताद्य स्यात् पुनर्णवः । अहोरात्रे प्र जायेते अन्यो अन्यस्य रूपयोः २३
शतं सहस्रमयुतं न्यर्बुदमसंख्येयं स्वमस्मिन् निविष्टम् ।
तदस्य घ्नन्त्यभिपश्यत एव तस्माद् देवो रोचत एष एतत् २४(१६५)
बालादेकमणीयस्कमुतैकं नेव दृश्यते । ततः परिष्वजीयसी देवता सा मम प्रिया २५
इयं कल्याण्य१जरा मर्त्यस्यामृता गृहे । यस्मै कृता शये स यश्चकार जजार सः २६
त्वं स्त्री त्वं पुमानसि त्वं कुमार उत वा कुमारी ।
त्वं जीर्णो दण्डेन वञ्चसि त्वं जातो भवसि विश्वतोमुखः २७ ११८

उतैषां पितोत वा पुत्र एषामुतैषां ज्येष्ठ उत वा कनिष्ठः ।
एको ह देवो मनसि प्रविष्टः प्रथमो जातः स उ गर्भे अन्तः २८
पूर्णात् पूर्णमुदचति पूर्णं पूर्णेन सिच्यते । उतो तदद्य विद्याम यतस्तत् परिषिच्यते २९(१७०)१२०

एषा सनत्नी सनमेव जातैषा पुराणी परि सर्वं बभूव ।
मही देव्युषसो विभाती सैकेनैकेन मिषता वि चष्टे ३०
अविर्वै नाम देवतर्तेनास्ते परीवृता । तस्या रूपेणेमे वृक्षा हरिता हरितस्रजः ३१
अन्ति सन्तं न जहात्यन्ति सन्तं न पश्यति । देवस्य पश्य काव्यं न ममार न जीर्यति ३२
अपूर्वेणेषिता वाचस्ता वदन्ति यथायथम् । वदन्तीर्यत्र गच्छन्ति तदाहुर्ब्राह्मणं महत् ३३
यत्र देवाश्च मनुष्याश्चारा नाभाविव श्रिताः ।
अपां त्वा पुष्पं पृच्छामि यत्र तन्मायया हितम् ३४(१७५)

येभिर्वात इषितः प्रवाति ये ददन्ते पञ्च दिशः सध्रीचीः ।
य आहुतिमत्यमन्यन्त देवा अपां नेतारः कतमे त आसन् ३५
इमामेषां पृथिवीं वस्त एकोऽन्तरिक्षं पर्येको बभूव ।
दिवमेषां ददते यो विधर्ता विश्वा आशाः प्रति रक्षन्त्येके ३६
यो विद्यात् सूत्रं विततं यस्मिन्नोताः प्रजा इमाः ।
सूत्रं सूत्रस्य यो विद्यात् स विद्याद् ब्राह्मणं महत् ३७
वेदाहं सूत्रं विततं यस्मिन्नोताः प्रजा इमाः । सूत्रं सूत्रस्याहं वेदाथो यद् ब्राह्मणं महत् ३८
यदन्तरा द्यावापृथिवी अग्निरैत् प्रदहन् विश्वदाव्यः ।
यत्रातिष्ठन्नेकपत्नीः परस्तात् क्वेवासीन्मातरिश्वा तदानीम् ३९(१८०)१३०

अप्स्वासीन्मातरिश्वा प्रविष्टः प्रविष्टा देवाः सलिलान्यासन् ।
बृहन् ह तस्थौ रजसो विमानः पवमानो हरित आ विवेश ४०
उत्तरेणेव गायत्रीममृतेऽधि वि चक्रमे । साम्ना ये साम संविदुरजस्तद् ददृशे क्व ४१
निवेशनः संगमनो वसूनां देव इव सविता सत्यधर्मा । इन्द्रो न तस्थौ समरे धनानाम् ४२
पुण्डरीकं नवद्वारं त्रिभिर्गुणेभिरावृतम् । तस्मिन् यद्यक्षमात्मन्वत् तद्वै ब्रह्मविदो विदुः ४३
अकामो धीरो अमृतः स्वयंभू रसेन तृप्तो न कुतश्चनोनः ।
तमेव विद्वान् न बिभाय मृत्योरात्मानं धीरमजरं युवानम् ४४(१८५)

॥ २३ ॥ (अथर्व० ७।२१।१)*

(१८१-१९४) ब्रह्मा । आत्मा (एको विभुः)। शाक्करी विराड्गर्भा जगती ।

समेत विश्वे वचसा पतिं दिव एको विभूरतिथिर्जनानाम् ।
स पूर्व्यो नूतनमाविवासत् तं वर्तनिरनु वावृत एकमित् पुरु १ ९३६

॥ २४ ॥ (अथर्व० ७।६७।१) पुरः परोष्णिग्बृहती ।

पुनर्मैत्विन्द्रियं पुनरात्मा द्रविणं ब्राह्मणं च। पुनरग्नयो धिष्ण्या यथास्थाम कल्पयन्तामिहैव १

॥ २५ ॥ (अथर्व० ७।१०३।१) आत्मा (क्षत्रियः)। त्रिष्टुप् ।

को अस्या नो द्रुहोऽवद्यवत्या उन्नेष्यति क्षत्रियो वस्य इच्छन् ।
को यज्ञकामः क उ पूर्तिकामः को देवेषु वनुते दीर्घमायुः १

॥ २६ ॥ (अथर्व० ७।१०४।१) आत्मा (गौः) । त्रिष्टुप् ।

कः पृश्निं धेनुं वरुणेन दत्तामथर्वणे सुदुघां नित्यवत्साम् ।
बृहस्पतिना सख्यं जुषाणो यथावशं तन्वः कल्पयाति १

॥ २७ ॥ (अथर्व० ९।१०।१९,२४-२५)×

गौः, विराट्, अध्यात्मं (आत्मा)। त्रिष्टुप्, २४ चतुष्पदा पुरस्कृतिर्भुरिगतिजगती ।

ऋचः पदं मात्रया कल्पयन्तोऽर्धर्चेन चाक्लृपुर्विश्वमेजत् ।
त्रिपाद् ब्रह्म पुरुरूपं वि तष्ठे तेन जीवन्ति प्रदिशश्चतस्रः १९(१९०)९४०
विराड् वाग्विराट् पृथिवी विराडन्तरिक्षं विराट् प्रजापतिः ।
विराण्मृत्युः साध्यानामधिराजो बभूव तस्य भूतं भव्यं वशे स मे भूतं भव्यं वशे कृणोतु २४
शकमयं धूममारादपश्यं विषूवता पर एनावरेण ।
उक्षाणं पृश्निमपचन्त वीरास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् २५

॥ २८ ॥ (अथर्व० १९।५१।१-२)

(आत्मा) १ आत्मा, २ सविता च । १ एकपदा ब्राह्मी अनुष्टुप्, २ त्रिपाद्यवमध्योष्णिक् ।

अयुतोऽहमयुतो म आत्माऽयुतं मे चक्षुरयुतं मे श्रोत्रमयुतो मे प्राणोऽयुतो
मेऽपानोऽयुतो मे व्यानोऽयुतोऽहं सर्वः १
देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्यां प्रसूत आ रभे २(१९४)९४४

---

* सा. ३७२ । × अथर्व. ९।९।१-२२; १०।१-१८,२०-२३,२६-२८ = दै. [विश्वे देवाः] ९९-१३९ । [अग्निः] २४५६ । [इन्द्रः] २६१८; [अदितिः.] २२४;५५३-५४ ।

२२ ब्रह्म ।

॥ १ ॥ (वा० य० २३।९,११,४७-५२)×

कः स्विदेकाकी चरति क उं स्विज्जायते पुनः ।
किꣳ स्विद्धिमस्य भेषजं किम्वावपनं महत् ९ १४५
का स्विदासीत् पूर्वचित्तिः किꣳ स्विदासीद्बृहद्वयः ।
का स्विदासीत् पिलिप्पिला का स्विदासीत् पिशङ्गिला ११
किꣳ स्वित् सूर्यसमं ज्योतिः किꣳ समुद्रसमꣳ सरः ।
किꣳ स्वित् पृथिव्यै वर्षीयः कस्य मात्रा न विद्यते ४७
ब्रह्म सूर्यसमं ज्योतिर्द्यौः समुद्रसमꣳ सरः ।
इन्द्रः पृथिव्यै वर्षीयान् गोस्तु मात्रा न विद्यते ४८
पृच्छामि त्वा चितये देवसख यदि त्वमत्र मनसा जगन्थ ।
येषु विष्णुस्त्रिषु पदेष्वेष्टस्तेषु विश्वं भुवनमा विवेशाँ३ऽ ४९(५)
अपि तेषु त्रिषु पदेष्वस्मि येषु विश्वं भुवनमा विवेश ।
सद्यः पर्येमि पृथिवीमुत द्यामेकेनाङ्गेन दिवो अस्य पृष्ठम् ५०
केष्वन्तः पुरुष आ विवेश कान्यन्तः पुरुषे अर्पितानि ।
एतद्ब्रह्मन्नुप वल्हामसि त्वा किꣳ स्विन्नः प्रति वोचास्यत्र ५१
पञ्चस्वन्तः पुरुष आ विवेश तान्यन्तः पुरुषे अर्पितानि ।
एतत् त्वात्र प्रतिमन्वानो अस्मि न मायया भवस्युत्तरो मत् ५२ १५२

॥२॥ (अथर्व० ५।२४।१-१७)

(९-५२) अथर्वा । [ब्रह्मकर्म] । ब्रह्मकर्मात्मा; १ सविता, २ अग्निः, ३ द्यावापृथिवी, ४ वरुणः, ५ मित्रावरुणौ, ६ मरुतः, ७ सोमः, ८ वायुः, ९ सूर्यः, १० चन्द्रमाः, ११ इन्द्रः, १२ मरुतां पिता, १३ मृत्युः, १४ यमः, १५ पितरः, १६ तताः, १७ ततामहाः । अतिशक्करी; १-१०, १२-१४ चतुष्पदातिशक्करी; ११ शक्करी; १५-१६ त्रिपदा भुरिग्जगती; १७ त्रिपदा विराट् शक्वरी ।

सविता प्रसवानामधिपतिः स मावतु ।
अस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् कर्मण्यस्यां पुरोधायामस्यां प्रतिष्ठायामस्यां
चित्त्यामस्यामाकूत्यामस्यामाशिष्यस्यां देवहूत्यां स्वाहा १

× वा. य. २३,१०,१२ = दै. (अदितिः) ९७७,१०१२ ।

अग्निर्वनस्पतीनामधिपतिः स मावतु। अस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन्० २(१०)

द्यावापृथिवी दातॄणामधिपत्नी ते मावताम्। अस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन्० ३

वरुणोऽपामधिपतिः स मावतु। अस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन्० ४

मित्रावरुणौ वृष्ट्याधिपती तौ मावताम्। अस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन्० ५

मरुतः पर्वतानामधिपतयस्ते मावन्तु। अस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन्० ६

सोमो वीरुधामधिपतिः स मावतु। अस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन्० ७

वायुरन्तरिक्षस्याधिपतिः स मावतु। अस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन्० ८ ९६०

सूर्यश्चक्षुषामधिपतिः स मावतु। अस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन्० ९

चन्द्रमा नक्षत्राणामधिपतिः स मावतु। अस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन्० १०

इन्द्रो दिवोऽधिपतिः स मावतु। अस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन्० ११

मरुतां पिता पशूनामधिपतिः स मावतु। अस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन्० १२(२०)

मृत्युः प्रजानामधिपतिः स मावतु। अस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन्० १३

यमः पितॄणामधिपतिः स मावतु। अस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन्० १४

पितरः परे ते मावन्तु। अस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन्० १५

तता अवरे ते मावन्तु। अस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन्० १६

ततस्ततामहास्ते मावन्तु। अस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन्० १७ ९६९

॥३॥ (अथर्व० ११।७।१-२७)

अध्यात्मं, उच्छिष्टः। [उच्छिष्ट-ब्रह्म-सूक्तम्]। अनुष्टुप्; ६ पुर उष्णिग्बार्हतपरा; २१ स्वराट्; २२ विराट् पथ्याबृहती।

उच्छिष्टे नाम रूपं चोच्छिष्टे लोक आहितः। उच्छिष्ट इन्द्रश्चाग्निश्च विश्वमन्तः समाहितम् १

उच्छिष्टे द्यावापृथिवी विश्वं भूतं समाहितम्।

आपः समुद्र उच्छिष्टे चन्द्रमा वात आहितः २

सन्नुच्छिष्टे असंश्चोभौ मृत्युर्वाजः प्रजापतिः।

लौक्या उच्छिष्ट आयत्ता व्रश्च द्रश्चापि श्रीर्मयि ३

दृढो दृंहस्थिरो न्यो ब्रह्म विश्वसृजो दश। नाभिमिव सर्वतश्चक्रमुच्छिष्टे देवताः श्रिताः ४

ऋक्साम यजुरुच्छिष्ट उद्गीथः प्रस्तुतं स्तुतम्।

हिङ्कार उच्छिष्टे स्वरः साम्नो मेडिश्च तन्मयि ५(३०)९७४

ऐन्द्राग्नं पावमानं महानाम्नीर्महाव्रतम् । उच्छिष्टे यज्ञस्याङ्गान्यन्तर्गर्भ इव मातरि ६ १७५
राजसूयं वाजपेयमग्निष्टोमस्तदध्वरः । अर्काश्वमेधावुच्छिष्टे जीवबर्हिर्मदिन्तमः ७
अग्न्याधेयमथो दीक्षा कामप्रश्छन्दसा सह ।
उत्सन्ना यज्ञाः सत्त्राण्युच्छिष्टेऽधि समाहिताः ८
अग्निहोत्रं च श्रद्धा च वषट्कारो व्रतं तपः ।
दक्षिणेष्टं पूर्तं चोच्छिष्टेऽधि समाहिताः ९
एकरात्रो द्विरात्रः सद्यःक्रीः प्रक्रीरुक्थ्यः । ओतं निहितमुच्छिष्टे यज्ञस्याणूनि विद्यया १०(३५)
चतूरात्रः पञ्चरात्रः षड्रात्रश्चोभयः सह ।
षोडशी सप्तरात्रश्चोच्छिष्टाज्जज्ञिरे सर्वे ये यज्ञा अमृते हिताः ११ १८०
प्रतीहारो निधनं विश्वजिच्चाभिजिच्च यः । साह्नातिरात्रावुच्छिष्टे द्वादशाहोऽपि तन्मयि १२
सूनृता संनतिः क्षेमः स्वधोर्जामृतं सहः । उच्छिष्टे सर्वे प्रत्यञ्चः कामा कामेन तातृपुः १३
नव भूमीः समुद्रा उच्छिष्टेऽधि श्रिता दिवः । आ सूर्यो भात्युच्छिष्टेऽहोरात्रे अपि तन्मयि १४
उपहव्यं विषूवन्तं ये च यज्ञा गुहा हिताः । बिभर्ति भर्ता विश्वस्योच्छिष्टो जनितुः पिता १५(४०)
पिता जनितुरुच्छिष्टोऽसोः पौत्रः पितामहः ।
स क्षियति विश्वस्येशानो वृषा भूम्यामतिघ्न्यः १६
ऋतं सत्यं तपो राष्ट्रं श्रमो धर्मश्च कर्म च । भूतं भविष्यदुच्छिष्टे वीर्यं लक्ष्मीर्बलं बले १७
समृद्धिरोज आकूतिः क्षत्रं राष्ट्रं षडुर्व्यः । संवत्सरोऽध्युच्छिष्ट इडा प्रैषा ग्रहा हविः १८
चतुर्होतार आप्रियश्चातुर्मास्यानि नीविदः । उच्छिष्टे यज्ञा होत्राः पशुबन्धास्तदिष्टयः १९
अर्धमासाश्च मासाश्चार्तवा ऋतुभिः सह । उच्छिष्टे घोषिणीरापः स्तनयित्नुः श्रुतिर्मही २०(४५)
शर्कराः सिकता अश्मान ओषधयो वीरुधस्तृणा ।
अभ्राणि विद्युतो वर्षमुच्छिष्टे संश्रिता श्रिता २१ १९०
राद्धिः प्राप्तिः समाप्तिर्व्याप्तिर्मह एधतुः । अत्याप्तिरुच्छिष्टे भूतिश्चाहिता निहिता हिता २२
यच्च प्राणति प्राणेन यच्च पश्यति चक्षुषा । उच्छिष्टाज्जज्ञिरे सर्वे दिवि देवा दिविश्रितः २३
ऋचः सामानि छन्दांसि पुराणं यजुषा सह । उच्छिष्टाज्जज्ञिरे० २४
प्राणापानौ चक्षुः श्रोत्रमक्षितिश्च क्षितिश्च या । उच्छिष्टाज्जज्ञिरे० २५
आनन्दा मोदाः प्रमुदोऽभीमोदमुदश्च ये । उच्छिष्टाज्जज्ञिरे० २६
देवाः पितरो मनुष्या गन्धर्वाप्सरसश्च ये । उच्छिष्टाज्जज्ञिरे० २७(५२)

॥ ४ ॥ (अथर्व० ७।६६।१)
(५३-८३) ब्रह्मा । त्रिष्टुप् ।

यद्यन्तरिक्षे यदि वात आस यदि वृक्षेषु यदि वोलपेषु ।
यदश्रवन् पशव उद्यमानं तद्ब्राह्मणं पुनरस्मानुपैतु ॥ १ ९९७

॥५॥ (अथर्व० ११।५।१-२६)
ब्रह्मचारी । [ब्रह्मचर्यम्] । त्रिष्टुप् ; १ पुरोऽतिजागता विराड्गर्भा, २ पञ्चपदा बृहतीगर्भा विराट् शक्वरी; ३ उरोबृहती; ६ शाक्वरगर्भा चतुष्पदा जगती; ७ विराड्गर्भा; ८ पुरोऽतिजागता विराड् जगती; ९ बृहतीगर्भा; १० भुरिक्; ११,१३ जगती; १२ शाक्वरगर्भा चतुष्पदा विराडतिजगती; १५ पुरस्ताज्ज्योतिः; १४,१६-२२ अनुष्टुप्; २३ पुरोबार्हतातिजागतगर्भा; २५ एकावसानार्च्युष्णिक्; २६ मध्येज्योतिरुष्णिग्गर्भा ।

ब्रह्मचारीष्णंश्चरति रोदसी उभे तस्मिन् देवाः संमनसो भवन्ति ।
स दाधार पृथिवीं दिवं च स आचार्यं तपसा पिपर्ति ॥ १
ब्रह्मचारिणं पितरो देवजनाः पृथग्देवा अनुसंयन्ति सर्वे ।
गन्धर्वा एनमन्वायन् त्रयस्त्रिंशत् त्रिशताः षट्सहस्राः सर्वान्त्स देवांस्तपसा पिपर्ति ॥ २(५५)
आचार्य उपनयमानो ब्रह्मचारिणं कृणुते गर्भमन्तः ।
तं रात्रीस्तिस्र उदरे बिभर्ति तं जातं द्रष्टुमभिसंयन्ति देवाः ॥ ३ १०००
इयं समित् पृथिवी द्यौर्द्वितीयोतान्तरिक्षं समिधा पृणाति ।
ब्रह्मचारी समिधा मेखलया श्रमेण लोकांस्तपसा पिपर्ति ॥ ४
पूर्वो जातो ब्रह्मणो ब्रह्मचारी घर्मं वसानस्तपसोदतिष्ठत् ।
तस्माज्जातं ब्राह्मणं ब्रह्म ज्येष्ठं देवाश्च सर्वे अमृतेन साकम् ॥ ५
ब्रह्मचार्येति समिधा समिद्धः कार्ष्णं वसानो दीक्षितो दीर्घश्मश्रुः ।
स सद्य एति पूर्वस्मादुत्तरं समुद्रं लोकान्त्संगृभ्य मुहुराचरिक्रत् ॥ ६
ब्रह्मचारी जनयन् ब्रह्मापो लोकं प्रजापतिं परमेष्ठिनं विराजम् ।
गर्भो भूत्वाऽमृतस्य योनाविन्द्रो ह भूत्वाऽसुरांस्ततर्ह ॥ ७(६०)
आचार्यस्ततक्ष नभसी उभे इमे उर्वी गम्भीरे पृथिवीं दिवं च ।
ते रक्षति तपसा ब्रह्मचारी तस्मिन् देवाः संमनसो भवन्ति ॥ ८
इमां भूमिं पृथिवीं ब्रह्मचारी भिक्षामा जभार प्रथमो दिवं च ।
ते कृत्वा समिधावुपास्ते तयोरार्पिता भुवनानि विश्वा ॥ ९ १००६

अर्वागन्यः परो अन्यो दिवस्पृष्ठाद्गुहा निधी निहितौ ब्राह्मणस्य ।
तौ रक्षति तपसा ब्रह्मचारी तत् केवलं कृणुते ब्रह्म विद्वान् १०
अर्वागन्य इतो अन्यः पृथिव्या अग्नी समेतो नभसी अन्तरेमे ।
तयोः श्रयन्ते रश्मयोऽधि दृढास्ताना तिष्ठति तपसा ब्रह्मचारी ११
अभिक्रन्दन् स्तनयन्नरुणः शितिङ्गो बृहच्छेपोऽनु भूमौ जभार ।
ब्रह्मचारी सिञ्चति सानौ रेतः पृथिव्यां तेन जीवन्ति प्रदिशश्चतस्रः १२(६५)
अग्नौ सूर्ये चन्द्रमसि मातरिश्वन् ब्रह्मचार्य१प्सु समिधमा दधाति ।
तासामर्चींषि पृथगभ्रे चरन्ति तासामाज्यं पुरुषो वर्षमापः १३ १०१०
आचार्यो मृत्युर्वरुणः सोम ओषधयः पयः । जीमूता आसन्त्सत्वानस्तैरिदं स्व१राभृतम् १४
अमा घृतं कृणुते केवलमाचार्यो भूत्वा वरुणो यद्यदैच्छत् प्रजापतौ ।
तद् ब्रह्मचारी प्रायच्छत् स्वान् मित्रो अध्यात्मनः १५
आचार्यो ब्रह्मचारी ब्रह्मचारी प्रजापतिः । प्रजापतिर्वि राजति विराडिन्द्रोऽभवद्वशी १६
ब्रह्मचर्येण तपसा राजा राष्ट्रं वि रक्षति । आचार्यो ब्रह्मचर्येण ब्रह्मचारिणमिच्छते १७(७०)
ब्रह्मचर्येण कन्या३ युवानं विन्दते पतिम् । अनड्वान् ब्रह्मचर्येणाश्वो घासं जिगीर्षति १८
ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमपाघ्नत । इन्द्रो ह ब्रह्मचर्येण देवेभ्यः स्व१राभरत् १९
ओषधयो भूतभव्यमहोरात्रे वनस्पतिः । संवत्सरः सहर्तुभिस्ते जाता ब्रह्मचारिणः २०
पार्थिवा दिव्याः पशव आरण्या ग्राम्याश्च ये । अपक्षाः पक्षिणश्च ये ते जाता ब्रह्मचारिणः २१
पृथक् सर्वे प्राजापत्याः प्राणानात्मसु बिभ्रति । तान्त्सर्वान् ब्रह्म रक्षति ब्रह्मचारिण्याभृतम् २२(७५)
देवानामेतत् परिषूतमनभ्यारूढं चरति रोचमानम् ।
तस्माज्जातं ब्राह्मणं ब्रह्म ज्येष्ठं देवाश्च सर्वे अमृतेन साकम् २३ १०२०
ब्रह्मचारी ब्रह्म भ्राजद्बिभर्ति तस्मिन् देवा अधि विश्वे समोताः ।
प्राणापानौ जनयन्नाद् व्यानं वाचं मनो हृदयं ब्रह्म मेधाम् २४
चक्षुः श्रोत्रं यशो अस्मासु धेह्यन्नं रेतो लोहितमुदरम् २५
तानि कल्पद्ब्रह्मचारी सलिलस्य पृष्ठे तपोऽतिष्ठत् तप्यमानः समुद्रे ।
स स्नातो बभ्रुः पिङ्गलः पृथिव्यां बहु रोचते २६

॥ ६ ॥ (अथर्व० १९।४२।१-४)

ब्रह्म । [ब्रह्मयज्ञः] । १ अनुष्टुप् ; २ व्यवसाना ककुम्मती पथ्यापंक्तिः; ३ त्रिष्टुप्; ४ जगती ।

ब्रह्म होता ब्रह्म यज्ञा ब्रह्मणा स्वरवो मिताः । अध्वर्युर्ब्रह्मणो जातो ब्रह्मणोऽन्तर्हितं हविः १(८०)

ब्रह्म स्रुचो घृतवतीर्ब्रह्मणा वेदिरुद्धिता ।
ब्रह्म यज्ञस्य तत्त्वं च ऋत्विजो ये हविष्कृतः । शमिताय स्वाहा २ १०२५
अंहोमुचे प्र भरे मनीषामा सुत्राव्णे सुमतिमावृणानः ।
इदमिन्द्र प्रति हव्यं गृभाय सत्याः सन्तु यजमानस्य कामाः ३
अंहोमुचं वृषभं यज्ञियानां विराजन्तं प्रथममध्वराणाम् ।
अपां नपातमश्विना हुवे धिय इन्द्रियेण त इन्द्रियं दत्तमोजः ४(८३)

---

२३ अध्यात्मम् ।

॥१॥ (अथर्व० ११।८।१-३४)

(१-३४) कौरुपथिः । अध्यात्मं, मन्युः । अनुष्टुप्, ३३ पथ्यापङ्क्तिः ।

यन्मन्युर्जायामावहत् संकल्पस्य गृहादधि । क आसं जन्याः के वराः क उ ज्येष्ठवरोऽभवत् १
तपश्चैवास्तां कर्म चान्तर्महत्यर्णवे । त आसं जन्यास्ते वरा ब्रह्म ज्येष्ठवरोऽभवत् २
दश साकमजायन्त देवा देवेभ्यः पुरा । यो वै तान्विद्यात् प्रत्यक्षं स वा अद्य महद्वदेत् ३ १०३०
प्राणापानौ चक्षुः श्रोत्रमक्षितिश्च क्षितिश्च या । व्यानोदानौ वाङ्मनस्ते वा आकूतिमावहन् ४
अजाता आसन्नृतवोऽथो धाता बृहस्पतिः । इन्द्राग्नी अश्विना तर्हि कं ते ज्येष्ठमुपासत ५(५)
तपश्चैवास्तां कर्म चान्तर्महत्यर्णवे । तपो ह जज्ञे कर्मणस्तत्ते ज्येष्ठमुपासत ६
येत आसीद्भूमिः पूर्वा यामद्धातय इद्विदुः । यो वै तां विद्यान्नामथा स मन्येत पुराणवित् ७
कुत इन्द्रः कुतः सोमः कुतो अग्निरजायत । कुतस्त्वष्टा समभवत् कुतो धाताऽजायत ८
इन्द्रादिन्द्रः सोमात् सोमो अग्नेरग्निरजायत । त्वष्टा ह जज्ञे त्वष्टुर्धातुर्धाताऽजायत ९
ये त आसन् दश जाता देवा देवेभ्यः पुरा । पुत्रेभ्यो लोकं दत्त्वा कस्मिंस्ते लोक आसते १०(१०)
यदा केशानस्थि स्नाव मांसं मज्जानमाऽभरत् । शरीरं कृत्वा पादवत् कं लोकमनु प्राविशत् ११
कुतः केशान् कुतः स्नाव कुतो अस्थीन्याऽभरत् ।
अङ्गा पर्वाणि मज्जानं को मांसं कुत आऽभरत् १२
संसिचो नाम ते देवा ये संभारान्त्समभरन् । सर्वं संसिच्य मर्त्यं देवाः पुरुषमाऽविशन् १३ १०४०
ऊरू पादावष्ठीवन्तौ शिरो हस्तावथो मुखम् । पृष्टीर्बर्जह्ये पार्श्वे कस्तत् समदधादृषिः १४

*

शिरो हस्तावथो मुखं जिह्वां ग्रीवाश्च कीकसाः ।
त्वचा प्रावृत्य सर्वं तत् संधा समदधान्मही॰ १५ १०४२
यत् तच्छरीरमशयत् संधया संहितं महत् । येनेदमद्य रोचते को अस्मिन् वर्णमाऽभरत् १६
सर्वे देवा उपाशिक्षन् तदजानाद्वधूः सती ।
ईशा वशस्य या जाया साऽस्मिन् वर्णमाऽभरत् १७
यदा त्वष्टा व्यतृणत् पिता त्वष्टुर्य उत्तरः । गृहं कृत्वा मर्त्यं देवाः पुरुषमाऽविशन् १८
स्वप्नो वै तन्द्रीर्निर्ऋतिः पाप्मानो नाम देवताः ।
जरा खालत्यं पालित्यं शरीरमनु प्राविशन् १९
स्तेयं दुष्कृतं वृजिनं सत्यं यज्ञो यशो बृहत् । बलं च क्षत्रमोजश्च शरीरमनु प्राविशन् २०(२०)
भूतिश्च वा अभूतिश्च रातयोऽरातयश्च याः । क्षुधश्च सर्वास्तृष्णाश्च शरीरमनु प्राविशन् २१
निन्दाश्च वा अनिन्दाश्च यच्च हन्तेति नेति च ।
शरीरं श्रद्धा दक्षिणाऽश्रद्धा चानु प्राविशन् २२
विद्याश्च वा अविद्याश्च यच्चान्यदुपदेश्यम् । शरीरं ब्रह्म प्राविशदृचः सामाथो यजुः २३ १०५०
आनन्दा मोदाः प्रमुदोऽभीमोदमुदश्च ये । हसो नरिष्टा नृत्तानि शरीरमनु प्राविशन् २४
आलापाश्च प्रलापाश्चाभीलापलपश्च ये । शरीरं सर्वे प्राविशन्नायुजः प्रयुजो युजः २५(२५)
प्राणापानौ चक्षुः श्रोत्रमक्षितिश्च क्षितिश्च या । व्यानोदानौ वाङ्मनः शरीरेण त ईयन्ते २६
आशिषश्च प्रशिषश्च संशिषो विशिषश्च याः । चित्तानि सर्वे संकल्पाः शरीरमनु प्राविशन् २७
आस्तेयीश्च वास्तेयीश्च त्वरणाः कृपणाश्च याः ।
गुह्याः शुक्रा स्थूला अपस्ता बीभत्सावसादयन् २८
अस्थि कृत्वा समिधं तदष्टापो असादयन् । रेतः कृत्वाऽऽज्यं देवाः पुरुषमाऽविशन् २९
या आपो याश्च देवता या विराड् ब्रह्मणा सह ।
शरीरं ब्रह्म प्राविशच्छरीरेऽधि प्रजापतिः ३०(३०)
सूर्यश्चक्षुर्वातः प्राणं पुरुषस्य वि भेजिरे । अथास्येतरमात्मानं देवाः प्रायच्छन्नग्नये ३१
तस्माद्वै विद्वान् पुरुषमिदं ब्रह्मेति मन्यते । सर्वा ह्यस्मिन् देवता गावो गोष्ठ इवासते ३२
प्रथमेन प्रमारेण त्रेधा विष्वङ् वि गच्छति ।
अद एकेन गच्छत्यद एकेन गच्छतीहैकेन नि षेवते ३३ १०६०
अप्सु स्तीमासु वृद्धासु शरीरमन्तरा हितम् । तस्मिञ्छवोऽध्यन्तरा तस्माच्छवोऽध्युच्यते ३४

॥ २॥ (अथर्व० १३।१।१-६०)

(३५-२२०) ब्रह्मा । अध्यात्मं, रोहितादित्यदैवत्यम् (३ मरुतः २८-३१ अग्निः, ३१ बहुदेवताः) । त्रिष्टुप् ; ३-५, ९, १२,१५ जगती (१५ अतिजागतगर्भापरा); ८ भुरिक्; १७ पञ्चपदा ककुम्मती जगती; १३ अतिशाकरगर्भाऽतिजगती; १४ त्रिपदा पुरः परशाक्करा विपरीतपादलक्ष्मा पंक्तिः; १८-१९ पञ्चपदा ककुम्मत्यातिजगती (१८ परशाक्करा भुरिक्, १९ परातिजागता); २१ आर्षी निचृद्गायत्री; २२-२३, २७ प्रकृता; २६ विराट् परोष्णिक्; २८-३० (२८ भुरिक्), ३२,३९,-४०,४५-५६,५८ अनुष्टुप्; (५२,५५ पथ्यापंक्तिः, ५५ ककुम्मती बृहतीगर्भा); ३१ पञ्चपदा ककुम्मती शाक्करगर्भा जगती; ३५ उपरिष्टाद्बृहती; ३६ निचृन्महाबृहती; ३७ परशाक्करा विराडतिजगती; ४२ विराड्जगती; ४३ विराण्महाबृहती; ४४ परोष्णिक्; ५७ ककुम्मती; ५९-६० गायत्री ।

उदेहि वाजिन् यो अप्स्व१न्तरिदं राष्ट्रं प्र विश सूनृतावत् ।
यो रोहितो विश्वमिदं जजान स त्वा राष्ट्राय सुभृतं बिभर्तु ॥ १ ॥ १०६२

उद्वाज आ गन् यो अप्स्व१न्तर्विश आ रोह त्वद्योनयो याः ।
सोमं दधानोऽप ओषधीर्गाश्चतुष्पदो द्विपद आ वेशयेह ॥ २ ॥

यूयमुग्रा मरुतः पृश्निमातर इन्द्रेण युजा प्र मृणीत शत्रून् ।
आ वो रोहितः शृणवत् सुदानवस्त्रिषप्तासो मरुतः स्वादुसंमुदः ॥ ३ ॥

रुहो रुरोह रोहित आ रुरोह गर्भो जनीनां जनुषामुपस्थम् ।
ताभिः संरब्धमन्वविन्दन् षडुर्वीर्गातुं प्रपश्यन्निह राष्ट्रमाहाः ॥ ४ ॥

आ ते राष्ट्रमिह रोहितोऽहार्षीद्व्यास्थन्मृधो अभयं ते अभूत् ।
तस्मै ते द्यावापृथिवी रेवतीभिः कामं दुहाथामिह शक्वरीभिः ॥ ५ ॥

रोहितो द्यावापृथिवी जजान तत्र तन्तुं परमेष्ठी ततान ।
तत्र शिश्रियेऽज एकपादोऽदृंहद् द्यावापृथिवी बलेन ॥ ६ ॥ (४०)

रोहितो द्यावापृथिवी अदृंहत् तेन स्व१ स्तभितं तेन नाकः ।
तेनान्तरिक्षं विमिता रजांसि तेन देवा अमृतमन्वविन्दन् ॥ ७ ॥

वि रोहितो अमृशद्विश्वरूपं समाकुर्वाणः प्ररुहो रुहश्च ।
दिवं रूढ्वा महता महिम्ना सं ते राष्ट्रमनक्तु पयसा घृतेन ॥ ८ ॥

यास्ते रुहः प्ररुहो यास्त आरुहो याभिरापृणासि दिवमन्तरिक्षम् ।
तासां ब्रह्मणा पयसा वावृधानो विशि राष्ट्रे जागृहि रोहितस्य ॥ ९ ॥

यास्ते विशस्तपसः संबभूवुर्वत्सं गायत्रीमनु ता इहागुः ।
तास्त्वा विशन्तु मनसा शिवेन संमाता वत्सो अभ्येतु रोहितः ॥ १० ॥ १०७१

ऊर्ध्वो रोहितो अधि नाके अस्थाद्विश्वा रूपाणि जनयन् युवा कविः ।

तिग्मेनाग्निर्ज्योतिषा वि भाति तृतीये चक्रे रजसि प्रियाणि ११ १०७२

सहस्रशृङ्गो वृषभो जातवेदा घृताहुतः सोमपृष्ठः सुवीरः ।

मा मा हासीन्नाथितो नेत्त्वा जहानि गोपोषं च मे वीरपोषं च धेहि १२

रोहितो यज्ञस्य जनिता मुखं च रोहिताय वाचा श्रोत्रेण मनसा जुहोमि ।

रोहितं देवा यन्ति सुमनस्यमाना स मा रोहैः सामित्यै रोहयतु १३

रोहितो यज्ञं व्यदधाद्विश्वकर्मणे तस्मात् तेजांस्युप मेमान्यागुः ।

वोचेयं ते नाभिं भुवनस्याधि मज्मनि १४

आ त्वा रुरोह बृहत्युत पङ्क्तिरा ककुब्वर्चसा जातवेदः ।

आ त्वा रुरोहोष्णिहाक्षरो वषट्कार आ त्वा रुरोह रोहितो रेतसा सह १५

अयं वस्ते गर्भं पृथिव्या दिवं वस्तेऽयमन्तरिक्षम् ।

अयं ब्रध्नस्य विष्टपि स्वर्लोकान् व्यानशे १६(५०)

वाचस्पते पृथिवी नः स्योना स्योना योनिस्तल्पा नः सुशेवा ।

इहैव प्राणः सख्ये नो अस्तु तं त्वा परमेष्ठिन् पर्यग्निरायुषा वर्चसा दधातु १७

वाचस्पत ऋतवः पञ्च ये नौ वैश्वकर्मणाः परि ये संबभूवुः ।

इहैव प्राणः सख्ये नो अस्तु तं त्वा परमेष्ठिन् परि रोहित आयुषा वर्चसा दधातु १८

वाचस्पते सौमनसं मनश्च गोष्ठे नो गा जनय योनिषु प्रजाः ।

इहैव प्राणः सख्ये नो अस्तु तं त्वा परमेष्ठिन् पर्यहमायुषा वर्चसा दधामि १९ १०८०

परि त्वा धात् सविता देवो अग्निर्वर्चसा मित्रावरुणावभि त्वा ।

सर्वा अरातीरवक्रामन्नेहीदं राष्ट्रमकरः सूनृतावत् २०

यं त्वा पृषती रथे प्रष्टिर्वहति रोहित । शुभा यासि रिणन्नपः २१(५५)

अनुव्रता रोहिणी रोहितस्य सूरिः सुवर्णा बृहती सुवर्चाः ।

तया वाजान् विश्वरूपां जयेम तया विश्वाः पृतना अभि ष्याम २२

इदं सदो रोहिणी रोहितस्यासौ पन्थाः पृषती येन याति ।

तां गन्धर्वाः कश्यपा उन्नयन्ति तां रक्षन्ति कवयोऽप्रमादम् २३

सूर्यस्याश्वा हरयः केतुमन्तः सदा वहन्त्यमृताः सुखं रथम् ।

घृतपावा रोहितो भ्राजमानो दिवं देवः पृषतीमा विवेश २४ १०८५

यो रोहितो वृषभस्तिग्मशृङ्गः पर्यग्निं परि सूर्यं बभूव ।
यो विष्टभ्नाति पृथिवीं दिवं च तस्माद्देवा अधि सृष्टीः सृजन्ते २५
रोहितो दिवमारुहन्महतः पर्यर्णवात् । सर्वा रुरोह रोहितो रुहः २६(६०)
त्रि मिमीष्व पयस्वतीं घृताचीं देवानां धेनुरनपस्पृगेषा ।
इन्द्रः सोमं पिबतु क्षेमो अस्त्वग्निः प्र स्तौतु वि मृधो नुदस्व २७
समिद्धो अग्निः समिधानो घृतवृद्धो घृताहुतः ।
अभीषाड् विश्वाषाडग्निः सपत्नान् हन्तु ये मम २८
हन्त्वेनान् प्र दहत्वरिर्यो नः पृतन्यति । क्रव्यादाग्निना वयं सपत्नान् प्र दहामसि २९ १०९०
अवाचीनानव जहीन्द्र वज्रेण बाहुमान् । अधा सपत्नान् मामकानग्नेस्तेजोभिरादिषि ३०
अग्ने सपत्नानधरान् पादयास्मद् व्यथया सजातमुत्पिपानं बृहस्पते ।
इन्द्राग्नी मित्रावरुणावधरे पद्यन्तामप्रतिमन्यूयमानाः ३१(६५)
उद्यंस्त्वं देव सूर्य सपत्नानव मे जहि । अवैनानश्मना जहि ते यन्त्वधमं तमः ३२
वत्सो विराजो वृषभो मतीनामा रुरोह शुक्रपृष्ठोऽन्तरिक्षम् ।
घृतेनार्कमभ्यर्चन्ति वत्सं ब्रह्म सन्तं ब्रह्मणा वर्धयन्ति ३३
दिवं च रोह पृथिवीं च रोह राष्ट्रं च रोह द्रविणं च रोह ।
प्रजां च रोहामृतं च रोह रोहितेन तन्वं१ सं स्पृशस्व ३४
ये देवा राष्ट्रभृतोऽभितो यन्ति सूर्यम् । तैष्टे रोहितः संविदानो राष्ट्रं दधातु सुमनस्यमानः ३५
उत्त्वा यज्ञा ब्रह्मपूता वहन्त्यध्वगतो हरयस्त्वा वहन्ति ।
तिरः समुद्रमति रोचसेऽर्णवम् ३६(७०)
रोहिते द्यावापृथिवी अधि श्रिते वसुजिति गोजिति संधनाजिति ।
सहस्रं यस्य जनिमानि सप्त च वोचेयं ते नाभिं भुवनस्याधि मज्मनि ३७
यशा यासि प्रदिशो दिशश्च यशाः पशूनामुत चर्षणीनाम् ।
यशाः पृथिव्या अदित्या उपस्थेऽहं भूयासं सवितेव चारुः ३८
अमुत्र सन्निह वेत्थेतः संस्तानि पश्यसि । इतः पश्यन्ति रोचनं दिवि सूर्यं विपश्चितम् ३९ ११००
देवो देवान् मर्चयस्यन्तश्चरस्यर्णवे । समानमग्निमिन्धते तं विदुः कवयः परे ४०
अवः परेण पर एनावरेण पदा वत्सं बिभ्रती गौरुदस्थात् ।
सा कद्रीची कं स्विदर्धं परागात् क्व स्वित् सूते नहि यूथे अस्मिन् ४१(७५)

एकपदी द्विपदी सा चतुष्पद्यष्टापदी नवपदी बभूवुषी ।
सहस्राक्षरा भुवनस्य पङ्क्तिस्तस्याः समुद्रा अधि वि क्षरन्ति ४२ ११०३
आरोहन् द्यामृतः प्राव मे वचः ।
उत्त्वा यज्ञा ब्रह्मपूता वहन्त्यध्वगतो हरयस्त्वा वहन्ति ४३
वेद तत् ते अमर्त्य यत् त आक्रमणं दिवि । यत् ते सधस्थं परमे व्योमन् ४४
सूर्यो द्यां सूर्यः पृथिवीं सूर्य आपोऽति पश्यति । सूर्यो भूतस्यैकं चक्षुरा रुरोह दिवं महीम् ४५
उर्वीरासन् परिधयो वेदिर्भूमिरकल्पत । तत्रैतावग्नी आधत्त हिमं घ्रंसं च रोहितः ४६(८०)
हिमं घ्रंसं चाधाय यूपान् कृत्वा पर्वतान् । वर्षाज्यावग्नी ईजाते रोहितस्य स्वर्विदः ४७
स्वर्विदो रोहितस्य ब्रह्मणाऽग्निः समिध्यते ।
तस्माद् घ्रंसस्तस्माद्धिमस्तस्माद् यज्ञोऽजायत ४८
ब्रह्मणाऽग्नी वावृधानौ ब्रह्मवृद्धौ ब्रह्माहुतौ । ब्रह्मेद्धावग्नी ईजाते रोहितस्य स्वर्विदः ४९ १११०
सत्ये अन्यः समाहितोऽप्स्वन्यः समिध्यते । ब्रह्मेद्धावग्नी ईजाते रोहितस्य स्वर्विदः ५०
यं वातः परि शुम्भति यं वेन्द्रो ब्रह्मणस्पतिः । ब्रह्मेद्धावग्नी ईजाते रोहितस्य स्वर्विदः ५१(८५)
वेदिं भूमिं कल्पयित्वा दिवं कृत्वा दक्षिणाम् ।
घ्रंसं तदग्निं कृत्वा चकार विश्वमात्मन्वद्वर्षेणाज्येन रोहितः ५२
वर्षमाज्यं घ्रंसो अग्निर्वेदिर्भूमिरकल्पत । तत्रैतान् पर्वतानग्निर्गीर्भिरूर्ध्वाँ अकल्पयत् ५३
गीर्भिरूर्ध्वान् कल्पयित्वा रोहितो भूमिमब्रवीत् ।
त्वयीदं सर्वं जायतां यद् भूतं यच्च भाव्यम् ५४
स यज्ञः प्रथमो भूतो भव्यो अजायत ।
तस्माद्ध जज्ञ इदं सर्वं यत् किं चेदं विरोचते रोहितेन ऋषिणाऽऽभृतम् ५५
यश्च गां पदा स्फुरति प्रत्यङ् सूर्यं च मेहति ।
तस्य वृश्चामि ते मूलं न च्छायां करवोऽपरम् ५६(९०)
यो माऽभिच्छायमत्येषि मां चाग्निं चान्तरा ।
तस्य वृश्चामि ते मूलं न च्छायां करवोऽपरम् ५७
यो अद्य देव सूर्य त्वां च मां चान्तरायति । दुष्वप्न्यं तस्मिञ्छमलं दुरितानि च मृज्महे ५८
मा प्र गाम पथो वयं मा यज्ञादिन्द्र सोमिनः । माऽन्त स्थुर्नो अरातयः ५९ १११७
यो यज्ञस्य प्रसाधनस्तन्तुर्देवेष्वाततः । तमाहुतमशीमहि ६०

॥ ३ ॥ (अथर्व० १३।२।१-४६) +

त्रिष्टुप्, १, १२-१५, ३९-४१ अनुष्टुप्; २-३, ८, ४३ जगती; १० आस्तारपङ्क्तिः; ११ बृहतीगर्भा; १६-२४ आर्षी गायत्री; २५ ककुम्मत्यास्तारपङ्क्तिः; २६ पुरोद्व्यतिजागता भुरिग्जगती; २७ विराड् जगती; २९ बार्हतगर्भाऽनुष्टुप्; ३० पञ्चपदोष्णिग्बृहतीगर्भाऽतिजगती; ३४ आर्षी पंक्तिः; ३७ पंचपदा विराड्गर्भा जगती; ४४-४५ जगती (४४ चतुष्पदा पुरःशाक्करा भुरिक्, ४५ अतिजागतगर्भा)।

उदस्य केतवो दिवि शुक्रा भ्राजन्त ईरते । आदित्यस्य नृचक्षसो महिव्रतस्य मीढुषः १ ११२२

दिशां प्रज्ञानां स्वरयन्तमर्चिषा सुपक्षमाशुं पतयन्तमर्णवे ।

स्तवाम सूर्यं भुवनस्य गोपां यो रश्मिभिर्दिश आभाति सर्वाः २

यत् प्राङ् प्रत्यङ् स्वधया यासि शीभं नानारूपे अहनी कर्षि मायया ।

तदादित्य महि तत् ते महि श्रवो यदेको विश्वं परि भूम जायसे ३

विपश्चितं तरणिं भ्राजमानं वहन्ति यं हरितः सप्त बह्वीः ।

स्रुताद्यमत्त्रिर्दिवमुन्निनाय तं त्वा पश्यन्ति परियान्तमाजिम् ४

मा त्वा दभन् परियान्तमाजिं स्वस्ति दुर्गाँ अति याहि शीभम् ।

दिवं च सूर्य पृथिवीं च देवीमहोरात्रे विमिमानो यदेषि ५

स्वस्ति ते सूर्य चरसे रथाय येनोभावन्तौ परियासि सद्यः ।

यं ते वहन्ति हरितो वहिष्ठाः शतमश्वा यदि वा सप्त बह्वीः ६(१००)

सुखं सूर्य रथमंशुमन्तं स्योनं सुवह्निमधि तिष्ठ वाजिनम् ।

यं ते वहन्ति हरितो वहिष्ठाः शतमश्वा यदि वा सप्त बह्वीः ७

सप्त सूर्यो हरितो यातवे रथे हिरण्यत्वचसो बृहतीरयुक्त ।

अमोचि शुक्रो रजसः परस्ताद्विधूय देवस्तमो दिवमाऽरुहत् ८

उत् केतुना बृहता देव आगन्नपावृक् तमोऽभि ज्योतिरश्रैत् ।

दिव्यः सुपर्णः स वीरो व्यख्यददितेः पुत्रो भुवनानि विश्वा ९ ११३०

उद्यन् रश्मीना तनुषे विश्वा रूपाणि पुष्यसि ।

उभा समुद्रौ क्रतुना वि भासि सर्वाँल्लोकान् परिभूर्भ्राजमानः १०

पूर्वापरं चरतो माययैतौ शिशू क्रीडन्तौ परि यातोऽर्णवम् ।

विश्वान्यो भुवना विचष्टे हैरण्यैरन्यं हरितो वहन्ति ११(१०५)

दिवि त्वाऽत्त्रिरधारयत् सूर्या मासाय कर्तवे। स एषि सुधृतस्तपन् विश्वा भूतावचाकशत् १२

+ अथर्व० १३, २, १६-२४ = ऋ० १, ५०, १-९; दै० [अदितिः०] ५३४-४२ ।

उभावन्तौ समर्षसि वत्सः संमातरांविव । नन्वे३तदितः पुरा ब्रह्म देवा अमी विदुः १३ ११३४
यत् समुद्रमनु श्रितं तत् सिषासति सूर्यः । अध्वास्य विततो महान् पूर्वश्चापरश्च यः १४
तं समाप्नोति जूतिभिस्ततो नाप चिकित्सति । तेनामृतस्य भक्षं देवानां नाव रुन्धते १५
उदु त्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः । दृशे विश्वाय सूर्यम् १६(११०)
अप त्ये तायवो यथा नक्षत्रा यन्त्यक्तुभिः । सूराय विश्वचक्षसे १७
अदृश्रन्नस्य केतवो वि रश्मयो जनाँ अनु । भ्राजन्तो अग्नयो यथा १८
तरणिर्विश्वदर्शतो ज्योतिष्कृदसि सूर्य । विश्वमा भासि रोचन १९ ११४०
प्रत्यङ् देवानां विशः प्रत्यङ्ङुदेषि मानुषीः । प्रत्यङ् विश्वं स्वर्दृशे २०
येना पावक चक्षसा भुरण्यन्तं जनाँ अनु । त्वं वरुण पश्यसि २१
वि द्यामेषि रजस्पृथ्वहामिमानो अक्तुभिः । पश्यन् जन्मानि सूर्य २२
सप्त त्वा हरितो रथे वहन्ति देव सूर्य । शोचिष्केशं विचक्षणम् २३
अयुक्त सप्त शुन्ध्युवः सूरो रथस्य नप्त्य१ः । ताभिर्याति स्वयुक्तिभिः २४
रोहितो दिवमाऽरुहत् तपसा तपस्वी ।
स योनिमैति स उ जायते पुनः स देवानामधिपतिर्बभूव २५
यो विश्वचर्षणिरुत विश्वतोमुखो यो विश्वतस्पाणिरुत विश्वतस्पृथः ।
सं बाहुभ्यां भरति सं पतत्रैर्द्यावापृथिवी जनयन् देव एकः २६(१२०)
एकपाद् द्विपदो भूयो वि चक्रमे द्विपात् त्रिपादमभ्ये१ति पश्चात् ।
द्विपाद्ध षट्पदो भूयो वि चक्रमे त एकपदस्तन्व१ं समासते २७
अतन्द्रो यास्यन् हरितो यदाऽस्थाद् द्वे रूपे कृणुते रोचमानः ।
केतुमानुद्यन्त्सहमानो रजांसि विश्वा आदित्य प्रवतो वि भासि २८
बण्महाँ असि सूर्य बडादित्य महाँ असि । महांस्ते महतो महिमा त्वमादित्य महाँ असि २९ ११५०
रोचसे दिवि रोचसे अन्तरिक्षे पतङ्ग पृथिव्यां रोचसे रोचसे अप्स्व१न्तः ।
उभा समुद्रौ रुच्या व्या१पिथ देवो देवासि महिषः स्वर्जित् ३०
अर्वाङ् परस्तात् प्रयतो व्यध्व आशुर्विपश्चित् पतयन् पतङ्गः ।
विष्णुर्विचित्तः शवसाऽधितिष्ठन् प्र केतुना सहते विश्वमेजत् ३१(१२५)
चित्रश्चिकित्वान् महिषः सुपर्ण आरोचयन् रोदसी अन्तरिक्षम् ।
अहोरात्रे परि सूर्यं वसाने प्रास्य विश्वा तिरतो वीर्या१णि ३२

तिग्मो विभ्राजन् तन्वं१ शिशानोऽरंगमासः प्रवतो रराणः ।
ज्योतिष्मान् पक्षी महिषो वयोधा विश्वा आऽस्थात् प्रदिशः कल्पमानः ३३ ११५४
चित्रं देवानां केतुरनीकं ज्योतिष्मान् प्रदिशः सूर्य उद्यन् ।
दिवाकरोऽति द्युम्नैस्तमांसि विश्वाऽतारीद्दुरितानि शुक्रः ३४
चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः ।
आऽप्राद् द्यावापृथिवी अन्तरिक्षं सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च ३५
उच्चा पतन्तमरुणं सुपर्णं मध्ये दिवस्तरणिं भ्राजमानम् ।
पश्याम त्वा सवितारं यमाहुरजस्रं ज्योतिर्यदविन्ददत्रिः ३६(१३०)
दिवस्पृष्ठे धावमानं सुपर्णमदित्याः पुत्रं नाथकाम उप यामि भीतः ।
स नः सूर्य प्र तिर दीर्घमायुर्मा रिषाम सुमतौ ते स्याम ३७
सहस्राह्ण्यं वियतावस्य पक्षौ हरेर्हंसस्य पततः स्वर्गम् ।
स देवान्त्सर्वानुरस्युपदद्य संपश्यन् याति भुवनानि विश्वा ३८
रोहितः कालो अभवद् रोहितोऽग्रे प्रजापतिः ।
रोहितो यज्ञानां मुखं रोहितः स्व१राऽभरत् ३९ ११६०
रोहितो लोको अभवद् रोहितोऽत्यतपद् दिवम् ।
रोहितो रश्मिभिर्भूमिं समुद्रमनु सं चरत् ४०
सर्वा दिशः समचरद् रोहितोऽधिपतिर्दिवः । दिवं समुद्रमाद्भूमिं सर्वं भूतं वि रक्षति ४१(१३५)
आरोहन्छुक्रो बृहतीरतन्द्रो द्वे रूपे कृणुते रोचमानः ।
चित्रश्चिकित्वान् महिषो वातमाया यावतो लोकानभि यद्विभाति ४२
अभ्य१न्यदेति पर्यन्यदस्यतेऽहोरात्राभ्यां महिषः कल्पमानः ।
सूर्यं वयं रजसि क्षियन्तं गातुविदं हवामहे नाधमानाः ४३
पृथिवीप्रो महिषो नाधमानस्य गातुरदब्धचक्षुः परि विश्वं बभूव ।
विश्वं संपश्यन्त्सुविदत्रो यजत्र इदं शृणोतु यदहं ब्रवीमि ४४ ११६५
पर्यस्य महिमा पृथिवीं समुद्रं ज्योतिषा विभ्राजन् परि द्यामन्तरिक्षम् ।
सर्वं संपश्यन्त्सुविदत्रो यजत्र इदं शृणोतु यदहं ब्रवीमि ४५
अबोध्यग्निः समिधा जनानां प्रति धेनुमिवायतीमुषासम् ।
यह्वा इव प्र वयामुज्जिहानाः प्र भानवः सिस्रते नाकमच्छ ४६(१४०)

॥ ४ ॥ (अथर्व० १३।३।१-२६)

त्रिष्टुप्; १ चतुरवसानाऽष्टपदाऽऽकृतिः; २-४ त्र्यव० षट्पदा (२-३ अष्टिः, २ भुरिक्, ४ अतिशाक्करगर्भा धृतिः); ५-७ चतुरवसाना सप्तपदा (५-६ शाक्करातिशाक्करगर्भा प्रकृतिः; ७ अनुष्टुब्गर्भाऽतिधृतिः); ८ त्र्यवसाना षट्पदा अत्यष्टिः; ९-१९ चतुरवसाना (९-१२, १५, १७ सप्तपदा भुरिगतिधृतिः, १५ निचृत्, १७ कृतिः, १३-१४, १६, १८-१९ अष्टपदा [१३-१४ विकृतिः, १६, १८-१९ आकृतिः, १९ भुरिक्]); २०, २२ त्र्यवसाना षट्पदा अत्यष्टिः; २१, २३-२५ चतुरवसाना अष्टपदा (२४ सप्तपदा कृतिः, २३, २५ विकृतिः)।

य इमे द्यावापृथिवी जजान यो द्रापिं कृत्वा भुवनानि वस्ते ।
यस्मिन् क्षियन्ति प्रदिशः षडुर्वीर्याः पतङ्गो अनु विचाकशीति तस्य देवस्य ।
क्रुद्धस्यैतदागो य एवं विद्वांसं ब्राह्मणं जिनाति ।
उद्वेपय रोहित प्र क्षिणीहि ब्रह्मज्यस्य प्रति मुञ्च पाशान् 　　१
यस्माद् वाता ऋतुथा पवन्ते यस्मात् समुद्रा अधि विक्षरन्ति तस्य देवस्य ।०। उद्वेपय० २
यो मारयति प्राणयति यस्मात् प्राणन्ति भुवनानि विश्वा तस्य देवस्य ।०। उद्वेपय० 　३ 　११७०

यः प्राणेन द्यावापृथिवी तर्पयत्यपानेन समुद्रस्य जठरं यः पिपर्ति तस्य देवस्य ।०। उद्वेपय० ४
यस्मिन् विराट् परमेष्ठी प्रजापतिरग्निर्वैश्वानरः सह पङ्क्त्या श्रितः ।
यः परस्य प्राणं परमस्य तेज आददे तस्य देवस्य ।०। उद्वेपय० 　　५(१४५)

यस्मिन् षडुर्वीः पञ्च दिशो अधि श्रिताश्चतस्र आपो यज्ञस्य त्रयोऽक्षराः ।
यो अन्तरा रोदसी क्रुद्धश्चक्षुषैक्षत तस्य देवस्य ।०। उद्वेपय० 　　६
यो अन्नादो अन्नपतिर्बभूव ब्रह्मणस्पतिरुत यः ।
भूतो भविष्यद् भुवनस्य यस्पतिस्तस्य देवस्य ।०। उद्वेपय० 　　७
अहोरात्रैर्विमितं त्रिंशदङ्गं त्रयोदशं मासं यो निर्मिमीते तस्य देवस्य ।०। उद्वेपय० 　८
कृष्णं नियानं हरयः सुपर्णा अपो वसाना दिवमुत्पतन्ति ।
त आववृत्रन्त्सदनादृतस्य तस्य देवस्य ।०। उद्वेपय० 　　९
यत् ते चन्द्रं कश्यप रोचनावद्यत् संहितं पुष्कलं चित्रभानु ।
यस्मिन्त्सूर्या आर्पिताः सप्त साकं तस्य देवस्य ।०। उद्वेपय० 　　१०(१५०)

बृहदेनमनु वस्ते पुरस्ताद् रथंतरं प्रति गृह्णाति पश्चात् ।
ज्योतिर्वसाने सदमप्रमादं तस्य देवस्य ।०। उद्वेपय० 　　११ 　११७८

बृहदन्यतः पक्ष आसीद् रथंतरमन्यतः सबले सध्रीची।
यद् रोहितमजनयन्त देवास्तस्य देवस्य ।०। उद्वेपय० १२
स वरुणः सायमग्निर्भवति स मित्रो भवति प्रातरुद्यन्।
स सविता भूत्वाऽन्तरिक्षेण याति स इन्द्रो भूत्वा तपति मध्यतो दिवं
तस्य देवस्य ।०। उद्वेपय० १३ ११८०
सहस्राह्ण्यं वियतावस्य पक्षौ हरेर्हंसस्य पततः स्वर्गम्।
स देवान्त्सर्वानुरस्युपदद्य संपश्यन् याति भुवनानि विश्वा तस्य देवस्य ।०। उद्वेपय० १४
अयं स देवो अप्स्व१न्तः सहस्रमूलः पुरुशाको अत्त्रिः।
य इदं विश्वं भुवनं जजान तस्य देवस्य ।०। उद्वेपय० १५(१५५)
शुक्रं वहन्ति हरयो रघुष्यदो देवं दिवि वर्चसा भ्राजमानम्।
यस्योर्ध्वा दिवं तन्व१स्तपन्त्यर्वाङ् सुवर्णैः पटरैर्वि भाति तस्य देवस्य ।०। उद्वेपय० १६
येनादित्यान् हरितः संवहन्ति येन यज्ञेन बहवो यन्ति प्रजानन्तः।
यदेकं ज्योतिर्बहुधा विभाति तस्य देवस्य ।०। उद्वेपय० १७
सप्त युञ्जन्ति रथमेकचक्रमेको अश्वो वहति सप्तनामा।
त्रिनाभि चक्रमजरमनर्वं यत्रेमा विश्वा भुवनाधि तस्थुस्तस्य देवस्य ।०। उद्वेपय० १८ ११८५
अष्टधा युक्तो वहति वह्निरुग्रः पिता देवानां जनिता मतीनाम्।
ऋतस्य तन्तुं मनसा मिमानः सर्वा दिशः पवते मातरिश्वा तस्य देवस्य ।०। उद्वेपय० १९
सम्यञ्चं तन्तुं प्रदिशोऽनु सर्वा अन्तर्गायत्र्याममृतस्य गर्भे तस्य देवस्य ।०। उद्वेपय० २०
निम्रुचस्तिस्रो व्युषो ह तिस्रस्त्रीणि रजांसि दिवो अङ्ग तिस्रः।
विद्मा ते अग्ने त्रेधा जनित्रं त्रेधा देवानां जनिमानि विद्म तस्य देवस्य ।०। उद्वेपय० २१
वि य और्णोत् पृथिवीं जायमान आ समुद्रमदधादन्तरिक्षे तस्य देवस्य ।०। उद्वेपय० २२
त्वमग्ने क्रतुभिः केतुभिर्हितोऽ३ऽर्कः समिद्ध उदरोचथा दिवि।
किमभ्यार्चन् मरुतः पृश्निमातरो यद्रोहितमजनयन्त देवास्तस्य देवस्य ।०। उद्वेपय० २३ ११९०
य आत्मदा बलदा यस्य विश्वे उपासते प्रशिषं यस्य देवाः।
योऽ३ऽस्येशे द्विपदो यश्चतुष्पदस्तस्य देवस्य ।०। उद्वेपय० २४
एकपाद् द्विपदो भूयो वि चक्रमे द्विपात् त्रिपादमभ्येति पश्चात्।
चतुष्पाच्चक्रे द्विपदामभिस्वरे संपश्यन् पङ्क्तिमुपतिष्ठमानस्तस्य देवस्य ।०। उद्वेपय० २५(१६५)
कृष्णायाः पुत्रो अर्जुनो रात्र्या वत्सोऽजायत। स ह द्यामधि रोहति रुहो रुरोह रोहितः २६

॥५॥ (अथर्व० १३।४।१-५४)

प्रथमः पर्यायः ॥ १ ॥

त्रिष्टुप्; (षट् पर्यायाः) । [अध्यात्मम्]। १-११ प्राजापत्याऽनुष्टुप्; १२ विराड्गायत्री; १३ आसुरी उष्णिक् ।

स एति सविता स्वर्दिवस्पृष्ठेऽवचाकशत् १ रश्मिभिर्नभ आभृतं महेन्द्र एत्यावृतः २
स धाता स विधर्ता स वायुर्नभ उच्छ्रितम् । रश्मिभिर्नभ० ३
सोऽर्यमा स वरुणः स रुद्रः स महादेवः । रश्मिभिर्नभ० ४(१७०)
सो अग्निः स उ सूर्यः स उ एव महायमः । रश्मिभिर्नभ० ५
तं वत्सा उप तिष्ठन्त्येकशीर्षाणो युता दश । रश्मिभिर्नभ० ६
पश्चात् प्राञ्च आ तन्वन्ति यदुदेति वि भासति । रश्मिभिर्नभ० ७
तस्यैष मारुतो गणः स एति शिक्याकृतः ८ रश्मिभिर्नभ आभृतं महेन्द्र एत्यावृतः ९
तस्येमे नव कोशा विष्टम्भा नवधा हिताः १० स प्रजाभ्यो वि पश्यति यच्च प्राणति यच्च न ११
तमिदं निगतं सहः स एष एक एकवृदेक एव १२ एते अस्मिन् देवा एकवृतो भवन्ति १३ १२०६

द्वितीयः पर्यायः ॥ २ ॥

१४ भुरिक्साम्नी त्रिष्टुप्; १५ आसुरी पंक्तिः; १६, १९ प्राजापत्याऽनुष्टुप्; १७-१८ आसुरी गायत्री ।

कीर्तिश्च यशश्चाम्भश्च नभश्च ब्राह्मणवर्चसं चान्नं चान्नाद्यं च १४ य एतं देवमेकवृतं वेद १५(१८१)
न द्वितीयो न तृतीयश्चतुर्थो नाप्युच्यते । य एतं० १६
न पञ्चमो न षष्ठः सप्तमो नाप्युच्यते । य एतं० १७
नाष्टमो न नवमो दशमो नाप्युच्यते । य एतं० १८
स सर्वस्मै वि पश्यति यच्च प्राणति यच्च न । य एतं० १९
तमिदं निगतं सहः स एष एक एकवृदेक एव । य एतं० २०
सर्वे अस्मिन् देवा एकवृतो भवन्ति । य एतं० २१ १२१४

तृतीयः पर्यायः ॥ ३ ॥

२२,२४ भुरिक्प्राजापत्या त्रिष्टुप्; २३ आर्ची गायत्री; २५ एकपदाऽऽसुरी गायत्री; २६ आर्ची अनुष्टुप्; २७-२८ प्राजापत्याऽनुष्टुप् ।

ब्रह्म च तपश्च कीर्तिश्च यशश्चाम्भश्च नभश्च ब्राह्मणवर्चसं चान्नं चान्नाद्यं च । य एतं० २२
भूतं च भव्यं च श्रद्धा च रुचिश्च स्वर्गश्च स्वधा च २३ य एतं देवमेकवृतं वेद २४(१९०)
स एव मृत्युः सो३ऽमृतं सो३ऽभ्वं१ स रक्षः २५
स रुद्रो वसुवनिर्वसुदेये नमोवाके वषट्कारोऽनु संहितः २६
तस्येमे सर्वे यातव उप प्रशिषमासते २७ तस्यामू सर्वा नक्षत्रा वशे चन्द्रमसा सह २८ १२२१

चतुर्थः पर्यायः ॥ ४ ॥

२९, ३३, ३९-४०, ४५ आसुरी गायत्री; ३०, ३२, ३५-३६, ४२ प्राजापत्याऽनुष्टुप्; ३१ विराड् गायत्री; ३४ साम्नी उष्णिक्; ३७-३८ साम्नी उष्णिगनुष्टुप्; ४१ साम्नी बृहती; ४३ आर्षी गायत्री; ४४ साम्नी अनुष्टुप्।

स वा अह्नोऽजायत तस्मादहरजायत २९ स वै रात्र्या अजायत तस्माद्रात्रिरजायत ३०
स वा अन्तरिक्षादजायत तस्मादन्तरिक्षमजायत ३१ स वै वायोरजायत तस्माद्वायुरजायत ३२
स वै दिवोऽजायत तस्माद् द्यौरध्यजायत ३३ स वै दिग्भ्योऽजायत तस्माद्दिशोऽजायन्त ३४(२००)
स वै भूमेरजायत तस्माद्भूमिरजायत ३५ स वा अग्नेरजायत तस्मादग्निरजायत ३६
स वा अद्भ्योऽजायत तस्मादापोऽजायन्त ३७ स वा ऋग्भ्योऽजायत तस्मादृचोऽजायन्त ३८
स वै यज्ञादजायत तस्माद्यज्ञोऽजायत ३९ स यज्ञस्तस्य यज्ञः स यज्ञस्य शिरस्कृतम् ४०
स स्तनयति स वि द्योतते स उ अश्मानमस्यति ४१ पापाय वा भद्राय वा पुरुषायासुराय वा ४२
यद्वा कृणोष्योषधीर्यद्वा वर्षसि भद्रया यद्वा जन्यमवीवृधः ४३
तावांस्ते मघवन् महिमोपो ते तन्वः शतम् ४४ उपो ते बध्वे बद्धानि यदि वाऽसि न्यर्बुदम् ४५ १२३८

पञ्चमः पर्यायः ॥ ५ ॥

४६ आसुरी गायत्री; ४७ यवमध्या गायत्री; ४८ साम्नी उष्णिक्; ४९ निचृत्साम्नी बृहती; ५० प्राजापत्याऽनुष्टुप्; ५१ विराड्गायत्री।

भूयानिन्द्रो नमुराद्भूयानिन्द्रासि मृत्युभ्यः ४६
भूयानरात्याः शच्याः पतिस्त्वमिन्द्रासि विभूः प्रभूरिति त्वोपास्महे वयम् ४७
नमस्ते अस्तु पश्यत पश्य मा पश्यत ४८ अन्नाद्येन यशसा तेजसा ब्राह्मणवर्चसेन ४९×
अम्भो अमो महः सह इति त्वोपास्महे वयम्। नमस्ते०। अन्नाद्येन० ५०
अम्भो अरुणं रजतं रजः सह इति त्वोपास्महे वयम्। नमस्ते०। अन्नाद्येन० ५१ १२४४

षष्ठः पर्यायः ॥ ६ ॥

५२-५३ प्राजापत्याऽनुष्टुप्; ५४ द्विपदाऽऽर्षी गायत्री।

उरुः पृथुः सुभूर्भुव इति त्वोपास्महे वयम्। नमस्ते०। अन्नाद्येन० ५२
प्रथो वरो व्यचो लोक इति त्वोपास्महे वयम्। नमस्ते०। अन्नाद्येन० ५३
भवद्वसुरिदद्वसुः संयद्वसुरायद्वसुरिति त्वोपास्महे वयम् ५४(२१०)

॥६॥ (अथर्व० १५।१।१-८)

(२११-४२३) अथर्वा। अध्यात्मं, व्रात्यः। १ साम्नी पङ्क्तिः, २ द्विपदा साम्नी बृहती; ३ एकपदा यजुर्ब्राह्म्यनुष्टुप्; ४ एकपदा विराड् गायत्री; ५ साम्नी अनुष्टुप्; ६ त्रिपदा प्राजापत्या बृहती; ७ आसुरी पंक्तिः; ८ त्रिपदा अनुष्टुप्।

व्रात्य आसीदीयमान एव स प्रजापतिं समैरयत् १ १२४८

× अथर्व० १३।४।४८-४९ = अथर्व० १३।४।५५-५६

स प्रजापतिः सुवर्णमात्मन्नपश्यत् तत् प्राजनयत् २

तदेकमभवत् तल्ललाममभवत् तन्महदभवत् तज्ज्येष्ठमभवत् तद् ब्रह्माभवत्
तत् तपोऽभवत् तत् सत्यमभवत् तेन प्राजायत ३ १२५०

सोऽवर्धत स महानभवत् स महादेवोऽभवत् ४

स देवानामीशां पर्यैत् स ईशानोऽभवत् ५ स एकव्रात्योऽभवत्स धनुरादत्त तदेवेन्द्रधनुः ६

नीलमस्योदरं लोहितं पृष्ठम् ७

नीलेनैवाप्रियं भ्रातृव्यं प्रोर्णोति लोहितेन द्विषन्तं विध्यतीति ब्रह्मवादिनो वदन्ति ८(२२८)

॥ ७ ॥ (अथर्व० १५।२।१-१४, १७-२२, २५-३०)*

१, ६, ९, १७, २५, ३० साम्न्यनुष्टुप्; २, १८, २६ साम्नी त्रिष्टुप्, ३ द्विपदाऽऽर्षी पङ्क्तिः; ४, २०, २८ द्विपदा ब्राह्मी गायत्री; ५, १३, २१, २९ द्विपदाऽऽर्ची गायत्री; १४ साम्नी पंक्तिः; २२ आसुरी गायत्री; ७, १५, २३, ३१ पदपङ्क्तिः; ८, १६, २४, ३२ त्रिपदा प्राजापत्या त्रिष्टुप्; १० एकपदा उष्णिक्; ११ द्विपदाऽऽर्षी भुरिक् त्रिष्टुप्। १२ आर्षी पराऽनुष्टुप्; १९ द्विपदा विराडार्षी पङ्क्तिः; २७ निचृदार्षी पङ्क्तिः।

स उदतिष्ठत् स प्राचीं दिशमनु व्यचलत् १

तं बृहच्च रथन्तरं चादित्याश्च विश्वे च देवा अनुव्यचलन् २(२३०)

बृहते च वै स रथन्तराय चादित्येभ्यश्च विश्वेभ्यश्च देवेभ्य आ वृश्चते
य एवं विद्वांसं व्रात्यमुपवदति ३

बृहतश्च वै स रथन्तरस्य चादित्यानां च विश्वेषां च देवानां
प्रियं धाम भवति तस्य प्राच्यां दिशि ४

श्रद्धा पुंश्चली मित्रो मागधो विज्ञानं वासोऽहरुष्णीषं
रात्री केशा हरितौ प्रवर्तौ कल्मलिर्मणिः ५ १२६०

भूतं च भविष्यच्च परिष्कन्दौ मनो विपथम् ६

मातरिश्वा च पवमानश्च विपथवाहौ वातः सारथी रेष्मा प्रतोदः ७(२३५)

कीर्तिश्च यशश्च पुरःसरावैनं कीर्तिर्गच्छत्या यशो गच्छति य एवं वेद ८

स उदतिष्ठत् स दक्षिणां दिशमनु व्यचलत् ९

तं यज्ञायज्ञियं च वामदेव्यं च यज्ञश्च यजमानश्च पशवश्चानुव्यचलन् १०

यज्ञायज्ञियाय च वै स वामदेव्याय च यज्ञाय च यजमानाय च पशुभ्यश्चा वृश्चते
य एवं विद्वांसं व्रात्यमुपवदति ११ १२६६

---

* अथर्व० १५, २, ७-८ = १५, २, १५-१६, २३-२४, ३१-३२।

यज्ञायज्ञियस्य च वै स वामदेव्यस्य च यज्ञस्य च यजमानस्य च पशूनां च
 प्रियं धाम भवति तस्य दक्षिणायां दिशि १२(२४०)
उषाः पुंश्चली मन्त्रो मागधो विज्ञानं वासोऽहरुष्णीषं रात्री केशा हरितौ० १३
अमावास्या च पौर्णमासी च परिष्कन्दौ मनो विपथम् १४
स उदतिष्ठत् स प्रतीचीं दिशमनु व्यचलत् १७ १२७०
तं वैरूपं च वैराजं चापश्च वरुणश्च राजाऽनुव्यचलन् १८
वैरूपाय च वै स वैराजाय चाद्भ्यश्च वरुणाय च राज्ञ आ वृश्चते य एवं० १९
वैरूपस्य च वै स वैराजस्य चापां च वरुणस्य च राज्ञः
 प्रियं धाम भवति तस्य प्रतीच्यां दिशि २०
इरा पुंश्चली हसो मागधो विज्ञानं वासोऽहरुष्णीषं रात्री केशा हरितौ० २१
अहश्च रात्री च परिष्कन्दौ मनो विपथम् २२
स उदतिष्ठत् स उदीचीं दिशमनु व्यचलत् २५
तं श्यैतं च नौधसं च सप्तर्षयश्च सोमश्च राजाऽनुव्यचलन् २६(२५०)
श्यैताय च वै स नौधसाय च सप्तर्षिभ्यश्च सोमाय च राज्ञ आ वृश्चते य एवं० २७
श्यैतस्य च वै स नौधसस्य च सप्तर्षीणां च सोमस्य च राज्ञः
 प्रियं धाम भवति तस्योदीच्यां दिशि २८
विद्युत् पुंश्चली स्तनयित्नुर्मागधो विज्ञानं वासोऽहरुष्णीषं रात्री केशा हरितौ० २९ १२८०
श्रुतं च विश्रुतं च परिष्कन्दौ मनो विपथम् ३०

॥८॥ (अथर्व० १५।३।१-११)

१ पिपीलिकमध्या गायत्री, २ साम्नी उष्णिक्, ३ याजुषी जगती; ४ द्विपदाऽऽर्च्युष्णिक्; ५ आर्ची बृहती; ६ आसुर्यनुष्टुप्; ७ साम्नी गायत्री; ८ आसुरी पंक्तिः; ९ आसुरी जगती, १० प्राजापत्या त्रिष्टुप्; ११ विराड् गायत्री ।

स संवत्सरमूर्ध्वोऽतिष्ठत् तं देवा अब्रुवन् व्रात्य किं नु तिष्ठसीति १(२५५)
सोऽब्रवीदासन्दीं मे सं भरन्त्विति २ तस्मै व्रात्यायासन्दीं समभरन् ३
तस्या ग्रीष्मश्च वसन्तश्च द्वौ पादावास्तां शरच्च वर्षाश्च द्वौ ४
बृहच्च रथंतरं चानूच्येऽआस्तां यज्ञायज्ञियं च वामदेव्यं च तिरश्च्ये ५
ऋचः प्राञ्चस्तन्तवो यजूंषि तिर्यञ्चः ६ वेद आस्तरणं ब्रह्मोपबर्हणम् ७
सामासाद उद्गीथोऽपश्रयः ८ तामासन्दीं व्रात्य आरोहत् ९ १२९०

तस्य देवजनाः परिष्कन्दा आसन्त्संकल्पाः प्रहाय्या३ विश्वानि भूतान्युपसदः १०
विश्वान्येवास्य भूतान्युपसदो भवन्ति य एवं वेद ११(२६५)

॥ ९ ॥ (अथर्व० १५।४।१-१८)

१, १३, १६ दैवी जगती; ४, ७, १० प्राजापत्या गायत्री; २, ८ आर्ची अनुष्टुप्; ३, १२ द्विपदा प्राजापत्या जगती; ५ प्राजापत्या पंक्तिः; ६ आर्ची गायत्री; ९ भौमार्ची त्रिष्टुप्; ११ साम्नी त्रिष्टुप्; १४ प्राजापत्या बृहती; १५, १८ द्विपदाऽऽर्ची पंक्तिः; १७ आर्ची उष्णिक् ।

तस्मै प्राच्या दिशः १ वासन्तौ मासौ गोप्तारावकुर्वन् बृहच्च रथंतरं चानुष्ठातारौ २
वासन्तावेनं मासौ प्राच्या दिशो गोपायतो बृहच्च रथंतरं चानु तिष्ठतो य एवं वेद ३
तस्मै दक्षिणाया दिशः ४ ग्रैष्मौ मासौ गोप्तारावकुर्वन् यज्ञायज्ञियं च वामदेव्यं चानुष्ठातारौ ५
ग्रैष्मावेनं मासौ दक्षिणाया दिशो गोपायतो यज्ञायज्ञियं च वामदेव्यं चानु तिष्ठतो० ६
तस्मै प्रतीच्या दिशः ७ वार्षिकौ मासौ गोप्तारावकुर्वन् वैरूपं च वैराजं चानुष्ठातारौ ८ १३००
वार्षिकावेनं मासौ प्रतीच्या दिशो गोपायतो वैरूपं च वैराजं चानु तिष्ठतो य एवं वेद ९
तस्मा उदीच्या दिशः १० शारदौ मासौ गोप्तारावकुर्वञ्छ्यैतं च नौधसं चानुष्ठातारौ ११
शारदावेनं मासावुदीच्या दिशो गोपायतः श्यैतं च नौधसं चानु तिष्ठतो य एवं वेद १२
तस्मै ध्रुवाया दिशः १३ हैमनौ मासौ गोप्तारावकुर्वन् भूमिं चाग्निं चानुष्ठातारौ १४
हैमनावेनं मासौ ध्रुवाया दिशो गोपायतो भूमिश्चाग्निश्चानु तिष्ठतो य एवं वेद १५(२८०)
तस्मा ऊर्ध्वाया दिशः १६ शैशिरौ मासौ गोप्तारावकुर्वन् दिवं चादित्यं चानुष्ठातारौ १७
शैशिरावेनं मासावूर्ध्वाया दिशो गोपायतो द्यौश्चादित्यश्चानु तिष्ठतो य एवं वेद १८ १३१०

॥ १० ॥ (अथर्व० १५।६।१-२७)

१, ४, आसुरी पंक्तिः; ७, १०, १३, १६, २५ आसुरी बृहती; २२-२३ परोष्णिक्; २, १७ आर्ची पंक्तिः; १९ आर्च्युष्णिक्; ५, ११ साम्नी त्रिष्टुप्; ८ साम्नी पङ्क्तिः, १४, २४ आर्ची त्रिष्टुप; २० साम्न्यनुष्टुप; २६ आर्च्यनुष्टुप्; ३ आर्षी पंक्तिः; ६, १२ निचृद्बृहती; ९ प्राजापत्या त्रिष्टुप्; १५, १८ विराट् जगती; २१ आर्ची बृहती; २७ विराड् बृहती ।

स ध्रुवां दिशमनु व्यचलत् १
तं भूमिश्चाग्निश्चौषधयश्च वनस्पतयश्च वानस्पत्याश्च वीरुधश्चानुव्यचलन् २(२८५)
भूमेश्च वै सो३ऽग्नेश्चौषधीनां च वनस्पतीनां च वानस्पत्यानां
च वीरुधां च प्रियं धाम भवति य एवं वेद ३
स ऊर्ध्वां दिशमनु व्यचलत् ४
तमृतं च सत्यं च सूर्यश्च चन्द्रश्च नक्षत्राणि चानुव्यचलन् ५ १३१५

* अथर्व० १५, ५, १-२१ = दै० [रुद्रः] १२०-४० ।

ऋतस्य च वै स सत्यस्य च सूर्यस्य च चन्द्रस्य च नक्षत्राणां च प्रियं धाम भवति० ६
स उत्तमां दिशमनु व्यचलत् ७ तमृचश्च सामानि च यजूंषि च ब्रह्म चानुव्यचलन् ८(२९१)
ऋचां च वै स साम्नां च यजुषां च ब्रह्मणश्च प्रियं धाम भवति य एवं वेद ९
स बृहतीं दिशमनु व्यचलत् १० तमितिहासश्च पुराणं च गाथाश्च नाराशंसीश्चानुव्यचलन् ११ १३२१
इतिहासस्य च वै स पुराणस्य च गाथानां च नाराशंसीनां च प्रियं धाम भवति० १२
स परमां दिशमनु व्यचलत् १३
तमाहवनीयश्च गार्हपत्यश्च दक्षिणाग्निश्च यज्ञश्च यजमानश्च पशवश्चानुव्यचलन् १४
आहवनीयस्य च वै स गार्हपत्यस्य च दक्षिणाग्नेश्च यज्ञस्य च यजमानस्य
च पशूनां च प्रियं धाम भवति य एवं वेद १५
सोऽनादिष्टां दिशमनु व्यचलत् १६
तमृतवश्चार्तवाश्च लोकाश्च लौक्याश्च मासाश्चार्धमासाश्चाहोरात्रे चानुव्यचलन् १७(३००)
ऋतूनां च वै स आर्तवानां च लोकानां च लौक्यानां च मासानां चार्धमासानां
चाहोरात्रयोश्च प्रियं धाम भवति य एवं वेद १८
सोऽनावृत्तां दिशमनु व्यचलत् ततो नावर्त्स्यन्नमन्यत १९
तं दितिश्चादितिश्चेडा चेन्द्राणी चानुव्यचलन् २० १३३०
दितेश्च वै सोऽदितेश्चेडायाश्चेन्द्राण्याश्च प्रियं धाम भवति य एवं वेद २१
स दिशोऽनु व्यचलत् २२ तं विराडनु व्यचलत् सर्वे च देवाः सर्वाश्च देवताः २३
विराजश्च वै स सर्वेषां च देवानां सर्वासां च देवतानां प्रियं धाम भवति य एवं वेद २४
स सर्वानन्तर्देशानन्नु व्यचलत् २५
तं प्रजापतिश्च परमेष्ठी च पिता च पितामहश्चानुव्यचलन् २६
प्रजापतेश्च वै स परमेष्ठिनश्च पितुश्च पितामहस्य च प्रियं धाम भवति य एवं वेद २७(३१०)

॥ ११ ॥ (अथर्व० १५।७।१-५)

१ त्रिपदा निचृद् गायत्री; २ एकपदा विराड् बृहती; ३ विराडुष्णिक्; ४ एकपदा गायत्री; ५ पंक्तिः।

स महिमा सद्रुर्भूत्वाऽन्तं पृथिव्या अगच्छत् स समुद्रोऽभवत् १
तं प्रजापतिश्च परमेष्ठी च पिता च पितामहश्चापश्च श्रद्धा च वर्षं भूत्वाऽनुव्यवर्तयन्त २
ऐनमापो गच्छन्त्यैनं श्रद्धा गच्छत्यैनं वर्षं गच्छति य एवं वेद ३ १३४०

तं श्रद्धा च यज्ञश्च लोकश्चान्नं चान्नाद्यं च भूत्वाऽभिपर्यावर्तन्त ४ १३४१
ऐनं श्रद्धा गच्छत्यैनं यज्ञो गच्छत्यैनं लोको गच्छत्यैनमन्नं
गच्छत्यैनमन्नाद्यं गच्छति य एवं वेद ५

॥ १२ ॥ (अथर्व० १५।८।१-३)

१ साम्नी उष्णिक्; २ प्राजापत्याऽनुष्टुप्; ३ आर्ची पंक्तिः ।

सोऽरज्यत ततो राजन्योऽजायत १ स विशः सबन्धूनन्नमन्नाद्यमभ्युदतिष्ठत् २
विशां च वै स सबन्धूनां चान्नस्य चान्नाद्यस्य च प्रियं धाम भवति य एवं वेद ३

॥ १३ ॥ (अथर्व० १५।९।१-३)

१ आसुरी जगती; २ आर्ची गायत्री; ३ आर्ची पंक्तिः ।

स विशोऽनु व्यचलत् १ तं सभा च समितिश्च सेना च सुरा चानुव्यचलन् २(३२०)
सभायाश्च वै स समितेश्च सेनायाश्च सुरायाश्च प्रियं धाम भवति य एवं वेद ३

॥ १४ ॥ (अथर्व० १५।१०।१-११)

१ द्विपदा साम्नी बृहती; २ त्रिपदाऽऽर्ची पंक्तिः; ३ द्विपदा प्राजापत्या पंक्तिः; ४ त्रिपदा वर्धमाना गायत्री;
५ त्रिपदा साम्नी बृहती; ६,८,१० द्विपदा आसुरी गायत्री; ७,९ साम्नी उष्णिक्,
११ आसुरी बृहती ।

तद् यस्यैवं विद्वान् व्रात्यो राज्ञोऽतिथिर्गृहानागच्छेत् १
श्रेयांसमेनमात्मनो मानयेत् तथा क्षत्राय ना वृश्चते तथा राष्ट्राय ना वृश्चते २ १३५०
अतो वै ब्रह्म च क्षत्रं चोदतिष्ठतां ते अब्रूतां कं प्र विशावेति ३
अतो वै बृहस्पतिमेव ब्रह्म प्रा विशत्विन्द्रं क्षत्रं तथा वा इति ४
अतो वै बृहस्पतिमेव ब्रह्म प्राविशदिन्द्रं क्षत्रम् ५ इयं वा उ पृथिवी बृहस्पतिर्द्यौरेवेन्द्रः ६
अयं वा उ अग्निर्ब्रह्मासावादित्यः क्षत्रम् ७ ऐनं ब्रह्म गच्छति ब्रह्मवर्चसी भवति ८
यः पृथिवीं बृहस्पतिमग्निं ब्रह्म वेद ९ ऐनमिन्द्रियं गच्छतीन्द्रियवान् भवति १०
य आदित्यं क्षत्रं दिवमिन्द्रं वेद ११(३३१)

॥ १५ ॥ (अथर्व० १५।११।१-११)

१ दैवी पंक्तिः; २ द्विपदा पूर्वात्रिष्टुबतिशक्वरी; ३-६,८,१० निचृदार्ची बृहती (१० भुरिक्);
७,९ द्विपदा प्राजापत्या बृहती; ११ द्विपदाऽऽर्च्यनुष्टुप् ।

तद् यस्यैवं विद्वान् व्रात्योऽतिथिर्गृहानागच्छेत् १ १३६०
स्वयमेनमभ्युदेत्य ब्रूयाद् व्रात्य क्वाऽवात्सीर्व्रात्योदकं व्रात्य तर्पयन्तु व्रात्य यथा ते
प्रियं तथाऽस्तु व्रात्य यथा ते वशस्तथाऽस्तु व्रात्य यथा ते निकामस्तथाऽस्त्विति २

यदेनमाह व्रात्य क्वावात्सीरिति पथ एव तेन देवयानानव रुन्द्धे ३(३३५)
यदेनमाह व्रात्योदकमित्यप एव तेनाव रुन्द्धे ४
यदेनमाह व्रात्य तर्पयन्त्विति प्राणमेव तेन वर्षीयांसं कुरुते ५
यदेनमाह व्रात्य यथा ते प्रियं तथाऽस्त्विति प्रियमेव तेनाव रुन्द्धे ६
ऐनं प्रियं गच्छति प्रियः प्रियस्य भवति य एवं वेद ७
यदेनमाह व्रात्य यथा ते वशस्तथाऽस्त्विति वशमेव तेनाव रुन्द्धे ८
ऐनं वशो गच्छति वशी वशिनां भवति य एवं वेद ९
यदेनमाह व्रात्य यथा ते निकामस्तथाऽस्त्विति निकाममेव तेनाव रुन्द्धे १०
ऐनं निकामो गच्छति निकामे निकामस्य भवति य एवं वेद ११ १३७०

॥ १६ ॥ (अथर्व० १५।१२।१-११)

१ त्रिपदा गायत्री; २ प्राजापत्या बृहती; ३-४ भुरिक्प्राजापत्याऽनुष्टुप् (४ साम्नी); ५-६,९-१० आसुरी गायत्री; ८ विराड् गायत्री; ७,११ त्रिपदा प्राजापत्या त्रिष्टुप्।

तद् यस्यैवं विद्वान् व्रात्य उद्धृतेष्वग्निष्वधिश्रितेऽग्निहोत्रेऽतिथिर्गृहानागच्छेत् १
स्वयमेनमभ्युदेत्य ब्रूयाद् व्रात्याति सृज होष्यामीति २(३४५)
स चातिसृजेज्जुहुयान्न चातिसृजेन्न जुहुयात् ३ स य एवं विदुषा व्रात्येनातिसृष्टो जुहोति ४
प्र पितृयाणं पन्थां जानाति प्र देवयानम् ५ न देवेष्वा वृश्चते हुतमस्य भवति ६
पर्यस्यास्मिँल्लोक आयतनं शिष्यते य एवं विदुषा व्रात्येनातिसृष्टो जुहोति ७
अथ य एवं विदुषा व्रात्येनाननतिसृष्टो जुहोति ८ न पितृयाणं पन्थां जानाति न देवयानम् ९
आ देवेषु वृश्चते अहुतमस्य भवति १० १३८०
नास्यास्मिँल्लोक आयतनं शिष्यते य एवं विदुषा व्रात्येनाननतिसृष्टो जुहोति ११

॥ १७ ॥ (अथर्व० १५।१३।१-१४)

१ साम्नी उष्णिक्; २,६ प्राजापत्याऽनुष्टुप्; ३,५,७ आसुरी गायत्री; ४,८ साम्नी बृहती; ९ द्विपदा निचृद्गायत्री; १० द्विपदा विराड् गायत्री; ११ प्राजापत्या पंक्तिः; १२ आसुरी जगती; १३ सतः पंक्तिः; १४ अक्षरपंक्तिः।

तद् यस्यैवं विद्वान् व्रात्य एकां रात्रिमतिथिर्गृहे वसति १(३५५)
ये पृथिव्यां पुण्या लोकास्तानेव तेनाव रुन्द्धे २
तद् यस्यैवं विद्वान् व्रात्यो द्वितीयां रात्रिमतिथिर्गृहे वसति ३
येऽन्तरिक्षे पुण्या लोकास्तानेव तेनाव रुन्द्धे ४
तद् यस्यैवं विद्वान् व्रात्यस्तृतीयां रात्रिमतिथिर्गृहे वसति ५ १३८६

ये दिवि पुण्या लोकास्तानेव तेनाव रुन्द्धे ६(३६०)

तद् यस्यैवं विद्वान् व्रात्यश्चतुर्थीं रात्रिमतिथिर्गृहे वसति ७

ये पुण्यानां पुण्या लोकास्तानेव तेनाव रुन्द्धे ८

तद् यस्यैवं विद्वान् व्रात्योऽपरिमिता रात्रीरतिथिर्गृहे वसति ९ १३९०

य एवापरिमिताः पुण्या लोकास्तानेव तेनाव रुन्द्धे १०

अथ यस्याव्रात्यो व्रात्यब्रुवो नामबिभ्रत्यतिथिर्गृहानागच्छेत् ११ कर्षेदेनं न चैनं कर्षेत् १२

अस्यै देवताया उदकं याचामीमां देवतां वासय इमामिमां देवतां
परि वेवेष्मीत्येनं परि वेविष्यात् १३

तस्यामेवास्य तद् देवतायां हुतं भवति य एवं वेद १४

॥ १८ ॥ (अथर्व०.१५।१४।१-२४)

१ त्रिपदा अनुष्टुप्; २,४,६,८,१०,१२,१४,१६,१८,२०,२२,२४ द्विपदा आसुरी गायत्री (१२,१४,१६,
१८ भुरिक् प्राजापत्या अनुष्टुप्); ३,९ पुर उष्णिक्; ५ अनुष्टुप्; ७ प्रस्तारपंक्तिः;
११ स्वराड् गायत्री; १३,१५ आर्ची पंक्तिः; १९ भुरिङ्नागी गायत्री;
२१ प्राजापत्या त्रिष्टुप्।

स यत् प्राचीं दिशमनु व्यचलन्मारुतं शर्धो भूत्वाऽनुव्यचलन्मनोऽन्नादं कृत्वा १

मनसाऽन्नादेनान्नमत्ति य एवं वेद २(३७०)

स यद् दक्षिणां दिशमनु व्यचलदिन्द्रो भूत्वाऽनुव्यचलद् बलमन्नादं कृत्वा ३

बलेनान्नादेनान्नमत्ति य एवं वेद ४

स यत् प्रतीचीं दिशमनु व्यचलद् वरुणो राजा भूत्वाऽनुव्यचलदपोऽन्नादीः कृत्वा ५ १४००

अद्भिरन्नादिभिरन्नमत्ति य एवं वेद ६

स यदुदीचीं दिशमनु व्यचलत् सोमो राजा भूत्वाऽनुव्यचलत्
सप्तर्षिभिर्हुत आहुतिमन्नादीं कृत्वा ७

आहुत्याऽन्नाद्यान्नमत्ति य एवं वेद ८

स यद् ध्रुवां दिशमनु व्यचलद् विष्णुर्भूत्वाऽनुव्यचलद् विराजमन्नादीं कृत्वा ९

विराजाऽन्नाद्यान्नमत्ति य एवं वेद १०

स यत् पशूननु व्यचलद् रुद्रो भूत्वाऽनुव्यचलदोषधीरन्नादीः कृत्वा ११

ओषधीभिरन्नादीभिरन्नमत्ति य एवं वेद १२(३८०)

स यत् पितॄननु व्यचलद् यमो राजा भूत्वाऽनुव्यचलत् स्वधाकारमन्नादं कृत्वा १३

स्वधाकारेणान्नादेनान्नमत्ति य एवं वेद १४

स यन्मनुष्याँ३ इनन्‌ु व्यचलदग्निर्भूत्वाऽनुव्यचलत् स्वाहाकारमन्नादं कृत्वा १५ १४१०
स्वाहाकारेणान्नादेनान्नमत्ति य एवं वेद १६
स यदूर्ध्वां दिशमनु व्यचलद् बृहस्पतिर्भूत्वाऽनुव्यचलद् वषट्कारमन्नादं कृत्वा १७
वषट्कारेणान्नादेनान्नमत्ति य एवं वेद १८
स यद् देवाननु व्यचलदीशानो भूत्वाऽनुव्यचलन्मन्युमन्नादं कृत्वा १९
मन्युनाऽन्नादेनान्नमत्ति य एवं वेद २०
स यत् प्रजा अनु व्यचलत् प्रजापतिर्भूत्वाऽनुव्यचलत् प्राणमन्नादं कृत्वा २१
प्राणेनान्नादेनान्नमत्ति य एवं वेद २२(३९०)
स यत् सर्वानन्तर्देशाननु व्यचलत् परमेष्ठी भूत्वाऽनुव्यचलद् ब्रह्मान्नादं कृत्वा २३
ब्रह्मणाऽन्नादेनान्नमत्ति य एवं वेद २४

॥१९॥ (अथर्व० १५।१५।१-९)

१ दैवी पंक्तिः; २ आसुरी बृहती; ३-४, ७-८ प्राजापत्याऽनुष्टुप् (४, ७-८ भुरिक्);
५-६ द्विपदा साम्नी बृहती, ९ विराड् गायत्री।

तस्य व्रात्यस्य १ सप्त प्राणाः सप्तापानाः सप्त व्यानाः २ १४२०
तस्य व्रात्यस्य। योऽस्य प्रथमः प्राण ऊर्ध्वो नामायं सो अग्निः ३
तस्य व्रात्यस्य। योऽस्य द्वितीयः प्राणः प्रौढो नामासौ स आदित्यः ४
तस्य व्रात्यस्य। योऽस्य तृतीयः प्राणो३ऽभ्यूढो नामासौ स चन्द्रमाः ५
तस्य व्रात्यस्य। योऽस्य चतुर्थः प्राणो विभूर्नामायं स पवमानः ६
तस्य व्रात्यस्य। योऽस्य पञ्चमः प्राणो योनिर्नाम ता इमा आपः ७
तस्य व्रात्यस्य। योऽस्य षष्ठः प्राण प्रियो नाम त इमे पशवः ८(४००)
तस्य व्रात्यस्य। योऽस्य सप्तमः प्राणोऽपरिमितो नाम ता इमाः प्रजाः ९

॥२०॥ (अथर्व० १५।१६।१-७)

१, ३ साम्नी उष्णिक्; २, ४-५ प्राजापत्या उष्णिक्; ६ याजुषी त्रिष्टुप्; ७ आसुरी गायत्री।

तस्य व्रात्यस्य। योऽस्य प्रथमोऽपानः सा पौर्णमासी १
तस्य व्रात्यस्य। योऽस्य द्वितीयोऽपानः साऽष्टका २ १४३०
तस्य व्रात्यस्य। योऽस्य तृतीयोऽपानः साऽमावास्या ३
तस्य व्रात्यस्य। योऽस्य चतुर्थोऽपानः सा श्रद्धा ४(४०५)
तस्य व्रात्यस्य। योऽस्य पञ्चमोऽपानः सा दीक्षा ५

तस्य व्रात्यस्य । योऽस्य षष्ठोऽपानः स यज्ञः ६
तस्य व्रात्यस्य । योऽस्य सप्तमोऽपानस्ता इमा दक्षिणाः ७ १४३५

॥ २१ ॥ (अथर्व० १५।१७।१-१०)

१, ५ प्राजापत्या उष्णिक्; २, ७ आसुरी अनुष्टुप्; ३ याजुषी पंक्तिः; ४ साम्नी उष्णिक्; ६ याजुषी त्रिष्टुप्; ८ त्रिपदा प्रतिष्ठाऽऽर्ची पंक्तिः; ९ द्विपदा साम्नी त्रिष्टुप्; १० साम्नी अनुष्टुप् ।

तस्य व्रात्यस्य । योऽस्य प्रथमो व्यानः सेयं भूमिः १
तस्य व्रात्यस्य । योऽस्य द्वितीयो व्यानस्तदन्तरिक्षम् २(४१०)
तस्य व्रात्यस्य । योऽस्य तृतीयो व्यानः सा द्यौः ३
तस्य व्रात्यस्य । योऽस्य चतुर्थो व्यानस्तानि नक्षत्राणि ४
तस्य व्रात्यस्य । योऽस्य पञ्चमो व्यानस्त ऋतवः ५
तस्य व्रात्यस्य । योऽस्य षष्ठो व्यानस्त आर्तवाः ६
तस्य व्रात्यस्य । योऽस्य सप्तमो व्यानः स संवत्सरः ७
तस्य व्रात्यस्य । समानमर्थं परि यन्ति देवाः संवत्सरं वा एतदृतवोऽनुपरियन्ति व्रात्यं च ८
तस्य व्रात्यस्य । यदादित्यमभिसंविशन्त्यमावास्यां चैव तत् पौर्णमासीं च ९
तस्य व्रात्यस्य । एकं तदेषाममृतत्वमित्याहुतिरेव १० १४४५

॥२२॥ (अथर्व० १५।१८।१-५)

१ दैवी पंक्तिः; २-३ आर्ची बृहती; ४ आर्ची अनुष्टुप्; ५ साम्नी उष्णिक् ।

तस्य व्रात्यस्य १ यदस्य दक्षिणमक्ष्यसौ स आदित्यो यदस्य सव्यमक्ष्यसौ स चन्द्रमाः २
योऽस्य दक्षिणः कर्णोऽयं सो अग्निर्योऽस्य सव्यः कर्णोऽयं स पवमानः ३
अहोरात्रे नासिके दितिश्चादितिश्च शीर्षकपाले संवत्सरः शिरः ४
अह्ना प्रत्यङ् व्रात्यो रात्र्या प्राङ् नमो व्रात्याय ५(४१३)

---

२४ कः [प्रजापतिः] ।

॥ १ ॥ (ऋ० १।२४।१)

शुनःशेप आजीगर्तिः कृत्रिमो देवरातो वैश्वामित्रो वा । त्रिष्टुप् ।

कस्य नूनं कतमस्यामृतानां मनामहे चारु देवस्य नाम ।
को नो मह्या अदितये पुनर्दात् पितरं च दृशेयं मातरं च १ १४५१

॥ २ ॥ (ऋ० १०।१८।१४)
संकुसुको यामायनः। अनुष्टुप्।

प्रतीचीने मामहनी—ष्वाः पर्णमिवा दधुः। प्रतीचीं जग्रभा वाच—मश्वं रशनया यथा १४ १४५९

॥ ३ ॥ (ऋ० १०।१२१।१-१०)+
(३-१२) हिरण्यगर्भः प्राजापत्यः। त्रिष्टुप्।

हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम १
य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः।
यस्य छायामृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम २
यः प्राणतो निमिषतो महित्वै—क इद्राजा जगतो बभूव।
य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम ३(५)
यस्येमे हिमवन्तो महित्वा यस्य समुद्रं रसया सहाहुः।
यस्येमाः प्रदिशो यस्य बाहू कस्मै देवाय हविषा विधेम ४
येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृळ्हा येन स्वः स्तभितं येन नाकः।
यो अन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम ५
यं क्रन्दसी अवसा तस्तभाने अभ्यैक्षेतां मनसा रेजमाने।
यत्राधि सूर उदितो विभाति कस्मै देवाय हविषा विधेम ६
आपो ह यद्बृहतीर्विश्वमायन् गर्भं दधाना जनयन्तीरग्निम्।
ततो देवानां समवर्ततासुरेकः कस्मै देवाय हविषा विधेम ७
यश्चिदापो महिना पर्यपश्यद् दक्षं दधाना जनयन्तीर्यज्ञम्।
यो देवेष्वधि देव एक आसीत् कस्मै देवाय हविषा विधेम ८(१०)१४६०
मा नो हिंसीज्जनिता यः पृथिव्या यो वा दिवं सत्यधर्मा जजान।
यश्चापश्चन्द्रा बृहतीर्जजान कस्मै देवाय हविषा विधेम ९
प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव।
यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् १०

॥ ४ ॥ [१३-४१] (वा० य० १।६)

कस्त्वा युनक्ति स त्वा युनक्ति कस्मै त्वा युनक्ति तस्मै त्वा युनक्ति। कर्मणे वां वेषाय वाम् ६

+ ऋ. १०।१२१।१-१० = वा. य. १२, १०२; १३, ४; २३, ६५; २५, १०-१३; २७, २५-२६; अथर्व. ४, २, १-३, ५, ७; ७,८०, ३।

॥ ५ ॥ (वा० य० २।२३)

कस्त्वा विमुञ्चति स त्वा विमुञ्चति कस्मै त्वा विमुञ्चति तस्मै त्वा विमुञ्चति ।
पोषाय रक्षसां भागोऽसि २३ १४६४

॥ ६ ॥ (वा० य० ७।२९)

कोऽसि कतमोऽसि कस्यासि को नामासि। यस्य ते नामामन्महि यं त्वा सोमेनातीतृपाम २९(१५)

॥ ७ ॥ (वा० य० ८।१०,३६)*

प्रजापतिर्वृषाऽसि रेतोधा रेतो मयि धेहि प्रजापतेस्ते वृष्णो रेतोधसो रेतोधामशीय १०
यस्मान्न जातः परो अन्यो अस्ति य आविवेश भुवनानि विश्वा ।
प्रजापतिः प्रजया सꣳरराणस्त्रीणि ज्योतीꣳषि सचते स षोडशी ३६

॥ ८ ॥ (वा० य० ९।१९,२१,२३-२५)

आ मा वाजस्य प्रसवो जगम्यादेमे द्यावापृथिवी विश्वरूपे ।
आ मा गन्तां पितरा मातरा चा मा सोमो अमृतत्वेन गम्यात् १९
प्रजापतेः प्रजा अभूम २१
वाजस्येमं प्रसवः सुषुवेऽग्रे सोमꣳ राजानमोषधीष्वप्सु ।
ता अस्मभ्यं मधुमतीर्भवन्तु वयꣳ राष्ट्रे जागृयाम पुरोहिताः स्वाहा २३(२०)१४७०
वाजस्येमां प्रसवः शिश्रिये दिवमिमा च विश्वा भुवनानि सम्राट् ।
अदित्सन्तं दापयति प्रजानन्त्स नो रयिꣳ सर्ववीरं नि यच्छतु स्वाहा २४
वाजस्य नु प्रसव आ बभूवेमा च विश्वा भुवनानि सर्वतः ।
सनेमि राजा परि याति विद्वान् प्रजां पुष्टिं वर्धयमानो अस्मे स्वाहा २५

॥ ९ ॥ (वा० य० १०।१०)×

अवेष्टा दन्दशूकाः प्राचीमा रोह गायत्री त्वाऽवतु
रथन्तरꣳ साम त्रिवृत्सोमो वसन्त ऋतुर्ब्रह्म द्रविणम् १०

॥ १० ॥ (वा० य० ११।६६)

प्रजापतये मनवे स्वाहा ६६

॥ ११ ॥ (वा० य० १२।६१)

मातेव पुत्रं पृथिवी पुरीष्यमग्निꣳ स्वे योनावभारुखा ।
तां विश्वैर्देवैर्ऋतुभिः संविदानः प्रजापतिर्विश्वकर्मा वि मुञ्चतु ६१(१५)

---

* वा० य० ८।३७ = दै. [अदितिः] ६९५।
× वा. यं. १०।१० = ऋ. १०, १२१, १०।

॥ १२ ॥ (वा० य० १३।१७, २४, ५४-५८)

प्रजापतिष्ट्वा सादयत्वपां पृष्ठे समुद्रस्येमन् । व्यचस्वतीं प्रथस्वतीं प्रथस्व पृथिव्यसि १७
प्रजापतिष्ट्वा सादयतु पृष्ठे पृथिव्या ज्योतिष्मतीम् २४
प्रजापतिगृहीतया त्वया प्राणं गृह्णामि प्रजाभ्यः ५४
प्रजापतिगृहीतया त्वया मनो गृह्णामि प्रजाभ्यः ५५
प्रजापतिगृहीतया त्वया चक्षुर्गृह्णामि प्रजाभ्यः ५६(३०)१४८०
प्रजापतिगृहीतया त्वया श्रोत्रं गृह्णामि प्रजाभ्यः ५७
प्रजापतिगृहीतया त्वया वाचं गृह्णामि प्रजाभ्यः ५८

॥ १३ ॥ (वा० य० १८।२८-२९, ४३-४४)

प्रजापतये स्वाहा २८ प्रजापतेः प्रजा अभूम वेट् स्वाहा २९
प्रजापतिर्विश्वकर्मा मनो गन्धर्वस्तस्य ऋक्सामान्यप्सरस एष्टयो नाम ।
स न इदं ब्रह्म क्षत्रं पातु तस्मै स्वाहा वाट् ताभ्यः स्वाहा ४३(३५)
स नो भुवनस्य पते प्रजापते यस्य त उपरि गृहा यस्य वेह ।
अस्मै ब्रह्मणेऽस्मै क्षत्राय महि शर्म यच्छ स्वाहा ४४

॥ १४ ॥ (वा० य० २०।४)

कोऽसि कतमोऽसि कस्मै त्वा काय त्वा । सुश्लोक सुमङ्गल सत्यराजन् ४

॥ १५ ॥ (वा० य० २३।२, ४; ६४)

उपयामगृहीतोऽसि प्रजापतये त्वा जुष्टं गृह्णामि । प्रजापतये स्वाहा देवेभ्यः २
होता यक्षत् प्रजापतिꣳ सोमस्य महिम्नः । जुषतां पिबतु सोमꣳ होतर्यज ६४

॥ १६ ॥ (वा० य० ३१।१९)

प्रजापतिश्चरति गर्भे अन्तरजायमानो बहुधा वि जायते ।
तस्य योनिं परि पश्यन्ति धीरास्तस्मिन् ह तस्थुर्भुवनानि विश्वा १०(४०)१४९०

॥ १७ ॥ (वा० य० ३५।६)

प्रजापतौ त्वा देवतायामुपोदके लोके नि दधाम्यसौ । अप नः शोशुचदघम् ६

॥ १८ ॥ (अथर्व० ३।१०।१३)
(४२-४३) अथर्वा । अनुष्टुप् ।

इन्द्रपुत्रे सोमपुत्रे दुहिताऽसि प्रजापतेः । कामानस्माकं पूरय प्रति गृह्णाहि नो हविः १३

॥ १९ ॥ (अथर्व० ९।१।२४) त्र्यवसाना षट्पदाऽष्टिः ।

यद्वीध्रे स्तनयति प्रजापतिरेव तत् प्रजाभ्यः प्रादुर्भवति ।
तस्मात् प्राचीनोपवीतस्तिष्ठे प्रजापतेऽनु मा बुध्यस्वेति ।
अन्वेनं प्रजा अनु प्रजापतिर्बुध्यते य एवं वेद २४ १४९३

॥ २० ॥ (अथर्व० ७।१९।१)
(४४) ब्रह्मा । जगती ।

प्रजापतिर्जनयति प्रजा इमा धाता दधातु सुमनस्यमानः ।
संजानानाः संमनसः सयोनयो मयि पुष्टं पुष्टपतिर्दधातु १

॥ २१ ॥ (अथर्व० १६।९।१)
(४५) यमः । प्राजापत्या आर्च्यनुष्टुप् ।

जितमस्माकमुद्भिन्नमस्माकमभ्यष्ठां विश्वाः पृतना अरातीः १(४५)

॥ २२ ॥ (सा० ६०२)
(४६) वामदेवो गौतमः । अनुष्टुप् ।

मयि वर्चो अथो यशोऽथो यज्ञस्य यत्पयः ।
परमेष्ठी प्रजापतिर्दिवि द्यामिव दृंहतु १

प्रजापति-सहचारी देवगणः ।

(१) प्रजापतिः हरिश्चन्द्रः चर्म सोमो वा ।

॥ २३ ॥ (ऋ० ९।२८।९)
शुनःशेप आजीगर्तिः । गायत्री ।

उच्छिष्टं चम्वोर्भर सोमं पवित्र आ सृज । नि धेहि गोरधि त्वचि ९

(२) प्रजापत्यादयः ।

॥ २४ ॥ (वा० य० ३९।५)

प्रजापतिः सम्भ्रियमाणः सम्राट् सम्भृतो वैश्वदेवः संसन्नो घर्मः प्रवृक्त—
स्तेज उद्यत आश्विनः पयस्यानीयमाने पौष्णो विष्यन्दमाने मारुतः क्लथन् ।
मैत्रः शरसि सन्ताय्यमाने वायव्यो ह्रियमाण आग्नेयो हूयमानो वाग्घुतः ५

(३) वनस्पतिः, प्रजापतिः ।

॥ २५ ॥ (अथर्व० ३।२४।१-७)
(४९-५५) भृगुः । अनुष्टुप्, २ निचृत्पथ्यापङ्क्तिः ।

पयस्वतीरोषधयः पयस्वन्मामकं वचः । अथो पयस्वतीनामा भरेऽहं सहस्रशः १ १४९९

वेदाहं पयस्वन्तं चकार धान्यं॑ बहु ।
संभृत्वा नाम यो देवस्तं वयं हवामहे यो यो-अयज्वनो गृहे २ १५००
इमा याः पञ्च प्रदिशो मानवीः पञ्च कृष्टयः । वृष्टे शापं नदीरिवेह स्फातिं समावहान् ३
उदुत्सं शतधारं सहस्रधारमक्षितम् । एवास्माकेदं धान्यं॑ सहस्रधारमक्षितम् ४
शतहस्त समाहर सहस्रहस्त सं किर । कृतस्य कार्य॑स्य चेह स्फातिं समावह ५
तिस्रो मात्रा गन्धर्वाणां चतस्रो गृहपत्न्याः ।
तासां या स्फातिमत्तमा तया त्वाऽभि मृशामसि ६
उपोहश्च समूहश्च क्षत्तारौ ते प्रजापते । ताविहा वहतां स्फातिं बहुं भूमानमक्षितम् ७(५५)

---

२५ जीवः ।

॥ १ ॥ (ऋ० १०।६०।७-११)

(१-५) बन्धुः श्रुतबन्धुर्विप्रबन्धुर्गौपायनः । अनुष्टुप्, ८-९ पंक्तिः ।

अयं माताऽयं पिता ऽयं जीवातुराऽगमत् । इदं तव प्रसर्पणं सुबन्धवेहि निरिहि ७
यथा युगं वरत्रया नह्यन्ति धरुणाय कम् ।
एवा दाधार ते मनो जीवातवे न मृत्यवे ऽथो अरिष्टतातये ८
यथेयं पृथिवी मही दाधारेमान् वनस्पतीन् । एवा दाधार ते मनो जीवातवे न० ९
यमादहं वैवस्वतात् सुबन्धोर्मन आऽभरम् । जीवातवे न मृत्यवे ऽथो अरिष्टतातये १०
न्य१ग्वातोऽव वाति न्यक् तपति सूर्यः । नीचीनमघ्न्या दुहे न्यग्भवतु ते रपः ११(५)

॥ २ ॥ (वा० य० १८।६)

जीवातुश्च मे दीर्घायुत्वं च मे ६

॥ ३ ॥ (वा० य० १९।४६)

ये समानाः समनसो जीवा जीवेषु मामकाः ।
तेषा॑ᳪ श्रीर्मयि कल्पतामस्मिँल्लोके शत॑ᳪ समाः ४६ १५१२

---

२६ वाक्।

॥ १ ॥ (ऋ० १।१६४।४२,४५)

दीर्घतमा औचथ्यः । ४२ आद्यर्धर्चस्य वाक्, द्वितीयस्य आपः; ४५ वाक्।
४२ प्रस्तारपंक्तिः, ४५ त्रिष्टुप्।

तस्याः समुद्रा अधि वि क्षरन्ति तेन जीवन्ति प्रदिशश्चतस्रः ।
ततः क्षरत्यक्षरं तद् विश्वमुप जीवति ४२
चत्वारि वाक् परिमिता पदानि तानि विदुर्ब्राह्मणा ये मनीषिणः ।
गुहा त्रीणि निहिता नेङ्गयन्ति तुरीयं वाचो मनुष्या वदन्ति ४५(२)

॥ २ ॥ (ऋ० ३।५३।१५-१६)

(३-४) विश्वामित्रो गाथिनः । (ससर्परी) । त्रिष्टुप्, १६ गायत्री ।

ससर्परीरमतिं बाधमाना बृहन्मिमाय जमदग्निदत्ता ।
आ सूर्यस्य दुहिता ततान श्रवो देवेष्वमृतमजुर्यम् १५ १५१५
ससर्परीरभरत् तूयमेभ्यो ऽधि श्रवः पाञ्चजन्यासु कृष्टिषु ।
सा पक्ष्या३ नव्यमायुर्दधाना यां मे पलस्तिजमदग्नयो ददुः १६

॥ ३ ॥ (ऋ० ८।१००।१०-११)

(५-६) नेमो भार्गवः । त्रिष्टुप्।

यद्वाग्वदन्त्यविचेतनानि राष्ट्री देवानां निषसाद मन्द्रा ।
चतस्र ऊर्जं दुदुहे पयांसि क्व स्विदस्याः परमं जगाम १०(५)
देवीं वाचमजनयन्त देवा—स्तां विश्वरूपाः पशवो वदन्ति ।
सा नो मन्द्रेषमूर्जं दुहाना धेनुर्वागस्मानुप सुष्टुतैतु ११

॥ ४ ॥ (अथर्व० ७।१०५।१)

(७) अथर्वा । (दैव्यं वचः) । अनुष्टुप् ।

अपक्रामन् पौरुषेयाद्वृणानो दैव्यं वचः । प्रणीतीरभ्यावर्तस्व विश्वेभिः सखिभिः सह १

॥ ५ ॥ [८-२४] (वा० य० १।१५-१६)

अग्नेस्तनूरसि वाचो विसर्जनं देववीतये त्वा गृह्णामि बृहद्ग्रावाऽसि वानस्पत्यः
स इदं देवेभ्यो हविः शमीष्व सुशमि शमीष्व । हविष्कृदेहि हविष्कृदेहि १५ १५२०

कुकुटोऽसि मधुजिह्व इषमूर्जमावद त्वया वयꣳ संघातꣳ संघातं जेष्म वर्षवृद्धमसि
प्रति त्वा वर्षवृद्धं वेत्तु परापूतꣳ रक्षः परापूता अरातयो ऽपहतꣳ रक्षो
वायुर्वो विविनक्तु देवो वः सविता हिरण्यपाणिः प्रतिगृभ्णात्वच्छिद्रेण पाणिना १६ १५२१

॥ ६ ॥ (वा० य० ४।४, १७, १९-२१, २३)

वाक्पतिर्मा पुनातु ४(१०)
एषा ते शुक्र तनूरेतद्वर्चस्तया सम्भव भ्राजं गच्छ । जूरसि धृता मनसा जुष्टा विष्णवे १७
चिदसि मनासि धीरसि दक्षिणासि क्षत्रियासि यज्ञियास्यदितिरस्युभयतःशीर्ष्णी ।
सा नः सुप्राची सुप्रतीच्येधि मित्रस्त्वा पदि बध्नीतां पूषाऽध्वनस्पात्विन्द्रायाध्यक्षाय १९
अनु त्वा माता मन्यतामनु पिताऽनु भ्राता सगर्भ्योऽनु सखा सयूथ्यः ।
सा देवि देवमच्छेहीन्द्राय सोमꣳ रुद्रस्त्वा वर्त्तयतु स्वस्ति सोमसखा पुनरेहि २०
वस्व्यस्यदितिरस्यादित्यासि रुद्रासि चन्द्रासि ।
बृहस्पतिष्ट्वा सुम्ने रम्णातु रुद्रो वसुभिरा चके २१
समख्ये देव्या धिया सं दक्षिणयोरुचक्षसा ।
मा म आयुः प्रमोषीर्मो अहं तव वीरं विदेय तव देवि सन्दृशि २३(१५)

॥ ७ ॥ (वा० य० ५।३३)

वागस्यैन्द्रमसि सदोऽसि ३३

॥ ८ ॥ (वा० य० ६।११, १४-१५)

रेवति यजमाने प्रियं धा आ विश ।
उरोरन्तरिक्षात् सजूर्देवेन वातेनास्य हविषस्त्मना यज समस्य तन्वा भव ११
वाचं ते शुन्धामि १४ वाक् त आ प्यायताम् १५ १५३१

॥ ९ ॥ (वा० य० ८।३७)

वाग्देवी जुषाणा सोमस्य तृप्यतु सह प्राणेन स्वाहा ३७(२०)

॥ १० ॥ (वा० य० ९।२९)

प्र नो यच्छत्वर्यमा प्र पूषा प्र बृहस्पतिः । प्र वाग्देवी ददातु नः स्वाहा २९

॥ ११ ॥ (वा० य० १८।२९)

वाग्यज्ञेन कल्पताम् २९

॥ १२ ॥ (वा० य० २२।३३)

वाग्यज्ञेन कल्पताꣳ स्वाहा ३३ १५३५

॥ १३ ॥ (वा० य० ३७।१६)

धर्ता दिवो वि भाति तपसस्पृथिव्यां धर्ता देवो देवानाममर्त्यस्तपोजाः ।
वाचमस्मे नि यच्छ देवायुवम् १६

॥ १४ ॥ (अथर्व० ७।४३।१)

(२५) प्रस्कण्वः । त्रिष्टुप् ।

शिवास्त एका अशिवास्त एकाः सर्वा बिभर्षि सुमनस्यमानः ।
तिस्रो वाचो निहिता अन्तरस्मिन् तासामेका वि पपातानु घोषम् १(२५)१५३७

२७ श्रद्धा ।

॥ १ ॥ (ऋ० ९।१।६)×

(१) मधुच्छन्दा वैश्वामित्रः । (सूर्यस्य दुहिता श्रद्धादेवी –सायणः) गायत्री ।

पुनाति ते परिस्रुतं सोमं सूर्यस्य दुहिता । वारेण शश्वता तना ६

॥ २ ॥ (ऋ० १०।१५१।१-५)

(२-६) श्रद्धा कामायनी । अनुष्टुप् ।

श्रद्धयाऽग्निः समिध्यते श्रद्धया हूयते हविः । श्रद्धां भगस्य मूर्धनि वचसा वेदयामसि १
प्रियं श्रद्धे ददतः प्रियं श्रद्धे दिदासतः । प्रियं भोजेषु यज्वस्विदं म उदितं कृधि २
यथा देवा असुरेषु श्रद्धामुग्रेषु चक्रिरे । एवं भोजेषु यज्वस्वस्माकमुदितं कृधि ३
श्रद्धां देवा यजमाना वायुगोपा उपासते । श्रद्धां हृदय्य१याकूत्या श्रद्धया विन्दते वसु ४
श्रद्धां प्रातर्हवामहे श्रद्धां मध्यंदिनं परि । श्रद्धां सूर्यस्य निम्रुचि श्रद्धे श्रद्धापयेह नः ५(६)१५४३

२८ ज्ञानम् ।

॥ १ ॥ (ऋ० १।१६४।३७)

दीर्घतमा औचथ्यः । (आत्मज्ञानम्) । त्रिष्टुप् ।

न वि जानामि यदिवेदमस्मि निण्यः संनद्धो मनसा चरामि ।
यदा माऽगन् प्रथमजा ऋतस्यादिद् वाचो अश्नुवे भागमस्याः ३७

× दै० [सोमः] ६ ।

॥ २ ॥ (ऋ० १०।७१।१-११)

(२-१२) बृहस्पतिराङ्गिरसः । त्रिष्टुप्, ९ जगती ।

बृहस्पते प्रथमं वाचो अग्रं यत् प्रैरत नामधेयं दधानाः ।
यदेषां श्रेष्ठं यदरिप्रमासीत् प्रेणा तदेषां निहितं गुहाऽऽविः ॥ १ ॥ १५४५

सक्तुमिव तितउना पुनन्तो यत्र धीरा मनसा वाचमक्रत ।
अत्रा सखायः सख्यानि जानते भद्रैषां लक्ष्मीर्निहिताऽधि वाचि ॥ २ ॥

यज्ञेन वाचः पदवीयमायन् तामन्वविन्दन्नृषिषु प्रविष्टाम् ।
तामाभृत्या व्यदधुः पुरुत्रा तां सप्त रेभा अभि सं नवन्ते ॥ ३ ॥

उत त्वः पश्यन् न ददर्श वाच—मुत त्वः शृण्वन् न शृणोत्येनाम् ।
उतो त्वस्मै तन्वं१ वि सस्रे जायेव पत्य उशती सुवासाः ॥ ४(५) ॥

उत त्वं सख्ये स्थिरपीतमाहु—र्नैनं हिन्वन्त्यपि वाजिनेषु ।
अधेन्वा चरति माययैष वाचं शुश्रुवाँ अफलामपुष्पाम् ॥ ५ ॥

यस्तित्याज सचिविदं सखायं न तस्य वाच्यपि भागो अस्ति ।
यदीं शृणोत्यलकं शृणोति नहि प्रवेद सुकृतस्य पन्थाम् ॥ ६ ॥ १५५०

अक्षण्वन्तः कर्णवन्तः सखायो मनोजवेष्वसमा बभूवुः ।
आदघ्नास उपकक्षास उ त्वे ह्रदा इव स्नात्वा उ त्वे ददृश्रे ॥ ७ ॥

हृदा तष्टेषु मनसो जवेषु यद्ब्राह्मणाः संयजन्ते सखायः ।
अत्राह त्वं वि जहुर्वेद्याभि—रोहब्रह्माणो वि चरन्त्यु त्वे ॥ ८ ॥

इमे ये नार्वाङ्न परश्चरन्ति न ब्राह्मणासो न सुतेकरासः ।
त एते वाचमभिपद्य पापया सिरीस्तन्त्रं तन्वते अप्रजज्ञयः ॥ ९(१०) ॥

सर्वे नन्दन्ति यशसाऽऽगतेन सभासाहेन सख्या सखायः ।
किल्बिषस्पृत् पितुषणिर्ह्येषा—मरं हितो भवति वाजिनाय ॥ १० ॥

ऋचां त्वः पोषमास्ते पुपुष्वान् गायत्रं त्वो गायति शक्वरीषु ।
ब्रह्मा त्वो वदति जातविद्यां यज्ञस्य मात्रां वि मिमीत उ त्वः ॥ ११ ॥ १५५५

---

२९ संज्ञानम् ।

॥ १ ॥ (ऋ० १०।१९१।२-४)×

(१-३) संवनन आङ्गिरसः । अनुष्टुप्, ३ त्रिष्टुप् ।

सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम् ।
देवा भागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते २
समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सह चित्तमेषाम् ।
समानं मन्त्रमभि मन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि ३
समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः । समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति ४

॥ २ ॥ [४-६] (वा० य० १२।४६)

संज्ञानमसि कामधरणं मयि ते कामधरणं भूयात् ४६

॥ ३ ॥ (वा० य० २६।१)

सप्त सꣳसदो अष्टमी भूतसाधनी सकामाँ२ऽ अध्वनस्कुरु संज्ञानमस्तु मेऽमुना १(५)१५६०

॥ ४ ॥ (वा० य० ३०।९)

संज्ञानाय स्मरकारीम् ९

॥ ५ ॥ (अथर्व० ३।३०।१-७)

(७-१५) अथर्वा । चन्द्रमाः, सांमनस्यम् । अनुष्टुप् ; ५ विराड् जगती; ६ प्रस्तारपंक्तिः; ७ त्रिष्टुप् ।

सहृदयं सांमनस्यमविद्वेषं कृणोमि वः । अन्यो अन्यमभि हर्यत वत्सं जातमिवाघ्न्या १
अनुव्रतः पितुः पुत्रो मात्रा भवतु संमनाः । जाया पत्ये मधुमतीं वाचं वदतु शन्तिवाम् २
मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन्मा स्वसारमुत स्वसा ।
सम्यञ्चः सव्रता भूत्वा वाचं वदत भद्रया ३
येन देवा न वियन्ति नो च विद्विषते मिथः । तत् कृण्मो ब्रह्म वो गृहे संज्ञानं पुरुषेभ्यः ४(१०)
ज्यायस्वन्तश्चित्तिनो मा वि यौष्ट संराधयन्तः सधुराश्चरन्तः ।
अन्यो अन्यस्मै वल्गु वदन्त एत सध्रीचीनान् वः संमनसस्कृणोमि ५
समानी प्रपा सह वोऽन्नभागः समाने योक्त्रे सह वो युनज्मि ।
सम्यञ्चोऽग्निं सपर्यतारा नाभिमिवाभितः ६
सध्रीचीनान् वः संमनसस्कृणोम्येकश्नुष्टीन्त्संवननेन सर्वान् ।
देवा इवामृतं रक्षमाणाः सायंप्रातः सौमनसो वो अस्तु ७ १५६८

× अथर्व. ६।६४।१-३ ।

॥ ६ ॥ (अथर्व० ७।५२।१-२)×

(सांमनस्यं, अश्विनौ)। १ ककुम्मत्यनुष्टुप्, २ जगती।

संज्ञानं नः स्वेभिः संज्ञानमरणेभिः । संज्ञानमश्विना युवमिहास्मासु नि यच्छतम् १

सं जानामहै मनसा सं चिकित्वा मा युष्महि मनसा दैव्येन ।

मा घोषा उत्स्थुर्बहुले विनिर्हते मेषुः पप्तदिन्द्रस्याहन्यागते २ १५७०

॥ ७ ॥ (अथर्व० ६।९४।१-३)

(१६-१८) अथर्वाङ्गिराः । सरस्वती (सांमनस्यम्)। अनुष्टुप्; २ विराड् जगती।

सं वो मनांसि सं व्रता समाकूतीर्नमामसि । अमी ये विव्रता स्थन तान्वः सं नमयामसि १

अहं गृभ्णामि मनसा मनांसि मम चित्तमनु चित्तेभिरेत ।

मम वशेषु हृदयानि वः कृणोमि मम यातमनुवर्त्मान एत २

ओते मे द्यावापृथिवी ओता देवी सरस्वती । ओतौ म इन्द्रश्चाग्निश्चर्ध्यास्मेदं सरस्वति ३(१८)

---

३० मनः ।

॥ १ ॥ [१-९] (वा० य० ३।५३-५५)

मनो न्वाह्वामहे नाराशंसेन स्तोमेन । पितॄणां च मन्मभिः ५३

आ न एतु मनः पुनः क्रत्वे दक्षाय जीवसे । ज्योक् च सूर्यं दृशे ५४ १५७५

पुनर्नः पितरो मनो ददातु दैव्यो जनः । जीवं व्रातं सचेमहि ५५

॥ २ ॥ (वा० य० ३४।१-६)

यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति ।

दूरङ्गमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु १

येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः ।

यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु २(५)

यत् प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु ।

यस्मान्न ऋते किं चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ३

येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत् परिगृहीतममृतेन सर्वम् ।

येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ४ १५८०

× दै. [अश्विनौ] ६७७-७८ ।

अथर्व. ६।९४।१-२= अथर्व. ३।८।५-६ ।

*

यस्मिन्नृचः साम यजूंषि यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः ।
यस्मिंश्चित्तं सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ५ १५८१
सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान् नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिन इव ।
हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ६

॥ ३ ॥ (अथर्व० २।३०।१)
(१०) प्रजापतिः । पथ्यापंक्तिः ।

यथेदं भूम्या अधि तृणं वातो मथायति ।
एवा मथ्नामि ते मनो यथा मां कामिन्यसो यथा मन्नापगा असः १(१०)

॥४॥ (अथर्व० ७।१२।४)
(११) शौनकः । अनुष्टुप् ।

यद्वो मनः परागतं यद्बद्धमिह वेह वा । तद्व आ वर्तयामसि मयि वो रमतां मनः ४

॥ ५ ॥ (अथर्व० ७।३६।१)
(१२) अथर्वा । अक्षि, मनः । अनुष्टुप् ।

अक्ष्यौ नौ मधुसंकाशे अनीकं नौ समञ्जनम् ।
अन्तः कृणुष्व मां हृदि मन इन्नौ सहासति १(१२)१५८५



३१ मन आवर्तनम् ।

॥ १ ॥ (ऋ० १०।५८।१-१२)
(१-१२) बन्धुः श्रुतबन्धुर्विप्रबन्धुर्गौपायनाः । अनुष्टुप् ।

यत् ते यमं वैवस्वतं मनो जगाम दूरकम् । तत् त आ वर्तयामसीह क्षयाय जीवसे १
यत् ते दिवं यत् पृथिवीं मनो जगाम दूरकम् । तत् त आ वर्तयामसीह क्षयाय जीवसे २
यत् ते भूमिं चतुर्भृष्टिं मनो जगाम दूरकम् । तत् त आ वर्तयामसीह क्षयाय जीवसे ३
यत् ते चतस्रः प्रदिशो मनो जगाम दूरकम् । तत् त आ वर्तयामसीह क्षयाय जीवसे ४
यत् ते समुद्रमर्णवं मनो जगाम दूरकम् । तत् त आ वर्तयामसीह क्षयाय जीवसे ५
यत् ते मरीचीः प्रवतो मनो जगाम दूरकम् । तत् त आ वर्तयामसीह क्षयाय जीवसे ६
यत् ते अपो यदोषधीर्मनो जगाम दूरकम् । तत् त आ वर्तयामसीह क्षयाय जीवसे ७
यत् ते सूर्यं यदुषसं मनो जगाम दूरकम् । तत् त आ वर्तयामसीह क्षयाय जीवसे ८ १५९३

यत् ते पर्वतान् बृहतो मनो जगाम दूरकम् । तत् त आ वर्तयामसीह क्षयाय जीवसे ९
यत् ते विश्वमिदं जगन्मनो जगाम दूरकम् । तत् त आ वर्तयामसीह क्षयाय जीवसे १०
यत् ते पराः परावतो मनो जगाम दूरकम् । तत् त आ वर्तयामसीह क्षयाय जीवसे ११
यत् ते भूतं च भव्यं च मनो जगाम दूरकम् । तत् त आ वर्तयामसीह क्षयाय जीवसे १२ १५९७

३२ असुनीतिः ।

॥ १ ॥ (ऋ० १०।५९।५-६)

(१-२) बन्धुःश्रुतबन्धुर्विप्रबन्धुर्गौपायनाः । त्रिष्टुप् ।

असुनीते मनो अस्मासु धारय जीवातवे सु प्र तिरा न आयुः ।
रारन्धि नः सूर्यस्य संदृशि घृतेन त्वं तन्वं वर्धयस्व ५
असुनीते पुनरस्मासु चक्षुः पुनः प्राणमिह नो धेहि भोगम् ।
ज्योक् पश्येम सूर्यमुच्चरन्तमनुमते मृळया नः स्वस्ति ६

॥ २ ॥ (वा० य० १९।६०)

ये अग्निष्वात्ता ये अनग्निष्वात्ता मध्ये दिवः स्वधया मादयन्ते ।
तेभ्यः स्वराडसुनीतिमेतां यथावशं तन्वं कल्पयाति ६० १६००

॥ ३ ॥ (अथर्व० १८।१।३१)

(४-६) अथर्वा । त्रिष्टुप् ।

अर्चामि वां वर्धायापो घृतस्नू द्यावाभूमी शृणुतं रोदसी मे ।
अहा यद्देवा असुनीतिमायन् मध्वा नो अत्र पितरा शिशीताम् ३१

॥ ४ ॥ (अथर्व० १८।२।५)

(जातवेदाः) । भुरिक् ।

यदा शृतं कृणवो जातवेदोऽथेममेनं परि दत्तात् पितृभ्यः ।
यदो गच्छात्यसुनीतिमेतामथ देवानां वशनीर्भवाति ५(५)

॥ ५ ॥ (अथर्व० १८।३।५९) त्रिष्टुप् ।

ये नः पितुः पितरो ये पितामहा य आविविशुरुर्वन्तरिक्षम् ।
तेभ्यः स्वराडसुनीतिर्नो अद्य यथावशं तन्वः कल्पयाति ५९ १६०३

३३ हस्तः ।

॥ १ ॥ (ऋ० १०।६०।१२)+

(१) बन्धुःश्रुतबन्धुर्विप्रबन्धुर्गौपायनाः । अनुष्टुप् ।

अयं मे हस्तो भगवा नयं मे भगवत्तरः । अयं मे विश्वभेषजो ऽयं शिवाभिमर्शनः १२

॥ २ ॥ (अथर्व० ४।१३।७)

(२) शन्तातिः । अनुष्टुप् ।

हस्ताभ्यां दशशाखाभ्यां जिह्वा वाचः पुरोगवी ।
अनामयित्नुभ्यां हस्ताभ्यां ताभ्यां त्वाऽभि मृशामसि ७(२)१६०५

---

३४ मन्युः ।

॥ १ ॥ (ऋ० १०।८३।१७)॥

(१-१४) मन्युस्तापसः । त्रिष्टुप् ; १ जगती ।

यस्ते मन्योऽविधद्वज्र सायक सह ओजः पुष्यति विश्वमानुषक् ।
साह्याम दासमार्यं त्वया युजा सहस्कृतेन सहसा सहस्वता १
मन्युरिन्द्रो मन्युरेवास देवो मन्युर्होता वरुणो जातवेदाः ।
मन्युं विश ईळते मानुषीर्याः पाहि नो मन्यो तपसा सजोषाः २
अभीहि मन्यो तवसस्तवीयान् तपसा युजा वि जहि शत्रून् ।
अमित्रहा वृत्रहा दस्युहा च विश्वा वसून्या भरा त्वं नः ३
त्वं हि मन्यो अभिभूत्योजाः स्वयंभूर्भामो अभिमातिषाहः ।
विश्वचर्षणिः सहुरिः सहावा नस्मास्वोजः पृतनासु धेहि ४
अभागः सन्नप परेतो अस्मि तव क्रत्वा तविषस्य प्रचेतः ।
तं त्वा मन्यो अक्रतुर्जिहीळा हं स्वा तनूर्बलदेयाय मेहि ५(५)१६१०
अयं ते अस्म्युप मेह्यर्वाङ् प्रतीचीनः सहुरे विश्वधायः ।
मन्यो वज्रिन्नभि मामा ववृत्स्व हनाव दस्यूँरुत बोध्यापेः ६

+ अथर्व. ४, १३, ६ । ॥ अथर्व. ४,३२,१—७ ।

अभि प्रेहि दक्षिणतो भवा मे ऽधा वृत्राणि जङ्घनाव भूरि।
जुहोमि ते धरुणं मध्वो अग्र—मुभा उपांशु प्रथमा पिबाव ७ १६१२

॥२॥ (ऋ० १०।८४।१-७) जगती; १-३ त्रिष्टुप्।+

त्वया मन्यो सरथमारुजन्तो हर्षमाणासो धृषिता मरुत्वः।
तिग्मेषव आयुधा संशिशाना अभि प्र यन्तु नरो अग्निरूपाः १
अग्निरिव मन्यो त्विषितः सहस्व सेनानीर्नः सहुरे हूत एधि।
हत्वाय शत्रून् वि भजस्व वेद ओजो मिमानो वि मृधो नुदस्व २
सहस्व मन्यो अभिमातिमस्मे रुजन् मृणन् प्रमृणन् प्रेहि शत्रून्।
उग्रं ते पाजो नन्वा रुरुध्रे वशी वशं नयस एकज त्वम् ३(१०)
एको बहूनामसि मन्यवीळितो विशंविशं युधये सं शिशाधि।
अकृत्तरुक् त्वया युजा वयं द्युमन्तं घोषं विजयाय कृण्महे ४
विजेषकृदिन्द्र इवानवब्रवो३ ऽस्माकं मन्यो अधिपा भवेह।
प्रियं ते नाम सहुरे गृणीमसि विद्मा तमुत्सं यत आबभूथ ५
आभूत्या सहजा वज्र सायक सहो बिभर्ष्यभिभूत उत्तरम्।
क्रत्वा नो मन्यो सह मेद्येधि महाधनस्य पुरुहूत संसृजि ६
संसृष्टं धनमुभयं समाकृत—मस्मभ्यं दत्तां वरुणश्च मन्युः।
भियं दधाना हृदयेषु शत्रवः पराजितासो अप नि लयन्ताम् ७(१४)

॥ ३ ॥ [१५-१७] (वा० य० १८।४)

मन्युश्च मे भामश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ४ १६२०

॥ ४ ॥ (वा० य० १९।९)

मन्युरसि मन्युं मयि धेहि ९

॥ ५ ॥ (वा० य० ३०।१४)

मन्यवेऽयस्तापम् १४

॥ ६ ॥ (अथर्व० ६।४२।१-३)
(१८-२०) भृग्वङ्गिराः (परस्परं चित्तैकीकरणकामः) अनुष्टुप्; १-२ भुरिक्।

अव ज्यामिव धन्वनो मन्युं तनोमि ते हृदः।
यथा संमनसौ भूत्वा सखायाविव सचावहै १

× अथर्व. ४,३१,१-७।

सखा॑याविव सचावहा अव॑ म॒न्युं त॑नोमि ते । अ॒धस्ते॒ अश्म॑नो म॒न्युमु॒पास्या॑मसि॒ यो गु॒रुः २
अ॒भि ति॑ष्ठामि ते म॒न्युं पार्ष्ण्या॒ प्रप॑देन च । यथा॑ऽव॒शो न वादि॑षो॒ मम॑ चि॒त्तमु॒पाय॑सि ३(१०)१६२५

३५ भाववृत्तम् ।

॥ १ ॥ (ऋ० १०।१२९।१-७)
(१-७) प्रजापतिः परमेष्ठी । त्रिष्टुप् ।

नास॑दासी॒न्नो सदा॑सीत् त॒दानीं॒ नासी॒द्रजो॒ नो व्यो॑मा प॒रो यत् ।
किमाव॑रीवः॒ कुह॒ कस्य॒ शर्म॒न्नम्भः॒ किमा॑सी॒द्गह॑नं ग॒भीर॑म् १
न मृ॒त्युरा॑सीद॒मृतं॒ न तर्हि॒ न रात्र्या॒ अह्न॑ आसीत् प्र॒के॒तः ।
आनी॑दवा॒तं स्व॒धया॒ तदेकं॒ तस्मा॑द्धा॒न्यन्न प॒रः किं च॒नास॑ २
तम॑ आसी॒त् तम॑सा गू॒ळ्हमग्रे॑ऽप्रके॒तं स॑लि॒लं सर्व॑मा इ॒दम् ।
तु॒च्छ्येना॒भ्वपि॑हितं॒ यदासी॒त् तप॑स॒स्तन्म॑हि॒नाजा॑य॒तैक॑म् ३
काम॒स्तदग्रे॒ सम॑वर्त॒ताधि॒ मन॑सो॒ रेतः॑ प्रथ॒मं यदासी॑त् ।
स॒तो बन्धु॒मस॑ति॒ निर॑विन्दन् हृ॒दि प्र॒तीष्या॑ क॒वयो॑ मनी॒षा ४
ति॒र॒श्चीनो॒ वित॑तो र॒श्मिरे॑षाम॒धः स्वि॑दा॒सी३दु॒परि॑ स्विदासी३त् ।
रे॒तो॒धा आ॑सन् म॒हिमान॑ आस॒न्त्स्व॒धा अ॒वस्ता॒त् प्रय॑तिः प॒रस्ता॒त् *५(५)१६३०
को अ॒द्धा वे॑द॒ क इ॒ह प्र वो॑च॒त् कुत॒ आजा॑ता॒ कुत॑ इ॒यं विसृ॑ष्टिः ।
अ॒र्वाग्देवा अ॒स्य वि॒सर्ज॑ने॒नाथा॒ को वे॑द॒ यत॑ आब॒भूव॑ ६
इ॒यं विसृ॑ष्टि॒र्यत॑ आब॒भूव॒ यदि॑ वा द॒धे यदि॑ वा॒ न ।
यो अ॒स्याध्य॑क्षः पर॒मे व्यो॑म॒न्त्सो अ॒ङ्ग वे॑द॒ यदि॑ वा॒ न वेद॑ ७

॥ २ ॥ (ऋ० १०।१३०।१-७)+
(८-१४) यज्ञः प्राजापत्यः । त्रिष्टुप् । १ जगती ।

यो य॒ज्ञो वि॒श्वत॒स्तन्तु॑भिस्त॒त एक॑शतं देवक॒र्मेभि॒राय॑तः ।
इ॒मे व॑यन्ति पि॒तरो॒ य आ॑य॒युः प्र व॒याप॑ व॒येत्या॑सते त॒ते १
पुमाँ॑ एनं तनुत॒ उत् कृ॑णत्ति॒ पुमा॒न् वि त॑त्ने॒ अधि॒ नाके॑ अ॒स्मिन् ।
इ॒मे म॒यूखा॒ उप॑ सेदुरू॒ सदः॒ सामा॑नि चक्रु॒स्तस॑रा॒ण्योत॑वे २

* वा. य. ३३, ७४ । + ऋ. १०, १३०, १, ७ = अथर्व. १०, ७,४३ (उत्तरार्धः)-४४; वा. य. ३४।४९ ।

काऽऽसीत् प्रमा प्रतिमा किं निदानु—माज्यं किमासीत् परिधिः क आसीत् ।
छन्दः किमासीत् प्रउगं किमुक्थं यद्देवा देवमयजन्त विश्वे ३ १६३५
अग्नेर्गायत्र्यभवत् सयुग्वो—ष्णिहया सविता सं बभूव ।
अनुष्टुभा सोम उक्थैर्महस्वान् बृहस्पतेर्बृहती वाचमावत् ४
विराण्मित्रावरुणयोरभिश्री—रिन्द्रस्य त्रिष्टुबिह भागो अह्नः ।
विश्वान् देवाञ्जगत्या विवेश तेन चाक्लृप्र ऋषयो मनुष्याः ५
चाक्लृप्रे तेन ऋषयो मनुष्या यज्ञे जाते पितरो नः पुराणे ।
पश्यन् मन्ये मनसा चक्षसा तान् य इमं यज्ञमयजन्त पूर्वे ६
सहस्तोमाः सहछन्दस आवृतः सहप्रमा ऋषयः सप्त दैव्याः ।
पूर्वेषां पन्थामनुदृश्य धीरा अन्वालेभिरे रथ्योऽ न रश्मीन् ७(१४)

॥ ३ ॥ (ऋ० १०।१५४।१—५)×
(१५—१९) यमी वैवस्वती । अनुष्टुप् ।

सोम एकेभ्यः पवते घृतमेक उपासते ।
येभ्यो मधु प्रधावति ताँश्चिदेवापि गच्छतात् १ १६४०
तपसा ये अनाधृष्या—स्तपसा ये स्वर्ययुः । तपो ये चक्रिरे मह—स्ताँश्चिदेवापि० २
ये युध्यन्ते प्रधनेषु शूरासो ये तनूत्यजः । ये वा सहस्रदक्षिणा—स्ताँश्चिदेवापि० ३
ये चित् पूर्व ऋतसाप ऋतावान ऋतावृधः । पितॄन् तपस्वतो यम ताँश्चिदेवापि० ४
सहस्रणीथाः कवयो ये गोपायन्ति सूर्यम् । ऋषीन् तपस्वतो यम तपोजाँ अपि० ५

॥ ४ ॥ (ऋ० १०।१९०।१-३)
(२०-२२) अघमर्षणो माधुच्छन्दसः । अनुष्टुप् ।

ऋतं च सत्यं चाभीद्धात् तपसोऽध्यजायत ।
ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः १(२०)
समुद्रादर्णवादधि संवत्सरो अजायत । अहोरात्राणि विदध—द्विश्वस्य मिषतो वशी २
सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत् । दिवं च पृथिवीं चा—न्तरिक्षमथो स्वः ३ १६४७

×ऋ. १०,१५४,१—५=अथर्व. १८,२,१४-१८।

३६ आशीः [प्रायाः]।

॥ १ ॥ (ऋ० १०।८५।२०-२८)+

(१-९) सूर्या सावित्री। (नृणां विवाहमन्त्राः) अनुष्टुप्; २०-२१,२३—२४,२६ त्रिष्टुप्, २७ जगती।

सुकिंशुकं शल्मलिं विश्वरूपं हिरण्यवर्णं सुवृतं सुचक्रम्।
आ रोह सूर्ये अमृतस्य लोकं स्योनं पत्ये वहतुं कृणुष्व २०

उदीर्ष्वातः पतिवती ह्येषा विश्वावसुं नमसा गीर्भिरीळे।
अन्यामिच्छ पितृषदं व्यक्तां स ते भागो जनुषा तस्य विद्धि २१

उदीर्ष्वातो विश्वावसो नमसेळामहे त्वा।
अन्यामिच्छ प्रफर्व्यं१ सं जायां पत्या सृज २२ १६५०

अनृक्षरा ऋजवः सन्तु पन्था येभिः सखायो यन्ति नो वरेयम्।
समर्यमा सं भगो नो निनीयात् सं जास्पत्यं सुयममस्तु देवाः २३

प्र त्वा मुञ्चामि वरुणस्य पाशा—द्येन त्वाऽबध्नात् सविता सुशेवः।
ऋतस्य योनौ सुकृतस्य लोके ऽरिष्टां त्वा सह पत्या दधामि २४(५)

प्रेतो मुञ्चामि नामुतः सुबद्धाममुतस्करम्। यथेयमिन्द्र मीढ्वः सुपुत्रा सुभगाऽसति २५

पूषा त्वेतो नयतु हस्तगृह्या—श्विना त्वा प्र वहतां रथेन।
गृहान् गच्छ गृहपत्नी यथासो वशिनी त्वं विदथमा वदासि २६

इह प्रियं प्रजया ते समृध्यता—मस्मिन् गृहे गार्हपत्याय जागृहि।
एना पत्या तन्वं१ सं सृजस्वा—धा जिव्री विदथमा वदाथः २७

नीललोहितं भवति कृत्यासक्तिर्व्यज्यते। एधन्ते अस्या ज्ञातयः पतिर्बन्धेषु बध्यते २८

॥ २ ॥ [१०-१३] (वा० य० २।१०)

मयीदमिन्द्र इन्द्रियं दधात्वस्मान् रायो मघवानः सचन्ताम्।
अस्माकꣳ सन्त्वाशिषः सत्या नः सन्त्वाशिष उपहूता पृथिवी
मातोप मां पृथिवी माता ह्वयतामग्निराग्नीध्रात् स्वाहा १०(१०)

॥ ३ ॥ (वा० य० ४।५)

आ वो देवास ईमहे वामं प्रयत्यध्वरे। आ वो देवास आशिषो यज्ञियासो हवामहे ५ १६५८

+ अथर्व. १४,१,१८-२१,२६,३४,६१।१४,२,३३।

॥ ४ ॥ (वा० य० ८।५)×

श्रदस्मै नरो वचसे दधातन यदाशीर्दा दम्पती वाममश्नुतः।
पुमान् पुत्रो जायते विन्दते वस्वधा विश्वाहारप एधते गृहे ६

॥ ५ ॥ (वा० य० १२।१०५)

इषमूर्जमहमित आदमृतस्य योनिं महिषस्य धाराम्।
आ मा गोषु विशत्वा तनूषु जहामि सेदिमनिराममीवाम् १०५(१३)१९९०

३७ होत्राशिषः।

॥ १ ॥ (ऋ० १०।१८३।३)

(१) प्रजावान् प्राजापत्यः। त्रिष्टुप्।

अहं गर्भमदधामोषधीष्वहं विश्वेषु भुवनेष्वन्तः।
अहं प्रजा अजनयं पृथिव्यामहं जनिभ्यो अपरीषु पुत्रान् ३

॥ २ ॥ (वा० य० ७।१५)

तृपन्तु होत्रा मध्वो याः स्विष्टा याः सुप्रीताः सुहुता यत् स्वाहा १५

॥ ३ ॥ (वा० य० १५।२८)

होताऽध्वर्युरावया अग्निमिन्धो ग्रावग्राभ उत शंस्ता सुविप्रः।
तेन यज्ञेन स्वरंकृतेन स्विष्टेन वक्षणा आ पृणध्वम् २८

॥ ४ ॥ (साम० ९३)

राये अग्ने महे त्वा दानाय समिधीमहि। ईडिष्वा हि महे वृषं द्यावा होत्राय पृथिवी ३

॥ ५ ॥ (सा० ९८)

विश्वामित्रो गाथिनः। उष्णिक्।

प्र होत्रे पूर्व्यं वचोऽग्नये भरता बृहत्। विपां ज्योतींषि बिभ्रते न वेधसे २(५)

॥ ६ ॥ (सा० १५१)

श्रुतकक्षः सुकक्षो वा आङ्गिरसः। गायत्री।

इष्टा होत्रा असृक्षतेन्द्रं वृधन्तो अध्वरे। अच्छावभृथमोजसा ७ १९९९

× वा. य. ८,६०=है. [विश्वे देवाः] १२४६।

*

३८ पथ्या स्वस्तिः।

॥ १ ॥ (ऋ० १०।६३।१५-१६)

(१-२) गयः प्लातः। १५ जगती त्रिष्टुब्वा, १६ त्रिष्टुप्।

स्वस्ति नः पथ्यासु धन्वसु स्वस्त्य१प्सु वृजने स्वर्वति।
स्वस्ति नः पुत्रकृथेषु योनिषु स्वस्ति राये मरुतो दधातन ॥ १५ ॥ १६६७

स्वस्तिरिद्धि प्रपथे श्रेष्ठा रेक्णस्वत्यभि या वाममेति।
सा नो अमा सो अरणे नि पातु स्वावेशा भवतु देवगोपा ॥ १६ ॥

॥ २ ॥ (अथर्व० ६।४८।१-३)

(३-५) अङ्गिराः प्रचेताः। १ श्येनः, २ ऋभुः, ३ वृषा [स्वस्तिवाचनम्]। उष्णिक्।

श्येनोऽसि गायत्रच्छन्दा अनु त्वा रभे। स्वस्ति मा सं वहास्य यज्ञस्योदृचि स्वाहा ॥ १ ॥
ऋभुरसि जगच्छन्दा अनु त्वा रभे। स्वस्ति मा सं वहास्य यज्ञस्योदृचि स्वाहा ॥ २ ॥
वृषाऽसि त्रिष्टुप्छन्दा अनु त्वा रभे। स्वस्ति मा सं वहास्य यज्ञस्योदृचि स्वाहा ॥ ३(५) ॥

॥ ३ ॥ (अथर्व० ७।२८।१)

मेधातिथिः। वेदः [स्वस्तिः]। त्रिष्टुप्।

वेदः स्वस्तिर्द्रुघणः स्वस्तिः परशुर्वेदिः परशुर्नः स्वस्ति।
हविष्कृतो यज्ञिया यज्ञकामास्ते देवासो यज्ञमिमं जुषन्ताम् ॥ १ ॥

॥ ४ ॥ (अथर्व० ७।५५।१)

भृगुः। इन्द्रः [मार्गस्वस्त्ययनम्]। विराट् परोष्णिक्।

ये ते पन्थानोऽव दिवो येभिर्विश्वमैरयः। तेभिः सुम्नया धेहि नो वसो ॥ १ ॥

॥ ५ ॥ (सा० १७२)

वामदेवो गौतमः। इन्द्रः। गायत्री।

२ ३ १ २ ३ २ ३२उ ३क २ र ३ १ २ ३ १ २ ३ १ २
ये ते पन्था अधो दिवो येभिर्व्यश्वमैरयः। उत श्रोषन्तु नो भुवः ॥ ८ ॥

३९ अभिशापः।

॥ १ ॥ (ऋ० ३।५३।२१-२४)*

(१-४) विश्वामित्रो गाथिनः। त्रिष्टुप्, २२ अनुष्टुप्।

इन्द्रोतिभिर्बहुलाभिर्नो अद्य याच्छ्रेष्ठाभिर्मघवञ्छूर जिन्व।
यो नो द्वेष्ट्यधरः सस्पदीष्ट यमु द्विष्मस्तमु प्राणो जहातु ॥ २१ ॥ १६७५

* ऋ. ३।५३।२१ = अथर्व. ७।३१।१।

परशुं चिद् वि तपति शिम्बलं चिद् वि वृश्चति ।
उखा चिदिन्द्र येषन्ती प्रयस्ता फेनमस्यति २२
न सायकस्य चिकिते जनासो लोधं नयन्ति पशु मन्यमानाः ।
नावाजिनं वाजिना हासयन्ति न गर्दभं पुरो अश्वान्नयन्ति २३
इम इन्द्र भरतस्य पुत्रा अपपित्वं चिकितुर्न प्रपित्वम् ।
हिन्वन्त्यश्वमरणं न नित्यं ज्यावाजं परि णयन्त्याजौ २४ १६७८

४० दम्पती ।

॥ १ ॥ (ऋ० ८।३१।५—९)

(१—५) मनुर्वैवस्वतः । गायत्री, ९ अनुष्टुप् ।

या दम्पती समनसा सुनुत आ च धावतः । देवासो नित्ययाशिरा ५
प्रति प्राशव्याँ इतः सम्यञ्चा बर्हिराशाते । न ता वाजेषु वायतः ६ १६८०
न देवानामपि ह्नुतः सुमतिं न जुगुक्षतः । श्रवो बृहद् विवासतः ७
पुत्रिणा ता कुमारिणा विश्वमायुर्व्यश्नुतः । उभा हिरण्यपेशसा ८
वीतिहोत्रा कृतद्वसू दशस्यन्तामृताय कम् । समूधो रोमशं हतो देवेषु कृणुतो दुवः ९(५)

॥ २ ॥ (अथर्व० २।३०।५)

(६) प्रजापतिः । अनुष्टुप् ।

एयमगन् पतिकामा जनिकामोऽहमागमम् । अश्वः कनिक्रदद्यथा भगेनाहं सहागमम् ५

॥ ३ ॥ (अथर्व० १४।२।९,६४)

(७-८) सूर्या सावित्री । ९ त्र्यवसाना षट्पदा विराडत्यष्टिः, ६४ अनुष्टुप् ।

इदं सु मे नरः शृणुत ययाशिषा दंपती वाममश्नुतः ।
ये गन्धर्वा अप्सरसश्च देवीरेषु वानस्पत्येषु येऽधि तस्थुः ।
स्योनास्ते अस्यै वध्वै भवन्तु मा हिंसिषुर्वहतुमुह्यमानम् ९
इहेमाविन्द्र सं नुद चक्रवाकेव दंपती । प्रजयैनौ स्वस्तकौ विश्वमायुर्व्यश्नुताम् ६४ १६८६

४१ दम्पत्याशिषः।

॥ १ ॥ (ऋ० ८।३१।१०-१८)

(१-९) मनुर्वैवस्वतः। गायत्री, १० पादनिचृत्, १४ अनुष्टुप्, १५-१८ पंक्तिः।

आ शर्म पर्वतानां वृणीमहे नदीनाम्। आ विष्णोः सचाभुवः १०

एतु पूषा रयिर्भगः स्वस्ति सर्वधातमः। उरुरध्वा स्वस्तये ११

अरमतिरनर्वणो विश्वो देवस्य मनसा। आदित्यानामनेह इत् १२

यथा नो मित्रो अर्यमा वरुणः सन्ति गोपाः। सुगा ऋतस्य पन्थाः १३ १६९०

अग्निं वः पूर्व्यं गिरा देवमीळे वसूनाम्। सपर्यन्तः पुरुप्रियं मित्रं न क्षेत्रसाधसम् १४

मक्षू देववतो रथः शूरो वा पृत्सु कासु चित्।

देवानां य इन्मनो यजमान इयक्षत्य—भीदयज्वनो भुवत् १५

न यजमान रिष्यसि न सुन्वान न देवयो। देवानां य इन्मनो यजमान० १६

नकिष्टं कर्मणा नश—न्न प्र योषन्न योषति। देवानां य इन्मनो यजमान० १७

असदत्र सुवीर्य—मुत त्यदाश्वश्व्यम्। देवानां य इन्मनो यजमान० १८(९)



४२ वधूवासः-संस्पर्शनिन्दा।

॥ १ ॥ (ऋ० १०।८५।२९-३०)+

(१-२) सूर्या सावित्री। अनुष्टुप्।

परा देहि शामुल्यं ब्रह्मभ्यो वि भजा वसु। कृत्यैषा पद्वती भूत्व्या जाया विशते पतिम् २९

अश्रीरा तनूर्भवति रुशती पापयामुया। पतिर्यद्वध्वो३ वाससा स्वमङ्गमभिधित्सते ३०

४३ कामः।

॥ १ ॥ (वा० य० ७।४८)

कोऽदात् कस्मा अदात् कामोऽदात् कामायादात्।

कामो दाता कामः प्रतिग्रहीता कामैतत् ते ४८ १६९८

+ अथर्व. १४,१,२५,२७।

॥ २ ॥ (वा० य० १८।८)

कामश्च मे सौमनसश्च मे　　८

॥ ३ ॥ (वा० य० २४।३९)

कामाय पिकः　　३९　१७००

॥ ४ ॥ (वा० य० ३०।५)

कामाय पुँश्चलूम्　　५

॥ ५ ॥ (अथर्व० ३।२९।७)

(५) उद्दालकः। त्र्यवसाना षट्पदा उपरिष्टाद्दैवी बृहती ककुम्मतीगर्भा विराड्जगती।

क इदं कस्मा अदात् कामः कामायादात्।
कामो दाता कामः प्रतिग्रहीता कामः समुद्रमा विवेश।
कामेन त्वा प्रति गृह्णामि कामैतत् ते　　७(५)

॥ ६ ॥ (अथर्व० ६।८।१-३)

(६-११) जमदग्निः। १ (कामात्मा), २ सुपर्णः, ३ द्यावापृथिवी, सूर्यः। पथ्यापंक्तिः।

यथा वृक्षं लिबुजा समन्तं परिषस्वजे।
एवा परि ष्वजस्व मां यथा मां कामिन्यसो यथा मन्नापगा असः　　१
यथा सुपर्णः प्रपतन् पक्षौ निहन्ति भूम्याम्। एवा नि हन्मि ते मनो यथा मां०　　२
यथेमे द्यावापृथिवी सद्यः पर्येति सूर्यः। एवा पर्येमि ते मनो यथा मां०　　३

॥ ७ ॥ (अथर्व० ६।९।१-३)

(कामात्मा), ३ गावः। अनुष्टुप्।

वाञ्छ मे तन्वं पादौ वाञ्छाक्ष्यौ वाञ्छ सक्थ्यौ।
अक्ष्यौ वृषण्यन्त्याः केशा मां ते कामेन शुष्यन्तु　　१
मम त्वा दोषणिश्रिषं कृणोमि हृदयश्रिषम्। यथा मम क्रतावसो मम चित्तमुपायसि　　२(१०)
यासां नाभिरारेहणं हृदि संवननं कृतम्। गावो घृतस्य मातरोऽमूं सं वानयन्तु मे　　३

॥ ८ ॥ (अथर्व० ९।२।१-२५)

(१२-३६) अथर्वा। त्रिष्टुप्; ५ अतिजगती; ७, १४-१५, १७-१८, २१-२२ जगती; ८ द्विपदा आर्ची पंक्तिः; ११, २०, २३ भुरिक्; १२ अनुष्टुप्; १३ द्विपदाऽऽर्ची अनुष्टुप्; १६ चतुष्पदा शक्वरीगर्भा परा जगती।

सपत्नहनमृषभं घृतेन कामं शिक्षामि हविषाऽऽज्येन।
नीचैः सपत्नान् मम पादय त्वमभिष्टुतो महता वीर्येण　　१
यन्मे मनसो न प्रियं न चक्षुषो यन्मे बभस्ति नाभिनन्दति।
तदुष्वप्न्यं प्रति मुञ्चामि सपत्ने कामं स्तुत्वोदहं भिदेयम्　　२　१७१०

दुष्वप्न्यं काम दुरितं च कामाप्रजस्तामस्वगतामवर्तिम् ।
उग्र ईशानः प्रति मुञ्च तस्मिन् यो अस्मभ्यमंहूरणा चिकित्सात् ३ १७११
नुदस्व काम प्र णुदस्व कामावर्तिं यन्तु मम ये सपत्नाः ।
तेषां नुत्तानामधमा तमांस्यग्ने वास्तूनि निर्दह त्वम् ४(१५)
सा ते काम दुहिता धेनुरुच्यते यामाहुर्वाचं कवयो विराजम् ।
तया सपत्नान् परि वृङ्ग्धि ये मम पर्येनान् प्राणः पशवो जीवनं वृणक्तु ५
कामस्येन्द्रस्य वरुणस्य राज्ञो विष्णोर्बलेन सवितुः सवेन ।
अग्नेर्होत्रेण प्र णुदे सपत्नांछम्बीव नावमुदकेषु धीरः ६
अध्यक्षो वाजी मम काम उग्रः कृणोतु मह्यमसपत्नमेव ।
विश्वे देवा मम नाथं भवन्तु सर्वे देवा हवमा यन्तु म इमम् ७
इदमाज्यं घृतवज्जुषाणाः कामज्येष्ठा इह मादयध्वम् । कृण्वन्तो मह्यमसपत्नमेव ८
इन्द्राग्नी काम सरथं हि भूत्वा नीचैः सपत्नान् मम पादयाथः ।
तेषां पन्नानामधमा तमांस्यग्ने वास्तून्यनुनिर्दह त्वम् ९(२०)
जहि त्वं काम मम ये सपत्ना अन्धा तमांस्यव पादयैनान् ।
निरिन्द्रिया अरसाः सन्तु सर्वे मा ते जीविषुः कतमच्चनाहः १०
अवधीत् कामो मम ये सपत्ना उरुं लोकमकरन्मह्यमेधतुम् ।
मह्यं नमन्तां प्रदिशश्चतस्रो मह्यं षडुर्वीर्घृतमा वहन्तु ११
तेऽधराञ्चः प्र प्लवन्तां छिन्ना नौरिव बन्धनात् । न सायकप्रणुत्तानां पुनरस्ति निवर्तनम् १२ १७२०
अग्निर्यव इन्द्रो यवः सोमो यवः । यवयावानो देवा यावयन्त्वेनम् १३
असर्ववीरश्चरतु प्रणुत्तो द्वेष्यो मित्राणां परिवर्ग्यः स्वानाम् ।
उत पृथिव्यामव स्यन्ति विद्युत उग्रो वो देवः प्र मृणत् सपत्नान् १४(२५)
च्युता चेयं बृहत्यच्युता च विद्युद्बिभर्ति स्तनयित्नूंश्च सर्वान् ।
उद्यन्नादित्यो द्रविणेन तेजसा नीचैः सपत्नान् नुदतां मे सहस्वान् १५
यत् ते काम शर्म त्रिवरूथमुद्भु ब्रह्म वर्म विततमनतिव्याध्यं कृतम् ।
तेन सपत्नान् परि वृङ्ग्धि ये मम पर्येनान् प्राणः पशवो जीवनं वृणक्तु १६
येन देवा असुरान् प्राणुदन्त येनेन्द्रो दस्यूनधमं तमो निनाय ।
तेन त्वं काम मम ये सपत्नास्तानस्माल्लोकात् प्र णुदस्व दूरम् १७ १७२५

यथा देवा असुरान् प्राणुदन्त यथेन्द्रो दस्यूनधमं तमो बबाधे ।
तथा त्वं काम मम ये सपत्नास्तानस्माल्लोकात् प्र णुदस्व दूरम् १८
कामो जज्ञे प्रथमो नैनं देवा आपुः पितरो न मर्त्याः ।
ततस्त्वमसि ज्यायान् विश्वहा महांस्तस्मै ते काम नम इत् कृणोमि १९(३०)
यावती द्यावापृथिवी वरिम्णा यावदापः सिष्यदुर्यावदग्निः । ततस्त्वमसि० २०
यावतीर्दिशः प्रदिशो विषूचीर्यावतीराशा अभिचक्षणा दिवः । ततस्त्वमसि० २१
यावतीर्भृङ्गा जत्व्3ः कुरूरवो यावतीर्वघा वृक्षसर्प्यो3 बभूवुः । ततस्त्वमसि० २२ १७३०
ज्यायान् निमिषतोऽसि तिष्ठतो ज्यायान्त्समुद्रादसि काम मन्यो । ततस्त्वमसि० २३
न वै वातश्चन काममाप्नोति नाग्निः सूर्यो नोत चन्द्रमाः । ततस्त्वमसि० २४
यास्ते शिवास्तन्व3ः काम भद्रा याभिः सत्यं भवति यद्वृणीषे ।
ताभिष्ट्वमस्माँ अभिसंविशस्वान्यत्र पापीरप वेशया धियः २५

॥ ९ ॥ (अथर्व० ६।१३०।१-४)

(३७-४७) अथर्वाङ्गिराः । स्मरः । अनुष्टुप्, १ विराट् पुरस्ताद्बृहती ।

रथजितां राथजितेयीनामप्सरसामयं स्मरः । देवाः प्र हिणुत स्मरमसौ मामनु शोचतु १
असौ मे स्मरतादिति प्रियो मे स्मरतादिति । देवाः प्र हिणुत स्मरमसौ मामनु शोचतु २
यथा मम स्मरादसौ नामुष्याहं कदा चन । देवाः प्र हिणुत स्मरमसौ मामनु शोचतु ३
उन्मादयत मरुत उदन्तरिक्ष मादय । अग्न उन्मादया त्वमसौ मामनु शोचतु ४(४०)

॥ १० ॥ (अथर्व० ६।१३१।१-३) अनुष्टुप् ।

नि शीर्षतो नि पत्तत आध्यो3 नि तिरामि ते। देवाः प्र हिणुत स्मरमसौ मामनु शोचतु १
अनुमतेऽन्विदं मन्यस्वाकूते समिदं नमः । देवाः प्र हिणुत स्मरमसौ मामनु शोचतु २
यद्धावसि त्रियोजनं पञ्चयोजनमाश्विनम् । ततस्त्वं पुनरायसि पुत्राणां नो असः पिता ३ १७४०

॥ ११ ॥ (अथर्व० ६।१३२।१-५)

१ अनुष्टुप्, (त्रिपादनुष्टुप्); २,४,५ बृहती; ३ भुरिक् ।

यं देवाः स्मरमसिञ्चन्नप्स्व1न्तः शोशुचानं सहाध्या । तं ते तपामि वरुणस्य धर्मणा १
यं विश्वे देवाः स्मरमसिञ्चन्नप्स्व1न्तः शोशुचानं सहाध्या । तं ते तपामि० २(४५)
यमिन्द्राणी स्मरमसिञ्चदप्स्व1न्तः शोशुचानं सहाध्या । तं ते तपामि० ३
यमिन्द्राग्नी स्मरमसिञ्चतामप्स्व1न्तः शोशुचानं सहाध्या । तं ते तपामि० ४
यं मित्रावरुणौ स्मरमसिञ्चतामप्स्व1न्तः शोशुचानं सहाध्या । तं ते तपामि० ५ १७४५

॥ १२ ॥ (अथर्व० १९।५२।१-५)

(४८-५२) ब्रह्मा । त्रिष्टुप्, ३ चतुष्पादुष्णिक्; ५ उपरिष्टाद् बृहती ।

कामस्तदग्रे समवर्तत मनसो रेतः प्रथमं यदासीत् ।
स काम कामेन बृहता सयोनी रायस्पोषं यजमानाय धेहि १ १७३६
त्वं काम सहसाऽसि प्रतिष्ठितो विभुर्विभावा सख आ सखीयते ।
त्वमुग्रः पृतनासु सासहिः सह ओजो यजमानाय धेहि । २
दूराच्चकमानाय प्रतिपाणायाक्षये । आऽस्मा अशृण्वन्नाशाः कामेनाजनयन्त्स्वः ३
कामेन मा काम आऽगन् हृदयाद्धृदयं परि । यदमीषामदो मनस्तदैतूप मामिह ४
यत् काम कामयमाना इदं कृण्मसि ते हविः ।
तन्नः सर्वं समृध्यतामथैतस्य हविषो वीहि स्वाहा ५(५३)

४४ रतिः ।

॥ १ ॥ (ऋ० १।१७९।१-६)

(१-६) १-२ लोपामुद्रा; ३-४ अगस्त्यो मैत्रावरुणिः; ५-६ अगस्त्यशिष्यो ब्रह्मचारी । त्रिष्टुप्, ५ बृहती ।

पूर्वीरहं शरदः शश्रमाणा दोषा वस्तोरुषसो जरयन्तीः ।
मिनाति श्रियं जरिमा तनूना—मप्यू नु पत्नीर्वृषणो जगम्युः १ १७५१
ये चिद्धि पूर्व ऋतसाप आस—न्त्साकं देवेभिरवदन्नृतानि ।
ते चिदवासुर्नह्यन्तमापुः समू नु पत्नीर्वृषभिर्जगम्युः २
न मृषा श्रान्तं यदवन्ति देवा विश्वा इत् स्पृधो अभ्यश्नवाव ।
जयावेदत्र शतनीथमाजिं यत् सम्यञ्चा मिथुनावभ्यजाव ३
नदस्य मा रुधतः काम आऽग—न्नित आजातो अमुतः कुतश्चित् ।
लोपामुद्रा वृषणं नी रिणाति धीरमधीरा धयति श्वसन्तम् ४
इमं नु सोममन्तितो हृत्सु पीतमुप ब्रुवे ।
यत् सीमागश्चकृमा तत् सु मृळतु पुलुकामो हि मर्त्यः ५(५)
अगस्त्यः खनमानः खनित्रैः प्रजामपत्यं बलमिच्छमानः ।
उभौ वर्णावृषिरुग्रः पुपोष सत्या देवेष्वाशिषो जगाम ६ १७५६

४५ रेतः ।

॥ १ ॥ [१-२] (वा० य० १९।७६)

रेतो मूत्रं वि जहाति योनिं प्रविशदिन्द्रियम् । गर्भो जरायुणावृत उल्बं जहाति जन्मना ।
ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपानं शुक्रमन्धस इन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोऽमृतं मधु ७६ १७५७

॥ २ ॥ (वा० य० ३९।१०)

रेतसे स्वाहा १०

॥ ३ ॥ (अथर्व० ६।११।१-२)×

(३-४) प्रजापतिः । अनुष्टुप् ।

शमीमश्वत्थ आरूढस्तत्र पुंसुवनं कृतम् । तद्वै पुत्रस्य वेदनं तत् स्त्रीष्वा भरामसि १
पुंसि वै रेतो भवति तत् स्त्रियामनु षिच्यते । तद्वै पुत्रस्य वेदनं तत् प्रजापतिरब्रवीत् २(४)



४६ निर्ऋतिः ।

॥ १ ॥ (ऋ० १०।५९।१-३)

(१-३) बन्धुःश्रुतबन्धुर्विप्रबन्धुर्गौपायनाः । त्रिष्टुप् ।

प्र तार्यायुः प्रतरं नवीयः स्थातारेव क्रतुमता रथस्य ।
अध च्यवान उत् तवीत्यर्थं परातरं सु निर्ऋतिर्जिहीताम् १ १७६१
सामन् नु राये निधिमन्वन्नं करामहे सु पुरुध श्रवांसि ।
ता नो विश्वानि जरिता ममत्तु परातरं सु निर्ऋतिर्जिहीताम् २
अभी ष्वर्यः पौंस्यैर्भवेम द्यौर्न भूमिं गिरयो नाज्रान् ।
ता नो विश्वानि जरिता चिकेत परातरं सु निर्ऋतिर्जिहीताम् ३

॥ २ ॥ [४-१०] (वा० य० १२।६२-६५)*

असुन्वन्तमयजमानमिच्छ स्तेनस्येत्यामन्विहि तस्करस्य ।
अन्यमस्मदिच्छ सा त इत्या नमो देवि निर्ऋते तुभ्यमस्तु ६२
नमः सु ते निर्ऋते तिग्मतेजोऽयस्मयं विचृता बन्धमेतम् ।
यमेन त्वं यम्या संविदानोत्तमे नाके अधिरोहयैनम् ६३(५)

× अथर्व. ६।११।३ = दै. [अदितिः.] ११०० । * अथर्व. ६,६३,१-३, ८४,३-४ = दै. [आयुर्वेदः] १७९०-९३ ।

यस्यांस्ते घोर आसञ्जुहोम्येषां बन्धानांमवसर्जनाय ।
यां त्वा जनो भूमिरिति प्रमन्दते निर्ऋतिं त्वाऽहं परिवेद विश्वतः ६४ १७६६
यं ते देवी निर्ऋतिराबबन्ध पाशं ग्रीवास्वविचृत्यम् ।
तं ते विष्याम्यायुषो न मध्यादथैतं पितुमद्धि प्रसूतः ६५

॥ ३ ॥ (वा० य० २५।२)

निर्ऋतिं निर्जर्जल्येन शीर्ष्णा २
निर्ऋत्यै परिविविदानम् ९ निर्ऋत्यै कोशकारीम् १४(१०)



४७ पृथिवी ।

॥ १ ॥ (ऋ० १।२२।१५)❋

(१) मेधातिथिः काण्वः । गायत्री ।

स्योना पृथिवि भवा नृक्षरा निवेशनी । यच्छा नः शर्म सप्रथः १५ १७७१

॥ २ ॥ (ऋ० ५।८४।१-३)

(२-४) अत्रिर्भौमः । अनुष्टुप् ।

बळित्था पर्वतानां खिद्रं बिभर्षि पृथिवि ।
प्र या भूमिं प्रवत्वति मह्ना जिनोषि महिनि १
स्तोमासस्त्वा विचारिणि प्रति ष्टोभन्त्यक्तुभिः । प्र या वाजं न हेषन्तं पेरुमस्यस्यर्जुनि २
दृळ्हा चिद्या वनस्पतीन् क्ष्मया दर्धर्ष्योजसा ।
यत् ते अभ्रस्य विद्युतो दिवो वर्षन्ति वृष्टयः ३

॥ ३ ॥ [५-११] (वा० य० ४।१३)

इयं ते यज्ञिया तनू रपो मुञ्चामि न प्रजाम् ।
अंहोमुचः स्वाहाकृताः पृथिवीमाविशत पृथिव्या सम्भव १३(५)

॥ ४ ॥ (वा० य० ५।९)

तप्तायनी मेऽसि वित्तायनी मेऽस्य वतान्मा नाथितादवतान्मा व्यथितात् ९

॥ ५ ॥ (वा० य० ११।३९)

सं ते वायुर्मातरिश्वा दधातूत्तानाया हृदयं यद्विकस्तम् ।
यो देवानां चरसि प्राणथेन कस्मै देव वषडस्तु तुभ्यम् ३९ १७७७

❋ ··· ··· पृथिवि नो ··· ··· । ··· सप्रथाः ॥ वा. य. ३५।२१; ३६,१३ ।

॥ ६ ॥ (वा० य० १३।१८)

भूरसि भूमिरस्यदितिरसि विश्वधाया विश्वस्य भुवनस्य धर्त्री ।
पृथिवीं यच्छ पृथिवीं दृंह पृथिवीं मा हिंसीः १८(८)

॥ ७ ॥ (वा० य० २२।२७)+

पृथिव्यै स्वाहा २७

॥ ८ ॥ (वा० य० ३७।५, १२)

इयत्यग्र आसीन्मखस्य तेऽद्य शिरो राध्यासं देवयजने पृथिव्याः ।
मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे ५ १७८०
अनाधृष्टा पुरस्तादग्नेराधिपत्य आयुर्मे दाः पुत्रवती दक्षिणत इन्द्रस्याधिपत्ये प्रजां मे दाः ।
सुषदा पश्चाद्देवस्य सवितुराधिपत्ये चक्षुर्मे दा आश्रुतिरुत्तरतो धातुराधिपत्ये रायस्पोषं मे दाः।
विधृतिरुपरिष्टाद्बृहस्पतेराधिपत्य ओजो मे दा विश्वाभ्यो मा नाष्ट्राभ्यस्पाहि मनोरश्वासि १२

॥९॥ (अथर्व० ७।२७।१)

(१२) मेधातिथिः। इडा। त्रिष्टुप्।

इडैवास्माँ अनु वस्तां व्रतेन यस्याः पदे पुनते देवयन्तः ।
घृतपदी शक्वरी सोमपृष्ठोप यज्ञमस्थित वैश्वदेवी १(१२)

पृथिवी-सहचारी देवगणः ।

(१) पृथिव्यन्तरिक्षे ।

॥ १० ॥ (ऋ० ७।१०४।२३ [उत्तरार्धस्य])

(१३) मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः। जगती।

पृथिवी नः पार्थिवात् पात्वंहसो ऽन्तरिक्षं दिव्यात् पात्वस्मान् २३

(२) पृथिवी-द्यन्तरिक्ष-सोम-पूष-पथ्या-स्वस्तयः ।

॥ ११ ॥ (ऋ० १०।५९।७)

(१४) बन्धुःश्रुतबन्धुर्विप्रबन्धुर्गौपायनाः। त्रिष्टुप्।

पुनर्नो असुं पृथिवी ददातु पुनर्द्यौर्देवी पुनरन्तरिक्षम् ।
पुनर्नः सोमस्तन्वं ददातु पुनः पूषा पथ्यां३ या स्वस्तिः ७

(३) पृथिवीसावितारौ ।

॥ १२ ॥ [१५-१६] (वा० य० ९।५)

वाजस्य नु प्रसवे मातरं महीमदितिं नाम वचसा करामहे ।
यस्यामिदं विश्वं भुवनमाविवेश तस्यां नो देवः सविता धर्म साविषत् ५ १७८५

+ वा. य. २२।२९; ३९।१ ।

॥ १३ ॥ (वा० य० १०।२३)

पृथिवि मातर्मा मा हिंसीर्मो अहं त्वाम् २३ १७८६

॥ १४ ॥ (अथर्व० ३।२९।८)

(१७) उद्दालकः । उपरिष्टाद्बृहती ।

भूमिष्ट्वा प्रति गृह्णात्वन्तरिक्षमिदं महत् ।
माऽहं प्राणेन माऽऽत्मना मा प्रजया प्रतिगृह्य वि राधिषि ८

॥ १५ ॥ (अथर्व० ४।४०।५)

(१८) शुक्रः । त्रिष्टुप् ।

येऽधस्ताज्जुह्वति जातवेदो ध्रुवायां दिशोऽभिदासन्त्यस्मान् ।
भूमिमृत्वा ते पराञ्चो व्यथन्तां प्रत्यगेनान् प्रतिसरेण हन्मि ५

॥ १६ ॥ (अथर्व० १२।१।१-६३)

(१९-८१) अथर्वा । भूमिः । त्रिष्टुप् ; २ भुरिक् ; ४-६,१०,३८ त्र्यवसाना षट्पदा जगती; ७ प्रस्तारपंक्तिः;
८,११ त्र्यव० षट्० विराडष्टिः; ९ पराऽनुष्टुप् ; १२-१३,१५ पञ्चपदा शक्वरी (१२-१३ त्र्यव०);
१४ महाबृहती, १६,२१ एकाव० साम्नी त्रिष्टुप् , १८ त्र्यव० षट्० त्रिष्टुबनुष्टुब्गर्भातिशक्वरी;
१९-२० पुरोबृहती (२० विराट्); २२ त्र्यव० षट्० विराडतिजगती; २३ पञ्चपदा विराडति-
जगती; २४ पञ्च० अनुष्टुब्गर्भा जगती; २५ त्र्यव० सप्त० उष्णिगनुष्टुब्गर्भा शक्वरी;
२६-२८,३३,३५,३९-४१,५०,५३-५४,५६,५९,६३ अनुष्टुप् (५३ पुरोबार्हता);
३० विराड् गायत्री; ३२ पुरस्ताज्ज्योतिः; ३४ त्र्यव०षट्० त्रिष्टुब्बृहतीगर्भातिजगती;
३६ विपरीतपादलक्ष्मा पंक्तिः; ३७ त्र्यव० पञ्च० शक्वरी, ४१ त्र्यव० षट्०
ककुम्मती शक्वरी; ४२ स्वराडनुष्टुप्, ४३ विराडास्तारपंक्तिः; ४४-४५,४९
जगती; ४६ षट्प० अनुष्टुब्गर्भा परा शक्वरी; ४७ षट्प० उष्णिगनुष्टु-
ब्गर्भा पराऽतिशक्वरी, ४८ पुरोऽनुष्टुप्; ५१ त्र्यव०षट्० अनुष्टुब्गर्भा
ककुम्मती शक्वरी; ५२ पञ्च० अनुष्टुब्गर्भा पराऽतिजगती;
५७ पुरोऽतिजागता जगती; ५८ पुरस्ताद्बृहती;
६१ पुरोबार्हता, ६२ परा विराट् ।

सत्यं बृहदृतमुग्रं दीक्षा तपो ब्रह्म यज्ञः पृथिवीं धारयन्ति ।
सा नो भूतस्य भव्यस्य पत्न्युरुं लोकं पृथिवी नः कृणोतु १
असंबाधं बध्यतो मानवानां यस्या उद्वतः प्रवतः समं बहु ।
नानावीर्या ओषधीर्या बिभर्ति पृथिवी नः प्रथतां राध्यतां नः २(२०)
यस्यां समुद्र उत सिन्धुरापो यस्यामन्नं कृष्टयः संबभूवुः ।
यस्यामिदं जिन्वति प्राणदेजत् सा नो भूमिः पूर्वपेये दधातु ३ १७९१

यस्याश्चतस्रः प्रदिशः पृथिव्या यस्यामन्नं कृष्टयः संबभूवुः ।
या बिभर्ति बहुधा प्राणदेजत् सा नो भूमिर्गोष्वप्यन्ने दधातु ४ १७९२
यस्यां पूर्वे पूर्वजना विचक्रिरे यस्यां देवा असुरानभ्यवर्तयन् ।
गवामश्वानां वयसश्च विष्ठा भगं वर्चः पृथिवी नो दधातु ५
विश्वंभरा वसुधानी प्रतिष्ठा हिरण्यवक्षा जगतो निवेशनी ।
वैश्वानरं बिभ्रती भूमिरग्निमिन्द्रऋषभा द्रविणे नो दधातु ६
यां रक्षन्त्यस्वप्ना विश्वदानीं देवा भूमिं पृथिवीमप्रमादम् ।
सा नो मधु प्रियं दुहामथो उक्षतु वर्चसा ७(२५)

यार्णवेऽधि सलिलमग्र आसीद् यां मायाभिरन्वचरन् मनीषिणः ।
यस्या हृदयं परमे व्योमन्त्सत्येनावृतममृतं पृथिव्याः ।
सा नो भूमिस्त्विषिं बलं राष्ट्रे दधातूत्तमे ८
यस्यामापः परिचराः समानीरहोरात्रे अप्रमादं क्षरन्ति ।
सा नो भूमिर्भूरिधारा पयो दुहामथो उक्षतु वर्चसा ९
यामश्विनावमिमातां विष्णुर्यस्यां विचक्रमे । इन्द्रो यां चक्र आत्मनेऽनमित्रां शचीपतिः ।
सा नो भूमिर्वि सृजतां माता पुत्राय मे पयः १०
गिरयस्ते पर्वता हिमवन्तोऽरण्यं ते पृथिवि स्योनमस्तु ।
बभ्रुं कृष्णां रोहिणीं विश्वरूपां ध्रुवां भूमिं पृथिवीमिन्द्रगुप्ताम् ।
अजीतोऽहतो अक्षतोऽध्यष्ठां पृथिवीमहम् ११
यत् ते मध्यं पृथिवि यच्च नभ्यं यास्त ऊर्जस्तन्वः संबभूवुः ।
तासु नो धेह्यभि नः पवस्व माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः ।
पर्जन्यः पिता स उ नः पिपर्तु १२(३०)

यस्यां वेदिं परिगृह्णन्ति भूम्यां यस्यां यज्ञं तन्वते विश्वकर्माणः ।
यस्यां मीयन्ते स्वरवः पृथिव्यामूर्ध्वाः शुक्रा आहुत्याः पुरस्तात् ।
सा नो भूमिर्वर्धयद्वर्धमाना १३

यो नो द्वेषत् पृथिवि यः पृतन्याद्योऽभिदासान्मनसा यो वधेन ।
तं नो भूमे रन्धय पूर्वकृत्वरि १४ १८०१

त्वज्जातास्त्वयि चरन्ति मर्त्यास्त्वं बिभर्षि द्विपदुस्त्वं चतुष्पदः ।
तवेमे पृथिवि पञ्च मानवा येभ्यो ज्योतिरमृतं मर्त्येभ्य उद्यन्त्सूर्यो रश्मिभिरातनोति १५ १८०३
ता नः प्रजाः सं दुह्रतां समग्रा वाचो मधु पृथिवि धेहि मह्यम् १६
विश्वस्वं मातरमोषधीनां ध्रुवां भूमिं पृथिवीं धर्मणा धृताम् ।
शिवां स्योनामनु चरेम विश्वहा १७(३५)
महत् सधस्थं महती बभूविथ महान् वेग एजथुर्वेपथुष्टे । महांस्त्वेन्द्रो रक्षत्यप्रमादम् ।
सा नो भूमे प्र रोचय हिरण्यस्येव संदृशि मा नो द्विक्षत कश्चन १८
अग्निर्भूम्यामोषधीष्वग्निमापो बिभ्रत्यग्निरश्मसु । अग्निरन्तः पुरुषेषु गोष्वश्वेष्वग्नयः १९
अग्निर्दिव आ तपत्यग्नेर्देवस्योर्वन्तरिक्षम् । अग्निं मर्तास इन्धते हव्यवाहं घृतप्रियम् २०
अग्निवासाः पृथिव्यसितज्ञूस्त्विषीमन्तं संशितं मा कृणोतु २१
भूम्यां देवेभ्यो ददति यज्ञं हव्यमरंकृतम् । भूम्यां मनुष्या जीवन्ति स्वधयाऽन्नेन मर्त्याः ।
सा नो भूमिः प्राणमायुर्दधातु जरदष्टिं मा पृथिवी कृणोतु २२ १८१०
यस्ते गन्धः पृथिवि संबभूव यं बिभ्रत्योषधयो यमापः ।
यं गन्धर्वा अप्सरसश्च भेजिरे तेन मा सुरभिं कृणु मा नो द्विक्षत कश्चन २३
यस्ते गन्धः पुष्करमाविवेश यं संजभ्रुः सूर्याया विवाहे । अमर्त्याः पृथिवि गन्धमग्रे तेन० २४
यस्ते गन्धः पुरुषेषु स्त्रीषु पुंसु भगो रुचिः । यो अश्वेषु वीरेषु यो मृगेषूत हस्तिषु ।
कन्यायां वर्चो यद् भूमे तेनास्माँ अपि सं सृज मा नो द्विक्षत कश्चन २५
शिला भूमिरश्मा पांसुः सा भूमिः संधृता धृता । तस्यै हिरण्यवक्षसे पृथिव्या अकरं नमः २६
यस्यां वृक्षा वानस्पत्या ध्रुवास्तिष्ठन्ति विश्वहा । पृथिवीं विश्वधायसं धृतामच्छावदामसि २७(४५)
उदीराणा उतासीनास्तिष्ठन्तः प्रक्रामन्तः । पद्भ्यां दक्षिणसव्याभ्यां मा व्यथिष्महि भूम्याम् २८
विमृग्वरीं पृथिवीमा वदामि क्षमां भूमिं ब्रह्मणा वावृधानाम् ।
ऊर्जं पुष्टं बिभ्रतीमन्नभागं घृतं त्वाऽभि नि षीदेम भूमे २९
शुद्धा न आपस्तन्वे क्षरन्तु यो नः सेदुरप्रिये तं नि दध्मः । पवित्रेण पृथिवि मोत्पुनामि ३०
यास्ते प्राचीः प्रदिशो या उदीचीर्यास्ते भूमे अधराद्याश्च पश्चात् ।
स्योनास्ता मह्यं चरते भवन्तु मा नि पप्तं भुवने शिश्रियाणः ३१
मा नः पश्चान्मा पुरस्तान्नुदिष्ठा मोत्तरादधरादुत ।
स्वस्ति भूमे नो भव मा विदन् परिपन्थिनो वरीयो यावया वधम् ३२ १८२०

यावत् तेऽभि विपश्यामि भूमे सूर्येण मेदिना। तावन्मे चक्षुर्मा मेष्टोत्तरामुत्तरां समाम् ३३ १८२१
यच्छयानः पर्यावर्ते दक्षिणं सव्यमभि भूमे पार्श्वम्।
उत्तानास्त्वा प्रतीचीं यत् पृष्टीभिरधिशेमहे। मा हिंसीस्तत्र नो भूमे सर्वस्य प्रतिशीवरि ३४
यत् ते भूमे विखनामि क्षिप्रं तदपि रोहतु। मा ते मर्म विमृग्वरि मा ते हृदयमर्पिपम् ३५
ग्रीष्मस्ते भूमे वर्षाणि शरद्धेमन्तः शिशिरो वसन्तः।
ऋतवस्ते विहिता हायनीरहोरात्रे पृथिवि नो दुहाताम् ३६
यापं सर्पं विजमाना विमृग्वरी यस्यामासन्नग्नयो ये अप्स्व१न्तः।
परा दस्यून् ददती देवपीयूनिन्द्रं वृणाना पृथिवी न वृत्रम्। शक्राय दध्रे वृषभाय वृष्णे ३७(५५)
यस्यां सदोहविर्धाने यूपो यस्यां निमीयते।
ब्रह्माणो यस्यामर्चन्त्यृग्भिः साम्ना यजुर्विदः। युज्यन्ते यस्यामृत्विजः सोममिन्द्राय पातवे ३८
यस्यां पूर्वे भूतकृत ऋषयो गा उदानृचुः। सप्त सत्रेण वेधसो यज्ञेन तपसा सह ३९
सा नो भूमिरा दिशतु यद्धनं कामयामहे। भगो अनुप्रयुङ्क्तामिन्द्र एतु पुरोगवः ४०
यस्यां गायन्ति नृत्यन्ति भूम्यां मर्त्या व्यैलबाः।
युध्यन्ते यस्यामाक्रन्दो यस्यां वदति दुन्दुभिः।
सा नो भूमिः प्र णुदतां सपत्नानसपत्नं मा पृथिवी कृणोतु ४१
यस्यामन्नं व्रीहियवौ यस्या इमाः पञ्च कृष्टयः। भूम्यै पर्जन्यपत्न्यै नमोऽस्तु वर्षमेदसे ४२ १८३०
यस्याः पुरो देवकृताः क्षेत्रे यस्या विकुर्वते।
प्रजापतिः पृथिवीं विश्वगर्भामाशामाशां रण्यां नः कृणोतु ४३
निधिं बिभ्रती बहुधा गुहा वसु मणिं हिरण्यं पृथिवी ददातु मे।
वसूनि नो वसुदा रासमाना देवी दधातु सुमनस्यमाना ४४
जनं बिभ्रती बहुधा विवाचसं नानाधर्माणं पृथिवी यथौकसम्।
सहस्रं धारा द्रविणस्य मे दुहां ध्रुवेव धेनुरनपस्फुरन्ती ४५
यस्ते सर्पो वृश्चिकस्तृष्टदंश्मा हेमन्तजब्धो भृमलो गुहा शये।
क्रिमिर्जिन्वत् पृथिवि यद्यदेजति प्रावृषि तन्नः सर्पन्मोप सृपद्यच्छिवं तेन नो मृड ४६
ये ते पन्थानो बहवो जनायना रथस्य वर्त्मानसश्च यातवे।
यैः संचरन्त्युभये भद्रपापास्तं पन्थानं जयेमानमित्रमतस्करं यच्छिवं तेन नो मृड ४७(६५)
मल्वं बिभ्रती गुरुभृद् भद्रपापस्य निधनं तितिक्षुः।
वराहेण पृथिवी संविदाना सूकराय वि जिहीते मृगाय ४८ १८३६

ये त आरण्याः पशवो मृगा वने हिताः सिंहा व्याघ्राः पुरुषादश्चरन्ति ।
उलं वृकं पृथिवि दुच्छुनामित ऋक्षीकां रक्षो अप बाधयास्मत् ४९ १८३७
ये गन्धर्वा अप्सरसो ये चारायाः किमीदिनः ।
पिशाचान्त्सर्वा रक्षांसि तानस्मद् भूमे यावय ५०
यां द्विपादः पक्षिणः संपतन्ति हंसाः सुपर्णाः शकुना वयांसि ।
यस्यां वातो मातरिश्वेयते रजांसि कृण्वंश्च्यावयंश्च वृक्षान् ।
वातस्य प्रवामुपवामनु वात्यर्चिः ५१
यस्यां कृष्णमरुणं च संहिते अहोरात्रे विहिते भूम्यामधि ।
वर्षेण भूमिः पृथिवी वृतावृता सा नो दधातु भद्रया प्रिये धामनिधामनि ५२(७०)
द्यौश्च म इदं पृथिवी चान्तरिक्षं च मे व्यचः ।
अग्निः सूर्य आपो मेधां विश्वे देवाश्च सं ददुः ५३
अहमस्मि सहमान उत्तरो नाम भूम्याम् । अभीषाडस्मि विश्वाषाडाशामाशां विषासहिः ५४
अदो यद् देवि प्रथमाना पुरस्ताद् देवैरुक्ता व्यसर्पो महित्वम् ।
आ त्वा सुभूतमविशत् तदानीमकल्पयथाः प्रदिशश्चतस्रः ५५
ये ग्रामा यदरण्यं याः सभा अधि भूम्याम् । ये संग्रामाः समितयस्तेषु चारु वदेम ते ५६
अश्व इव रजो दुधुवे वि तान् जनान् य आऽक्षियन् पृथिवीं यादजायत ।
मन्द्राग्रेत्वरी भुवनस्य गोपा वनस्पतीनां गृभिरोषधीनाम् ५७ १८४५
यद् वदामि मधुमत् तद् वदामि यदीक्षे तद्वनन्ति मा ।
त्विषीमानस्मि जूतिमानवान्यान् हन्मि दोधतः ५८
शन्तिवा सुरभिः स्योना कीलालोध्नी पयस्वती । भूमिरधि ब्रवीतु मे पृथिवी पयसा सह ५९
यामन्वैच्छद्धविषा विश्वकर्माऽन्तरर्णवे रजसि प्रविष्टाम् ।
भुजिष्यं पात्रं निहितं गुहा यदाविर्भोगे अभवन्मातृमद्भ्यः । ६०
त्वमस्यावपनी जनानामदितिः कामदुघा पप्रथाना ।
यत् त ऊनं तत् त आ पूरयाति प्रजापतिः प्रथमजा ऋतस्य ६१
उपस्थास्ते अनमीवा अयक्ष्मा अस्मभ्यं सन्तु पृथिवि प्रसूताः ।
दीर्घं न आयुः प्रतिबुध्यमाना वयं तुभ्यं बलिहृतः स्याम ६२ १८५०
भूमे मातर्नि धेहि मा भद्रया सुप्रतिष्ठितम् ।
संविदाना दिवा कवे श्रियां मा धेहि भूत्याम् ६३(८१)

४८ द्यावापृथिवी।

॥ १ ॥ (ऋ० १।२२।१३-१४)+

(१-२) मेधातिथिः काण्वः । गायत्री ।

मही द्यौः पृ॒थि॒वी च॑ न इ॒मं य॒ज्ञं मि॑मिक्षताम् । पि॒पृ॒तां नो॒ भरी॑मभिः १३

तयो॒रिद् घृ॒तव॒त् पयो॒ विप्रा॑ रिहन्ति धी॒तिभिः॑ । ग॒न्ध॒र्वस्य॑ ध्रु॒वे प॒दे १४

॥ २ ॥ (ऋ० १।११२।१ [आद्यपादस्य])

(३) कुत्स आङ्गिरसः । जगती ।

ईळे॒ द्यावा॑पृथि॒वी पू॒र्वचि॑त्तये १

॥ ३ ॥ (ऋ० १।१५९।१—५)

(४—१३) दीर्घतमा औचथ्यः । जगती ।

प्र द्यावा॑ य॒ज्ञैः पृ॑थि॒वी ऋ॑ता॒वृधा॑ म॒ही स्तु॑षे वि॒दथे॑षु प्रचे॑तसा ।
दे॒वेभि॒र्ये दे॒वपु॑त्रे सु॒दंस॑से॒—त्था धि॒या वार्या॑णि प्र॒भूष॑तः १ १८५५

उ॒त म॑न्ये पि॒तुर॒द्रुहो॒ मनो॑ मा॒तुर्महि॒ स्वत॑व॒स्तद्धवी॑मभिः ।
सु॒रेत॑सा पि॒तरा॑ भूम॑ चक्रतु॒—रु॒रु प्र॒जाया॑ अ॒मृतं॒ वरी॑मभिः २(५)

ते सू॒नवः॒ स्वप॑सः सु॒दंस॑सो म॒ही ज॑ज्ञुर्मा॒तरा॑ पू॒र्वचि॑त्तये ।
स्था॒तुश्च॑ स॒त्यं जग॑तश्च॒ धर्म॑णि पु॒त्रस्य॑ पाथः प॒दमद्व॑याविनः ३

ते मा॒यिनो॑ ममिरे सु॒प्रचे॑तसो जा॒मी सयो॑नी मिथु॒ना समो॑कसा ।
नव्यं॑नव्यं॒ तन्तु॒मा त॑न्वते दि॒वि स॑मु॒द्रे अ॒न्तः क॒वयः॑ सु॒दीत॑यः ४

तद् राधो॑ अ॒द्य स॑वि॒तुर्वरे॑ण्यं व॒यं दे॒वस्य॑ प्रस॒वे म॑नामहे ।
अ॒स्मभ्यं॑ द्यावापृथिवी सु॒चे॒तुना॑ र॒यिं ध॑त्तं॒ वसु॑मन्तं शत॒ग्विन॑म् ५

॥ ४ ॥ (ऋ० १।१६०।१-५)

ते हि द्यावा॑पृथि॒वी वि॒श्वश॑म्भुव ऋ॒ताव॑री॒ रज॑सो धार॒यत्क॑वी ।
सु॒जन्म॑नी धि॒षणे॑ अ॒न्तरी॑यते दे॒वो दे॒वी धर्म॑णा॒ सूर्यः॒ शुचिः॑ १ १८६०

उ॒रु॒व्यच॑सा म॒हिनी॑ अस॒श्चता॑ पि॒ता मा॒ता च॒ भुव॑नानि रक्षतः ।
सु॒धृष्ट॑मे वपु॒ष्ये॒३ न रोद॑सी पि॒ता यत् सी॑म॒भि रू॒पैरवा॑सयत् २(१०)

+ वा. य. ८,३२; १३,३२ ।

*

स वह्निः पुत्रः पित्रोः पवित्रवान् पुनाति धीरो भुवनानि मायया ।
धेनुं च पृश्निं वृषभं सुरेतसं विश्वाहा शुक्रं पयो अस्य दुक्षत ३ १८६२
अयं देवानामपसामपस्तमो यो जजान रोदसी विश्वशंभुवा ।
वि यो ममे रजसी सुक्रतूयया ऽजरेभिः स्कम्भनेभिः समानृचे ४
ते नो गृणाने महिनी महि श्रवः क्षत्रं द्यावापृथिवी धासथो बृहत् ।
येनाभि कृष्टीस्ततनाम विश्वहा पनाय्यमोजो अस्मे समिन्वतम् ५

॥ ५ ॥ (ऋ० १।१८५।१-११)
(१४-२४) अगस्त्यो मैत्रावरुणिः । त्रिष्टुप् ।

कतरा पूर्वा कतराऽपराऽयोः कथा जाते कवयः को वि वेद ।
विश्वं त्मना बिभृतो यद्ध नाम वि वर्तेते अहनी चक्रियेव १
भूरिं द्वे अचरन्ती चरन्तं पद्वन्तं गर्भमपदी दधाते ।
नित्यं न सूनुं पित्रोरुपस्थे द्यावा रक्षतं पृथिवी नो अभ्वात् २(१५)
अनेहो दात्रमदितेरनर्वं हुवे स्वर्वदवधं नमस्वत् ।
तद् रोदसी जनयतं जरित्रे द्यावा रक्षतं पृथिवी नो अभ्वात् ३
अतप्यमाने अवसाऽवन्ती अनु ष्याम रोदसी देवपुत्रे ।
उभे देवानामुभयेभिरह्नां द्यावा रक्षतं पृथिवी नो अभ्वात् ४
संगच्छमाने युवती समन्ते स्वसारा जामी पित्रोरुपस्थे ।
अभिजिघ्रन्ती भुवनस्य नाभिं द्यावा रक्षतं पृथिवी नो अभ्वात् ५
उर्वी सद्मनी बृहती ऋतेन हुवे देवानामवसा जनित्री ।
दधाते ये अमृतं सुप्रतीके द्यावा रक्षतं पृथिवी नो अभ्वात् ६ १८७०
उर्वी पृथ्वी बहुले दूरेअन्ते उप ब्रुवे नमसा यज्ञे अस्मिन् ।
दधाते ये सुभगे सुप्रतूर्ती द्यावा रक्षतं पृथिवी नो अभ्वात् ७(२०)
देवान् वा यच्चकृमा कच्चिदागः सखायं वा सदमिज्जास्पतिं वा ।
इयं धीर्भूया अवयानमेषां द्यावा रक्षतं पृथिवी नो अभ्वात् ८
उभा शंसा नर्या मामविष्टा मुभे मामूती अवसा सचेताम् ।
भूरि चिदर्यः सुदास्तरायेषा मदन्त इषयेम देवाः ९
ऋतं दिवे तदवोचं पृथिव्या अभिश्रावाय प्रथमं सुमेधाः ।
पातामवद्याद् दुरितादभीके पिता माता च रक्षतामवोभिः १०

इ॒दं द्या॑वापृथिवी स॒त्यम॑स्तु॒ पित॒र्मात॒र्यदि॒होप॑ब्रु॒वे वा॑म् ।
भू॒तं दे॒वाना॑मव॒मे अवो॑भि॒र्वि॒द्यामे॒षं वृ॒जनं॑ जी॒रदा॑नुम् ११ १८७५

॥ ६ ॥ (ऋ० २।३२।१)

(२५-२८) गृत्समद (आङ्गिरसः शौनहोत्रः पश्चाद्) भार्गवः शौनकः । जगती ।

अ॒स्य मे॑ द्यावापृथिवी ऋताय॒तो भू॒तम॑वि॒त्री वच॑सः॒ सिषा॑सतः ।
ययो॒रायुः॑ प्रत॒रं ते इ॒दं पु॒र उप॑स्तुते वसू॒युर्वां॑ म॒हो द॑धे १(२५)

॥ ७ ॥ (ऋ० २।४१।१९-२१)
(हविर्धाने वा) गायत्री ।

प्रेतां॑ य॒ज्ञस्य॑ श॒म्भुवा॑ यु॒वामिदा वृ॑णीमहे । अ॒ग्निं च॑ हव्य॒वाह॑नम् १९
द्यावा॑ नः पृथि॒वी इ॒मं सि॒ध्रम॒द्य दि॑वि॒स्पृश॑म् । य॒ज्ञं दे॒वेषु॑ यच्छताम् २०
आ वा॑मु॒पस्थ॑मद्रुहा दे॒वाः सी॑दन्तु य॒ज्ञिया॑ः । इ॒हाद्य सोम॑पीतये २१

॥ ८ ॥ (ऋ० ४।३८।१)
(२९-३६) वामदेवो गौतमः । त्रिष्टुप् ।

उ॒तो हि वां॑ दा॒त्रा सन्ति॒ पूर्वा॒ या पू॒रुभ्य॑स्त्र॒सद॑स्युर्नितो॒शे ।
क्षे॒त्रा॒सां द॑दथुरुर्वरा॒सां घ॒नं दस्यु॑भ्यो अ॒भिभू॑तिमु॒ग्रम् १ १८८०

॥ ९ ॥ (ऋ० ४।५६।१-७) त्रिष्टुप्, ५-७ गायत्री ।

म॒ही द्यावा॑पृथि॒वी इ॒ह ज्येष्ठे॑ रु॒चा भ॑वतां शु॒चय॑द्भिर॒र्कैः ।
यत् सीं॒ वरि॑ष्ठे बृह॒ती वि॑मि॒न्वन् रु॒वद्धो॒क्षा प॑प्रथा॒नेभि॒रेवैः॑ १(३०)
दे॒वी दे॒वेभि॑र्यज॒ते यज॑त्रै॒रमि॑नती तस्थतुरु॒क्षमा॑णे ।
ऋ॒ताव॑री अ॒द्रुहा॑ दे॒वपु॑त्रे य॒ज्ञस्य॑ ने॒त्री शु॒चय॑द्भिर॒र्कैः २
स इत् स्व॒पा भुव॑नेष्वास॒ य इ॒मे द्यावा॑पृथि॒वी ज॒जान॑ ।
उ॒र्वी ग॑भी॒रे रज॑सी सु॒मेके॑ अवं॒शे धीरः॒ शच्या॒ समै॑रत् ३
नू रोद॑सी बृ॒हद्भि॑र्नो॒ वरू॑थैः॒ पत्नी॑वद्भिरि॒षय॑न्ती स॒जोषाः॑ ।
उ॒रू॒ची विश्वे॑ यज॒ते नि पा॑तं धि॒या स्या॑म र॒थ्यः॑ सदा॒साः ४
प्र वां॒ महि॒ द्यवी॑ अ॒भ्यु॒प॑स्तुतिं भरामहे । शु॒ची उप॒ प्रश॑स्तये ५
पु॒नाने॑ त॒न्वा॑ मि॒थः स्वे॑न॒ दक्षे॑ण राजथः । ऊ॒ह्याथे॑ स॒नादृ॒तम् ६
म॒ही मि॒त्रस्य॑ साधथ॒स्तर॑न्ती॒ पिप्र॑ती ऋ॒तम् । परि॑ य॒ज्ञं नि षे॑दथुः ७

॥ १० ॥ (ऋ० ६।४८।२२)

(३७) शंयुर्बार्हस्पत्यः (तृणपाणिः) । द्यावाभूमी वा पृश्निर्वा । अनुष्टुप् ।

स॒कृद्ध॒ द्यौर॑जायत स॒कृद्भूमि॑रजायत । पृश्न्या॑ दु॒ग्धं स॒कृत् पय॒स्तद॒न्यो नानु॑ जायते २२ १८८८

॥ ११ ॥ (ऋ० ६।७०।१-६)

(३८-४३) भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । जगती ।

घृतवती भुवनानामभिश्रियो॒र्वी पृथ्वी मधुदुघे सुपेशसा ।
द्यावापृथिवी वरुणस्य धर्मणा विष्कभिते अजरे भूरिरेतसा ॥ *१

असश्चन्ती भूरिधारे पयस्वती घृतं दुहाते सुकृते शुचिव्रते ।
राजन्ती अस्य भुवनस्य रोदसी अस्मे रेतः सिञ्चतं यन्मनुर्हितम् ॥ २ १८९०

यो वामृजवे क्रमणाय रोदसी मर्तो ददाश धिषणे स साधति ।
प्र प्रजाभिर्जायते धर्मणस्परि युवोः सिक्ता विषुरूपाणि सव्रता ॥ ३(४०)

घृतेन द्यावापृथिवी अभीवृते घृतश्रिया घृतपृचा घृतावृधा ।
उर्वी पृथ्वी होतृवूर्ये पुरोहिते ते इद्विप्रा ईळते सुम्नमिष्टये ॥ ४

मधु नो द्यावापृथिवी मिमिक्षतां मधुश्चुता मधुदुघे मधुव्रते ।
दधाने यज्ञं द्रविणं च देवता महि श्रवो वाजमस्मे सुवीर्यम् ॥ ५

ऊर्जं नो द्यौश्च पृथिवी च पिन्वतां पिता माता विश्वविदा सुदंससा ।
संरराणे रोदसी विश्वशम्भुवा सनिं वाजं रयिमस्मे समिन्वताम् ॥ ६

॥ १२ ॥ (ऋ० ७।५३।१-३)

(४४-४६) मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । त्रिष्टुप् ।

प्र द्यावा यज्ञैः पृथिवी नमोभिः सबाध ईळे बृहती यजत्रे ।
ते चिद्धि पूर्वे कवयो गृणन्तः पुरो मही दधिरे देवपुत्रे ॥ १ १८९५

प्र पूर्वजे पितरा नव्यसीभि॒र्गीर्भिः कृणुध्वं सदने ऋतस्य ।
आ नो द्यावापृथिवी दैव्येन जनेन यातं महि वां वरूथम् ॥ २(४५)

उतो हि वां रत्नधेयानि सन्ति पुरूणि द्यावापृथिवी सुदासे ।
अस्मे धत्तं यदसदस्कृधोयु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥ ३

॥ १३ ॥ (ऋ० १०।५९।८-१०)

(४७-४९) बन्धुः श्रुतबन्धुर्विप्रबन्धुर्गौपायनाः । [१० पूर्वार्धस्य इंद्र-द्यावापृथिवी] । ८ पंक्तिः, ९ महापंक्तिः, १० पंक्त्युत्तरा ।

शं रोदसी सुबन्धवे यह्वी ऋतस्य मातरा ।
भरतामप यद्रपो द्यौः पृथिवि क्षमा रपो मो षु ते किं चनाममत् ॥ ८

---

* वा. य. ३४,४५, सा. ३७८ ।

अवं द्रके अवं त्रिका दिवश्चरन्ति भेषजा । क्षमा चरिष्णवेकंकं भरतामप० ९
समिन्द्रेरय गामनड्वाहं य आऽवहदुशीनराण्या अनः । भरतामप० १० १९००
॥ १४ ॥ [५०-५९] (वा० य० २।१०)

उपहूता पृथिवी मातोप मां पृथिवी माता ह्वयताम् १०(५०)
॥ १५ ॥ (वा० य० ५।२८)

घृतेन द्यावापृथिवी पूर्येथाम् २८
॥ १६ ॥ (वा० य० ६।१६,२१,३५)

घृतेन द्यावापृथिवी प्रोर्णुवाथाम् १६ द्यावापृथिवी गच्छ स्वाहा २१
मा भेर्मा संविक्था ऊर्जं धत्स्व धिषणे वीड्वी सती वीडयेथामूर्जं दधाथाम् ।
पाप्मा हतो न सोमः ३५
॥ १७ ॥ (वा० य० ७।२१)

द्यावापृथिवीभ्यां पवते २१ १९०५
॥ १८ ॥ (वा० य० २२।२८)×

द्यावापृथिवीभ्याᳪ स्वाहा २८
॥ १९ ॥ (वा० य० ३७।३)

देवीं द्यावापृथिवी मखस्यं वामद्य शिरो राध्यासं देवयजने पृथिव्याः ।
मखायं त्वा मखस्यं त्वा शीर्ष्णे ३
॥ २० ॥ (वा० य० ३८।६,१४)

द्यावापृथिवीभ्यां त्वा परि गृह्णामि ६ द्यावापृथिवीभ्यां पिन्वस्व १४
॥ २१ ॥ (अथर्व० १।३२।१-४)
(६०-६३) ब्रह्मा । अनुष्टुप्; २ ककुम्मती अनुष्टुप् ।

इदं जनासो विदथं महद्ब्रह्म वदिष्यति । न तत् पृथिव्यां नो दिवि येनं प्राणन्ति वीरुधः १(६०)
अन्तरिक्ष आसां स्थामं श्रान्तसदामिव । आस्थानमस्य भूतस्यं विदुष्टद्वेधसो न वा २
यद्रोदसी रेजमाने भूमिश्च निरतक्षतम् । आर्द्रं तदद्य सर्वदा समुद्रस्येव स्रोत्याः ३
विश्वमन्यामभीवार तदन्यस्यामधिश्रितम् । दिवे च विश्ववेदसे पृथिव्यै चाकरं नमः ४
॥ २२ ॥ (अथर्व० ५।२४।३)
(६४-६५) अथर्वा । चतुष्पदाऽति शाकरी ।

द्यावापृथिवी दातॄणामधिपत्नी ते मावताम् ।
आस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन् कर्मण्यस्यां पुरोधायामस्यां प्रतिष्ठायामस्यां
चित्त्यामस्यामाकूत्यामस्यामाशिष्यस्यां देवहूत्यां स्वाहा ३ १९१५

× वा. य. ३९,१३ ।

॥ २३ ॥ (अथर्व० १९।१४।१) त्रिष्टुप् ।

इदमुच्छ्रेयोऽवसानमागां शिवे मे द्यावापृथिवी अभूताम् ।
असपत्नाः प्रदिशो मे भवन्तु न वै त्वा द्विष्मो अभयं नो अस्तु १(६५)

॥ २४ ॥ (सा० ६२२)
(६६) वामदेवो गौतमः । त्रिष्टुप् ।

मन्ये वां द्यावापृथिवी सुभोजसौ ये अप्रथेथाममितमभि योजनम् ।
द्यावापृथिवी भवतं स्योने ते नो मुञ्चतमंहसः ८

द्यावापृथिवी-सहचारी-देवगणः ।

(१) द्युभूम्याश्विनः ।

॥ २५ ॥ (ऋ० १०।१३२।१)
(६७) शकपूतो नार्मेधः । न्यङ्कुसारिणी ।

ईजानमिद् द्यौर्गूर्तावसु—रीजानं भूमिरभि प्रभूषणि ।
ईजानं देवावश्विना—वभि सुम्नैरवर्धताम् १ १९१८

---

४९ ऋभवः ।

॥ १ ॥ (ऋ० १।२०।१-८)
(१-८) मेधातिथिः काण्वः । गायत्री ।

अयं देवाय जन्मने स्तोमो विप्रेभिरासया । अकारि रत्नधातमः १
य इन्द्राय वचोयुजा ततक्षुर्मनसा हरी । शमीभिर्यज्ञमाशत २
तक्षन् नासत्याभ्यां परिज्मानं सुखं रथम् । तक्षन् धेनुं सबर्दुघाम् ३
युवाना पितरा पुनः सत्यमन्त्रा ऋजूयवः । ऋभवो विष्ट्यक्रत ४
सं वो मदासो अग्मते—न्द्रेण च मरुत्वता । आदित्येभिश्च राजभिः ५(५)
उत त्यं चमसं नवं त्वष्टुर्देवस्य निष्कृतम् । अकर्त चतुरः पुनः ६
ते नो रत्नानि धत्तन त्रिरा साप्तानि सुन्वते । एकमेकं सुशस्तिभिः ७ १९२५
अधारयन्त वह्नयो ऽभजन्त सुकृत्यया । भागं देवेषु यज्ञियम् ८

॥ १ ॥ (ऋ० १।११०।१-९)
(१-११) कुत्स आङ्गिरसः । जगती; ५, ९ त्रिष्टुप् ।

ततं मे अपस्तदु तायते पुनः स्वादिष्ठा धीतिरुचथाय शस्यते ।
अयं समुद्र इह विश्वदेव्यः स्वाहाकृतस्य समु तृप्णुत ऋभवः १
आभोगयं प्र यदिच्छन्त ऐतना—पाकाः प्राञ्चो मम के चिदापयः ।
सौधन्वनासश्चरितस्य भूमना ऽगच्छत सवितुर्दाशुषो गृहम् २(१०)
तत् सविता वोऽमृतत्वमाऽसुव—दगोह्यं यच्छ्रवयन्त ऐतन ।
त्यं चिच्चमसमसुरस्य भक्षण—मेकं सन्तमकृणुता चतुर्वयम् ३
विष्ट्वी शमी तरणित्वेन वाघतो मर्तासः सन्तो अमृतत्वमानशुः ।
सौधन्वना ऋभवः सूरचक्षसः संवत्सरे समपृच्यन्त धीतिभिः ४ ११३०
क्षेत्रमिव वि ममुस्तेजनेनँ एकं पात्रमृभवो जेहमानम् ।
उपस्तुता उपमं नाधमाना अमर्त्येषु श्रव इच्छमानाः ५
आ मनीषामन्तरिक्षस्य नृभ्यः स्रुचेव घृतं जुहवाम विद्मना ।
तरणित्वा ये पितुरस्य सश्चिर ऋभवो वाजमरुहन् दिवो रजः ६
ऋभुर्न इन्द्रः शवसा नवीया—नृभुर्वाजेभिर्वसुभिर्वसुर्ददिः ।
युष्माकं देवा अवसाऽहनि प्रियेऽ ऽभि तिष्ठेम पृत्सुतीरसुन्वताम् ७(१५)
निश्चर्मण ऋभवो गामपिंशत सं वत्सेनासृजता मातरं पुनः ।
सौधन्वनासः स्वपस्यया नरो जिव्री युवाना पितराऽकृणोतन ८
वाजेभिर्नो वाजसातावविड्ढ्यृ—भुमाँ इन्द्र चित्रमा दर्षि राधः ।
तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्ता—मदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ९ ११३५

॥ २ ॥ (ऋ० १।१११।१-५) जगती; ५ त्रिष्टुप् ।

तक्षन् रथं सुवृतं विद्मनाऽपस—स्तक्षन् हरी इन्द्रवाहा वृषण्वसू ।
तक्षन् पितृभ्यामृभवो युवद्वय—स्तक्षन् वत्साय मातरं सचाभुवम् १
आ नो यज्ञाय तक्षत ऋभुमद्वयः क्रत्वे दक्षाय सुप्रजावतीमिषम् ।
यथा क्षयाम सर्ववीरया विशा तन्नः शर्धाय धासथा स्विन्द्रियम् २
आ तक्षत सातिमस्मभ्यमृभवः सातिं रथाय सातिमर्वते नरः ।
सातिं नो जैत्रीं सं महेत विश्वहा जामिमजामिं पृतनासु सक्षणिम् ३(२०)

ऋभुक्षणमिन्द्रमा हुव ऊतयं ऋभून् वाजान् मरुतः सोमपीतये ।
उभा मित्रावरुणा नूनमश्विना ते नो हिन्वन्तु सातये धिये जिषे ४
ऋभुर्भराय सं शिशातु सातिं समर्यजिद्वाजो अस्माँ अविष्टु ।
तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्ता॒मदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ५ १९४०

॥४॥ (ऋ० १।१६१।१-१४)

(२३-३६) दीर्घतमा औचथ्यः। १-१३ जगती; १४ त्रिष्टुप्।

किमु श्रेष्ठः किं यविष्ठो न आऽजंगन् किमीयते दूत्यं१ कद्यदूचिम ।
न निन्दिम चमसं यो महाकुलो ऽग्ने भ्रातर्द्रुण इद्भूतिमूदिम १
एकं चमसं चतुरः कृणोतन तद्वो देवा अब्रुवन् तद्व आऽगमम् ।
सौधन्वना यद्येवा करिष्यथ साकं देवैर्यज्ञियासो भविष्यथ २
अग्निं दूतं प्रति यदब्रवीतना॒श्वः कर्त्वो रथ उतेह कर्त्वः ।
धेनुः कर्त्वा युवशा कर्त्वा द्वा तानि भ्रातरनु वः कृत्व्येमसि ३(२५)
चकृवांस ऋभवस्तदपृच्छत क्वेदभूद्यः स्य दूतो न आऽजंगन् ।
यदाऽवाख्यच्चमसाञ्चतुरः कृता॒नादित् त्वष्टा ग्नास्वन्तर्न्यानजे ४
हनामैनाँ इति त्वष्टा यदब्रवी॒च्चमसं ये देवपानमनिन्दिषुः ।
अन्या नामानि कृण्वते सुते सचाँ अन्यैरेनान् कन्या३ नामभिः स्परत् ५ १९४५
इन्द्रो हरी युयुजे अश्विना रथं बृहस्पतिर्विश्वरूपामुपाजत ।
ऋभुर्विभ्वा वाजो देवाँ अगच्छत स्वपसो यज्ञियं भागमैतन ६
निश्चर्मणो गामरिणीत धीतिभि॒र्या जरन्ता युवशा ताऽकृणोतन
सौधन्वना अश्वादश्वमतक्षत युक्त्वा रथमुप देवाँ अयातन ७
इदमुदकं पिबतेत्यब्रवीतने॒दं वा घा पिबता मुञ्जनेजनम् ।
सौधन्वना यदि तन्नेव हर्यथ तृतीये घा सवने मादयाध्वै ८(३०)
आपो भूयिष्ठा इत्येको अब्रवी॒दग्निर्भूयिष्ठ इत्यन्यो अब्रवीत् ।
वधर्यन्तीं बहुभ्यः प्रैको अब्रवी॒दृता वदन्तश्चमसाँ अपिंशत ९
श्रोणामेक उदकं गामवाजति मांसमेकः पिंशति सूनयाऽऽभृतम् ।
आ निम्रुचः शकृदेको अपाभरत् किं स्वित् पुत्रेभ्यः पितरा उपावतुः १० १९५०
उद्वत्स्वस्मा अकृणोतना तृणं निवत्स्वपः स्वपस्यया नरः ।
अगोह्यस्य यदसस्तना गृहे तदद्येदमृभवो नानु गच्छथ ११

संमील्य यद्भुवना पर्यसर्पत क्व स्वित् तात्या पितरा व आसतुः।
अशपत यः करस्नं व आददे यः प्राब्रवीत् प्रो तस्मा अब्रवीतन १२

सुषुप्वांस ऋभवस्तदपृच्छता-गोह्य क इदं नो अबूबुधत्।
श्वानं बस्तो बोधयितारमब्रवीत् संवत्सर इदमद्या व्यख्यत १३(३५)

दिवा यान्ति मरुतो भूम्याऽग्नि-रयं वातो अन्तरिक्षेण याति।
अद्भिर्याति वरुणः समुद्रै-र्युष्माँ इच्छन्तः शवसो नपातः १४

॥ ५ ॥ (ऋ० ३।६०।१-४)+

(३७-४०) विश्वामित्रो गाथिनः। जगती।

इहेह वो मनसा बन्धुता नर उशिजो जग्मुरभि तानि वेदसा।
याभिर्मायाभिः प्रतिजूतिवर्पसः सौधन्वना यज्ञियं भागमानश १ १९५५

याभिः शचीभिश्चमसाँ अपिंशत यया धिया गामरिणीत चर्मणः।
येन हरी मनसा निरतक्षत तेन देवत्वमृभवः समानश २

इन्द्रस्य सख्यमृभवः समानशु-र्मनोर्नपातो अपसो दधन्विरे।
सौधन्वनासो अमृतत्वमेरिरे विष्ट्वी शमीभिः सुकृतः सुकृत्यया ३

इन्द्रेण याथ सरथं सुते सचाँ अथो वशानां भवथा सह श्रिया।
न वः प्रतिमै सुकृतानि वाघतः सौधन्वना ऋभवो वीर्याणि च ४(४०)

॥ ६ ॥ (ऋ० ४।३३।१-११)

(४१-८८) वामदेवो गौतमः। त्रिष्टुप्।

प्र ऋभुभ्यो दूतमिव वाचमिष्य उपस्तिरे श्वैतरीं धेनुमीळे।
ये वातजूतास्तरणिभिरेवैः परि द्यां सद्यो अपसो बभूवुः १

यदारमक्रन्नृभवः पितृभ्यां परिविष्टी वेषणा दंसनाभिः।
आदिद्देवानामुप सख्यमायन् धीरासः पुष्टिमवहन् मनायै २ १९६०

पुनर्ये चक्रुः पितरा युवाना सना यूपेव जरणा शयाना।
ते वाजो विभ्वाँ ऋभुरिन्द्रवन्तो मधुप्सरसो नोऽवन्तु यज्ञम् ३

यत् संवत्समृभवो गामरक्षन् यत् संवत्समृभवो मा अपिंशन्।
यत् संवत्समभरन् भासो अस्या-स्ताभिः शमीभिरमृतत्वमाशुः ४

ज्येष्ठ आह चमसा द्वा करेति कनीयान् त्रीन् कृणवामेत्याह।
कनिष्ठ आह चतुरस्करेति त्वष्ट ऋभवस्तत् पनयद्वचो वः ५(४५)

+ ऋ. ३,६०,५-७ = दै० [इन्द्रः] ३३४१-४३।

*

सत्यमूचुर्नर एवा हि चक्रुरनु स्वधामृभवो जग्मुरेताम् ।
विभ्राजमानांश्चमसाँ अहेवावेनत् त्वष्टा चतुरो ददृश्वान् ६
द्वादश द्यून् यदगोह्यस्यातिथ्ये रणन्नृभवः ससन्तः ।
सुक्षेत्राकृण्वन्ननयन्त सिन्धून् धन्वाऽतिष्ठन्नोषधीर्निम्नमापः ७ १९६५
रथं ये चक्रुः सुवृतं नरेष्ठां ये धेनुं विश्वजुवं विश्वरूपाम् ।
त आ तक्षन्त्वृभवो रयिं नः स्ववसः स्वपसः सुहस्ताः ८
अपो ह्येषामजुषन्त देवा अभि क्रत्वा मनसा दीध्यानाः ।
वाजो देवानामभवत् सुकर्मेन्द्रस्य ऋभुक्षा वरुणस्य विभ्वा ९
ये हरी मेधयोक्था मदन्त इन्द्राय चक्रुः सुयुजा ये अश्वा ।
ते रायस्पोषं द्रविणान्यस्मे धत्त ऋभवः क्षेमयन्तो न मित्रम् १०(५०)
इदाह्नः पीतिमुत वो मदं धुर्न ऋते श्रान्तस्य सख्याय देवाः ।
ते नूनमस्मे ऋभवो वसूनि तृतीये अस्मिन्त्सवने दधात ११

॥ ७ ॥ (ऋ० ४।३४।१-११)

ऋभुर्विभ्वा वाज इन्द्रो नो अच्छेमं यज्ञं रत्नधेयोप यात ।
इदा हि वो धिषणा देव्यह्नामधात् पीतिं सं मदा अग्मता वः १ १९७०
विदानासो जन्मनो वाजरत्ना उत ऋतुभिर्ऋभवो मादयध्वम् ।
सं वो मदा अग्मत सं पुरंधिः सुवीरामस्मे रयिमेरयध्वम् २
अयं वो यज्ञ ऋभवोऽकारि यमा मनुष्वत् प्रदिवो दधिध्वे ।
प्र वोऽच्छा जुजुषाणासो अस्थुरभूत विश्वे अग्रियोत वाजाः ३
अभूदु वो विधते रत्नधेयमिदा नरो दाशुषे मर्त्याय ।
पिबत वाजा ऋभवो ददे वो महि तृतीयं सवनं मदाय ४(५५)
आ वाजा यातोप न ऋभुक्षा महो नरो द्रविणसो गृणानाः ।
आ वः पीतयोऽभिपित्वे अह्नामिमा अस्तं नवस्व इव ग्मन् ५
आ नपातः शवसो यातनोपेमं यज्ञं नमसा हूयमानाः ।
सजोषसः सूरयो यस्य च स्थ मध्वः पात रत्नधा इन्द्रवन्तः ६ १९७५
सजोषा इन्द्र वरुणेन सोमं सजोषाः पाहि गिर्वणो मरुद्भिः ।
अग्रेपाभिर्ऋतुपाभिः सजोषा ग्नास्पत्नीभी रत्नधाभिः सजोषाः ७

सजोषस आदित्यैर्मादयध्वं सजोषस ऋभवः पर्वतेभिः ।
सजोषसो दैव्येना सवित्रा सजोषसः सिन्धुभी रत्नधेभिः ८
ये अश्विना ये पितरा य ऊती धेनुं ततक्षुर्ऋभवो ये अश्वा ।
ये अंसत्रा य ऋधग्रोदसी ये विभ्वो नरः स्वपत्यानि चक्रुः ९(६०)
ये गोमन्तं वाजवन्तं सुवीरं रयिं धत्थ वसुमन्तं पुरुक्षुम् ।
ते अग्रेपा ऋभवो मन्दसाना अस्मे धत्त ये च रातिं गृणन्ति १०
नापाभूत न वोऽतीतृषामा–निःशस्ता ऋभवो यज्ञे अस्मिन् ।
समिन्द्रेण मदथ सं मरुद्भिः सं राजभी रत्नधेयाय देवाः ११ १९८०

॥ ८ ॥ (ऋ० ४।३५।१-९)

इहोप यात शवसो नपातः सौधन्वना ऋभवो माऽप भूत ।
अस्मिन् हि वः सवने रत्नधेयं गमन्त्विन्द्रमनु वो मदासः १
आऽगन्नृभूणामिह रत्नधेय–मभूत् सोमस्य सुषुतस्य पीतिः ।
सुकृत्यया यत् स्वपस्यया चँ एकं विचक्र चमसं चतुर्धा २
व्यकृणोत चमसं चतुर्धा सखे वि शिक्षेत्यब्रवीत ।
अथैत वाजा अमृतस्य पन्थां गणं देवानामृभवः सुहस्ताः ३(६५)
किंमयः स्विच्चमस एष आस यं काव्येन चतुरो विचक्र ।
अथा सुनुध्वं सवनं मदाय पात ऋभवो मधुनः सोम्यस्य ४
शच्याकर्त पितरा युवाना शच्याकर्त चमसं देवपानम् ।
शच्या हरी धनुतरावतष्टे–न्द्रवाहावृभवो वाजरत्नाः ५ १९८५
यो वः सुनोत्यभिपित्वे अह्नां तीव्रं वाजासः सवनं मदाय ।
तस्मै रयिमृभवः सर्ववीर–मा तक्षत वृषणो मन्दसानाः ६
प्रातः सुतमपिबो हर्यश्व माध्यंदिनं सवनं केवलं ते ।
समृभुभिः पिबस्व रत्नधेभिः सखीँर्याँ इन्द्र चकृषे सुकृत्या ७
ये देवासो अभवता सुकृत्या श्येना इवेदधि दिवि निषेद ।
ते रत्नं धात शवसो नपातः सौधन्वना अभवतामृतासः ८(७०)
यत् तृतीयं सवनं रत्नधेय–मकृणुध्वं स्वपस्या सुहस्ताः ।
तदृभवः परिषिक्तं व एतत् सं मदेभिरिन्द्रियेभिः पिबध्वम् ९

॥ ९ ॥ (ऋ० ४।३६।१—९) जगती; ९ त्रिष्टुप् ।

अनश्वो जातो अनभीशुरुक्थ्यो३ रथस्त्रिचक्रः परि वर्तते रजः ।
महत् तद्वो देव्यस्य प्रवाचनं द्यामृभवः पृथिवीं यच्च पुष्यथ १ १९९०
रथं ये चक्रुः सुवृतं सुचेतसो ऽविह्वरन्तं मनसस्परि ध्यया ।
ताँ ऊ न्व१स्य सवनस्य पीतय आ वो वाजा ऋभवो वेदयामसि २
तद्वो वाजा ऋभवः सुप्रवाचनं देवेषु विभ्वो अभवन्महित्वनम् ।
जिव्री यत् सन्ता पितरा सनाजुरा पुनर्युवाना चरथाय तक्षथ ३
एकं वि चक्र चमसं चतुर्वयं निश्चर्मणो गामरिणीत धीतिभिः ।
अथा देवेष्वमृतत्वमानश श्रुष्टी वाजा ऋभवस्तद्व उक्थ्यम् ४(७५)
ऋभुतो रयिः प्रथमश्रवस्तमो वाजश्रुतासो यमजीजनन् नरः ।
विभ्वतष्टो विदथेषु प्रवाच्यो यं देवासोऽवथा स विचर्षणिः ५
स वाज्यर्वा स ऋषिर्वचस्यया स शूरो अस्ता पृतनासु दुष्टरः ।
स रायस्पोषं स सुवीर्यं दधे यं वाजो विभ्वाँ ऋभवो यमाविषुः ६
श्रेष्ठं वः पेशो अधि धायि दर्शतं स्तोमो वाजा ऋभवस्तं जुजुष्टन ।
धीरासो हि ष्ठा कवयो विपश्चित—स्तान् व एना ब्रह्मणा वेदयामसि ७
यूयमस्मभ्यं धिषणाभ्यस्परि विद्वांसो विश्वा नर्याणि भोजना ।
द्युमन्तं वाजं वृषशुष्ममुत्तम—मा नो रयिमृभवस्तक्षता वयः ८
इह प्रजामिह रयिं रराणा इह श्रवो वीरवत् तक्षता नः
येन वयं चितयेमात्यन्यान् तं वाजं चित्रमृभवो ददा नः ९(८०)

॥ १० ॥ (ऋ० ४।३७।१-८) त्रिष्टुप् ; ५-८ अनुष्टुप् ।

उप नो वाजा अध्वरमृभुक्षा देवा यात पथिभिर्देवयानैः ।
यथा यज्ञं मनुषो विक्ष्वा३सु दधिध्वे रण्वाः सुदिनेष्वह्नाम् १
ते वो हृदे मनसे सन्तु यज्ञा जुष्टासो अद्य घृतनिर्णिजो गुः ।
प्र वः सुतासो हरयन्त पूर्णाः क्रत्वे दक्षाय हर्षयन्त पीताः २ २०००
त्र्युदायं देवहितं यथा वः स्तोमो वाजा ऋभुक्षणो ददे वः ।
जुह्वे मनुष्वदुपरासु विक्षु युष्मे सचा बृहद्दिवेषु सोमम् ३
पीवोअश्वाः शुचद्रथा हि भूता—यःशिप्रा वाजिनः सुनिष्काः ।
इन्द्रस्य सूनो शवसो नपातो ऽनु वश्चेत्यग्रियं मदाय ४

ऋभुमृभुक्षणो रयिं वाजे वाजिन्तमं युजम्। इन्द्रस्वन्तं हवामहे सदासातममश्विनम् ५(८५)
सेदृभवो यमवथ यूयमिन्द्रश्च मर्त्यम्। स धीभिरस्तु सनिता मेधसाता सो अर्वता ६
वि नो वाजा ऋभुक्षणः पथश्चितन यष्टवे।
अस्मभ्यं सूरयः स्तुता विश्वा आशास्तरीषणि ७ २००५
तं नो वाजा ऋभुक्षण इन्द्र नासत्या रयिम्।
समश्वं चर्षणिभ्य आ पुरु शस्त मघत्तये ८

॥ ११ ॥ (ऋ० ७।४८।१-४)
(८९-९२) मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः। [४ विश्वे देवा वा]। त्रिष्टुप्।

ऋभुक्षणो वाजा मादयध्वमस्मे नरो मघवानः सुतस्य।
आ वोऽर्वाचः क्रतवो न यातां विभ्वो रथं नर्यं वर्तयन्तु १
ऋभुर्ऋभुभिरभि वः स्याम विभ्वो विभुभिः शवसा शवांसि।
वाजो अस्माँ अवतु वाजसाताविन्द्रेण युजा तरुषेम वृत्रम् २(९०)
ते चिद्धि पूर्वीरभि सन्ति शासा विश्वाँ अर्य उपरताति वन्वन्।
इन्द्रो विभ्वाँ ऋभुक्षा वाजो अर्यः शत्रोर्मिथत्या कृणवन् वि नृम्णम् ३
नू देवासो वरिवः कर्तना नो भूत नो विश्वेऽवसे सजोषाः।
समस्मे इषं वसवो ददीरन् यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ४ २०१०

॥ १२ ॥ (ऋ० १०।१७६।१)
(९३) सूनुरार्भवः। अनुष्टुप्।

प्र सूनव ऋभूणां बृहन्नवन्त वृजना। क्षामा ये विश्वधायसो ऽश्नन् धेनुं न मातरम् १

॥ १३ ॥ [९४-९७] (वा० य० १४।२६)

ऋभूणां भागोऽसि २६

॥ १४ ॥ (वा० य० २१।२६)

शारदेन ऋतुना देवा एकविंशऋभवं स्तुताः।
वैराजेन श्रिया श्रियं हविरिन्द्रे वयो दधुः २६(९५)

॥ १५ ॥ (वा० य० ३०।१५)

ऋभुभ्योऽजिनसन्धम् १५

॥ १६ ॥ (वा० य० ३८।८)

सवित्रे त्व ऋभुमते विभुमते वाजवते स्वाहा ८ २०१५

॥ १७ ॥ (अथर्व० ६।१।१३)
(९८) अथर्वा । अनुष्टुप् ।

यथा सोमस्तृतीये सवन ऋभूणां भवति प्रियः ।
एवा म ऋभवो वर्च आत्मनि ध्रियताम् १३(९८)

५० क्षेत्रपतिः ।

॥ १ ॥ (ऋ० ४।५७।१-३)
(१-३) वामदेवो गौतमः । १ अनुष्टुप्, २-३ त्रिष्टुप् ।

क्षेत्रस्य पतिना वयं हितेनेव जयामसि । गामश्वं पोषयित्न्वा स नो मृळातीदृशे १
क्षेत्रस्य पते मधुमन्तमूर्मिं धेनुरिव पयो अस्मासु धुक्ष्व ।
मधुश्चुतं घृतमिव सुपूत मृतस्य नः पतयो मृळयन्तु २
मधुमतीरोषधीर्द्याव आपो मधुमन्नो भवत्वन्तरिक्षम् ।
क्षेत्रस्य पतिर्मधुमान् नो अस्त्व रिष्यन्तो अन्वेनं चरेम ३

॥ २ ॥ (वा० य० १६।१८)

क्षेत्राणां पतये नमः १८(४)१०१०

५१ पणयः ।

॥ १ ॥ (ऋ० १०।१०८।२,४,६,८,१०-११)
(१-६) सरमा देवशुनी ऋषिका । त्रिष्टुप् ।

इन्द्रस्य दूतीरिषिता चरामि मह इच्छन्ती पणयो निधीन् वः ।
अतिष्कदो भियसा तन्न आवत् तथा रसाया अतरं पयांसि २
नाहं तं वेद दभ्यं दभत् स यस्येदं दूतीरसरं पराकात् ।
न तं गूहन्ति स्रवतो गभीरा हता इन्द्रेण पणयः शयध्वे ४
असेन्या वः पणयो वचांस्य निषव्यास्तन्वः सन्तु पापीः ।
अधृष्टो व एतवा अस्तु पन्था बृहस्पतिर्व उभया न मृळात् ६

एह गमन्नृषयः सोमशिता अयास्यो अङ्गिरसो नवग्वाः ।
त एतमूर्वं वि भजन्त गोना-मथैतद्वचः पणयो वमन्नित् ८
नाहं वेद भ्रातृत्वं नो स्वसृत्व-मिन्द्रो विदुराङ्गिरसश्च घोराः ।
गोकामा मे अच्छदयन् यदाय-मपात इत पणयो वरीयः १० २०२५
दूरमित पणयो वरीय उद्गावो यन्तु मिनतीऋतेन ।
बृहस्पतिर्या अविन्दन्निगूळ्हाः सोमो ग्रावाण ऋषयश्च विप्राः ११(६)



५२ मायाभेदः ।

॥ १ ॥ (ऋ० १०।१७७।१-३)
(१-३) पतङ्गः प्राजापत्यः । त्रिष्टुप् ; १ जगती ।

पतङ्गमक्तमसुरस्य मायया हृदा पश्यन्ति मनसा विपश्चितः ।
समुद्रे अन्तः कवयो वि चक्षते मरीचीनां पदमिच्छन्ति वेधसः १
पतङ्गो वाचं मनसा बिभर्ति तां गन्धर्वोऽवदद्गर्भे अन्तः ।
तां द्योतमानां स्वर्यं मनीषा-मृतस्य पदे कवयो नि पान्ति २
अपश्यं गोपामनिपद्यमान-मा च परा च पथिभिश्चरन्तम् ।
स सध्रीचीः स विषूचीर्वसान आ वरीवर्ति भुवनेष्वन्तः ×३(३)

---

५३ ब्रह्मजाया ।

॥ १ ॥ (अथर्व० ५।१७।१-१८)+
(१-१८) मयोभूः । अनुष्टुप् ; १-६ त्रिष्टुप् ।

तेऽवदन् प्रथमा ब्रह्मकिल्बिषेऽकूपारः सलिलो मातरिश्वा ।
वीडुहरास्तप उग्रं मयोभूरापो देवीः प्रथमजा ऋतस्य १ २०३०

× १,१६४,३१। वा. य. ३७,१७; अथर्व. ९,१०,११। + अथर्व. ५।१७।१-३,५-६,१०-११=ऋ. १०।१०९।१-७।

सोमो राजा प्रथमो ब्रह्मजायां पुनः प्रायच्छदहृणीयमानः ।
अन्वर्तिता वरुणो मित्र आसीदग्निर्होता हस्तगृह्या निनाय २ २०३१
हस्तेनैव ग्राह्य आधिरस्या ब्रह्मजायेति चेदवोचत् ।
न दूताय प्रहेया तस्थ एषा तथा राष्ट्रं गुपितं क्षत्रियस्य ३
यामाहुस्तारकैषा विकेशीति दुच्छुनां ग्राममवपद्यमानाम् ।
सा ब्रह्मजाया वि दुनोति राष्ट्रं यत्र प्रापादि शश उल्कुषीमान् ४
ब्रह्मचारी चरति वेविषद्विषः स देवानां भवत्येकमङ्गम् ।
तेन जायामन्वविन्दद् बृहस्पतिः सोमेन नीतां जुह्वं न देवाः ५(५)

देवा वा एतस्यामवदन्त पूर्वे सप्तऋषयस्तपसा ये निषेदुः ।
भीमा जाया ब्राह्मणस्यापनीता दुर्धां दधाति परमे व्योमन् ६
ये गर्भा अवपद्यन्ते जगद्यच्चापलुप्यते । वीरा ये तृह्यन्ते मिथो ब्रह्मजाया हिनस्ति तान् ७
उत यत् पतयो दश स्त्रियाः पूर्वे अब्राह्मणाः । ब्रह्मा चेद्धस्तमग्रहीत् स एव पतिरेकधा ८
ब्राह्मण एव पतिर्न राजन्यो३ न वैश्यः । तत् सूर्यः प्रब्रुवन्नेति पञ्चभ्यो मानवेभ्यः ९
पुनर्वै देवा अददुः पुनर्मनुष्या अददुः । राजानः सत्यं गृह्णाना ब्रह्मजायां पुनर्ददुः १०
पुनर्दाय ब्रह्मजायां कृत्वा देवैर्निकिल्बिषम् । ऊर्जं पृथिव्या भक्त्वोरुगायमुपासते ११ २०४०
नास्य जाया शतवाही कल्याणी तल्पमा शये । यस्मिन् राष्ट्रे निरुध्यते ब्रह्मजायाऽचित्त्या १२
न विकर्णः पृथुशिरास्तस्मिन् वेश्मनि जायते । यस्मिन् राष्ट्रे निरुध्यते ब्रह्मजाया० । १३
नास्य क्षत्ता निष्कग्रीवः सूनानामेत्यग्रतः । यस्मिन् राष्ट्रे निरुध्यते ब्रह्मजाया० । १४
नास्य श्वेतः कृष्णकर्णो धुरि युक्तो महीयते । यस्मिन् राष्ट्रे निरुध्यते ब्रह्मजाया० । १५(१५)

नास्य क्षेत्रे पुष्करिणी नाण्डीकं जायते बिसम् । यस्मिन् राष्ट्रे निरुध्यते ब्रह्मजाया० । १६
नास्मै पृश्निं वि दुहन्ति येऽस्या दोहमुपासते । यस्मिन् राष्ट्रे निरुध्यते ब्रह्मजाया० । १७
नास्य धेनुः कल्याणी नानड्वान्त्सहते धुरम् ।
विजानिर्यत्र ब्राह्मणो रात्रिं वसति पापया १८ २०४७

५४ गौः ।

॥ १ ॥ (ऋ० ६।२८।१-८)*

(१—८) भरद्वाजो बार्हस्पत्यः । गावः, २, ८ इन्द्रो गावो वा । त्रिष्टुप्, २-४ जगती, ८ अनुष्टुप् ।

आ गावो अग्मन्नुत भद्रमक्र न्त्सीदन्तु गोष्ठे रणयन्त्वस्मे ।
प्रजावतीः पुरुरूपा इह स्यु रिन्द्राय पूर्वीरुषसो दुहानाः १
इन्द्रो यज्वने पृणते च शिक्षत्यु पेद्ददाति न स्वं मुषायति ।
भूयोभूयो रयिमिदस्य वर्धय न्नभिन्ने खिल्ये नि दधाति देवयुम् २
न ता नशन्ति न दभाति तस्करो नासामामित्रो व्यथिरा दधर्षति ।
देवाँश्च याभिर्यजते ददाति च ज्योगित् ताभिः सचते गोपतिः सह ३ २०५०
न ता अर्वा रेणुककाटो अश्नुते न संस्कृतत्रमुप यन्ति ता अभि ।
उरुगायमभयं तस्य ता अनु गावो मर्तस्य वि चरन्ति यज्वनः ४
गावो भगो गाव इन्द्रो मे अच्छान् गावः सोमस्य प्रथमस्य भक्षः ।
इमा या गावः स जनास इन्द्र इच्छामीद्धृदा मनसा चिदिन्द्रम् ५(५)
यूयं गावो मेदयथा कृशं चि दश्रीरं चित् कृणुथा सुप्रतीकम् ।
भद्रं गृहं कृणुथ भद्रवाचो बृहद्वो वय उच्यते सभासु ६
प्रजावतीः सूयवसं रिशन्तीः शुद्धा अपः सुप्रपाणे पिबन्तीः ।
मा वः स्तेन ईशत माघशंसः परि वो हेती रुद्रस्य वृज्याः ७
उपेदमुपपर्चन मासु गोषूप पृच्यताम् । उप ऋषभस्य रेत स्युपेन्द्र तव वीर्ये ८ २०५५

॥ २ ॥ (ऋ० ८।१०१।१५-१६)

(९-१०) जमदग्निर्भार्गवः । त्रिष्टुप् ।

माता रुद्राणां दुहिता वसूनां स्वसाऽऽदित्यानाममृतस्य नाभिः ।
प्र नु वोचं चिकितुषे जनाय मा गामनागामदितिं वधिष्ट १५
वचोविदं वाचमुदीरयन्तीं विश्वाभिर्धीभिरुपतिष्ठमानाम् ।
देवीं देवेभ्यः पर्येयुषीं गा मा माऽवृक्त मर्त्यो दभ्रचेताः १६(१०)

---

* अथर्व. ४,२१,१-७; ७,७५,१ ।

॥ ३ ॥ (ऋ० १०।१६९।१-४)
(११-१४) शबरः काक्षीवतः । त्रिष्टुप् ।

मयोभूर्वातो अभि वातूस्रा ऊर्जस्वतीरोषधीरा रिशन्ताम् ।
पीवस्वतीर्जीवधन्याः पिबन्त्ववसाय पद्वते रुद्र मृळ १

याः सरूपा विरूपा एकरूपा यासामग्निरिष्टया नामानि वेद ।
या अङ्गिरसस्तपसेह चक्रुस्ताभ्यः पर्जन्य महि शर्म यच्छ २

या देवेषु तन्व१मैरयन्त यासां सोमो विश्वा रूपाणि वेद ।
ता अस्मभ्यं पयसा पिन्वमानाः प्रजावतीरिन्द्र गोष्ठे रिरीहि ३ २०६०

प्रजापतिर्मह्यमेता रराणो विश्वैर्देवैः पितृभिः संविदानः ।
शिवाः सतीरुप नो गोष्ठमाकस्तासां वयं प्रजया सं सदेम ४

॥ ४ ॥ [१५-२५] (वा० य० १।४)

सा विश्वायुः सा विश्वकर्मा सा विश्वधायाः ।
इन्द्रस्य त्वा भागꣳ सोमेनातनच्मि विष्णो हव्यꣳ रक्ष ४(१५)

॥ ५ ॥ (वा० य० ३।२०-२२,२७)

अन्ध स्थान्धो वो भक्षीय मह स्थ महो वो भक्षीयोर्ज स्थोर्जं वो भक्षीय
रायस्पोष स्थ रायस्पोषं वो भक्षीय २०

रेवती रमध्वमस्मिन् योनावस्मिन् गोष्ठेऽस्मिँल्लोकेऽस्मिन् क्षये । इहैव स्त माऽप गात २१

सꣳहिताऽसि विश्वरूप्यूर्जा मा ऽऽ विश गौपत्येन ।
उप त्वाऽग्ने दिवेदिवे दोषावस्तर्धिया वयम् । नमो भरन्त एमसि २२ २०६५

इड एह्यदित एहि काम्या एत । मयि वः कामधरणं भूयात् २७

॥ ६ ॥ (वा० य० ४।२०-२१)

अनु त्वा माता मन्यतामनु पिताऽनु भ्राता सगर्भ्योऽनु सखा सयूथ्यः ।
सा देवि देवमच्छेहीन्द्राय सोमꣳ रुद्रस्त्वा ऽऽ वर्तयतु स्वस्ति सोमसखा पुनरेहि २०(१०).

वस्व्यस्यदितिरस्यादित्याऽसि रुद्राऽसि चन्द्राऽसि ।
बृहस्पतिष्ट्वा सुम्ने रम्णातु रुद्रो वसुभिरा चके २१

॥ ७ ॥ (वा० य० ७।४७)

रुद्राय त्वा मह्यं वरुणो ददातु सोऽमृतत्वमशीय प्राणो दात्र एधि वयो मह्यं प्रतिग्रहीत्रे ४७

॥ ८ ॥ (वा० य० ८।४२-४३, ५१ [पूर्वार्धः])

आ जिघ्र कुलशं मह्या त्वा विशन्त्विन्दवः ।
पुनरूर्जा नि वर्तस्व सा नः सहस्रं धुक्ष्वोरुधारा पयस्वती पुनर्मा विशताद्रयिः ४२ २०७०
इडे रन्ते हव्ये काम्ये चन्द्रे ज्योतेऽदिते सरस्वति महि विश्रुति ।
एता ते अघ्न्ये नामानि देवेभ्यो मा सुकृतं ब्रूतात् ४३
इह रतिरिह रमध्वमिह धृतिरिह स्वधृतिः स्वाहा ५१(२५)

॥ ९ ॥ (अथर्व० ६।७०।१-३)

(२६-२८) काङ्कायनः । अघ्न्या । जगती ।

यथा मांसं यथा सुरा यथाऽक्षा अधिदेवने । यथा पुंसो वृषण्यत स्त्रियां निहन्यते मनः॥
एवा ते अघ्न्ये मनोऽधि वत्से नि हन्यताम् १
यथा हस्ती हस्तिन्याः पदेन पदमुद्युजे । यथा पुंसो वृषण्यत० । एवा ते अघ्न्ये० २
यथा प्रधिर्यथोपधिर्यथा नभ्यं प्रधावधि । यथा पुंसो वृषण्यत० । एवा ते अघ्न्ये० ३ २०७५

॥ १० ॥ (अथर्व० ७।७५।२)×

(२९) उपरिबभ्रवः । (अघ्न्या) । त्र्यवसाना भुरिक् पथ्यापङ्क्तिः ।

पदज्ञा स्थ रमतयः संहिता विश्वनाम्नीः । उप मा देवीर्देवेभिरेत ॥
इमं गोष्ठमिदं सदो घृतेनास्मान्त्समुक्षत २

॥ ११ ॥ (अथर्व० ९।७।१-२६)

(३०-५५) ब्रह्मा (एकः पर्यायः) । १ आर्चीबृहती; २ आर्च्युष्णिक्; ३,५ आर्च्यनुष्टुप्; ४,१४-१६ साम्नी बृहती; ६,८ आसुरी गायत्री; ७ त्रिपदा पिपीलिकमध्या निचृद्गायत्री; ९,१३ साम्नी गायत्री; १० पुर उष्णिक्; ११-१२, १७, २५ साम्न्युष्णिक्; १८, २२ एकपदाऽऽसुरी जगती; १९ एकपदाऽऽसुरी पंक्तिः; २० याजुषी जगती; २१ आसुर्यनुष्टुप्; २३ एकपदाऽऽसुरी बृहती; २४ साम्नी भुरिग्बृहती; २६ साम्नी त्रिष्टुप्; (७, १८-१९; २२-२३ आभ्योऽतिरिक्ता द्विपदा) ।

प्रजापतिश्च परमेष्ठी च शृङ्गे इन्द्रः शिरो अग्निर्ललाटं यमः कृकाटम् १(३०)
सोमो राजा मस्तिष्को द्यौरुत्तरहनुः पृथिव्यधरहनुः २
विद्युज्जिह्वा मरुतो दन्ता रेवतीर्ग्रीवाः कृत्तिका स्कन्धा घर्मो वहः ३
विश्वं वायुः स्वर्गो लोकः कृष्णद्रं विधरणी निवेष्यः ४ २०८०
श्येनः क्रोडोऽन्तरिक्षं पाजस्यं१ बृहस्पतिः ककुद्बृहतीः कीकसाः ५
देवानां पत्नीः पृष्टय उपसदः पर्शवः ६(३५)

× अथर्व. ७,७५,१ = ऋ. ६,२८,७ ।

मित्रश्च वरुणश्चांसौ त्वष्टा चार्यमा च दोषणी महादेवो बाहू ७
इन्द्राणी भसद्वायुः पुच्छं पवमानो बालाः ८ ब्रह्म च क्षत्रं च श्रोणी बलमूरू ९ २०८५
धाता च सविता चाष्ठीवन्तौ जङ्घा गन्धर्वा अप्सरसः कुष्ठिका अदितिः शफाः १०
चेतो हृदयं यकृन्मेधा व्रतं पुरीतत् ११ क्षुत् कुक्षिरिरा वनिष्ठुः पर्वताः प्लाशयः १२
क्रोधो वृक्कौ मन्युराण्डौ प्रजा शेपः १३ नदी सूत्री वर्षस्य पतय स्तना स्तनयित्नुरूधः १४
विश्वव्यचाश्चर्मौषधयो लोमानि नक्षत्राणि रूपम् १५
देवजना गुदा मनुष्या आन्त्राण्यत्रा उदरम् १६(४५)
रक्षांसि लोहितमितरजना ऊबध्यम् १७ अभ्रं पीबो मज्जा निधनम् १८
अग्निरासीन उत्थितोऽश्विना १९ इन्द्रः प्राङ् तिष्ठन् दक्षिणा तिष्ठन् यमः २०
प्रत्यङ् तिष्ठन् धातोदङ् तिष्ठन्त्सविता २१ तृणानि प्राप्तः सोमो राजा २२
मित्र ईक्षमाण आवृत्त आनन्दः २३ युज्यमानो वैश्वदेवो युक्तः प्रजापतिर्विमुक्तः सर्वम् २४ २१००
एतद्वै विश्वरूपं सर्वरूपं गोरूपम् २५ उपैनं विश्वरूपाः सर्वरूपाः पशवस्तिष्ठन्ति य एवं वेद २६

॥ १२ ॥ (अथर्व० १०।९।१-२७)

(५६-८२) अथर्वा । (शतौदना गौः) । अनुष्टुप्; १ त्रिष्टुप्; १२ पथ्यापङ्क्तिः; २५ द्व्यनुष्टुब्गर्भाऽनुष्टुप्, २६ पञ्चपदा बृहत्यनुष्टुबुष्णिग्गर्भा जगती; २७ पञ्चपदातिजागतानुष्टुब्गर्भा शक्वरी ।

अघायतामपि नह्या मुखानि सपत्नेषु वज्रमर्पयैतम् ।
इन्द्रेण दत्ता प्रथमा शतौदना भ्रातृव्यघ्नी यजमानस्य गातुः १
वेदिष्टे चर्म भवतु बर्हिर्लोमानि यानि ते । एषा त्वा रशनाऽग्रभीद् ग्रावा त्वैषोऽधि नृत्यतु २
बालास्ते प्रोक्षणीः सन्तु जिह्वा सं मार्ष्ट्वघ्न्ये । शुद्धा त्वं यज्ञिया भूत्वा दिवं प्रेहि शतौदने ३
यः शतौदनां पचति कामप्रेण स कल्पते । प्रीता ह्यस्यर्त्विजः सर्वे यन्ति यथायथम् ४
स स्वर्गमा रोहति यत्रादस्त्रिदिवं दिवः । अपूपनाभिं कृत्वा यो ददाति शतौदनाम् ५(६०)
स तांल्लोकान्त्समाप्नोति ये दिव्या ये च पार्थिवाः ।
हिरण्यज्योतिषं कृत्वा यो ददाति शतौदनाम् ६
ये ते देवि शमितारः पक्तारो ये च ते जनाः । ते त्वा सर्वे गोप्स्यन्ति मैभ्यो भैषीः शतौदने ७
वसवस्त्वा दक्षिणत उत्तरान्मरुतस्त्वा । आदित्याः पश्चाद्गोप्स्यन्ति साऽग्निष्टोममति द्रव ८ २११०
देवाः पितरो मनुष्या गन्धर्वाप्सरसश्च ये । ते त्वा सर्वे गोप्स्यन्ति साऽतिरात्रमति द्रव ९
अन्तरिक्षं दिवं भूमिमादित्यान् मरुतो दिशः ।
लोकान्त्स सर्वानाप्नोति यो ददाति शतौदनाम् १०(६५)

घृतं प्रोक्षन्ती सुभगा देवी देवान् गमिष्यति ।
पक्तारमघ्न्ये मा हिंसीर्दिवं प्रेहि शतौदने ११
ये देवा दिविषदो अन्तरिक्षसदश्च ये ये चेमे भूम्यामधि ।
तेभ्यस्त्वं धुक्ष्व सर्वदा क्षीरं सर्पिरथो मधु १२
यत् ते शिरो यत् ते मुखं यौ कर्णौ ये च ते हनू ।
आमिक्षां दुहतां दात्रे क्षीरं सर्पिरथो मधु १३ १११५
यौ त ओष्ठौ ये नासिके ये शृङ्गे ये च तेऽक्षिणी ।
आमिक्षां दुहतां दात्रे क्षीरं सर्पिरथो मधु १४
यत् ते क्लोमा यद्धृदयं पुरीतत्सहकण्ठिका । आमिक्षां दुहतां दात्रे क्षीरं सर्पिरथो मधु १५(७०)
यत् ते यकृद्ये मतस्ने यदान्त्रं याश्च ते गुदाः । आमिक्षां दुहतां दात्रे क्षीरं सर्पिरथो मधु १६
यस्ते प्लाशिर्यो वनिष्ठुर्यौ कुक्षी यच्च चर्म ते । आमिक्षां दुहतां दात्रे क्षीरं सर्पिरथो मधु १७
यत् ते मज्जा यदस्थि यन्मांसं यच्च लोहितम् । आमिक्षां दुहतां दात्रे क्षीरं सर्पिरथो मधु १८
यौ ते बाहू ये दोषणी यावंसौ या च ते ककुत् । आमिक्षां दुहतां दात्रे क्षीरं सर्पिरथो मधु १९
यास्ते ग्रीवा ये स्कन्धा याः पृष्टीर्याश्च पर्शवः । आमिक्षां दुहतां दात्रे क्षीरं सर्पिरथो मधु २०
यौ त ऊरू अष्ठीवन्तौ ये श्रोणी या च ते भसत् । आमिक्षां दुहतां दात्रे क्षीरं सर्पिरथो मधु २१
यत् ते पुच्छं ये ते बाला यदूधो ये च ते स्तनाः । आमिक्षां दुहतां दात्रे क्षीरं सर्पिरथो मधु २२
यास्ते जङ्घा याः कुष्ठिका ऋच्छरा ये च ते शफाः । आमिक्षां दुहतां दात्रे क्षीरं सर्पिरथो मधु २३ ११२५
यत् ते चर्म शतौदने यानि लोमान्यघ्न्ये । आमिक्षां दुहतां दात्रे क्षीरं सर्पिरथो मधु २४
क्रोडौ ते स्तां पुरोडाशावाज्येनाभिघारितौ । तौ पक्षौ देवि कृत्वा सा पक्तारं दिवं वह २५(८०)
उलूखले मुसले यश्च चर्मणि यो वा शूर्पे तण्डुलः कणः ।
यं वा वातो मातरिश्वा पवमानो ममाथाग्निष्टद्धोता सुहुतं कृणोतु २६
अपो देवीर्मधुमतीर्घृतश्चुतो ब्रह्मणां हस्तेषु प्रपृथक् सादयामि ।
यत् काम इदमभिषिञ्चामि वोऽहं तन्मे सर्वं सं पद्यतां वयं स्याम पतयो रयीणाम् २७

॥ १३ ॥ (अथर्व० १०।१०।१-३४)

(८३-१६९) कश्यपः । (वशा गौः) । अनुष्टुप्; १ ककुम्मती; ५ पञ्चपदा० स्कन्धोग्रीवी बृहती;
६, ८, १० विराड्; २३ बृहती; २४ उपरिष्टाद्बृहती; २६ आस्तारपङ्क्तिः;
२७ शंकुमती; २९ त्रिपदा विराड्गायत्री; ३१ उष्णिग्गर्भा;
३२ विराट्पथ्याबृहती ।

नमस्ते जायमानायै जाताया उत ते नमः । बालेभ्यः शफेभ्यो रूपायाघ्न्ये ते नमः १ ११३०

यो विद्यात् सप्त प्रवतः सप्त विद्यात् परावतः ।
शिरो यज्ञस्य यो विद्यात् स वशां प्रति गृह्णीयात् २ ११३१
वेदाहं सप्त प्रवतः सप्त वेद परावतः । शिरो यज्ञस्याहं वेद सोमं चास्यां विचक्षणम् ३(८५)
यया द्यौर्यया पृथिवी ययाऽपो गुपिता इमाः । वशां सहस्रधारां ब्रह्मणाऽच्छावदामसि ४
शतं कंसाः शतं दोग्धारः शतं गोप्तारो अधि पृष्ठे अस्याः ।
ये देवास्तस्यां प्राणन्ति ते वशां विदुरेकधा ५
यज्ञपदीराक्षीरा स्वधाप्राणा महीलुका । वशा पर्जन्यपत्नी देवाँ अप्येति ब्रह्मणा ६
अनु त्वाऽग्निः प्राविशदनु सोमो वशे त्वा । ऊधस्ते भद्रे पर्जन्यो विद्युतस्ते स्तना वशे ७
अपस्त्वं धुक्षे प्रथमा उर्वरा अपरा वशे । तृतीयं राष्ट्रं धुक्षेऽन्नं क्षीरं वशे त्वम् ८
यदादित्यैर्हूयमानोपातिष्ठ ऋतावरि । इन्द्रः सहस्रं पात्रान्त्सोमं त्वापाययद्वशे ९
यदनूचीन्द्रमैरात्त्व ऋषभोऽह्वयत् । तस्मात् ते वृत्रहा पयः क्षीरं क्रुद्धोऽहरद्वशे । १०
यत् ते क्रुद्धो धनपतिरा क्षीरमहरद्वशे । इदं तदद्य नाकस्त्रिषु पात्रेषु रक्षति ११ ११४०
त्रिषु पात्रेषु तं सोममा देव्यहरद्वशा । अथर्वा यत्र दीक्षितो बर्हिष्यास्त हिरण्यये १२
सं हि सोमेनागत समु सर्वेण पद्वता । वशा समुद्रमध्यष्ठाद्गन्धर्वैः कलिभिः सह १३(९५)
सं हि वातेनागत समु सर्वैः पतत्रिभिः । वशा समुद्रे प्रानृत्यदृचः सामानि बिभ्रती १४
सं हि सूर्येणागत समु सर्वेण चक्षुषा । वशा समुद्रमत्यख्यद्भद्रा ज्योतींषि बिभ्रती १५
अभीवृता हिरण्येन यदतिष्ठ ऋतावरि । अश्वः समुद्रो भूत्वाऽध्यस्कन्दद्वशे त्वा १६
तद्भद्राः समगच्छन्त वशा देष्ट्र्यथो स्वधा । अथर्वा यत्र दीक्षितो बर्हिष्यास्त हिरण्यये १७
वशा माता राजन्यस्य वशा माता स्वधे तव । वशाया यज्ञ आयुधं ततश्चित्तमजायत १८
ऊर्ध्वो बिन्दुरुदचरद्ब्रह्मणः ककुदादधि । ततस्त्वं जज्ञिषे वशे ततो होताऽजायत १९
आस्नस्ते गाथा अभवन्नुष्णिहाभ्यो बलं वशे । पाजस्याज्जज्ञे यज्ञ स्तनेभ्यो रश्मयस्तव २०
ईर्माभ्यामयनं जातं सक्थिभ्यां च वशे तव । आन्त्रेभ्यो जज्ञिरे अत्रा उदरादधि वीरुधः २१ ११५०
यदुदरं वरुणस्यानुप्राविशथा वशे । ततस्त्वा ब्रह्मोदह्वयत् स हि नेत्रमवेत् तव २२
सर्वे गर्भादवेपन्त जायमानादसूस्वः ।
ससूव हि तामाहुर्वशेति ब्रह्मभिः क्लृप्तः स ह्यस्या बन्धुः २३(१०५)
युध एकः सं सृजति यो अस्या एक इद्वशी । तरांसि यज्ञा अभवन् तरसां चक्षुरभवद्वशा २४
वशा यज्ञं प्रत्यगृह्णाद्वशा सूर्यमधारयत् । वशायामन्तरविशदोदनो ब्रह्मणा सह २५

वशामेवामृतमाहुर्वशां मृत्युमुपासते ।
वशेदं सर्वमभवद्देवा मनुष्याउ असुराः पितर ऋषयः २६ ११५५
य एवं विद्यात् स वशां प्रति गृह्णीयात् । तथा हि यज्ञः सर्वपाद्दुहे दात्रेऽनपस्फुरन् २७
तिस्रो जिह्वा वरुणस्यान्तर्दीद्यत्यासनि । तासां या मध्ये राजति सा वशा दुष्प्रतिग्रहा २८(११०)
चतुर्धा रेतो अभवद्वशायाः । आपस्तुरीयममृतं तुरीयं यज्ञस्तुरीयं पशवस्तुरीयम् २९
वशा द्यौर्वशा पृथिवी वशा विष्णुः प्रजापतिः । वशाया दुग्धमपिबन्त्साध्या वसवश्च ये ३०
वशाया दुग्धं पीत्वा साध्या वसवश्च ये । ते वै ब्रध्नस्य विष्टपि पयो अस्या उपासते ३१
सोममेनामेके दुह्रे घृतमेक उपासते । य एवं विदुषे वशां ददुस्ते गतास्त्रिदिवं दिवः ३२
ब्राह्मणेभ्यो वशां दत्त्वा सर्वांल्लोकान्त्समश्नुते । ऋतं ह्यस्यामार्पितमपि ब्रह्माथो तपः ३३
वशां देवा उप जीवन्ति वशां मनुष्या उत । वशेदं सर्वमभवद्यावत् सूर्यो विपश्यति ३४

॥ १४ ॥ (अथर्व० १२।४।१-५३)

अनुष्टुप्; ७ भुरिक्; २० विराट्; ३२ उष्णिग्बृहतीगर्भा; ४२ बृहतीगर्भा ।

ददामीत्येव ब्रूयादनु चैनामभुत्सत । वशां ब्रह्मभ्यो याचद्भ्यस्तत् प्रजावदपत्यवत् १
प्रजया स वि क्रीणीते पशुभिश्चोप दस्यति । य आर्षेयेभ्यो याचद्भ्यो देवानां गां न दित्सति २ ११६५
कूटयास्य सं शीर्यन्ते श्लोणया काटमर्दति । बण्डया दह्यन्ते गृहाः काणया दीयते स्वम् ३
विलोहितो अधिष्ठानाच्छक्नो विन्दति गोपतिम् । तथा वशायाः संविद्यं दुरदभ्ना ह्युच्यसे ४(१२०)
पदोरस्या अधिष्ठानाद्विक्लिन्दुर्नाम विन्दति । अनामनात् सं शीर्यन्ते या मुखेनोपजिघ्रति ५
यो अस्याः कर्णावास्कुनोत्या स देवेषु वृश्चते ।
लक्ष्म कुर्व इति मन्यते कनीयः कृणुते स्वम् ६
यदस्याः कस्मै चिद्भोगाय बालान् कश्चित् प्रकृन्तति ।
ततः किशोरा म्रियन्ते वत्सांश्च घातुको वृकः ७ ११७०
यदस्या गोपतौ सत्या लोम ध्वाङ्क्षो अजीहिडत् ।
ततः कुमारा म्रियन्ते यक्ष्मो विन्दत्यनामनात् ८
यदस्याः पल्पूलनं शकृद् दासी समस्यति । ततोऽपरूपं जायते तस्मादव्येष्यदेनसः ९(१२५)
जायमानाभि जायते देवान्त्सब्राह्मणान् वशा ।
तस्माद् ब्रह्मभ्यो देयैषा तदाहुः स्वस्य गोपनम् १०
य एनां वनिमायन्ति तेषां देवकृता वशा । ब्रह्मज्येयं तदब्रुवन् य एनां निप्रियायते ११

य आर्षेयेभ्यो याचद्भ्यो देवानां गां न दित्सति ।
आ स देवेषु वृश्चते ब्राह्मणानां च मन्यवे १२ ११७५

यो अस्य स्याद्वशाभोगो अन्यामिच्छेत तर्हि सः ।
हिंस्ते अदत्ता पुरुषं याचितां च न दित्सति १३

यथा शेवधिर्निहितो ब्राह्मणानां तथा वशा। तामेतदच्छायन्ति यस्मिन् कस्मिंश्च जायते १४(१३०)

स्वमेतदच्छायन्ति यद्वशां ब्राह्मणा अभि। यथैनानन्यस्मिन् जिनीयादेवास्या निरोधनम् १५

चरेदेवा त्रैहायणादविज्ञातगदा सती । वशां च विद्यान्नारद ब्राह्मणास्तर्ह्येष्याः १६

य एनामवशामाह देवानां निहितं निधिम् । उभौ तस्मै भवाशर्वौ परिक्रम्येषुमस्यतः १७

यो अस्या ऊधो न वेदाथो अस्या स्तनानुत । उभयेनैवास्मै दुहे दातुं चेदशकद्वशाम् १८

दुरदभ्नैनमा शये याचितां च न दित्सति ।
नास्मै कामाः समृध्यन्ते यामदत्त्वा चिकीर्षति १९

देवा वशामयाचन् मुखं कृत्वा ब्राह्मणम् । तेषां सर्वेषामददद्धेडं न्येति मानुषः २०

हेडं पशूनां न्येति ब्राह्मणेभ्योऽददद्वशाम् । देवानां निहितं भागं मर्त्यश्चेन्निप्रियायते २१

यदन्ये शतं याचेयुर्ब्राह्मणा गोपतिं वशाम् । अथैनां देवा अब्रुवन्नेवं ह विदुषो वशा २२ ११८५

य एवं विदुषेऽदत्त्वाथान्येभ्यो ददद्वशाम् । दुर्गा तस्मा अधिष्ठाने पृथिवी सहदेवता २३

देवा वशामयाचन् यस्मिन्नग्रे अजायत । तामेतां विद्यान्नारदः सह देवैरुदाजत २४(१४०)

अनपत्यमल्पपशुं वशा कृणोति पूरुषम् । ब्राह्मणैश्च याचितामथैनां निप्रियायते २५

अग्नीषोमाभ्यां कामाय मित्राय वरुणाय च। तेभ्यो याचन्ति ब्राह्मणास्तेष्वा वृश्चतेऽददत् २६

यावदस्या गोपतिर्नोपशृणुयादृचः स्वयम् ।
चरेदस्य तावद् गोषु नास्य श्रुत्वा गृहे वसेत् २७ ११९०

यो अस्या ऋच उपश्रुत्याथ गोष्वचीचरत् ।
आयुश्च तस्य भूतिं च देवा वृश्चन्ति हीडिताः २८

वशा चरन्ती बहुधा देवानां निहितो निधिः ।
आविष्कृणुष्व रूपाणि यदा स्थाम जिघांसति २९(१४५)

आविरात्मानं कृणुते यदा स्थाम जिघांसति ।
अथो ह ब्रह्मभ्यो वशा याञ्च्याय कृणुते मनः ३०

मनसा सं कल्पयति तद् देवाँ अपि गच्छति । ततो ह ब्रह्माणो वशामुपप्रयन्ति याचितुम् ३१
स्वधाकारेण पितृभ्यो यज्ञेन देवताभ्यः । दानेन राजन्योऽ वशाया मातुर्हेडं न गच्छति ३२ २१९५
वशा माता राजन्यस्य तथा संभूतमग्रशः । तस्या आहुरनर्पणं यद् ब्रह्मभ्यः प्रदीयते ३३
यथाऽऽज्यं प्रगृहीतमालुम्पेत् स्रुचो अग्नये । एवा ह ब्रह्मभ्यो वशामग्नय आ वृश्चतेऽददत् ३४(१५०)
पुरोडाशवत्सा सुदुघा लोकेऽस्मा उप तिष्ठति । साऽस्मै सर्वान् कामान् वशा प्रददुषे दुहे ३५
सर्वान् कामान् यमराज्ये वशा प्रददुषे दुहे । अथाहुर्नारकं लोकं निरुन्धानस्य याचिताम् ३६
प्रवीयमाना चरति क्रुद्धा गोपतये वशा । वेहतं मा मन्यमानो मृत्योः पाशेषु बध्यताम् ३७
यो वेहतं मन्यमानोऽमा च पचते वशाम् । अप्यस्य पुत्रान् पौत्रांश्च याचयते बृहस्पतिः ३८
महदेषाव तपति चरन्ती गोषु गौरपि । अथो ह गोपतये वशाददुषे विषं दुहे ३९
प्रियं पशूनां भवति यद् ब्रह्मभ्यः प्रदीयते ।
अथो वशायास्तत् प्रियं यद्देवत्रा हविः स्यात् ४०
या वशा उदकल्पयन् देवा यज्ञादुदेत्य । तासां विलिप्त्यं भीमामुदाकुरुत नारदः ४१
तां देवा अमीमांसन्त वशेया३मवशेति । तामब्रवीन्नारद एषा वशानां वशतमेति ४२ २२०५
कति नु वशा नारद यास्त्वं वेत्थ मनुष्यजाः ।
तास्त्वा पृच्छामि विद्वांसं कस्या नाश्नीयादब्राह्मणः ४३
विलिप्त्या बृहस्पते या च सूतवशा वशा ।
तस्या नाश्नीयादब्राह्मणो य आशंसेत भूत्याम् ४४(१६०)
नमस्ते अस्तु नारदानुष्ठु विदुषे वशा । कतमासां भीमतमा यामदत्त्वा पराभवेत् ४५
विलिप्ती या बृहस्पतेऽथो सूतवशा वशा । तस्या नाश्नीयादब्राह्मणो य आशंसेत भूत्याम् ४६
त्रीणि वै वशाजातानि विलिप्ती सूतवशा वशा ।
ताः प्र यच्छेद् ब्रह्मभ्यः सोऽनाव्रस्कः प्रजापतौ ४७ २२१०
एतद्वो ब्राह्मणा हविरिति मन्वीत याचितः । वशां चेदेनं याचेयुर्या भीमाददुषो गृहे ४८
देवा वशां पर्यवदन् न नोऽदादिति हीडिताः । एताभिर्ऋग्भिर्भेदं तस्माद्वै स पराऽभवत् ४९
उतैनां भेदो नाददाद् वशामिन्द्रेण याचितः । तस्मात् तं देवा आगसोऽवृश्चन्नहमुत्तरे ५०
ये वशाया अदानाय वदन्ति परिरापिणः । इन्द्रस्य मन्यवे जाल्मा आ वृश्चन्ते अचित्त्या ५१
ये गोपतिं पराणीयाथाहुर्मा ददा इति । रुद्रस्यास्तां ते हेतिं परि यन्त्यचित्त्या ५२
यदि हुतां यद्यहुताममा च पचते वशाम् । देवान्त्सब्राह्मणानृत्वा जिह्मो लोकान्निर्ऋच्छति ५३(१६१)

॥ १५ ॥ (अथर्व० ५।१८।१-१५)

(१७०-१९९) मयोभूः । ब्रह्मगवी । अनुष्टुप् ; ४ भुरिक् त्रिष्टुप् ; ५,८-९,१३ त्रिष्टुप् ।

नैतां ते देवा अददुस्तुभ्यं नृपते अत्तवे । मा ब्राह्मणस्य राजन्य गां जिघत्सो अनाद्याम् १(१७०)

अक्षद्रुग्धो राजन्यः पाप आत्मपराजितः । स ब्राह्मणस्य गामद्यादद्य जीवानि मा श्वः २

आविष्टिताऽघविषा पृदाकूरिव चर्मणा । सा ब्राह्मणस्य राजन्य तृष्टैषा गौरनाद्या ३

निर्वै क्षत्रं नयति हन्ति वर्चोऽग्निरिवारब्धो वि दुनोति सर्वम् ।

यो ब्राह्मणं मन्यते अन्नमेव स विषस्य पिबति तैमातस्य ४ २२२०

य एनं हन्ति मृदुं मन्यमानो देवपीयुर्धनकामो न चित्तात् ।

सं तस्येन्द्रो हृदयेऽग्निमिन्ध उभे एनं द्विष्टो नभसी चरन्तम् ५

न ब्राह्मणो हिंसितव्यो३ऽग्निः प्रियतनोरिव ।

सोमो ह्यस्य दायाद इन्द्रो अस्याभिशस्तिपाः ६

शतापाष्ठां नि गिरति तां न शक्नोति निःखिदन् ।

अन्नं यो ब्रह्मणां मल्वः स्वाद्व१द्मीति मन्यते ७

जिह्वा ज्या भवति कुल्मलं वाङ्नाडीका दन्तास्तपसाभिदिग्धाः ।

तेभिर्ब्रह्मा विध्यति देवपीयून् हृद्बलैर्धनुर्भिर्देवजूतैः ८

तीक्ष्णेषवो ब्राह्मणा हेतिमन्तो यामस्यन्ति शरव्यां३ न सा मृषा ।

अनुहाय तपसा मन्युना चोत दूरादव भिन्दन्त्येनम् ९

ये सहस्रमराजन्नासन् दशशता उत । ते ब्राह्मणस्य गां जग्ध्वा वैतहव्याः पराऽभवन् १०

गौरेव तान् हन्यमाना वैतहव्याँ अवातिरत् । ये केसरप्राबन्धायाश्चरमाजामपेचिरन् ११(१८०)

एकशतं ता जनता या भूमिर्व्यधूनुत । प्रजां हिंसित्वा ब्राह्मणीमसंभव्यं पराऽभवन् १२

देवपीयुश्चरति मर्त्येषु गरगीर्णो भवत्यस्थिभूयान् ।

यो ब्राह्मणं देवबन्धुं हिनस्ति न स पितृयाणमप्येति लोकम् १३

अग्निर्वै नः पदवायः सोमो दायाद उच्यते । हन्ताऽभिशस्तेन्द्रस्तथा तद्वेधसो विदुः १४ २२३०

इषुरिव दिग्धा नृपते पृदाकूरिव गोपते । सा ब्राह्मणस्येषुर्घोरा तया विध्यति पीयतः १५

॥ १६ ॥ (अथर्व० ५।१९।१-१५)

अनुष्टुप्; २ विराट्पुरस्ताद्बृहती; ७ उपरिष्टाद्बृहती ।

अतिमात्रमवर्धन्त नोदिव दिवमस्पृशन् । भृगुं हिंसित्वा सृञ्जया वैतहव्याः पराऽभवन् १(१८५)

ये बृहत्सामानमाङ्गिरसमार्पयन् ब्राह्मणं जनाः । पेत्वस्तेषामुभयादमविस्तोकान्यावयत् २

ये ब्राह्मणं प्रत्यष्ठीवन् ये वास्मिञ्छुल्कमीषिरे ।
अस्नस्ते मध्ये कुल्यायाः केशान् खादन्त आसते ३
ब्रह्मगवी पच्यमाना यावत्साभि विजङ्गहे । तेजो राष्ट्रस्य निर्हन्ति न वीरो जायते वृषा ४ २२३५
क्रूरमस्या आशसनं तृष्टं पिशितमस्यते । क्षीरं यदस्याः पीयते तद्वै पितृषु किल्बिषम् ५
उग्रो राजा मन्यमानो ब्राह्मणं यो जिघत्सति ।
परा तत् सिच्यते राष्ट्रं ब्राह्मणो यत्र जीयते ६
अष्टापदी चतुरक्षी चतुःश्रोत्रा चतुर्हनुः ।
द्व्यास्या द्विजिह्वा भूत्वा सा राष्ट्रमव धूनुते ब्रह्मज्यस्य ७(१९०)
तद्वै राष्ट्रमा स्रवति नावं भिन्नामिवोदकम् । ब्रह्माणं यत्र हिंसन्ति तद् राष्ट्रं हन्ति दुच्छुना ८
तं वृक्षा अप सेधन्ति छायां नो मोपगा इति । यो ब्राह्मणस्य सद्धनमभि नारद मन्यते ९
विषमेतद् देवकृतं राजा वरुणोऽब्रवीत् । न ब्राह्मणस्य गां जग्ध्वा राष्ट्रे जागार कश्चन १०
नवैव ता नवतयो या भूमिर्व्यधूनुत । प्रजां हिंसित्वा ब्राह्मणीमसंभव्यं पराभवन् ११
यां मृतायानुबध्नन्ति कूद्यं पदयोपनीम् । तद्वै ब्रह्मज्य ते देवा उपस्तरणमब्रुवन् १२
अश्रूणि कृपमाणस्य यानि जीतस्य वावृतुः । तं वै ब्रह्मज्य ते देवा अपां भागमधारयन् १३
येन मृतं स्नपयन्ति श्मश्रूणि येनोन्दते । तं वै ब्रह्मज्य ते देवा अपां भागमधारयन् १४ २२४५
न वर्षं मैत्रावरुणं ब्रह्मज्यमभि वर्षति । नास्मै समितिः कल्पते न मित्रं नयते वशम् १५(१९९)

॥ १७ ॥ (अथर्व० १२।५।१-७३)

प्रथमः पर्यायः ॥ १ ॥

(२००-२७२) (कश्यपः ?) अथर्वाचार्यः । [सप्तपर्यायाः] १ प्राजापत्याऽनुष्टुप् ; २,६ भुरिक्साम्न्यनुष्टुप् ; ३ चतुष्पदा स्वराडुष्णिक् ; ४ आसुर्यनुष्टुप् ; ५ साम्नीपंक्तिः ।

श्रमेण तपसा सृष्टा ब्रह्मणा वित्तर्ते श्रिता १ सत्येनावृता श्रिया प्रावृता यशसा परीवृता २
स्वधया परिहिता श्रद्धया पर्यूढा दीक्षया गुप्ता यज्ञे प्रतिष्ठिता लोको निधनम् ३
ब्रह्म पदवायं ब्राह्मणोऽधिपतिः ४ तामाददानस्य ब्रह्मगवीं जिनतो ब्राह्मणं क्षत्रियस्य ५
अप क्रामति सूनृता वीर्यं१ पुण्या लक्ष्मीः ६(२०५)

द्वितीयः पर्यायः ॥ २ ॥

७-९ आर्च्यनुष्टुप् (७ भुरिक्); १० उष्णिक् ; (७-१० एकपदा); ११ आर्ची निचृत्पङ्क्तिः ।

ओजश्च तेजश्च सहश्च बलं च वाक् चेन्द्रियं च श्रीश्च धर्मश्च ७ २२५३

ब्रह्म च क्षत्रं च राष्ट्रं च विशश्च त्विषिश्च यशश्च वर्चश्च द्रविणं च ८
आयुश्च रूपं च नाम च कीर्तिश्च प्राणश्चापानश्च चक्षुश्च श्रोत्रं च ९
पयश्च रसश्चान्नं चान्नाद्यं चर्तं च सत्यं चेष्टं च पूर्तं च प्रजा च पशवश्च १०
तानि सर्वाण्यप क्रामन्ति ब्रह्मगवीमाददानस्य जिनतो ब्राह्मणं क्षत्रियस्य ११ (२१०)

तृतीयः पर्यायः ॥ ३ ॥

१२ विराड् विषमा गायत्री; १३ आसुर्यनुष्टुप्; १४,२६ साम्नी उष्णिक्; १५ गायत्री; १६-१७, १९-२० प्राजापत्याऽनुष्टुप्; १८ याजुषी गायत्री; २१,२५ साम्न्यनुष्टुप्; २२ साम्नी बृहती; २३ याजुषी त्रिष्टुप्; २४ आसुरी गायत्री; २७ आर्च्युष्णिक् ।

सैषा भीमा ब्रह्मगव्यघविषा साक्षात् कृत्या कूल्बजमावृता १२
सर्वाण्यस्यां घोराणि सर्वे च मृत्यवः १३ सर्वाण्यस्यां क्रूराणि सर्वे पुरुषवधाः १४ ११६०
सा ब्रह्मज्यं देवपीयुं ब्रह्मगव्यादीयमाना मृत्योः पड्वीश आ द्यति १५
मेनिः शतवधा हि सा ब्रह्मज्यस्य क्षितिर्हि सा १६(२१५)
तस्माद्वै ब्राह्मणानां गौर्दुराधर्षा विजानता १७ वज्रो धावन्ती वैश्वानर उद्वीता १८
हेतिः शफानुत्खिदन्ती महादेवोऽपेक्षमाणा १९
क्षुरपविरीक्षमाणा वाश्यमानाभि स्फूर्जति २० मृत्युर्हिङ्कृण्वत्युग्रो देवः पुच्छं पर्यस्यन्ती २१
सर्वज्यानिः कर्णौ वरीवर्जयन्ती राजयक्ष्मो मेहन्ती २२
मेनिर्दुह्यमाना शीर्षक्तिर्दुग्धा २३ सेदिरुपतिष्ठन्ती मिथोयोधः परामृष्टा २४ ११७०
शरव्याऽ मुखेऽपिनह्यमान ऋतिर्हन्यमाना २५ अघविषा निपतन्ती तमो निपतिता २६
अनुगच्छन्ती प्राणानुप दासयति ब्रह्मगवी ब्रह्मज्यस्य २७(२२६)

चतुर्थः पर्यायः ॥ ४ ॥

२८ आसुरी गायत्री; २९,३७ आसुर्यनुष्टुप्; ३० साम्न्यनुष्टुप्; ३१ याजुषी त्रिष्टुप्; ३२ साम्नी गायत्री; ३३-३४ साम्नी बृहती, ३५ भुरिक्साम्न्यनुष्टुप्; ३६ साम्न्युष्णिक्; ३८ प्रतिष्ठा गायत्री ।

वैरं विकृत्यमाना पौत्राद्यं विभाज्यमाना २८ देवहेतिर्ह्रियमाणा व्यृद्धिर्हृता २९
पाप्माऽधिधीयमाना पारुष्यमवधीयमाना ३० विषं प्रयस्यन्ती तक्मा प्रयस्ता ३१
अघं पच्यमाना दुष्वप्न्यं पक्वा ३२ मूलबर्हणी पर्याक्रियमाणा क्षितिः पर्याकृता ३३
असंज्ञा गन्धेन शुगुद्ध्रियमाणाशीविष उद्धृता ३४ अभूतिरुपह्रियमाणा पराभूतिरुपहृता ३५ ११८०
शर्वः क्रुद्धः पिश्यमाना शिमिदा पिशिता ३६ अवर्तिरश्यमाना निर्ऋतिरशिता ३७
अशिता लोकाच्छिनत्ति ब्रह्मगवी ब्रह्मज्यमस्माच्चामुष्माच्च ३८(२३७)

पञ्चमः पर्यायः ॥ ५ ॥

३९ साम्नी पंक्तिः; ४० याजुष्यनुष्टुप्; ४१,४६ भुरिक् साम्न्यनुष्टुप्; ४२ आसुरी बृहती; ४३ साम्नी बृहती; ४४ पिपीलिकमध्याऽनुष्टुप्; ४५ आर्ची बृहती ।

तस्या आहननं कृत्या मेनिराशसनं वलग ऊबध्यम् ३९ अस्वगता परिह्णुता ४०
अग्निः क्रव्याद्भूत्वा ब्रह्मगवी ब्रह्मज्यं प्रविश्यात्ति ४१ सर्वास्याङ्गा पर्वा मूलानि वृश्चति ४२
छिनत्त्यस्य पितृबन्धु परा भावयति मातृबन्धु ४३
विवाहां ज्ञातीन्त्सर्वानपि क्षापयति ब्रह्मगवी ब्रह्मज्यस्य क्षत्रियेणापुनर्दीयमाना ४४ २२९०
अवास्तुमेनमस्वगमप्रजसं करोत्यपरापरणो भवति क्षीयते ४५
य एवं विदुषो ब्राह्मणस्य क्षत्रियो गामादत्ते ४६(२४५)

षष्ठः पर्यायः ॥ ६ ॥

४७,४९, ५१-५३, ५७-५९, ६१ प्राजापत्याऽनुष्टुप्; ४८ आर्च्यनुष्टुप्; ५० साम्नी बृहती; ५४-५५ प्राजापत्योष्णिक्; ५६ आसुरी गायत्री; ६० गायत्री ।

क्षिप्रं वै तस्याहनने गृध्राः कुर्वत ऐलबम् ४७
क्षिप्रं वै तस्यादहनं परि नृत्यन्ति केशिनीराघ्नानाः पाणिनोरसि कुर्वाणाः पापमैलबम् ४८
क्षिप्रं वै तस्य वास्तुषु वृकाः कुर्वत ऐलबम् ४९
क्षिप्रं वै तस्य पृच्छन्ति यत् तदासी३दिदं नु ता३दिति ५०
छिन्ध्या च्छिन्धि प्र च्छिन्ध्यपि क्षापय क्षापय ५१
आददानमाङ्गिरसि ब्रह्मज्यमुप दासय ५२ वैश्वदेवी ह्यु१च्यसे कृत्या कूल्बजमावृता ५३
ओषन्ती समोषन्ती ब्रह्मणो वज्रः ५४ क्षुरपविर्मृत्युर्भूत्वा वि धाव त्वम् ५५ २३०१
आ दत्से जिनतां वर्च इष्टं पूर्तं चाशिषः ५६
आदाय जीतं जीताय लोके३ऽमुष्मिन् प्र यच्छसि ५७
अघ्न्ये पदवीर्भव ब्राह्मणस्याभिशस्त्या ५८ मेनिः शरव्या भवाघादघविषा भव ५९
अघ्न्ये प्र शिरो जहि ब्रह्मज्यस्य कृतागसो देवपीयोरराधसः ६०
त्वया प्रमूर्णं मृदितमग्निर्दहतु दुश्चितम् ६१(२६०)

सप्तमः पर्यायः ॥ ७ ॥

६२-६४, ६६, ६८-७० प्राजापत्याऽनुष्टुप्; ६५ गायत्री, ६७ प्राजापत्या गायत्री; ७१ आसुरी पंक्तिः; ७२ प्राजापत्या त्रिष्टुप्; ७३ आसुर्युष्णिक् ।

वृश्च प्र वृश्च सं वृश्च दह प्र दह सं दह ६२ ब्रह्मज्यं देव्यघ्न्य आ मूलादनुसंदह ६३
यथाऽयाद्यमसादनात् पापलोकान् परावतः ६४

एवा त्वं दैव्यघ्न्ये ब्रह्मज्यस्यं कृतागसो देवपीयोरराधसः ६५ २३११
वज्रेण शतपर्वणा तीक्ष्णेन क्षुरभृष्टिना ६६ प्र स्कन्धान् प्र शिरो जहि ६७
लोमान्यस्य सं छिन्धि त्वचमस्य वि वेष्टय ६८ मांसान्यस्य शातय स्नावान्यस्य सं वृह ६९
अस्थीन्यस्य पीडय मज्जानमस्य निर्जहि ७० सर्वास्याङ्गा पर्वाणि वि श्रथय ७१
अग्निरेनं क्रव्यात् पृथिव्या नुदतामुदोषतु वायुरन्तरिक्षान्महतो वरिम्णः ७२
सूर्य एनं दिवः प्र णुदतां न्योषतु ७३(२७२)

॥ १८ ॥ (अथर्व० ४।३८।१-७)

(२७३-७९) बादरायणिः । १-४ अप्सराः, ५-७ ऋषभः (वाजिनीवान् ऋषभः) । अनुष्टुप् , ३ षट्पदा त्र्यवसाना जगती, ५ भुरिगत्यष्टिः, ६ त्रिष्टुप् , ७ त्र्यवसाना पञ्चपदानुष्टुब्गर्भा पुरउपरिष्टाज्ज्योतिष्मती जगती ।

उद्भिन्दतीं संजयन्तीमप्सरां साधुदेविनीम् । ग्लहे कृतानि कृण्वानामप्सरां तामिह हुवे १ २३१०
विचिन्वतीमाकिरन्तीमप्सरां साधुदेविनीम् । ग्लहे कृतानि गृह्णानामप्सरां तामिह हुवे २
यायैः परिनृत्यत्याददाना कृतं ग्लहात् । सा नः कृतानि सीषती प्रहामाप्नोतु मायया ।
सा नः पयस्वत्यैतु मा नो जैषुरिदं धनम् ३(२७५)
या अक्षेषु प्रमोदन्ते शुचं क्रोधं च बिभ्रती । आनन्दिनीं प्रमोदिनीमप्सरां तामिह हुवे ४
सूर्यस्य रश्मीननु याः संचरन्ति मरीचीर्वा या अनुसंचरन्ति ।
यासामृषभो दूरतो वाजिनीवान्त्सद्यः सर्वाँल्लोकान् पर्यैति रक्षन् ।
स न ऐतु होममिमं जुषाणो३ऽन्तरिक्षेण सह वाजिनीवान् ५
अन्तरिक्षेण सह वाजिनीवन् कर्की वत्सामिह रक्ष वाजिन् ।
इमे ते स्तोका बहुला एह्यर्वाङियं ते कर्कीह ते मनोऽस्तु ६ २३१५
अन्तरिक्षेण सह वाजिनीवन् कर्की वत्सामिह रक्ष वाजिन् ।
अयं घासो अयं व्रज इह वत्सां नि बध्नीमः । यथानाम व ईश्महे स्वाहा ७

॥ १९ ॥ (अथर्व० ९।४।१-२४)

(२८०-३०३) ब्रह्मा । ऋषभः । त्रिष्टुप्; ८ भुरिक्; ६,१०,२४ जगती; ११-१७, १९-२०,२३ अनुष्टुप्, १८ उपरिष्टाद्बृहती; २१ आस्तारपंक्तिः ।

साहस्रस्त्वेष ऋषभः पयस्वान् विश्वा रूपाणि वक्षणासु बिभ्रत् ।
भद्रं दात्रे यजमानाय शिक्षन् बार्हस्पत्य उस्रियस्तन्तुमातान् १(२८०)

अपां यो अग्रे प्रतिमा बभूव प्रभूः सर्वस्मै पृथिवीव देवी।
पिता वत्सानां पतिरघ्न्यानां साहस्रे पोषे अपि नः कृणोतु २
पुमानन्तर्वान्त्स्थविरः पयस्वान् वसोः कबन्धमृषभो बिभर्ति।
तमिन्द्राय पथिभिर्देवयानैर्हुतमग्निर्वहतु जातवेदाः ३
पिता वत्सानां पतिरघ्न्यानामथो पिता महतां गर्गराणाम्।
वत्सो जरायु प्रतिधुक् पीयूष आमिक्षा घृतं तद्वस्य रेतः ४ २३३०

देवानां भाग उपनाह एषो३ऽपां रस ओषधीनां घृतस्य।
सोमस्य भक्षमवृणीत शक्रो बृहन्नद्रिरभवद्यच्छरीरम् ५
सोमेन पूर्णं कलशं बिभर्षि त्वष्टा रूपाणां जनिता पशूनाम्।
शिवास्ते सन्तु प्रजन्व इह या इमा न्य१स्मभ्यं स्वधिते यच्छ या अमूः ६(२८५)

आज्यं बिभर्ति घृतमस्य रेतः साहस्रः पोषस्तमु यज्ञमाहुः।
इन्द्रस्य रूपमृषभो वसानः सो अस्मान् देवाः शिव ऐतु दत्तः ७
इन्द्रस्यौजो वरुणस्य बाहू अश्विनोरंसौ मरुतामियं ककुत्।
बृहस्पतिं संभृतमेतमाहुर्ये धीरासः कवयो ये मनीषिणः ८
दैवीर्विशः पयस्वाना तनोषि त्वामिन्द्रं त्वां सरस्वन्तमाहुः
सहस्रं स एकमुखा ददाति यो ब्राह्मण ऋषभमाजुहोति ९
बृहस्पतिः सविता ते वयो दधौ त्वष्टुर्वायोः पर्यात्मा त आभृतः।
अन्तरिक्षे मनसा त्वा जुहोमि बर्हिष्टे द्यावापृथिवी उभे स्ताम् १०
य इन्द्र इव देवेषु गोष्वेति विवावदत्। तस्य ऋषभस्याङ्गानि ब्रह्मा सं स्तौतु भद्रया ११
पार्श्वे आस्तामनुमत्या भगस्यास्तामनूवृजौ। अष्ठीवन्तावब्रवीन्मित्रो ममैतौ केवलाविति १२
भसदासीदादित्यानां श्रोणी आस्तां बृहस्पतेः। पुच्छं वातस्य देवस्य तेन धूनोत्योषधीः १३
गुदा आसन्त्सिनीवाल्याः सूर्यायास्त्वचमब्रुवन्। उत्थातुरब्रुवन् पद ऋषभं यदकल्पयन् १४ २३४०

क्रोड आसीज्जामिशंसस्य सोमस्य कलशो धृतः।
देवाः संगत्य यत् सर्व ऋषभं व्यकल्पयन् १५
ते कुष्ठिकाः सरमायै कूर्मेभ्यो अदधुः शफान्।
ऊबध्यमस्य कीटेभ्यः श्ववर्तेभ्यो अधारयन् १६(२९५)

शृङ्गाभ्यां रक्ष ऋषत्यवर्तिं हन्ति चक्षुषा । शृणोति भद्रं कर्णाभ्यां गवां यः पतिरघ्न्यः १७ १३४३
शतयाजं स यजते नैनं दुन्वन्त्यग्नयः । जिन्वन्ति विश्वे तं देवा यो ब्राह्मण ऋषभमाजुहोति १८
ब्राह्मणेभ्य ऋषभं दत्त्वा वरीयः कृणुते मनः । पुष्टिं सो अघ्न्यानां स्वे गोष्ठेऽव पश्यते १९
गावः सन्तु प्रजाः सन्त्वथो अस्तु तनूबलम् ।
तत् सर्वमनु मन्यन्तां देवा ऋषभदायिने २०
अयं पिपान इन्द्र इद्रयिं दधातु चेतनीम् ।
अयं धेनुं सुदुघां नित्यवत्सां वशं दुहां विपश्चितं परो दिवः २१(३००)
पिशङ्गरूपो नभसो वयोधा ऐन्द्रः शुष्मो विश्वरूपो न आऽगन् ।
आयुरस्मभ्यं दधत् प्रजां च रायश्च पोषैरभि नः सचताम् २२
उपेहोपपर्चनास्मिन् गोष्ठ उप पृञ्च नः । उप ऋषभस्य यद्रेत उपेन्द्र तव वीर्यम् २३
एतं वो युवानं प्रति दध्मो अत्र तेन क्रीडन्तीश्चरत वशाँ अनु ।
मा नो हासिष्ट जनुषा सुभागा रायश्च पोषैरभि नः सचध्वम् २४ १३५०

॥ २० ॥ (अथर्व० ६।८६।१-३)

(३०४-६) अथर्वा । एकवृषः [वृषकामना ।] । अनुष्टुप् ।

वृषेन्द्रस्य वृषा दिवो वृषा पृथिव्या अयम् । वृषा विश्वस्य भूतस्य त्वमेकवृषो भव १
समुद्र ईशे स्रवतामग्निः पृथिव्या वशी । चन्द्रमा नक्षत्राणामीशे त्वमेकवृषो भव २(३०५)
सम्राडस्यसुराणां ककुन्मनुष्याणाम् । देवानामर्धभागसि त्वमेकवृषो भव ३

॥ ११ ॥ (साम० ६१६)

(३०७) वामदेवो गौतमः । त्रिष्टुप् ।

सहर्षभाः सहवत्सा उदेत विश्वा रूपाणि बिभ्रतीर्द्व्यूध्नीः ।
उरुः पृथुरयं वो अस्तु लोक इमा आपः सुप्रपाणा इह स्त १२

॥ २२ ॥ (अथर्व० २।२६।१-५)

(३०८-१२) सविता । पशवः[पशुसंवर्धनं।] । त्रिष्टुप्, ३ उपरिष्टाद्विराड्बृहती, ४ भुरिगनुष्टुप्, ५ अनुष्टुप् ।

एह यन्तु पशवो ये परेयुर्वायुर्येषां सहचारं जुजोष ।
त्वष्टा येषां रूपधेयानि वेदास्मिन् तान् गोष्ठे सविता नि यच्छतु १ १३५५
इमं गोष्ठं पशवः सं स्रवन्तु बृहस्पतिरा नयतु प्रजानन् ।
सिनीवाली नयत्वाग्रमेषामाजग्मुषो अनुमते नि यच्छ २

सं सं स्रवन्तु पशवः समश्वाः समु पूरुषाः ।
सं धान्यस्य या स्फातिः संस्राव्येण हविषा जुहोमि ३(३१०)
सं सिञ्चामि गवां क्षीरं समाज्येन बलं रसम् ।
संसिक्ता अस्माकं वीरा ध्रुवा गावो मयि गोपतौ ४
आ हरामि गवां क्षीरमाहार्षं धान्यं१ रसम् । आहृता अस्माकं वीरा आ पत्नीरिदमस्तकम् ५

॥ २३ ॥ (अथर्व० ३।२८।१-६)

(३१३-१८) ब्रह्मा । यमिनी [पशुपोषणम् ।] । अनुष्टुप् , १ अतिशक्वरीगर्भा चतुष्पदातिजगती, ४ यवमध्या विराट् ककुप् , ५ त्रिष्टुप् , ६ विराड्गर्भा प्रस्तारपङ्क्तिः ।

एकैकयैषा सृष्ट्या सं बभूव यत्र गा असृजन्त भूतकृतो विश्वरूपाः ।
यत्र विजायते यमिन्यपर्तुः सा पशून् क्षिणाति रिफती रुशती १ २३६०
एषा पशून्त्सं क्षिणाति क्रव्याद्भूत्वा व्यद्वरी ।
उतैनां ब्रह्मणे दद्यात् तथा स्योना शिवा स्यात् २
शिवा भव पुरुषेभ्यो गोभ्यो अश्वेभ्यः शिवा । शिवाऽस्मै सर्वस्मै क्षेत्राय शिवा न इहैधि ३
इह पुष्टिरिह रस इह सहस्रसातमा भव । पशून् यमिनि पोषय ४
यत्रा सुहार्दः सुकृतो मदन्ति विहाय रोगं तन्व१ः स्वायाः ।
तं लोकं यमिन्यभिसंबभूव सा नो मा हिंसीत् पुरुषान् पशूंश्च ५
यत्रा सुहार्दां सुकृतामग्निहोत्रहुतां यत्र लोकः ।
तं लोकं यमिन्यभिसंबभूव सा नो मा हिंसीत् पुरुषान् पशूंश्च ६

॥ २४ ॥ [३१९-२१] (वा० य० ४।३३)

उस्रावेतं धूर्षाहौ युज्येथामनश्रू अवीरहणौ ब्रह्मचोदनौ ।
स्वस्ति यजमानस्य गृहान् गच्छतम् ३३

॥ २५ ॥ (वा० य० ११।७३)

वि मुच्यध्वमघ्न्या देवयाना अगन्म तमसस्पारमस्य । ज्योतिरापाम ७३(३२०)

॥ २६ ॥ (वा० य० ३५।१३)

अनड्वाहमन्वारभामहे सौरभेय॰ स्वस्तये । स न इन्द्र इव देवेभ्यो वह्निः सन्तारणो भव १३

॥ २७ ॥ (अथर्व० ४।११।१-१२)

(३२२-३३) भृग्वङ्गिराः । अनड्वान् , इन्द्रः । त्रिष्टुप् ; १,४ जगती, २ भुरिक् , ७ व्यवसाना षट्पदानुष्टुब्गर्भोपरिष्टाज्जागतानिचृच्छक्करी, ८-१२ अनुष्टुप् ।

अनड्वान् दाधार पृथिवीमुत द्यामनड्वान् दाधारोर्व१न्तरिक्षम् ।
अनड्वान् दाधार प्रदिशः षडुर्वीरनड्वान् विश्वं भुवनमा विवेश १ २३६१

*

अनड्वानिन्द्रः स पशुभ्यो वि चष्टे त्रयांछक्रो वि मिमीते अध्वनः ।
भूतं भविष्यद्भुवना दुहानः सर्वा देवानां चरति व्रतानि २ २३७०
इन्द्रो जातो मनुष्येष्वन्तर्घर्मस्तप्तश्चरति शोशुचानः ।
सुप्रजाः सन्त्स उदारे न सर्षद्यो नाश्नीयादनडुहो विजानन् ३
अनड्वान् दुहे सुकृतस्य लोक ऐनं प्याययति पवमानः पुरस्तात् ।
पर्जन्यो धारा मरुत ऊधो अस्य यज्ञः पयो दक्षिणा दोहो अस्य ४(३२५)
यस्य नेशे यज्ञपतिर्न यज्ञो नास्य दातेशे न प्रतिग्रहीता ।
यो विश्वजिद्विश्वभृद्विश्वकर्मा घर्मं नो ब्रूत यतमश्चतुष्पात् ५
येन देवाः स्वरारुरुहुर्हित्वा शरीरममृतस्य नाभिम् ।
तेन गेष्म सुकृतस्य लोकं घर्मस्य व्रतेन तपसा यशस्यवः ६
इन्द्रो रूपेणाग्निर्वहेन प्रजापतिः परमेष्ठी विराट् ।
विश्वानरे अक्रमत वैश्वानरे अक्रमतानडुह्यक्रमत । सोऽदृंहयत सोऽधारयत ७ २३७५
मध्यमेतदनडुहो यत्रैष वह आहितः । एतावदस्य प्राचीनं यावान् प्रत्यङ् समाहितः ८
यो वेदानडुहो दोहान्त्सप्तानुपदस्वतः । प्रजां च लोकं चाप्नोति तथा सप्तऋषयो विदुः ९
पद्भिः सेदिमवक्रामन्निरां जङ्घाभिरुत्खिदन् ।
श्रमेणानड्वान् कीलालं कीनाशश्चाभि गच्छतः १०
द्वादश वा एता रात्रीर्व्रत्या आहुः प्रजापतेः । तत्रोप ब्रह्म यो वेद तद्वा अनडुहो व्रतम् ११
दुहे सायं दुहे प्रातर्दुहे मध्यंदिनं परि । दोहा ये अस्य संयन्ति तान् विद्मानुपदस्वतः १२(३३३)

---

५५ अश्वः ।

॥ १ ॥ (ऋ० १।१६२।१-२२)+

(१-३५) दीर्घतमा औचथ्यः । त्रिष्टुप्, ३-६ जगती ।

मा नो मित्रो वरुणो अर्यमाऽऽयुरिन्द्र ऋभुक्षा मरुतः परि ख्यन् ।
यद्वाजिनो देवजातस्य सप्तेः प्रवक्ष्यामो विदथे वीर्याणि १ २३८१

+ वा. य. २५,२४-४५ ।

यन्निर्णिजा रेक्णसा प्रावृतस्य रातिं गृभीतां मुखतो नयन्ति ।
सुप्राङजो मेम्यद्विश्वरूप इन्द्रापूष्णोः प्रियमप्येति पाथः २ २३८२
एष छागः पुरो अश्वेन वाजिना पूष्णो भागो नीयते विश्वदेव्यः ।
अभिप्रियं यत् पुरोळाशमर्वता त्वष्टेदेनं सौश्रवसाय जिन्वति ३
यद्धविष्यमृतुशो देवयानं त्रिर्मानुषाः पर्यश्वं नयन्ति ।
अत्रा पूष्णः प्रथमो भाग एति यज्ञं देवेभ्यः प्रतिवेदयन्नजः ४
होताऽध्वर्युरावया अग्निमिन्धो ग्रावग्राभ उत शंस्ता सुविप्रः ।
तेन यज्ञेन स्वरंकृतेन स्विष्टेन वक्षणा आ पृणध्वम् ५(५)
यूपव्रस्का उत ये यूपवाहा श्चषालं ये अश्वयूपाय तक्षति ।
ये चार्वते पचनं संभरन्त्यु तो तेषामभिगूर्तिर्न इन्वतु ६
उप प्रागात् सुमन्मेऽधायि मन्म देवानामाशा उप वीतपृष्ठः ।
अन्वेनं विप्रा ऋषयो मदन्ति देवानां पुष्टे चकृमा सुबन्धुम् ७
यद्वाजिनो दाम संदानमर्वतो या शीर्षण्या रशना रज्जुरस्य ।
यद्वा घास्य प्रभृतमास्ये तृणं सर्वा ता ते अपि देवेष्वस्तु ८
यदश्वस्य क्रविषो मक्षिकाऽऽश यद्वा स्वरौ स्वधितौ रिप्तमस्ति ।
यद्धस्तयोः शमितुर्यन्नखेषु सर्वा ता ते अपि देवेष्वस्तु ९
यदूवध्यमुदरस्यापवाति य आमस्य क्रविषो गन्धो अस्ति ।
सुकृता तच्छमितारः कृण्वन्तू त मेधं शृतपाकं पचन्तु १० २३९०
यत् ते गात्रादग्निना पच्यमाना दभि शूलं निहतस्यावधावति ।
मा तद्भूम्यामा श्रिषन्मा तृणेषु देवेभ्यस्तदुशद्भ्यो रातमस्तु ११
ये वाजिनं परिपश्यन्ति पक्वं य ईमाहुः सुरभिर्निर्हरेति ।
ये चार्वतो मांसभिक्षामुपासत उतो तेषामभिगूर्तिर्न इन्वतु १२
यन्नीक्षणं मांस्पचन्या उखाया या पात्राणि यूष्ण आसेचनानि ।
ऊष्मण्याऽपिधाना चरूणा मङ्काः सूनाः परि भूषन्त्यश्वम् १३
निक्रमणं निषदनं विवर्तनं यच्च पड्बीशमर्वतः ।
यच्च पपौ यच्च घासिं जघास सर्वा ता ते अपि देवेष्वस्तु १४
मा त्वाऽग्निर्ध्वनयीद्धूमगन्धि र्मोखा भ्राजन्त्यभि विक्त जघ्रिः ।
इष्टं वीतमभिगूर्तं वषट्कृतं तं देवासः प्रति गृभ्णन्त्यश्वम् १५(१५)

यदश्वाय वास उपस्तृणन्त्य धीवासं या हिरण्यान्यस्मै ।
संदानमर्वन्तं पड्बीशं प्रिया देवेष्वा यामयन्ति १६ १३९६
यत् ते सादे महसा शूकृतस्य पार्ष्ण्या वा कशया वा तुतोद ।
स्रुचेव ता हविषो अध्वरेषु सर्वा ता ते ब्रह्मणा सूदयामि १७
चतुस्त्रिंशद् वाजिनो देवबन्धो र्वङ्क्रीरश्वस्य स्वधितिः समेति ।
अच्छिद्रा गात्रा वयुना कृणोत परुष्परुरनुघुष्या वि शस्त १८
एकस्त्वष्टुरश्वस्या विशस्ता द्वा यन्तारा भवतस्तथ ऋतुः ।
या ते गात्राणामृतुथा कृणोमि ताता पिण्डानां प्र जुहोम्यग्नौ १९
मा त्वा तपत् प्रिय आत्माऽपियन्तं मा स्वधितिस्तन्व१ आ तिष्ठिपत् ते ।
मा ते गृध्नुरविशस्ताऽतिहाय छिद्रा गात्राण्यसिना मिथू कः २०(१०)
न वा उ एतन्म्रियसे न रिष्यसि देवाँ इदेषि पथिभिः सुगेभिः ।
हरी ते युञ्जा पृषती अभूता मुपास्थाद् वाजी धुरि रासभस्य २१
सुगव्यं नो वाजी स्वश्व्यं पुंसः पुत्राँ उत विश्वापुषं रयिम् ।
अनागास्त्वं नो अदितिः कृणोतु क्षत्रं नो अश्वो वनतां हविष्मान् २२

॥ २ ॥ (ऋ० १।१६३।१-१३)त्रिष्टुप् । +

यदक्रन्दः प्रथमं जायमान उद्यन्त्समुद्रादुत वा पुरीषात् ।
श्येनस्य पक्षा हरिणस्य बाहू उपस्तुत्यं महि जातं ते अर्वन् १
यमेन दत्तं त्रित एनमायुन गिन्द्र एणं प्रथमो अध्यतिष्ठत् ।
गन्धर्वो अस्य रशनामगृभ्णात् सूरादश्वं वसवो निरतष्ट २
असि यमो अस्यादित्यो अर्व न्नसि त्रितो गुह्येन व्रतेन ।
असि सोमेन समया विपृक्त आहुस्ते त्रीणि दिवि बन्धनानि ३(१५)
त्रीणि त आहुर्दिवि बन्धनानि त्रीण्यप्सु त्रीण्यन्तः समुद्रे ।
उतेव मे वरुणश्छन्त्स्यर्वन् यत्रा त आहुः परमं जनित्रम् ४
इमा ते वाजिन्नवमार्जनानी मा शफानां सनितुर्निधाना ।
अत्रा ते भद्रा रशना अपश्य मृतस्य या अभिरक्षन्ति गोपाः ५
आत्मानं ते मनसाऽऽरादजाना मवो दिवा पतयन्तं पतङ्गम् ।
शिरो अपश्यं पथिभिः सुगेभि रेणुभिर्जेहमानं पतत्रि ६ १४०८

+ वा. य. २९, १२-२४ ।

अत्रा ते रूपमुत्तममपश्यं जिगीषमाणमिष आ पदे गोः ।
यदा ते मर्तो अनु भोगमानळादिद् ग्रसिष्ठ ओषधीरजीगः ७
अनु त्वा रथो अनु मर्यो अर्वन्ननु गावोऽनु भगः कनीनाम् ।
अनु व्रातासस्तव सख्यमीयुरनु देवा ममिरे वीर्यं ते ८(३०)
हिरण्यशृङ्गोऽयो अस्य पादा मनोजवा अवर इन्द्र आसीत् ।
देवा इदस्य हविरद्यमायन् यो अर्वन्तं प्रथमो अध्यतिष्ठत् ९
ईर्मान्तासः सिलिकमध्यमासः सं शूरणासो दिव्यासो अत्याः ।
हंसा इव श्रेणिशो यतन्ते यदाक्षिषुर्दिव्यमज्ममश्वाः १०
तव शरीरं पतयिष्ण्वर्वन् तव चित्तं वात इव ध्रजीमान् ।
तव शृङ्गाणि विष्ठिता पुरुत्रा ऽरण्येषु जर्भुराणा चरन्ति ११
उप प्रागाच्छसनं वाज्यर्वा देवद्रीचा मनसा दीध्यानः ।
अजः पुरो नीयते नाभिरस्यानु पश्चात् कवयो यन्ति रेभाः १२
उप प्रागात् परमं यत् सधस्थमर्वाँ अच्छा पितरं मातरं च ।
अद्या देवाञ्जुष्टतमो हि गम्या अथा शास्ते दाशुषे वार्याणि १३ ३४३५

॥ ३ ॥ (ऋ० ७।३८।७-८)*

(३६-३७) मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । वाजिनः । त्रिष्टुप् ।

शं नो भवन्तु वाजिनो हवेषु देवताता मितद्रवः स्वर्काः ।
जम्भयन्तोऽहिं वृकं रक्षांसि सनेम्यस्मद्युयवन्नमीवाः ७
वाजेवाजेऽवत वाजिनो नो धनेषु विप्रा अमृता ऋतज्ञाः ।
अस्य मध्वः पिबत मादयध्वं तृप्ता यात पथिभिर्देवयानैः ८

॥ ४ ॥ [३८-७९] (वा० य० ७।४७)

यमाय त्वा मह्यं वरुणो ददातु सोऽमृतत्वमशीय हयो दात्र एधि वयो मह्यं प्रतिग्रहीत्रे ४७

॥ ५ ॥ (वा० य० ८।१२)

यस्ते अश्वसनिर्भक्षो यो गोसनिस्तस्य त इष्टयजुष स्तुतस्तोमस्य
शस्तोक्थस्योपहूतस्योपहूतो भक्षयामि १२(३९)

---

* वा. य. ९,१६,१८।११, १०-११ ।

॥ ६ ॥ (वा० य० ९।६-९,१३ [उत्तरार्धः],-१५,१९)

अप्स्वन्तरमृतमप्सु भेषजमपामुत प्रशस्तिष्वश्वा भवत वाजिनः ।
देवीरापो यो व ऊर्मिः प्रतूर्तिः ककुन्मान् वाजसास्तेनायं वाजं सेत् ६ १४२०
वातो वा मनो वा गन्धर्वाः सप्तविंशतिः । ते अग्रेऽश्वमयुञ्जँस्ते अस्मिञ्जवमा दधुः ७
वातरंहा भव वाजिन् युज्यमान इन्द्रस्येव दक्षिणः श्रियैधि ।
युञ्जन्तु त्वा मरुतो विश्ववेदस आ ते त्वष्टा पत्सु जवं दधातु ८
जवो यस्ते वाजिन्निहितो गुहा यः श्येने परीत्तो अचरच्च वाते ।
तेन नो वाजिन् बलवान् बलेन वाजजिच्च भव समने च पारयिष्णुः ।
वाजिनो वाजजितो वाजं सरिष्यन्तो बृहस्पतेर्भागमवजिघ्रत ९
वाजिनो वाजजितोऽध्वन स्कभ्नुवन्तो योजना मिमानाः काष्ठां गच्छत १३
एष स्य वाजी क्षिपणिं तुरण्यति ग्रीवायां बद्धो अपिकक्ष आसनि ।
क्रतुं दधिक्रा अनु संसनिष्यदत् पथामङ्कांस्यन्वापनीफणत् स्वाहा १४(४५)
उत स्मास्य द्रवतस्तुरण्यतः पर्णं न वेरनुवाति प्रगर्धिनः ।
श्येनस्येव ध्रजतो अङ्कसं परि दधिक्राव्णः सहोर्जा तरित्रतः स्वाहा १५
आ मा वाजस्य प्रसवो जगम्यादेमे द्यावापृथिवी विश्वरूपे ।
आ मा गन्तां पितरा मातरा चा मा सोमो अमृतत्वेन गम्यात् ।
वाजिनो वाजजितो वाजं ससृवांसो बृहस्पतेर्भागमवजिघ्रत निमृजानाः १९

॥ ७ ॥ (वा० य० ११।१२,१५,१८-२१,४४,४६)

प्रतूर्त्तं वाजिन्ना द्रव वरिष्ठामनु संवतम् ।
दिवि ते जन्म परममन्तरिक्षे तव नाभिः पृथिव्यामधि योनिरित् १२
प्रतूर्वन्नेह्यवक्रामन्नशस्ती रुद्रस्य गाणपत्यं मयोभूरेहि ।
उर्वन्तरिक्षं वीहि स्वस्तिगव्यूतिरभयानि कृण्वन् पूष्णा सयुजा सह १५
आगत्य वाज्यध्वानं सर्वा मृधो वि धूनुते । अग्निं सधस्थे महति चक्षुषा नि चिकीषते १८ १४३०
आक्रम्य वाजिन् पृथिवीमग्निमिच्छ रुचा त्वम् ।
भूम्या वृत्वाय नो ब्रूहि यतः खनेम तं वयम् १९
द्यौस्ते पृष्ठं पृथिवी सधस्थमात्माऽन्तरिक्षं समुद्रो योनिः ।
विख्याय चक्षुषा त्वमभि तिष्ठ पृतन्यतः २०(५२)

उत्क्राम महते सौभगायास्मादास्थानाद् द्रविणोदा वाजिन्।
वयꣳ स्याम सुमतौ पृथिव्या अग्निं खनन्त उपस्थे अस्याः २१ २४३३
उदक्रमीद् द्रविणोदा वाज्यर्वाकः सुलोकꣳ सुकृतं पृथिव्याम्।
ततः खनेम सुप्रतीकमग्निꣳ स्वो रुहाणा अधि नाकमुत्तमम् २२
स्थिरो भव वीड्वङ्ग आशुर्भव वाज्यर्वन्। पृथुर्भव सुषदस्त्वमग्नेः पुरीषवाहणः ४४(५५)
प्रैतु वाजी कनिक्रदन्नानदद्रासभः पत्वा। भरन्नग्निं पुरीष्यं मा पाद्यायुषः पुरा।
वृषाऽग्निं वृषणं भरन्नपां गर्भꣳ समुद्रियम्। अग्न आ याहि वीतये ४६

॥ ८ ॥ (वा० य० २२।३-४,१९)

अभिधा असि भुवनमसि यन्ताऽसि धर्ता। स त्वमग्निं वैश्वानरꣳ सप्रथसं गच्छ स्वाहाकृतः ३
स्वगा त्वा देवेभ्यः प्रजापतये ब्रह्मन्नश्वं भन्त्स्यामि देवेभ्यः प्रजापतये तेन राध्यासम्।
तं बधान देवेभ्यः प्रजापतये तेन राध्नुहि ४
विभूर्मात्रा प्रभूः पित्राऽश्वोऽसि हयोऽस्यत्योऽसि मयोऽस्यर्वाऽसि सप्तिरसि वाज्यसि
वृषाऽसि नृमणा असि। ययुर्नामाऽसि शिशुर्नामाऽस्यादित्यानां पत्वाऽन्विहि।
देवा आशापाला एतं देवेभ्योऽश्वं मेधाय प्रोक्षितꣳ रक्षते—ह रन्ति—रिह रमता—
मिह धृति—रिह स्वधृतिः स्वाहा १९

॥ ९ ॥ (वा० य० २३।५-७,१४-१७,२०-२१,३४-३७,३९-४४)

युञ्जन्ति ब्रध्नमरुषं चरन्तं परि तस्थुषः। रोचन्ते रोचना दिवि ५ २४४०
युञ्जन्त्यस्य काम्या हरी विपक्षसा रथे। शोणा धृष्णू नृवाहसा ६
यद्वातो अपो अगनीगन् प्रियामिन्द्रस्य तन्वम्।
एतꣳ स्तोतरनेन पथा पुनरश्वमावर्तयासि नः ७
सꣳशितो रश्मिना रथः सꣳशितो रश्मिना हयः।
सꣳशितो अप्स्वप्सुजा ब्रह्मा सोमपुरोगवः १४
स्वयं वाजिँस्तन्वं कल्पयस्व स्वयं यजस्व स्वयं जुषस्व। महिमा तेऽन्येन न सन्नशे १५
न वा उ एतन्म्रियसे न रिष्यसि देवाँ२ इदेषि पथिभिः सुगेभिः।
यत्रासते सुकृतो यत्र ते ययुस्तत्र त्वा देवः सविता दधातु १६(६५)

अग्निः पशुरासीत् तेनायजन्त स एतँल्लोकमजयद्यस्मिन्नग्निः स ते लोको भविष्यति तं जेष्यसि पिबैता अपः ।
वायुः पशुरासीत् तेनायजन्त स एतँल्लोकमजयद्यस्मिन् वायुः स ते लोको भविष्यति तं जेष्यसि पिबैता अपः ।
सूर्यः पशुरासीत् तेनायजन्त स एतँल्लोकमजयद्यस्मिन्त्सूर्यः स ते लोको भविष्यति तं जेष्यसि पिबैता अपः १७ २४४६
ता उभौ चतुरः पदः संप्रसारयाव स्वर्गे लोके प्रोर्णुवाथां वृषा वाजी रेतोधा रेतो दधातु २०
उत्सक्थ्या अव गुदं धेहि समञ्जिं चारया वृषन् । य स्त्रीणां जीवभोजनः २१
द्विपदा याश्चतुष्पदास्त्रिपदायाश्च षट्पदाः ।
विच्छन्दा याश्च सच्छन्दाः सूचीभिः शम्यन्तु त्वा ३४
महानाम्न्यो रेवत्यो विश्वा आशाः प्रभूवरीः । मैघीर्विद्युतो वाचः सूचीभिः शम्यन्तु त्वा ३५ (७०)
नार्यस्ते पत्न्यो लोम विचिन्वन्तु मनीषया । देवानां पत्न्यो दिशः सूचीभिः शम्यन्तु त्वा ३६
रजता हरिणीः सीसा युजो युज्यन्ते कर्मभिः ।
अश्वस्य वाजिनस्त्वचि सिमाः शम्यन्तु शम्यन्तीः ३७
कस्त्वा छ्यति कस्त्वा विशास्ति कस्ते गात्राणि शम्यति । क उ ते शमिता कविः ३९
ऋतवस्त ऋतुथा पर्व शमितारो वि शासतु । संवत्सरस्य तेजसा शमीभिः शम्यन्तु त्वा ४०
अर्धमासाः परूंषि ते मासा आ च्छ्यन्तु शम्यन्तः ।
अहोरात्राणि मरुतो विलिष्टं सूदयन्तु ते ४१ २४५५
दैव्या अध्वर्यवस्त्वा च्छ्यन्तु वि च शासतु । गात्राणि पर्वशस्ते सिमाः कृण्वन्तु शम्यन्तीः ४२
द्यौस्ते पृथिव्यन्तरिक्षं वायुश्छिद्रं पृणातु ते । सूर्यस्ते नक्षत्रैः सह लोकं कृणोतु साधुया ४३
शं ते परेभ्यो गात्रेभ्यः शमस्त्ववरेभ्यः । शमस्थभ्यो मज्जभ्यः शम्वस्तु तन्वै तव ४४

॥ १० ॥ (वा० य० २३।४४)

तीव्रान् घोषान् कृण्वते वृषपाणयोऽश्वा रथेभिः सह वाजयन्तः ।
अवक्रामन्तः प्रपदैरमित्रान् क्षिणन्ति शत्रूँरनपव्ययन्तः ४४

॥ ११ ॥ (अथर्व० ६।९२।३)×

(८०) अथर्वा । त्रिष्टुप् ।

तनूष्टे वाजिन् तन्वं नयन्ती वाममस्मभ्यं धावतु शर्म तुभ्यम् ।
अह्रुतो महो धरुणाय देवो दिवीव ज्योतिः स्वमा मिमीयात् ३(८०)

× अथर्व. ६,९२,१-२ = वा. य. ९,८-९ ।

॥ १२ ॥ (अथर्व० १९।२५।१)

(८१) गोपथः । अनुष्टुप् ।

अश्रान्तस्य त्वा मनसा युनज्मि प्रथमस्य च । उत्कूलमुद्वहो भवोदुह्य प्रति धावतात् १

॥ १३ ॥ (सा० ४३५)

(८२) ऋण-त्रसदस्यू । पुर उष्णिक् ।

आविर्मर्या आ वाजं वाजिनो अग्मं देवस्य सवितुः सवम् । स्वर्गा अर्वन्तो जयत ९ २४६२



५६ हरिः ।

॥ १ ॥ (ऋ० १०।९६।१-१३)×

(१-१३) बरुराङ्गिरसः, सर्वहरिर्वा ऐन्द्रः । जगती, १२-१३ त्रिष्टुप् ।

प्र ते महे विदथे शंसिषं हरी प्र ते वन्वे वनुषो हर्यतं मदम् ।
घृतं न यो हरिभिश्चारु सेचत आ त्वा विशन्तु हरिवर्पसं गिरः १
हरिं हि योनिमभि ये समस्वरन् हिन्वन्तो हरी दिव्यं यथा सदः ।
आ यं पृणन्ति हरिभिर्न धेनव इन्द्राय शूषं हरिवन्तमर्चत २
सो अस्य वज्रो हरितो य आयसो हरिर्निकामो हरिरा गभस्त्योः ।
द्युम्नी सुशिप्रो हरिमन्युसायक इन्द्रे नि रूपा हरिता मिमिक्षिरे ३ २४६५
दिवि न केतुरधि धायि हर्यतो विव्यचद्वज्रो हरितो न रंह्या ।
तुददहिं हरिशिप्रो य आयसः सहस्रशोका अभवद्धरिंभरः ४
त्वंत्वमहर्यथा उपस्तुतः पूर्वेभिरिन्द्र हरिकेश यज्वभिः ।
त्वं हर्यसि तव विश्वमुक्थ्य१मसामि राधो हरिजात हर्यतम् ५(५)
ता वज्रिणं मन्दिनं स्तोम्यं मद इन्द्रं रथे वहतो हर्यता हरी ।
पुरूण्यस्मै सवनानि हर्यत इन्द्राय सोमा हरयो दधन्विरे ६
अरं कामाय हरयो दधन्विरे स्थिराय हिन्वन् हरयो हरी तुरा ।
अर्वद्भिर्यो हरिभिर्जोषमीयते सो अस्य कामं हरिवन्तमानशे ७

× अथर्व. २०,३०,१-५, ३१,१-५; ३२,१-३।

*

हरिश्मशारुर्हरिकेश आयस—स्तुरस्पेये यो हरिपा अवर्धत ।
अर्वद्भिर्यो हरिभिर्वाजिनीवसु—रति विश्वा दुरिता पारिषद्धरी ८ २४७०
स्रुवेव यस्य हरिणी विपेततुः शिप्रे वाजाय हरिणी दविध्वतः ।
प्र यत् कृते चमसे मर्मृजद्धरी पीत्वा मदस्य हर्यतस्यान्धसः ९
उत स्म सद्म हर्यतस्य पस्त्योः—रत्यो न वाजं हरिवाँ अचिक्रदत् ।
मही चिद्धि धिषणाऽहर्यदोजसा बृहद्वयो दधिषे हर्यतश्चिदा १०(१०)
आ रोदसी हर्यमाणो महित्वा नव्यंनव्यं हर्यसि मन्म नु प्रियम् ।
प्र पस्त्यमसुर हर्यतं गो—राविष्कृधि हरये सूर्याय ११
आ त्वा हर्यन्तं प्रयुजो जनानां रथे वहन्तु हरिशिप्रमिन्द्र ।
पिबा यथा प्रतिभृतस्य मध्वो हर्यन् यज्ञं सधमादे दशोणिम् १२
अपाः पूर्वेषां हरिवः सुताना—मथो इदं सवनं केवलं ते ।
ममद्धि सोमं मधुमन्तमिन्द्र सत्रा वृषञ्जठर आ वृषस्व १३ २४७५

॥ २ ॥ (वा० य० ८।११)

उपयामगृहीतोऽसि हरिरसि हारियोजनो हरिभ्यां त्वा ।
हर्योर्धाना स्थ सहसोमा इन्द्राय ११(१४)

---

५७ दधिक्रा ।

॥ १ ॥ (ऋ० ४।३८।२-१०)

(१—१९) वामदेवो गौतमः । त्रिष्टुप् ।

उत वाजिनं पुरुनिष्षिध्वानं दधिक्रामु ददथुर्विश्वकृष्टिम् ।
ऋजिप्यं श्येनं प्रुषितप्सुमाशुं चर्कृत्यमर्यो नृपतिं न शूरम् २
यं सीमनु प्रवतेव द्रवन्तं विश्वः पूरुर्मदति हर्षमाणः ।
पड्भिर्गृध्यन्तं मेधयुं न शूरं रथतुरं वातमिव ध्रजन्तम् ३
यः स्मारुन्धानो गध्या समत्सु सनुतरश्चरति गोषु गच्छन् ।
आविर्ऋजीको विदथा निचिक्यत् तिरो अरतिं पर्याप आयोः ४

उत स्मैनं वस्त्रमथिं न तायु-मनु क्रोशन्ति क्षितयो भरेषु।
नीचायमानं जसुरिं न श्येनं श्रवश्चाच्छा पशुमच्च यूथम् ५ २४८०

उत स्मासु प्रथमः सरिष्यन् नि वेवेति श्रेणिभी रथानाम्।
स्रजं कृण्वानो जन्यो न शुभ्वा रेणुं रेरिहत् किरणं ददश्वान् ६(५)
उत स्य वाजी सहुरिर्ऋतावा शुश्रूषमाणस्तन्वा समर्ये।
तुरं यतीषु तुरयन्नृजिप्यो ऽधि भ्रुवोः किरते रेणुमृञ्जन् ७
उत स्मास्य तन्यतोरिव द्यो-र्ऋघायतो अभियुजो भयन्ते।
यदा सहस्रमभि षीमयोधीद् दुर्वर्तुः स्मा भवति भीम ऋञ्जन् ८
उत स्मास्य पनयन्ति जना जूतिं कृष्टिप्रो अभिभूतिमाशोः।
उतैनमाहुः समिथे वियन्तः परा दधिक्रा असरत् सहस्रैः ९
आ दधिक्राः शवसा पञ्च कृष्टीः सूर्य इव ज्योतिषाऽपस्ततान।
सहस्रसाः शतसा वाज्यर्वा पृणक्तु मध्वा समिमा वचांसि १०

॥ २ ॥ (ऋ० ४।३९।१-६) त्रिष्टुप्, ६ अनुष्टुप्।

आशुं दधिक्रां तमु नु ष्टवाम दिवस्पृथिव्या उत चर्किराम।
उच्छन्तीर्मामुषसः सूदयन्त्व-ति विश्वानि दुरितानि पर्षन् १(१०)
महश्चर्कर्म्यर्वतः क्रतुप्रा दधिक्राव्णः पुरुवारस्य वृष्णः।
यं पूरुभ्यो दीदिवांसं नाग्निं ददथुर्मित्रावरुणा ततुरिम् २
यो अश्वस्य दधिक्राव्णो अकारीत् समिद्धे अग्ना उषसो व्युष्टौ।
अनागसं तमदितिः कृणोतु स मित्रेण वरुणेना सजोषाः ३
दधिक्राव्ण इष ऊर्जो महो य-दमन्महि मरुतां नाम भद्रम्।
स्वस्तये वरुणं मित्रमग्निं हवामह इन्द्रं वज्रबाहुम् ४
इन्द्रमिवेदुभये वि ह्वयन्त उदीराणा यज्ञमुपप्रयन्तः।
दधिक्रामु सूदनं मर्त्याय ददथुर्मित्रावरुणा नो अश्वम् ५ २४९०

दधिक्राव्णो अकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिनः।
सुरभि नो मुखा करत् प्र ण आयूंषि तारिषत् ×६(१५)

× वा. य. २३,३२; अथर्व. २०,१३७,३; सा. ३५८।

॥ ३ ॥ (ऋ० ४।४०।१-४)* १ त्रिष्टुप्, २-४ जगती ।

दधिक्राव्ण इदु नु चर्किराम विश्वा इन्मामुषसः सूदयन्तु ।
अपामग्नेरुषसः सूर्यस्य बृहस्पतेराङ्गिरसस्य जिष्णोः ॥ १

सत्वा भरिषो गविषो दुवन्यस च्छ्रवस्यादिष उषसस्तुरण्यसत् ।
सत्यो द्रवो द्रवरः पतङ्गरो दधिक्रावेषमूर्जं स्वर्जनत् ॥ २

उत स्मास्य द्रवतस्तुरण्यतः पर्णं न वेरनु वाति प्रगर्धिनः ।
श्येनस्येव ध्रजतो अङ्कसं परि दधिक्राव्णः सहोर्जा तरित्रतः ॥ ३

उत स्य वाजी क्षिपणिं तुरण्यति ग्रीवायां बद्धो अपिकक्ष आसनि ।
क्रतुं दधिक्रा अनु संतवीत्वत् पथामङ्कांस्यन्वापनीफणत् ॥ ४ २४९५

॥ ४ ॥ (ऋ० ७।४४।१-५)

(२०—२४) मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । दधिक्रा, १ दधिक्राश्व्युषोऽग्निभगेन्द्रविष्णुपूषब्रह्मणस्पत्यादित्य-द्यावापृथिव्यापः । १ जगती, २-५ त्रिष्टुप् ।

दधिक्रां वः प्रथममश्विनोषस मग्निं समिद्धं भगमूतये हुवे ।
इन्द्रं विष्णुं पूषणं ब्रह्मणस्पति मादित्यान् द्यावापृथिवी अपः स्वः ॥ १(२०)

दधिक्रामु नमसा बोधयन्त उदीराणा यज्ञमुपप्रयन्तः ।
इळां देवीं बर्हिषि सादयन्तो ऽश्विना विप्रा सुहवा हुवेम ॥ २

दधिक्रावाणं बुबुधानो अग्नि मुप ब्रुव उषसं सूर्यं गाम् ।
ब्रध्नं मंश्चतोर्वरुणस्य बभ्रुं ते विश्वास्मद्दुरिता यावयन्तु ॥ ३

दधिक्रावा प्रथमो वाज्यर्वा ऽग्रे रथानां भवति प्रजानन् ।
संविदान उषसा सूर्येणा दित्येभिर्वसुभिराङ्गिरोभिः ॥ ४

आ नो दधिक्राः पथ्यामनक्त्व् ऋतस्य पन्थामन्वेतवा उ ।
शृणोतु नो दैव्यं शर्धो अग्निः शृण्वन्तु विश्वे महिषा अमूराः ॥ ५ २५००

॥ ५ ॥ [२५] (वा० य० ३४।३९)

समध्वरायोषसो नमन्त दधिक्रावेव शुचये पदाय ।
अर्वाचीनं वसुविदं भगं नो रथमिवाश्वा वाजिन आ वहन्तु ॥ ३९(२५)



---

* ऋ. ४,४०,३-४ = वा. य. ९,१५,१४ ।

५८ सरमा।

॥ १ ॥ (ऋ० १०।१०८।१,३,५,७,९)
(१-५) पणयोऽसुराः । त्रिष्टुप् ।

किमि॒च्छन्ती॑ स॒रमा॒ प्रेदमा॑नड्॒ दू॒रे ह्यध्वा॒ जगु॑रिः परा॒चैः ।
काऽस्मेहि॑ति॒ः का परि॑तक्म्याऽऽसीत् क॒थं र॒साया॑ अत॒रः पयां॑सि १
की॒दृङ्ङिन्द्रः॑ सरमे॒ का दृ॑शी॒का यस्ये॒दं दू॒तीरस॑रः परा॒कात् ।
आ च॒ गच्छा॑न्मि॒त्रमे॑ना दधा॒माथा॒ गवां॒ गोप॑तिर्नो भवाति ३
इ॒मा गाव॑ः सरमे॒ या ऐच्छ॒ः परि॑ दि॒वो अन्ता॑न् सुभगे॒ पत॑न्ती ।
कस्त॑ ए॒ना अव॑ सृजा॒दयु॑ध्व्यु॒ताऽस्माक॒मायु॑धा सन्ति ति॒ग्मा ५
अ॒यं नि॒धिः स॑रमे॒ अद्रि॑बुध्नो॒ गोभि॒रश्वे॑भि॒र्वसु॑भि॒र्न्यृ॑ष्टः ।
रक्ष॑न्ति॒ तं प॒णयो॒ ये सु॑गो॒पा रेकु॑ प॒दमल॑कमा॒ ज॑गन्थ ७ २५०५
ए॒वा च॒ त्वं स॑रम आज॒गन्थ॒ प्रबा॑धिता॒ सह॑सा॒ दैव्ये॑न ।
स्वसा॑रं त्वा कृण॒वै मा पुन॑र्गा॒ अप॑ ते॒ गवां॑ सुभगे भजाम ९(५)



५९ शुनः, शुनासीरौ।

॥ १ ॥ (ऋ० ४।५७।४-५,८)×
(१-३) वामदेवो गौतमः । ४ अनुष्टुप्, ५ पुर उष्णिक्, ८ त्रिष्टुप् ।

शु॒नं वा॒हाः शु॒नं नरः॑ शु॒नं कृ॑षतु॒ लाङ्ग॑लम् । शु॒नं व॑र॒त्रा ब॑ध्यन्तां शु॒नमष्ट्रा॒मुदि॑ङ्गय ४
शुना॑सीरावि॒मां वाचं॑ जुषेथां॒ यद्दि॒वि च॒क्रथुः॒ पयः॑ । तेने॒माम॑प सिञ्चतम् ५
शु॒नं न॒ः फाला॒ वि कृ॑षन्तु॒ भूमिं॑ शु॒नं की॒नाशा॑ अ॒भि य॑न्तु वा॒हैः ।
शु॒नं प॒र्जन्यो॒ मधु॑ना॒ पयो॑भि॒ः शुना॑सीरा शु॒नम॒स्मासु॑ धत्तम् ८

॥ २ ॥ [४] (वा० य० १२।६९)⊛

शु॒नꣳ सु फाला॒ वि कृ॑षन्तु॒ भूमि॑ꣳ शु॒नं की॒नाशा॑ अ॒भि य॑न्तु वा॒हैः ।
शुना॑सीरा ह॒विषा॒ तोश॑माना सुपि॒प्पला॒ ओष॑धीः कर्त॒नास्मै ६९ २५१०



× अथर्व, ३, १७, ५-७। ⊛ ··· तुदन्तु ··· अनु ··· वाहान् । ··· कर्तमस्मै ॥ अथर्व. ३, १७, ५ ।

६० श्वानौ।

॥ १ ॥ (ऋ० १०।१४।१०-१२)+

(१-३) वैवस्वतो यमः। त्रिष्टुप्।

अति द्रव सारमेयौ श्वानौ चतुरक्षौ शबलौ साधुना पथा।
अथा पितॄन्त्सुविदत्राँ उपेहि यमेन ये सधमादं मदन्ति १० २५११
यौ ते श्वानौ यम रक्षितारौ चतुरक्षौ पथिरक्षी नृचक्षसौ।
ताभ्यामेनं परि देहि राजन्त्स्वस्ति चास्मा अनमीवं च धेहि ११
उरूणसावसुतृपा उदुम्बलौ यमस्य दूतौ चरतो जनाँ अनु।
तावस्मभ्यं दृशये सूर्याय पुनर्दातामसुमद्येह भद्रम् १२(३)

६१ तार्क्ष्यः।

॥ १ ॥ (ऋ० १०।१७८।१-३)

(१-३) अरिष्टनेमिस्तार्क्ष्यः। त्रिष्टुप्।

त्यमू षु वाजिनं देवजूतं सहावानं तरुतारं रथानाम्।
अरिष्टनेमिं पृतनाजमाशुं स्वस्तये तार्क्ष्यमिहा हुवेम ×१
इन्द्रस्येव रातिमाजोहुवानाः स्वस्तये नावमिवा रुहेम।
उर्वी न पृथ्वी बहुले गभीरे मा वामेतौ मा परेतौ रिषाम २ २५१५
सद्यश्चिद्यः शवसा पञ्च कृष्टीः सूर्य इव ज्योतिषापस्ततान।
सहस्रसाः शतसा अस्य रंहिर्न स्मा वरन्ते युवतिं न शर्याम् ३(३)

६२ श्येनः।

॥ १ ॥ (ऋ० ४।२६।४-७)

(१-९) वामदेवो गौतमः। त्रिष्टुप्।

प्र सु ष विभ्यो मरुतो विरस्तु प्र श्येनः श्येनेभ्य आशुपत्वा।
अचक्रया यत् स्वधया सुपर्णो हव्यं भरन्मनवे देवजुष्टम् ४

+ अथर्व. १८,२,११-१३। × अथर्व. ७,८५,१; सा. ३३२।

भरद्यदि विरतो वेविजानः पथोरुणा मनोजवा असर्जि ।
तूयं ययौ मधुना सोम्येनो- त श्रवो विविदे श्येनो अत्र ॥ ५
ऋजीपी श्येनो ददमानो अंशुं परावतः शकुनो मन्द्रं मदम् ।
सोमं भरद्दादृहाणो देवावान् दिवो अमुष्मादुत्तरादादाय ॥ ६
आदाय श्येनो अभरत् सोमं सहस्रं सवाँ अयुतं च साकम् ।
अत्रा पुरंधिरजहादरातो- र्मदे सोमस्य मूरा अमूरः ॥ ७ १५२०

॥ २ ॥ (ऋ० ४।२७।१-५)

(५ इन्द्रो वा) । त्रिष्टुप् , ५ शक्वरी ।

गर्भे नु सन्नन्वेषामवेद- महं देवानां जनिमानि विश्वा ।
शतं मा पुर आयसीररक्ष- न्नध श्येनो जवसा निरदीयम् ॥ १(५)
न घा स मामप जोषं जभारा- भीमास त्वक्षसा वीर्येण ।
ईर्मा पुरंधिरजहादराती- रुत वाताँ अतरच्छूशुवानः ॥ २
अव यच्छ्येनो अस्वनीदध द्यो- र्वि यद्यदि वात ऊहुः पुरंधिम् ।
सृजद्यदस्मा अव ह क्षिपज्ज्यां कृशानुरस्ता मनसा भुरण्यन् ॥ ३
ऋजिप्य ईमिन्द्रावतो न भुज्युं श्येनो जभार बृहतो अधि ष्णोः ।
अन्तः पतत्पतत्र्यस्य पर्ण- मध यामनि प्रसितस्य तद् वेः ॥ ४
अध श्वेतं कलशं गोभिरक्त- मापिप्यानं मघवा शुक्रमन्धः ।
अध्वर्युभिः प्रयतं मध्वो अग्र- मिन्द्रो मदाय प्रति धत् पिबध्यै
शूरो मदाय प्रति धत् पिबध्यै ॥ ५

॥ ३ ॥ (अथर्व० ७।४१।१-२)

(१०-११) प्रस्कण्वः । १ जगती, २ त्रिष्टुप् ।

अति धन्वान्यत्यपस्ततर्द श्येनो नृचक्षा अवसानदर्शः ।
तरन् विश्वान्यवरा रजांसीन्द्रेण सख्या शिव आ जगम्यात् ॥ १(१०)
श्येनो नृचक्षा दिव्यः सुपर्णः सहस्रपाच्छतयोनिर्वयोधाः ।
स नो नि यच्छाद्वसु यत् पराभृतमस्माकमस्तु पितृषु स्वधावत् ॥ २ १५२७

६३ शकुन्तः ।

(कपिञ्जलरूपीन्द्रः)

॥ १ ॥ (ऋ० २।४२।१-३)

(१—६) गृत्समद (आङ्गिरसः शौनहोत्रः पश्चात्) भार्गवः शौनकः । त्रिष्टुप् ।

कनिक्रदज्जनुषं प्रब्रुवाण इयर्ति वाचमरितेव नावम् ।
सुमङ्गलश्च शकुने भवासि मा त्वा का चिदभिभा विश्व्या विदत् १
मा त्वा श्येन उद्वधीन्मा सुपर्णो मा त्वा विददिषुमान् वीरो अस्ता ।
पित्र्यामनु प्रदिशं कनिक्रदत् सुमङ्गलो भद्रवादी वदेह २
अव क्रन्द दक्षिणतो गृहाणां सुमङ्गलो भद्रवादी शकुन्ते ।
मा नः स्तेन ईशत माघशंसो बृहद्वदेम विदथे सुवीराः ३ २५३०

॥ २ ॥ (ऋ० २।४३।१-३) जगती; २ अतिशक्वरी अष्टिर्वा ।

प्रदक्षिणिदभि गृणन्ति कारवो वयो वदन्त ऋतुथा शकुन्तयः ।
उभे वाचौ वदति सामगा इव गायत्रं च त्रैष्टुभं चानु राजति १
उद्गातेव शकुने साम गायसि ब्रह्मपुत्र इव सवनेषु शंससि ।
वृषेव वाजी शिशुमतीरपीत्या सर्वतो नः शकुने भद्रमा वद
विश्वतो नः शकुने पुण्यमा वद २(५)
आवदंस्त्वं शकुने भद्रमा वद तूष्णीमासीनः सुमतिं चिकिद्धि नः ।
यदुत्पतन् वदसि कर्करिर्यथा बृहद्वदेम विदथे सुवीराः ३ २५३३



६४ अक्षाः ।

॥ १ ॥ (ऋ० १०।३४।१,७,९,१२)

(१—३) कवष ऐलूषः, अक्षो मौजवान् वा । त्रिष्टुप्, ७ जगती ।

प्रावेपा मा बृहतो मादयन्ति प्रवातेजा इरिणे वर्वृतानाः ।
सोमस्येव मौजवतस्य भक्षो विभीदको जागृविर्मह्यमच्छान् १

अक्षास इदंङ्कुशिनो नितोदिनो निकृत्वानस्तपनास्तापयिष्णवः ।
कुमारदेष्णा जयतः पुनर्हणो मध्वा संपृक्ताः कितवस्य बर्हणा ७ २५३५
नीचा वर्तन्त उपरि स्फुरन्त्य-हस्तासो हस्तवन्तं सहन्ते ।
दिव्या अङ्गारा इरिणे न्युप्ताः शीताः सन्तो हृदयं निर्दहन्ति ९
यो वः सेनानीर्महतो गणस्य राजा व्रातस्य प्रथमो बभूव ।
तस्मै कृणोमि न धना रुणध्मि दशाहं प्राचीस्तदृतं वदामि १२

॥ २ ॥ [४-६] (वा० य० ५।१७)

देवश्रुतौ देवेष्वा घोषतं प्राची प्रेतमध्वरं कल्पयन्ती ऊर्ध्वं यज्ञं नयतं मा जिह्वरतम् ।
स्वं गोष्ठमा वदतं देवी दुर्ये आयुर्मा निर्वादिष्टं प्रजां मा निर्वादिष्ट-मत्र
रमेथां वर्ष्मन् पृथिव्याः १७

॥ ३ ॥ (वा० य० १०।२८-२९)

अभिभूरस्येतास्ते पञ्च दिशः कल्पन्तां ब्रह्मँ-स्त्वं ब्रह्माऽसि सविताऽसि सत्यप्रसवो
वरुणोऽसि सत्यौजा इन्द्रोऽसि विशौजा रुद्रोऽसि सुशेवः ।
बहुकार श्रेयस्कर भूयस्करे-न्द्रस्य वज्रोऽसि तेन मे रध्य २८(५)
अग्निः पृथुर्धर्मणस्पतिर्जुषाणो अग्निः पृथुर्धर्मणस्पतिराज्यस्य वेतु स्वाहा
स्वाहाकृताः सूर्यस्य रश्मिभिर्यतध्वꣳ सजातानां मध्यमेष्ठ्याय २९ २५४०

---

६५ अक्ष-कितव-निन्दा।

॥ १ ॥ (ऋ० १०।३४।२-६,८,१०-११,१४)

(१-९) कवष ऐलूषः, अक्षो मौजवान् वा । त्रिष्टुप् ।

न मा मिमेथ न जिहीळ एषा शिवा सखिभ्य उत मह्यमासीत् ।
अक्षस्याहमेकपरस्य हेतो-रनुव्रतामप जायामरोधम् २
द्वेष्टि श्वश्रूरप जाया रुणद्धि न नाथितो विन्दते मर्डितारम् ।
अश्वस्येव जरतो वस्न्यस्य नाहं विन्दामि कितवस्य भोगम् ३
अन्ये जायां परि मृशन्त्यस्य यस्यागृधद्वेदने वाज्य१क्षः ।
पिता माता भ्रातर एनमाहु-र्न जानीमो नयता बद्धमेतम् ४ २५४३

यदादीध्ये न दविषाण्येभिः परायद्भ्योऽव हीये सखिभ्यः ।
न्युप्ताश्च बभ्रवो वाचमक्रतँ एमीदेषां निष्कृतं जारिणीव ५ २५४४
सभामेति कितवः पृच्छमानो जेष्यामीति तन्वा३ शूशुजानः ।
अक्षासो अस्य वि तिरन्ति कामं प्रतिदीव्ने दधत आ कृतानि ६(५)
त्रिपञ्चाशः क्रीळति व्रात एषां देव इव सविता सत्यधर्मा ।
उग्रस्य चिन्मन्यवे ना नमन्ते राजा चिदेभ्यो नम इत् कृणोति ८
जाया तप्यते कितवस्य हीना माता पुत्रस्य चरतः क्व स्वित् ।
ऋणावा बिभ्यद्धनमिच्छमानो ऽन्येषामस्तमुप नक्तमेति १०
स्त्रियं दृष्ट्वाय कितवं ततापा— न्येषां जायां सुकृतं च योनिम् ।
पूर्वाह्णे अश्वान् युयुजे हि बभ्रू— न्त्सो अग्नेरन्ते वृषलः पपाद ११
मित्रं कृणुध्वं खलु मृळता नो मा नो घोरेण चरताभि धृष्णु ।
नि वो नु मन्युर्विशतामराति— रन्यो बभ्रूणां प्रसितौ न्वस्तु १४(९)



६६ कृषिः ।

॥ १ ॥ (ऋ० १०।३४।१३)

(१) कवष ऐलूषः, अक्षो मौजवान् वा । त्रिष्टुप् ।

अक्षैर्मा दीव्यः कृषिमित् कृषस्व वित्ते रमस्व बहु मन्यमानः ।
तत्र गावः कितव तत्र जाया तन्मे वि चष्टे सवितायमर्यः १३ २५५०



६७ व्रश्चनः ।

॥ १ ॥ (ऋ० ३।८।११)×

(१) विश्वामित्रो गाथिनः । त्रिष्टुप् ।

वनस्पते शतवल्शो वि रोह सहस्रवल्शा वि वयं रुहेम ।
यं त्वामयं स्वधितिस्तेजमानः प्रणिनाय महते सौभगाय ११



× वा. य. ५,४३ [पाठभेदेन] ।

६८ अरण्यानी।

॥ १ ॥ (ऋ० १०।१४६।१-६)
(१-६) देवमुनिरैरम्मदः। अनुष्टुप्।

अरण्यान्यरण्या न्यसौ या प्रेव नश्यसि।
कथा ग्रामं न पृच्छसि न त्वा भीरिव विन्दतीँ३ १
वृषारवाय वदते यदुपावति चिच्चिकः। आघाटिभिरिव धावय न्नरण्यानिर्महीयते २
उत गाव इवाद न्त्युत वेश्मेव दृश्यते। उतो अरण्यानिः सायं शकटीरिव सर्जति ३
गामङ्गैष आ ह्वयति दार्वङ्गैषो अपावधीत्। वसन्नरण्यान्यां साय मक्रुक्षदिति मन्यते ४ २५५५
न वा अरण्यानिर्हन्त्य न्यश्चेन्नाभिगच्छति।
स्वादोः फलस्य जग्ध्वाय यथाकामं नि पद्यते ५
आञ्जनगन्धिं सुरभिं बह्वन्नामकृषीवलाम्। प्राहं मृगाणां मातर मरण्यानिमशंसिषम् ६(६)

---

६९ सीता।

॥ १ ॥ (ऋ० ४।५७।६-७)×
(१-२) वामदेवो गौतमः। अनुष्टुप्।

अर्वाची सुभगे भव सीते वन्दामहे त्वा। यथा नः सुभगाऽससि यथा नः सुफलाऽससि६
इन्द्रः सीतां नि गृह्णातु तां पूषाऽनु यच्छतु। सा नः पयस्वती दुहा मुत्तरामुत्तरां समाम् ७

॥ २ ॥ [३-७] (वा० य० १२।६७-७२)+

सीरा युञ्जन्ति कवयो युगा वि तन्वते पृथक्। धीरा देवेषु सुम्नया ६७ २५६०
युनक्त सीरा वि युगा तनुध्वं कृते योनौ वपतेह बीजम्।
गिरा च श्रुष्टिः सभरा असन्नो नेदीय इत्सृण्यः पक्वमेयात् ६८
घृतेन सीता मधुना समज्यतां विश्वैर्देवैरनुमता मरुद्भिः।
ऊर्जस्वती पयसा पिन्वमानास्मान्त्सीते पयसाऽभ्या ववृत्स्व ७०(५)

× अथर्व. ३,१७,४;८। + ऋ. १०,१०१, ३-४। अथर्व. ३,१७,१-३,५,९।

लाङ्गलं पवीरवत्सुशेवं सोमपित्सरु ।
तदुद्वपति गामविं प्रफर्व्यं च पीवरीं प्रस्थावद्रथवाहणम् ७१ २५६३
कामं कामदुघे धुक्ष्व मित्राय वरुणाय च । इन्द्रायाश्विभ्यां पूष्णे प्रजाभ्य ओषधीभ्यः ७२

७० रथः ।

॥ १ ॥ (ऋ० ६।४७।२६-२८)*
(१-३) गर्गो भारद्वाजः । २६ त्रिष्टुप्, २७ जगती ।

वनस्पते वीड्वङ्गो हि भूया अस्मत्सखा प्रतरणः सुवीरः ।
गोभिः सन्नद्धो असि वीळयस्वा— स्थाता ते जयतु जेत्वानि २६
दिवस्पृथिव्याः पर्योज उद्धृतं वनस्पतिभ्यः पर्याभृतं सहः ।
अपामोज्मानं परि गोभिरावृत— मिन्द्रस्य वज्रं हविषा रथं यज २७
इन्द्रस्य वज्रो मरुतामनीकं मित्रस्य गर्भो वरुणस्य नाभिः ।
सेमां नो हव्यदातिं जुषाणो देव रथ प्रति हव्या गृभाय २८

॥ २ ॥ [४-५] (वा० य० ९।५)

इन्द्रस्य वज्रोऽसि वाजसास्त्वयायं वाजं सेत् ५

॥ ३ ॥ (वा० य० १०।२१)

इन्द्रस्य वज्रोऽसि मित्रावरुणयोस्त्वा प्रशास्त्रोः प्रशिषा युनज्मि ।
अव्यथायै त्वा स्वधायै त्वाऽरिष्टो अर्जुनो मरुतां प्रसवेन जया—
—पाम मनसा समिन्द्रियेण २१(५)

७१ रथाङ्गानि ।

॥ १ ॥ (ऋ० ३।५३।१७-२०)
(१-४) विश्वामित्रो गाथिनः । त्रिष्टुप्, १८ बृहती, २० अनुष्टुप् ।

स्थिरौ गावौ भवतां वीळुरक्षो मेषा वि वर्हि मा युगं वि शारि ।
इन्द्रः पातल्ये ददतां शरीतो— ररिष्टनेमे अभि नः सचस्व १७ २५७०

* वा. य. २९,५२-५४; अथर्व. ६,१२५,१-३ ।

बलं धेहि तनूषु नो बलमिन्द्रानळुत्सु नः ।
बलं तोकाय तनयाय जीवसे त्वं हि बलदा असि १८ २५७२
अभि व्ययस्व खदिरस्य सार—मोजो धेहि स्पन्दने शिंशपायाम् ।
अक्ष वीळो वीळित वीळयस्व मा यामादस्मादव जीहिपो नः १९
अयमस्मान् वनस्पति—र्मा च हा मा च रीरिषत् ।
स्वस्त्या गृहेभ्य आऽवसा आ विमोचनात् २०(४)



७२ दुन्दुभिः ।

॥ १ ॥ (ऋ० ६।४७।२९-३१)+
(१-३) गर्गो भारद्वाजः । (३१ दुंदुभीन्द्रौ) । त्रिष्टुप् ।

उप श्वासय पृथिवीमुत द्यां पुरुत्रा ते मनुतां विष्ठितं जगत् ।
स दुन्दुभे सजूरिन्द्रेण देवै—र्दूराद् दवीयो अप सेध शत्रून् २९
आ क्रन्दय बलमोजो न आ धा निः ष्टनिहि दुरिता बाधमानः ।
अप प्रोथ दुन्दुभे दुच्छुना इत इन्द्रस्य मुष्टिरसि वीळयस्व ३० २५७५
आमूरज प्रत्यावर्तयेमाः केतुमद् दुन्दुभिर्वावदीति ।
समश्वपर्णाश्चरन्ति नो नरो ऽस्माकमिन्द्र रथिनो जयन्तु ३१

॥ २ ॥ [४-५] (वा० य० ९।११-१२)

बृहस्पते वाजं जय बृहस्पतये वाचं वदत बृहस्पतिं वाजं जापयत ।
इन्द्र वाजं जयेन्द्राय वाचं वदतेन्द्रं वाजं जापयत ११
एषा वः सा सत्या संवागभूद्यया बृहस्पतिं वाजमजीजपताजीजपत बृहस्पतिं वाजं
वनस्पतयो विमुच्यध्वम् ।
एषा वः सा सत्या संवागभूद्येन्द्रं वाजमजीजपताजीजपतेन्द्रं वाजं वनस्पतयो
विमुच्यध्वम् १२(५)

+ वा. य. २९,५५-५७; अथर्व. ६,१२६,१-३।

॥ ३ ॥ (अथर्व० ५।२०।१-१२)

(६-२६) ब्रह्मा । वनस्पतिः, दुन्दुभिः । त्रिष्टुप्, १ जगती ।

उच्चैर्घोषो दुन्दुभिः सत्वनायन् वानस्पत्यः संभृत उस्रियाभिः ।
वाचं क्षुणुवानो दमयन्त्सपत्नान्त्सिंह इव जेष्यन्नभि तंस्तनीहि १

सिंह इवास्तानीद् द्रुवयो विबद्धोऽभिक्रन्दन्नृषभो वासितामिव ।
वृषा त्वं वध्रयस्ते सपत्ना ऐन्द्रस्ते शुष्मो अभिमातिषाहः २ २५८०

वृषेव यूथे सहसा विदानो गव्यन्नभि रुव संधनाजित् ।
शुचा विध्य हृदयं परेषां हित्वा ग्रामान् प्रच्युता यन्तु शत्रवः ३

संजयन् पृतना ऊर्ध्वमायुर्गृह्या गृह्णानो बहुधा वि चक्ष्व ।
दैवीं वाचं दुन्दुभ आ गुरस्व वेधाः शत्रूणामुप भरस्व वेदः ४

दुन्दुभेर्वाचं प्रयतां वदन्तीमाशृण्वती नाथिता घोषबुद्धा ।
नारी पुत्रं धावतु हस्तगृह्यामित्री भीता समरे वधानाम् ५(१०)

पूर्वो दुन्दुभे प्र वदासि वाचं भूम्याः पृष्ठे वद रोचमानः ।
अमित्रसेनामभिजञ्जभानो द्युमद् वद दुन्दुभे सूनृतावत् ६

अन्तरेमे नभसी घोषो अस्तु पृथक् ते ध्वनयो यन्तु शीभम् ।
अभि क्रन्द स्तनयोत्पिपानः श्लोककृन्मित्रतूर्याय स्वर्धी ७

धीभिः कृतः प्र वदाति वाचमुद्धर्षय सत्वनामायुधानि ।
इन्द्रमेदी सत्वनो नि ह्वयस्व मित्रैरमित्राँ अव जङ्घनीहि ८

संक्रन्दनः प्रवदो धृष्णुषेणः प्रवेदकृद् बहुधा ग्रामघोषी ।
श्रेयो वन्वानो वयुनानि विद्वान् कीर्तिं बहुभ्यो वि हर द्विराजे ९

श्रेयःकेतो वसुजित् सहीयान्त्संग्राममजित् संशितो ब्रह्मणाऽसि ।
अंशूनिव ग्रावाऽधिषवणे अद्रिर्गव्यन् दुन्दुभेऽधि नृत्य वेदः १०(१५)

शत्रूषाण्नीषाडभिमातिषाहो गवेषणः सहमान उद्भित् ।
वाग्वीव मन्त्रं प्र भरस्व वाचं सांग्रामजित्यायेषमुद् वदेह ११

अच्युतच्युत् समदो गमिष्ठो मृधो जेता पुरएताऽयोध्यः ।
इन्द्रेण गुप्तो विदथा निचिक्यद्धृद्द्योतनो द्विषतां याहि शीभम् १२ २५९०

॥ ४ ॥ (अथर्व० ५।२१।१-९)
अनुष्टुप्, १,४—५ पथ्यापङ्क्तिः; ६ जगती।

विहृदयं वैमनस्यं वदामित्रेषु दुन्दुभे।
विद्वेषं कश्मशं भयममित्रेषु नि दध्मस्यवैनान् दुन्दुभे जहि १
उद्वेपमाना मनसा चक्षुषा हृदयेन च। धावन्तु बिभ्यतोऽमित्राः प्रत्रासेनाज्ये हुते २
वानस्पत्यः संभृत उस्रियाभिर्विश्वगोत्र्यः। प्रत्रासममित्रेभ्यो वदाज्येनाभिघारितः ३(१०)
यथा मृगाः संविजन्त आरण्याः पुरुषादधि।
एवा त्वं दुन्दुभेऽमित्रानभि क्रन्द प्र त्रासयाथो चित्तानि मोहय ४
यथा वृकादजावयो धावन्ति बहु बिभ्यतीः। एवा त्वं दुन्दुभेऽमित्रानभि क्रन्द प्र० ५ २५९५
यथा श्येनात् पतत्रिणः संविजन्ते अहर्दिवि सिंहस्य स्तनथोर्यथा। एवा त्वं दुन्दुभे० ६
पराऽमित्रान् दुन्दुभिना हरिणस्याजिनेन च। सर्वे देवा अतित्रसन् ये संग्रामस्येशते ७
यैरिन्द्रः प्रक्रीडते पद्घोषैश्छायया सह। तैरमित्रास्त्रसन्तु नोऽमी ये यन्त्यनीकशः ८
ज्याघोषा दुन्दुभयोऽभि क्रोशन्तु या दिशः। सेनाः पराजिता यतीरमित्राणामनीकशः ९(२६)

---

७३ द्रुघण, इन्द्रो वा।

॥ १ ॥ (ऋ० १०।१०२।१-१२)
(१-१२) मुद्गलो भार्म्यश्वः। त्रिष्टुप्; १,३,१२ बृहती।

प्र ते रथं मिथूकृत—मिन्द्रोऽवतु धृष्णुया।
अस्मिन्नाजौ पुरुहूत श्रवाय्ये धनभक्षेषु नोऽव १ २६००
उत् स्म वातो वहति वासो अस्या अधिरथं यदजयत् सहस्रम्।
रथीरभून्मुद्गलानी गविष्टौ भरे कृतं व्यचेदिन्द्रसेना २
अन्तर्यच्छ जिघांसतो वज्रमिन्द्राभिदासतः।
दासस्य वा मघवन्नार्यस्य वा सनुतर्यवया वधम् ३
उद्नो ह्रदमपिबज्जर्हृषाणः कूटं स्म तृंहदभिमातिमेति।
प्र मुष्कभारः श्रव इच्छमानो ऽजिरं बाहू अभरत् सिषासन् ४

न्यंक्रन्दयन्नुपयन्तं एन—ममेहयन् वृषभं मध्यं आजेः ।
तेन सूभर्वं शतवत् सहस्रं गवां मुद्गलः प्रधने जिगाय ५(५)
ककर्दवे वृषभो युक्त आसी—दवावचीत् सारथिरस्य केशी ।
दुधेर्युक्तस्य द्रवतः सहानस ऋच्छन्ति ष्मा निष्पदो मुद्गलानीम् ६ २६०५
उत प्रधिमुदहन्नस्य विद्वा—नुपायुनग्वंसगमत्र शिक्षन् ।
इन्द्र उदावत् पतिमघ्न्याना—मरंहत पद्याभिः ककुद्मान् ७
शुनमष्ट्राव्यचरत् कपर्दी वरत्रायां दार्वानह्यमानः ।
नृम्णानि कृण्वन् बहवे जनाय गाः पस्पशानस्तविषीरधत्त ८
इमं तं पश्य वृषभस्य युञ्जं काष्ठाया मध्ये द्रुघणं शयानम् ।
येन जिगाय शतवत् सहस्रं गवां मुद्गलः पृतनाज्येषु ९
आरे अघा को न्वि१त्था ददर्श यं युञ्जन्ति तम्वा स्थापयन्ति ।
नास्मै तृणं नोदकमा भर—न्त्युत्तरो धुरो वहति प्रदेदिशत् १०
परिवृक्तेव पतिविद्यमानट् पीप्याना कूचक्रेणेव सिञ्चन् ।
एषैष्या चिद्रथ्या जयेम सुमङ्गलं सिनवदस्तु सातम् ११
त्वं विश्वस्य जगत—श्चक्षुरिन्द्रासि चक्षुषः ।
वृषा यदाजिं वृषणा सिषाससि चोदयन् वध्रिणा युजा २०(१२)

७४ संग्रामाशिषः ।

॥ १ ॥ (ऋ० ६।७५।१–१९)

(१—२२) पायुर्भारद्वाजः । १ वर्म, २ धनुः, ३ ज्या, ४ आर्त्नी, ५ इषुधिः, ६ (पूर्वार्धस्य) सारथिः, ६ (उत्तरार्धस्य) रश्मयः, ७ अश्वाः, ८ रथः, ९ रथगोपाः, १० ब्राह्मण–पितृ–सोम–द्यावापृथिवी–पूषाणः, ११–१२, १५-१६ इषवः, १३ प्रतोदः, १४ हस्तघ्नः, १७ युद्धभूमि—कवच—ब्रह्मणस्पत्यादयः, १८ वर्म–सोम–वरुणाः, १९ देवब्रह्माणि । त्रिष्टुप् ; ६,१० जगती; १२,१३,१५,१६,१९ अनुष्टुप् ; १७ पङ्क्तिः ।

जीमूतस्येव भवति प्रतीकं यद्वर्मी याति समदामुपस्थे ।
अनाविद्धया तन्वा जय त्वं स त्वा वर्मणो महिमा पिपर्तु १ २६११

+ वा. य. २९,३८–५१; १७,४५,४८–४९; अथर्व. ३,१९,८; १९,९,१२; ७,११८,१, सा. १८६३,१८६६,१८७०, १८७२ ।

धन्वना गा धन्वनाजिं जयेम   धन्वना तीव्राः समदो जयेम ।
धनुः शत्रोरपकामं कृणोति   धन्वना सर्वाः प्रदिशो जयेम   २
वक्ष्यन्तीवेदा गनीगन्ति कर्णं   प्रियं सखायं परिषस्वजाना ।
योषेव शिङ्क्ते वितताधि धन्व—ञ्ज्या इयं समने पारयन्ती   ३
ते आचरन्ती समनेव योषा   मातेव पुत्रं बिभृतामुपस्थे ।
अप शत्रून् विध्यतां संविदाने   आर्त्नी इमे विष्फुरन्ती अमित्रान्   ४ २६१५
बह्वीनां पिता बहुरस्य पुत्र—श्चिश्चा कृणोति समनावगत्य ।
इषुधिः सङ्काः पृतनाश्च सर्वाः   पृष्ठे निनद्धो जयति प्रसूतः   ५
रथे तिष्ठन् नयति वाजिनः पुरो   यत्रयत्र कामयते सुषारथिः ।
अभीशूनां महिमानं पनायत   मनः पश्चादनु यच्छन्ति रश्मयः   ६
तीव्रान् घोषान् कृण्वते वृषपाणयो ऽश्वा रथेभिः सह वाजयन्तः ।
अवक्रामन्तः प्रपदैरमित्रान्   क्षिणन्ति शत्रूँरनपव्ययन्तः   ७
रथवाहनं हविरस्य नाम   यत्रायुधं निहितमस्य वर्म ।
तत्रा रथमुप शग्मं सदेम   विश्वाहा वयं सुमनस्यमानाः   ८
स्वादुषंसदः पितरो वयोधाः   कृच्छ्रेश्रितः शक्तीवन्तो गभीराः ।
चित्रसेना इषुबला अमृध्राः   सतोवीरा उरवो व्रातसाहाः   ९
ब्राह्मणासः पितरः सोम्यासः   शिवे नो द्यावापृथिवी अनेहसा ।
पूषा नः पातु दुरितादृतावृधो   रक्षा माकिर्नो अघशंस ईशत   १०(१०)
सुपर्णं वस्ते मृगो अस्या दन्तो   गोभिः संनद्धा पतति प्रसूता ।
यत्रा नरः सं च वि च द्रवन्ति   तत्रास्मभ्यमिषवः शर्म यंसन्   ११
ऋजीते परि वृङ्धि नो ऽश्मा भवतु नस्तनूः ।
सोमो अधि ब्रवीतु नो ऽदितिः शर्म यच्छतु   १२
आ जङ्घन्ति सान्वेषां   जघनाँ उप जिघ्नते ।
अश्वाजनि प्रचेतसो ऽश्वान्त्समत्सु चोदय   १३
अहिरिव भोगैः पर्येति बाहुं   ज्याया हेतिं परिबाधमानः ।
हस्तघ्नो विश्वा वयुनानि विद्वान्   पुमान् पुमांसं परि पातु विश्वतः   १४ २६२५
आलाक्ता या रुरुशीर्ष्ण्य—थो यस्या अयो मुखम् ।
इदं पर्जन्यरेतस   इष्वै देव्यै बृहन्नमः   १५(१५)

अवसृष्टा परा पत शरव्ये ब्रह्मसंशिते । गच्छामित्रान् प्र पद्यस्व माऽमीषां कं चनोच्छिषः १६
यत्र बाणाः संपतन्ति कुमारा विशिखा इव ।
तत्रा नो ब्रह्मणस्पति-रदितिः शर्म यच्छतु विश्वाहा शर्म यच्छतु १७
मर्माणि ते वर्मणा छादयामि सोमस्त्वा राजामृतेनानु वस्ताम् ।
उरोर्वरीयो वरुणस्ते कृणोतु जयन्तं त्वाऽनु देवा मदन्तु १८
यो नः स्वो अरणो यश्च निष्ट्यो जिघांसति । देवास्तं सर्वे धूर्वन्तु ब्रह्म वर्म ममान्तरम् १९ २६३०

॥ २ ॥ [२०-२२] (सा० १८६४—६५,१८७१) त्रिष्टुप् ।

कङ्काः सुपर्णा अनु यन्त्वेनान् गृध्राणामन्नमसावस्तु सना ।
मैषां मोच्यघहारश्च नेन्द्र वयांस्येनाननुसंयन्तु सर्वान् १
अमित्रसेनां मघवन्नस्मां छत्रुयतीमभि । उभौ तामिन्द्र वृत्रहन्नग्निश्च दहतं प्रति २
अन्धा अमित्रा भवताशीर्षाणोऽहय इव । तेषां वो अग्निनुन्नानामिन्द्रो हन्तु वरंवरम् २(२२)



७५ अत्रिः ।

॥ १ ॥ (ऋ० ५।४०।६-९)

(१—४) अत्रिर्भौमः । त्रिष्टुप् , अनुष्टुप् ।

स्वर्भानोरध यदिन्द्र माया अवो दिवो वर्तमाना अवाहन् ।
गूळ्हं सूर्यं तमसाऽपव्रतेन तुरीयेण ब्रह्मणाऽविन्ददत्रिः ६
मा मामिमं तव सन्तमत्र इरस्या द्रुग्धो भियसा नि गारीत् ।
त्वं मित्रो असि सत्यराधा-स्तौ मेहावतं वरुणश्च राजा ७ २६३५
ग्राव्णो ब्रह्मा युयुजानः सपर्यन् कीरिणा देवान् नमसोपशिक्षन् ।
अत्रिः सूर्यस्य दिवि चक्षुराऽधात् स्वर्भानोरप माया अघुक्षत् ८
यं वै सूर्यं स्वर्भानु-स्तमसाऽविध्यदासुरः । अत्रयस्तमन्वविन्दन् नह्य१न्ये अशक्नुवन् ९(४)



७६ विश्वामित्रः।

॥ १ ॥ (ऋ० ३।३३।४,८,१०)
(१-३) नदी ऋषिका। त्रिष्टुप्।

एना वयं पयसा पिन्वमाना अनु योनिं देवकृतं चरन्तीः।
न वर्तवे प्रसवः सर्गतक्तः किंयुर्विप्रो नद्यो जोहवीति ४
एतद् वचो जरितर्मापि मृष्ठा आ यत् ते घोषानुत्तरा युगानि।
उक्थेषु कारो प्रति नो जुषस्व मा नो नि कः पुरुषत्रा नमस्ते ८
आ ते कारो शृणवामा वचांसि ययाथ दूरादनसा रथेन।
नि ते नंसै पीप्यानेव योषा मर्यायेव कन्या शश्वचै ते १० २६४०

७७ वामदेवः।

॥ १ ॥ (ऋ० ४।१८।१,७)
(१—२) १ इन्द्रः, ७ अदितिः ऋषिका। त्रिष्टुप्।

अयं पन्था अनुवित्तः पुराणो यतो देवा उदजायन्त विश्वे।
अतश्चिदा जनिषीष्ट प्रवृद्धो मा मातरममुया पत्तवे कः १
किमु ष्विदस्मै निविदो भनन्ते—न्द्रस्यावद्यं दिधिषन्त आपः।
ममैतान् पुत्रो महता वधेन वृत्रं जघन्वाँ असृजद् वि सिन्धून् ७(२)

७८ वासिष्ठपुत्राः, इन्द्रो वा।

॥ १ ॥ (ऋ० ७।३३।१-९)
(१-९) वसिष्ठो मैत्रावरुणिः। त्रिष्टुप्।

श्वित्यञ्चो मा दक्षिणतस्कपर्दा धियंजिन्वासो अभि हि प्रमन्दुः।
उत्तिष्ठन् वोचे परि बर्हिषो नॄन् न मे दूरादवितवे वसिष्ठाः १

दूरादिन्द्रमनयन्ना सुतेन तिरो वैशन्तमति पान्तमुग्रम् ।
पाशद्युम्नस्य वायतस्य सोमात् सुतादिन्द्रोऽवृणीता वसिष्ठान् २
एवेन्नु कं सिन्धुमेभिस्ततारे वेन्नु कं भेदमेभिर्जघान ।
एवेन्नु कं दाशराज्ञे सुदासं प्रावदिन्द्रो ब्रह्मणा वो वसिष्ठाः ३ २६४५
जुष्टी नरो ब्रह्मणा वः पितॄणा मक्षमव्ययं न किला रिषाथ ।
यच्छक्वरीषु बृहता रवेणे न्द्रे शुष्ममदधाता वसिष्ठाः ४
उद् द्यामिवेत् तृष्णजो नाथितासो ऽदीधयुर्दाशराज्ञे वृतासः ।
वसिष्ठस्य स्तुवत इन्द्रो अश्रो दुरुं तृत्सुभ्यो अकृणोदु लोकम् ५(५)
दण्डा इवेद् गोअजनास आसन् परिच्छिन्ना भरता अर्भकासः ।
अभवच्च पुरएता वसिष्ठ आदित् तृत्सूनां विशो अप्रथन्त ६
त्रयः कृण्वन्ति भुवनेषु रेत स्तिस्रः प्रजा आर्या ज्योतिरग्राः ।
त्रयो घर्मास उषसं सचन्ते सर्वाँ इत् ताँ अनु विदुर्वसिष्ठाः ७
सूर्यस्येव वक्षथो ज्योतिरेषां समुद्रस्येव महिमा गभीरः ।
वातस्येव प्रजवो नान्येन स्तोमो वसिष्ठा अन्वेतवे वः ८
त इन्निण्यं हृदयस्य प्रकेतैः सहस्रवल्शमभि सं चरन्ति ।
यमेन ततं परिधिं वयन्तो ऽप्सरस उप सेदुर्वसिष्ठाः ९ २६५१

७१ वसिष्ठः ।

॥ १ ॥ (ऋ० ७।३३।१०—१४)
(१-५) वसिष्ठपुत्राः । त्रिष्टुप् ।

विद्युतो ज्योतिः परि संजिहानं मित्रावरुणा यदपश्यतां त्वा ।
तत् ते जन्मोतैकं वसिष्ठा गस्त्यो यत् त्वा विश आजभार १०
उतासि मैत्रावरुणो वसिष्ठो र्वश्या ब्रह्मन् मनसोऽधि जातः ।
द्रप्सं स्कन्नं ब्रह्मणा दैव्येन विश्वे देवाः पुष्करे त्वाददन्त ११
स प्रकेत उभयस्य प्रविद्वा न्त्सहस्रदान उत वा सदानः ।
यमेन ततं परिधिं वयिष्य न्नप्सरसः परि जज्ञे वसिष्ठः १२(२)

सत्रे ह जाताविषिता नमोभिः कुम्भे रेतः सिषिचतुः समानम् ।
ततो ह मान उदियाय मध्यात् ततो जातमृषिमाहुर्वसिष्ठम् १३ २६५५
उक्थभृतं सामभृतं बिभर्ति ग्रावाणं बिभ्रत् प्र वदात्यग्रे ।
उपैनमाध्वं सुमनस्यमाना आ वो गच्छाति प्रतृदो वसिष्ठः १४

८० वशिष्ठाशीः ।

॥ १ ॥ (ऋ० ७।१०४।२३ [पूर्वार्धस्य])
वसिष्ठो मैत्रावरुणिः। जगती ।

मा नो रक्षो अभि नड्यातुमावता मपोच्छतु मिथुना या किमीदिना २३

८१ रोमशा ।

॥ १ ॥ (ऋ० १।१२६।६)
(१) स्वनयो भावयव्यः। अनुष्टुप् ।

आगधिता परिगधिता या कशीकेव जङ्गहे। ददाति मह्यं यादुरी याशूनां भोज्या शता ६

८२ अङ्गिरःपित्रथर्वभृगुसोमाः ।

॥ १ ॥ (ऋ० १०।१४।६)+
(१) यमो वैवस्वतः । त्रिष्टुप् ।

आङ्गिरसो नः पितरो नवग्वा अथर्वाणो भृगवः सोम्यासः ।
तेषां वयं सुमतौ यज्ञियाना मपि भद्रे सौमनसे स्याम ६

+ वा. य. १९,५०; अथर्व. १८,१,५८।

८३ उपाध्यायः।

॥ १ ॥ (ऋ० ३।२६।९)

(१) विश्वामित्रो गाथिनः। त्रिष्टुप्।

शतधारमुत्समक्षीयमाणं विपश्चितं पितरं वक्त्वानाम्।
मेळिं मदन्तं पित्रोरुपस्थे तं रोदसी पिपृतं सत्यवाचम् ९ २६६०

८४ भावयव्यः।

॥ १ ॥ (ऋ० १।१२६।१-५,७)

(१-६) कक्षीवान् औशिजो दैर्घतमसः, ७ रोमशा ब्रह्मवादिनी। १-५ त्रिष्टुप्, ७ अनुष्टुप्।

अमन्दान्त्सोमान् प्र भरे मनीषा सिन्धावधि क्षियतो भाव्यस्य।
यो मे सहस्रममिमीत सवानतूर्तो राजा श्रव इच्छमानः १
शतं राज्ञो नाधमानस्य निष्काञ्छतमश्वान् प्रयतान्त्सद्य आदम्।
शतं कक्षीवाँ असुरस्य गोनां दिवि श्रवोऽजरमा ततान २
उप मा श्यावाः स्वनयेन दत्ता वधूमन्तो दश रथासो अस्थुः।
षष्टिः सहस्रमनु गव्यमागात् सनत् कक्षीवाँ अभिपित्वे अह्नाम् ३
चत्वारिंशद् दशरथस्य शोणाः सहस्रस्याग्रे श्रेणिं नयन्ति।
मदच्युतः कृशनावतो अत्यान् कक्षीवन्त उदमृक्षन्त पज्राः ४
पूर्वामनु प्रयतिमा ददे वस्त्रीन् युक्ताँ अष्टावरिधायसो गाः।
सुबन्धवो ये विश्या इव व्रा अनस्वन्तः श्रव ऐषन्त पज्राः ५(५)
उपोप मे परा मृश मा मे दभ्राणि मन्यथाः।
सर्वाहमस्मि रोमशा गन्धारीणामिवाविका ७ २६६३

८५ प्रजापतिः हरिश्चन्द्रः चर्म सोमो वा ।

॥ १ ॥ (ऋ० १।२८।९)

(१) शुनःशेप आजीगर्तिः । गायत्री ।

उच्छिष्टं चम्वोर्भर सोमं पवित्र आ सृज । नि धेहि गोरधि त्वचि ९

८६ स्वनयस्य दानस्तुतिः ।

॥ १ ॥ (ऋ० १।१२५।१-७)

(१-७) कक्षीवान् औशिजो दैर्घतमसः । त्रिष्टुप्, ४-५ जगती ।

प्राता रत्नं प्रातरित्वा दधाति तं चिकित्वान् प्रतिगृह्या नि धत्ते ।
तेन प्रजां वर्धयमान आयू रायस्पोषेण सचते सुवीरः १
सुगुरसत् सुहिरण्यः स्वश्वो बृहदस्मै वय इन्द्रो दधाति ।
यस्त्वायन्तं वसुना प्रातरित्वो मुक्षीजयेव पदिमुत्सिनाति २
आयमद्य सुकृतं प्रातरिच्छन्निष्टेः पुत्रं वसुमता रथेन ।
अंशोः सुतं पायय मत्सरस्य क्षयद्वीरं वर्धय सूनृताभिः ३२६७०
उप क्षरन्ति सिन्धवो मयोभुव ईजानं च यक्ष्यमाणं च धेनवः ।
पृणन्तं च पपुरिं च श्रवस्यवो घृतस्य धारा उप यन्ति विश्वतः ४
नाकस्य पृष्ठे अधि तिष्ठति श्रितो यः पृणाति स ह देवेषु गच्छति ।
तस्मा आपो घृतमर्षन्ति सिन्धवस्तस्मा इयं दक्षिणा पिन्वते सदा ५
दक्षिणावतामिदिमानि चित्रा दक्षिणावतां दिवि सूर्यासः ।
दक्षिणावन्तो अमृतं भजन्ते दक्षिणावन्तः प्र तिरन्त आयुः ६
मा पृणन्तो दुरितमेन आरन् मा जारिषुः सूरयः सुव्रतासः ।
अन्यस्तेषां परिधिरस्तु कश्चिदपृणन्तमभि सं यन्तु शोकाः ७

८७ सोमकः साहदेव्यः ।

॥ १ ॥ (ऋ० ४।१५।७–८)

(१–२) वामदेवो गौतमः। गायत्री ।

बोधद्यन्मा हरिभ्यां कुमारः साहदेव्यः । अच्छा न हूत उदरम् ७ १६७५

उत त्या यजता हरी कुमारात् साहदेव्यात् । प्रयता सद्य आ ददे ८(१)

८८ पुरुमीळ्हो वैददश्विः, तरन्तो वैददश्विः।

॥ १ ॥ (ऋ० ५।६१।९–१०)

(१—२) श्यावाश्व आत्रेयः। ९ सतो बृहती; १० गायत्री ।

उत मेऽरपद्युवतिर्ममन्दुषी प्रति श्यावाय वर्तनिम् ।

वि रोहिता पुरुमीळ्हाय येमतु र्विप्राय दीर्घयशसे ९

यो मे धेनूनां शतं वैददश्विर्यथा ददत् । तरन्त इव मंहना १०(२)

८९ तरन्तमाहिषी शशीयसी ।

॥ १ ॥ (ऋ० ५।६१।५–८)

(१–४) श्यावाश्व आत्रेयः । गायत्री; ५ अनुष्टुप् ।

सनत् साश्व्यं पशु मुत गव्यं शतावयम् । श्यावाश्वस्तुताय या दोर्वीरायोपबर्बृहत् ५

उत त्वा स्त्री शशीयसी पुंसो भवति वस्यसी । अदेवत्रादराधसः ६ १६८०

वि या जानाति जसुरिं वि तृष्यन्तं वि कामिनम् । देवत्रा कृणुते मनः ७

उत घा नेमो अस्तुतः पुमाँ इति ब्रुवे पणिः । स वैरदेय इत् समः ८(४)

९० रथवीतिर्दाभ्यः ।

॥ १ ॥ (ऋ० ५।६१।१७-१९)

(१-३) श्यावाश्व आत्रेयः । गायत्री ।

एतं मे स्तोममूर्म्ये दार्भ्याय परा वह । गिरो देवि रथीरिव १७
उत मे वोचतादिति सुतसोमे रथवीतौ । न कामो अप वेति मे १८
एष क्षेति रथवीतिर्मघवा गोमतीरनु । पर्वतेष्वपश्रितः १९ २६८५

---

९१ सुदासः पैजवनः ।

॥ १ ॥ (ऋ० ७।१८।२२—२५)

(१-४) मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः। त्रिष्टुप् ।

द्वे नप्तुर्देववतः शते गोर्द्वा रथा वधूमन्ता सुदासः ।
अर्हन्नग्ने पैजवनस्य दानं होतेव सद्म पर्येमि रेभन् २२
चत्वारो मा पैजवनस्य दानाः स्मद्दिष्टयः कृशनिनो निरेके ।
ऋज्रासो मा पृथिविष्ठाः सुदासस्तोकं तोकाय श्रवसे वहन्ति २३
यस्य श्रवो रोदसी अन्तरुर्वी शीर्ष्णेशीर्ष्णे विबभाजा विभक्ता ।
सप्तेदिन्द्रं न स्रवतो गृणन्ति नि युध्यामधिमशिशादभीके २४
इमं नरो मरुतः सश्चतानु दिवोदासं न पितरं सुदासः ।
अविष्टना पैजवनस्य केतं दूणाशं क्षत्रमजरं दुवोयु २५(४)



१२ राजा।

॥ १ ॥ (ऋ० १०।१७३।१-६)×
(१—६) ध्रुव आङ्गिरसः। अनुष्टुप्।

आ त्वाऽहार्षमन्तरभूर्धि ध्रुवस्तिष्ठाविचाचलिः।
विशस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु मा त्वद्राष्ट्रमधि भ्रशत् १ १६९०
इहैवैधि माप च्योष्ठाः पर्वत इवाविचाचलिः। इन्द्र इवेह ध्रुवस्तिष्ठे—ह राष्ट्रमु धारय २
इममिन्द्रो अदीधरद् ध्रुवं ध्रुवेण हविषा।
तस्मै सोमो अधि ब्रवत् तस्मा उ ब्रह्मणस्पतिः ३
ध्रुवा द्यौर्ध्रुवा पृथिवी ध्रुवासः पर्वता इमे।
ध्रुवं विश्वमिदं जगद् ध्रुवो राजा विशामयम् ४
ध्रुवं ते राजा वरुणो ध्रुवं देवो बृहस्पतिः।
ध्रुवं त इन्द्रश्चाग्निश्च राष्ट्रं धारयतां ध्रुवम् ५(५)
ध्रुवं ध्रुवेण हविषा ऽभि सोमं मृशामसि। अथो त इन्द्रः केवली—र्विशो बलिहृतस्करत्६

॥ २ ॥ (ऋ० १०।१७४।१—५)+
(७—११) अभीवर्त आङ्गिरसः। अनुष्टुप्।

अभीवर्तेन हविषा येनेन्द्रो अभिवावृते। तेनास्मान् ब्रह्मणस्पते ऽभि राष्ट्राय वर्तय १
अभिवृत्य सपत्ना—नभि या नो अरातयः। अभि पृतन्यन्तं तिष्ठा—भि यो न इरस्यति २
अभि त्वा देवः सविता ऽभि सोमो अवीवृतत्।
अभि त्वा विश्वा भूता—न्यभीवर्तो यथाऽससि ३
येनेन्द्रो हविषा कृत्व्य—भवद् द्युम्न्युत्तमः। इदं तदक्रि देवा असपत्नः किलाभुवम् ४
असपत्नः सपत्नहा ऽभिराष्ट्रो विषासहिः। यथाऽहमेषां भूतानां विराजानि जनस्य च५ १७००

॥ ३ ॥ (ऋ० ६।२७।८)
(१२) भरद्वाजो बार्हस्पत्यः। चायमानो राजा। त्रिष्टुप्।

द्वयाँ अग्ने रथिनो विंशतिं गा वधूमतो मघवा मह्यं सम्राट्।
अभ्यावर्ती चायमानो ददाति दूणाशेयं दक्षिणा पार्थवानाम् ८

× वा. य. १२,११; ध्रुवं ध्रुवेण मनसा वाचा...नयामि। अथा न इन्द्र इद्विशो सपत्नाः समन० ॥ वा. य ७,२५; अथर्व. ६,८७,१—३;८८,१—२।
+ अथर्व. १,२९,१-३,६।

॥ ४ ॥ (अथर्व० ४।२२।१-७)

(१३-१९) वसिष्ठः, अथर्वा वा। क्षत्रियो राजा, इन्द्रश्च। त्रिष्टुप्।

इममिन्द्र वर्धय क्षत्रियं म इमं विशामेकवृषं कृणु त्वम्।
निरमित्रानक्ष्णुह्यस्य सर्वांस्तान् रन्धयास्मा अहमुत्तरेषु १
एमं भज ग्रामे अश्वेषु गोषु निष्टं भज यो अमित्रो अस्य।
वर्ष्म क्षत्राणामयमस्तु राजेन्द्र शत्रुं रन्धय सर्वमस्मै २
अयमस्तु धनपतिर्धनानामयं विशां विश्पतिरस्तु राजा।
अस्मिन्निन्द्र महि वर्चांसि धेह्यवर्चसं कृणुहि शत्रुमस्य ३(१५)
अस्मै द्यावापृथिवी भूरि वामं दुहाथां घर्मदुघे इव धेनू।
अयं राजा प्रिय इन्द्रस्य भूयात् प्रियो गवामोषधीनां पशूनाम् ४ २७०५
युनज्मि त उत्तरावन्तमिन्द्रं येन जयन्ति न पराजयन्ते।
यस्त्वा करदेकवृषं जनानामुत राज्ञामुत्तमं मानवानाम् ५
उत्तरस्त्वमधरे ते सपत्ना ये के च राजन् प्रतिशत्रवस्ते।
एकवृष इन्द्रसखा जिगीवांछत्रूयतामा भरा भोजनानि ६
सिंहप्रतीको विशो अद्धि सर्वा व्याघ्रप्रतीकोऽव बाधस्व शत्रून्।
एकवृष इन्द्रसखा जिगीवां छत्रूयतामा खिदा भोजनानि ७

॥ ५ ॥ (अथर्व० ६।८८।३)

(२०) अथर्वा। त्रिष्टुप्।

ध्रुवोऽच्युतः प्र मृणीहि शत्रूञ्छत्रूयतोऽधरान् पादयस्व।
सर्वा दिशः संमनसः सध्रीचीर्ध्रुवाय ते समितिः कल्पतामिह ३(२०)

॥ ६ ॥ (अथर्व० ७।९४।१)

सोमः (राजा)। अनुष्टुप्।

ध्रुवं ध्रुवेण हविषाऽव सोमं नयामसि। यथा न इन्द्रः केवलीर्विशः संमनसस्करत् १ २७१०

९३ बृबुस्तक्षा ।

॥ १ ॥ (ऋ० ६।४५।३१-३३)

(१-३) शंयुर्बार्हस्पत्यः । ३१ पादनिचृत् , ३२ गायत्री, ३३ अनुष्टुप् ।

अधि बृबुः पणीनां वर्षिष्ठे मूर्धन्नस्थात् । उरुः कक्षो न गाङ्ग्यः ३१ १७११

यस्य वायोरिव द्रवद् भद्रा रातिः सहस्रिणी । सद्यो दानाय मंहते ३२

तत् सु नो विश्वे अर्य आ सदा गृणन्ति कारवः । बृबुं सहस्रदातमं सूरिं सहस्रसातमम् ३३(३)



९४ सार्ञ्जयः प्रस्तोकः (दानस्तुतिः)

॥ १ ॥ (ऋ० ६।४७।२२-२५)

(१—४) गर्गो भारद्वाजः । २२ त्रिष्टुप् , २३ अनुष्टुप् , २४ गायत्री, २५ द्विपदा त्रिष्टुप् ।

प्रस्तोक इन्नु राधसस्त इन्द्र दश कोशयीर्दश वाजिनोऽदात् ।

दिवोदासादतिथिग्वस्य राधः शाम्बरं वसु प्रत्यग्रभीष्म २२

दशाश्वान् दश कोशान् दश वस्त्राधिभोजना ।

दशो हिरण्यपिण्डान् दिवोदासादसानिषम् २३

दश रथान् प्रष्टिमतः शतं गा अथर्वभ्यः । अश्वथः पायवेऽदात् २४

महि राधो विश्वजन्यं दधानान् भरद्वाजान्त्सार्ञ्जयो अभ्ययष्ट २५(४)



९५ आसङ्गः ।

॥ १ ॥ (ऋ० ८।१।३०-३४)

(१—५) आसङ्गः प्लायोगिः, ३४ शश्वती आङ्गिरसी ऋषिका । त्रिष्टुप्, ३०-३२ बृहती ।

स्तुहि स्तुहीदेते घा ते मंहिष्ठासो मघोनाम् ।

निन्दिताश्वः प्रपथी परमज्या मघस्य मेध्यातिथे ३०

आ यदश्वान् वनन्वतः श्रद्धयाऽहं रथे रुहम् ।

उत वामस्य वसुनश्चिकेतति यो अस्ति याद्वः पशुः ३१ १७१९

य ऋज्रा मह्यं मामहे सह त्वचा हिरण्ययां ।
एष विश्वान्यभ्यस्तु सौभगा- संगस्य स्वनद्रथः ३२ १७२०
अध प्लायोगिरति दासदन्या- नासंगो अग्ने दशभिः सहस्रैः ।
अधोक्षणो दश मह्यं रुशन्तो नळा इव सरसो निरतिष्ठन् ३३
अन्वस्य स्थूरं ददृशे पुरस्ता- दनस्थ ऊरुरवरम्बमाणः ।
शश्वती नार्यभिचक्ष्याह सुभद्रमर्य भोजनं बिभर्षि ३४(५)



९६ विभिन्दुः ।

॥ १ ॥ (ऋ० ८।२।४१-४२)

(१-२) मेधातिथिः काण्वः । गायत्री ।

शिक्षा विभिन्दो अस्मै चत्वार्ययुता ददत् । अष्टा परः सहस्रा ४१
उत सु त्ये पयोवृधा माकी रणस्य नप्त्या । जनित्वनाय मामहे ४२(२)



९७ पाकस्थामा कौरयाणः।

॥ १ ॥ (ऋ० ८।३।२१-२४)

(१-४) मेध्यातिथिः काण्वः । गायत्री, २१ अनुष्टुप् , २४ बृहती ।

यं मे दुरिन्द्रो मरुतः पाकस्थामा कौरयाणः ।
विश्वेषां त्मना शोभिष्ठ- मुपेव दिवि धावमानम् २१ १७२५
रोहितं मे पाकस्थामा सुधुरं कक्ष्यप्राम् । अदाद् रायो विबोधनम् २२
यस्मा अन्ये दश प्रति धुरं वहन्ति वह्नयः । अस्तं वयो न तुग्र्यम् २३
आत्मा पितुस्तनूर्वास ओजोदा अभ्यञ्जनम् ।
तुरीयमिद् रोहितस्य पाकस्थामानं भोजं दातारमब्रवम् । २४(४)



९८ कुरुङ्गः ।

॥ १ ॥ (ऋ० ८।४।१९-२१)

(१-३) देवातिथिः काण्वः । प्रगाथः= (विषमा बृहती+समा सतोबृहती) ।

स्थूरं राधः शताश्वं कुरुङ्गस्य दिविष्टिषु ।
राज्ञस्त्वेषस्य सुभगस्य रातिषु तुर्वशेष्वमन्महि १९
धीभिः सातानि काण्वस्य वाजिनः प्रियमेधैरभिद्युभिः ।
षष्टिं सहस्रानु निर्मजामजे निर्यूथानि गवामृषिः २० २७३०
वृक्षाश्चिन्मे अभिपित्वे अरारणुः । गां भजन्त मेहना ऽश्वं भजन्त मेहना २१

---

९९ कशुश्चैद्यः ।

॥ १ ॥ (ऋ० ८।५।३७ [उत्तरार्धस्य]-३९)

(१-३) ब्रह्मातिथिः काण्वः । बृहती, ३९ अनुष्टुप् ।

यथा चिच्चैद्यः कशुः शतमुष्ट्रानां ददत् सहस्रा दश गोनाम् ३७
यो मे हिरण्यसंदृशो दश राज्ञो अमंहत ।
अधस्पदा इच्चैद्यस्य कृष्टयश्चर्मम्ना अभितो जनाः ३८
माकिरेना पथा गाद् येनेमे यन्ति चेदयः । अन्यो नेत् सूरिरोहते भूरिदावत्तरो जनः ३९(३)

---

१०० तिरिन्दिरः पार्शव्यः ।

॥ १ ॥ (ऋ० ८।६।४६-४८)

(१-३) वत्सः काण्वः । गायत्री ।

शतमहं तिरिन्दिरे सहस्रं पर्शावा ददे । राधांसि याद्वानाम् ४६ २७३५
त्रीणि शतान्यर्वतां सहस्रा दश गोनाम् । ददुष्पज्राय साम्ने ४७
उदानट् ककुहो दिवमुष्ट्राञ्चतुर्युजो ददत् । श्रवसा याद्वं जनम् ४८(३)

---

१०१ त्रसदस्युः पौरुकुत्स्यः ।

॥ १ ॥ (ऋ० ८।१९।३६-३७)

(१-२) सोभरिः काण्वः । ककुप्, ३७ पङ्क्तिः ।

अदा॑न्मे पौरुकु॒त्स्यः॑ प॒ञ्चा॒श॒तं॑ त्र॒सद॑स्युर्व॒धूना॑म् । मंहि॑ष्ठो अ॒र्यः सत्प॑तिः ३६

उ॒त मे॑ प्र॒यियो॑र्व॒यियोः॑ सु॒वास्त्वा॒ अधि॒ तुग्व॑नि ।

ति॒सृ॒णां स॑प्त॒तीनां॑ श्या॒वः प्र॑णे॒ता भु॑वद् वसु॒र्दिया॑नां॒ पतिः॑ ३७

१०२ चित्रः ।

॥ १ ॥ (ऋ० ८।२१।१७-१८)

(१-२) सोभरिः काण्वः । प्रगाथः=(विषमा ककुप्+समा सतोबृहती)

इन्द्रो॑ वा॒ घेदिय॑न्म॒घं सर॑स्वती वा सु॒भगा॑ द॒दिर्वसु॑ । त्वं वा॑ चित्र दा॒शुषे॑ १७ १७४०

चित्र॒ इद्राजा॑ राज॒का इद॑न्य॒के य॒के सर॑स्वती॒मनु॑ ।

प॒र्जन्य॑ इव त॒तन॒द्धि वृ॒ष्ट्या स॒हस्र॑म॒युता॒ दद॑त् १८

१०३ वरुः सौषाम्णिः ।

॥ १ ॥ (ऋ० ८।२४।२८-३०)

(१—३) विश्वमना वैयश्वः । उष्णिक्, ३० अनुष्टुप् ।

यथा॑ व॒रो सु॒षाम्णे॑ स॒निभ्य॒ आव॑हो र॒यिम् । व्य॑श्वेभ्यः सुभगे वाजिनीवति २८

आ ना॒र्यस्य॒ दक्षि॑णा॒ व्य॑श्वाँ एतु सो॒मिनः॑ । स्थू॒रं च॒ राधः॑ श॒तव॑त्स॒हस्र॑वत् २९

यत्त्वा॑ पृ॒च्छादी॑जा॒नः कु॑ह॒या कु॑हयाकृते । ए॒षो अप॑श्रितो व॒लो गो॑म॒तीमव॑ तिष्ठति ३०

१०४ पृथुश्रवाः कांनीतः ।

॥ १ ॥ (ऋ० ८।४६।२१-२४)

(१-४) वशोऽश्व्यः । पंक्तिः, २२ संस्तारपंक्तिः, २३ गायत्री ।

आ स एतु य ईवदाँ अदेवः पूर्तमाददे ।
यथा चिद्वशो अश्व्यः पृथुश्रवसि कानीतेऽस्या व्युष्याददे २१ २७४५
षष्टिं सहस्राश्व्यस्यायुतासनमुष्ट्रानां विंशतिं शता ।
दश श्यावीनां शता दश त्र्यरुषीणां दश गवां सहस्रा २२
दश श्यावा ऋधद्रयो वीतवारास आशवः । मथ्रा नेमिं नि वावृतुः २३
दानासः पृथुश्रवसः कानीतस्य सुराधसः ।
रथं हिरण्ययं ददन्मंहिष्ठः सूरिरभूद् वर्षिष्ठमकृत श्रवः २४(४)



१०५ श्रुतर्वा आर्क्ष्यः ।

॥ १ ॥ (ऋ० ८।७४।१३-१५)

(१-३) गोपवन आत्रेयः । अनुष्टुप् ।

अहं हुवान आर्क्षे श्रुतर्वणि मदच्युति । शर्धांसीव स्तुकाविनां मृक्षा शीर्षा चतुर्णाम् १३
मां चत्वार आशवः शविष्ठस्य द्रवित्नवः । सुरथासो अभि प्रयो वक्षन् वयो न तुग्र्यम् १४
सत्यमित् त्वा महेनदि परुष्ण्यव देदिशम् । नेमापो अश्वदातरः शविष्ठादस्ति मर्त्यः १५



१०६ ऐन्द्रो वसुक्रः ।

॥ १ ॥ (ऋ० १०।२८।२,६,८,१०,१२)

(१—५) इन्द्र ऋषिः । त्रिष्टुप् ।

स रोरुवद्वृषभस्तिग्मशृङ्गो वर्ष्मन् तस्थौ वरिमन्ना पृथिव्याः ।
विश्वेष्वेनं वृजनेषु पामि यो मे कुक्षी सुतसोमः पृणाति २ २७५२

एवा हि मां तवसं वर्धयन्ति दिवश्चिन्मे बृहत उत्तरा धूः ।
पुरू सहस्रा नि शिशामि साकमशत्रुं हि मा जनिता जजान ६
देवास आयन् परशूँरबिभ्रन् वना वृश्चन्तो अभि विड्भिरायन् ।
नि सुद्र्वं१ दधतो वक्षणासु यत्रा कृपीटमनु तद्दहन्ति ८
सुपर्ण इत्था नखमा सिषायावरुद्धः परिपदं न सिंहः ।
निरुद्धश्चिन्महिषस्तर्ष्यावान् गोधा तस्मा अयथं कर्षदेतत् १० २७५५
एते शमीभिः सुशमी अभूवन् ये हिन्विरे तन्व१ः सोम उक्थैः ।
नृवद्वदन्नुप नो माहि वाजान् दिवि श्रवो दधिषे नाम वीरः १२

---

१०७ देव्यः, इन्द्राणीवरुणान्यग्नाय्यः ।

॥ १ ॥ (ऋ० १।२२।११-१२)

(१-२) मेधातिथिः काण्वः । गायत्री ।

अभि नो देवीरवसा महः शर्मणा नृपत्नीः । अच्छिन्नपत्राः सचन्ताम् ११
इहेन्द्राणीमुप ह्वये वरुणानीं स्वस्तये । अग्नायीं सोमपीतये १२



१०८ कुरुश्रवणत्रासदस्यवः ।

॥ १ ॥ (ऋ० १०।३३।४-५)

(१-२) कवष ऐलूषः । गायत्री ।

कुरुश्रवणमावृणि राजानं त्रासदस्यवम् । मंहिष्ठं वाघतामृषिः ४
यस्य मा हरितो रथे तिस्रो वहन्ति साधुया । स्तवै सहस्रदक्षिणे ५ २७६०

१०९ उपमश्रवा मैत्रातिथिः ।

॥ १ ॥ (ऋ० १०।३३।६-९)

(१-४) कवष ऐलूषः । गायत्री ।

यस्य॑ प्र॒स्वाद॑सो॒ गिर॑ उ॒प॒मश्र॑वसः पि॒तुः । क्षेत्रं॒ न र॒ण्वमू॒चुषे॑ ६ २७६१

अधि॑ पुत्रोपमश्रवो॒ नपा॑न्मित्रातिथेरिहि । पि॒तुष्टे॑ अस्मि वन्दि॒ता ७

यदीशी॑यामृता॑ना॒मु॒त वा॒ मर्त्या॑नाम् । जीवे॒दिन्म॒घवा॒ मम॑ ८

न दे॒वाना॒मति॑ व्र॒तं श॒तात्मा॑ च॒न जी॑वति । तथा॑ यु॒जा वि वा॑वृते ९



११० असमातिः ।

॥ १ ॥ (ऋ० १०।६०।१-४,६)

(१-५) बन्धुःश्रुतबन्धुर्विप्रबन्धुर्गौपायनाः, ६ अगस्त्यस्वसा ऋषिका । गायत्री, ६ अनुष्टुप् ।

आ जनं॑ त्वे॒षसं॑दृशं॒ माही॑नाना॒मुप॑स्तुतम् । अग॑न्म॒ बिभ्र॑तो॒ नम॑ः १ २७६५

अस॑मातिं नि॒तोश॑नं त्वे॒षं नि॑य॒यिनं॒ रथ॑म् । भ॒जेर॑थस्य॒ सत्प॑तिम् २

यो जना॑न् महि॒षाँ इ॑वा॒तित॒स्थौ पवी॑रवान् । उ॒ताप॑वीरवान् यु॒धा ३

यस्ये॑क्ष्वा॒कुरुप॑ व्र॒ते रे॒वान् म॑रा॒य्येध॑ते । दि॒वीव॒ पञ्च॑ कृ॒ष्टय॑ः ४

अ॒गस्त्य॑स्य॒ नद्भ्य॒ः सप्ती॑ युनक्षि॒ रोहि॑ता । प॒णीन् न्य॑क्रमीर॒भि विश्वा॑न् राजन्नरा॒धस॑ः ६

१११ सावर्णेर्दानम् ।

॥ १ ॥ (ऋ० १०।६२।८-११)

(१-४) नाभानेदिष्ठो मानवः । अनुष्टुप्, १० गायत्री, ११ त्रिष्टुप् ।

प्र नू॒नं जा॑यताम॒यं मनु॒स्तोक्म॑व रोहतु । यः स॒हस्रं॑ श॒ताश्वं॑ स॒द्यो दा॒नाय॒ मंह॑ते ८ २७७०

न तम॑श्नोति॒ कश्च॒न दि॒व इ॑व॒ सान्वा॒रभ॑म् । सा॒व॒र्ण्यस्य॒ दक्षि॑णा॒ वि सिन्धु॑रिव पप्रथे ९

उत दासा परिविषे स्मद्दिष्टी गोपरीणसा । यदुस्तुर्वश्च मामहे १०
सहस्रदा ग्रामणीर्मा रिषन्मनुः सूर्येणास्य यतमानैतु दक्षिणा ।
सावर्णेर्देवाः प्र तिरन्त्वायु—र्यस्मिन्नश्रान्ता असनाम वाजम् ११

११२ ऋक्षाश्वमेधौ ।

॥ १ ॥ (ऋ० ८।६८।१४-१९)

(१—६) प्रियमेध आङ्गिरसः । गायत्री ।

उप मा षड् द्वाद्वा नरः सोमस्य हर्ष्या । तिष्ठन्ति स्वादुरातयः १४
ऋज्राविन्द्रोत आ ददे हरी ऋक्षस्य सूनवि । आश्वमेधस्य रोहिता १५ २७७५
सुरथाँ आतिथिग्वे स्वभीशूँरार्क्षे । आश्वमेधे सुपेशसः १६
षळश्वाँ आतिथिग्व इन्द्रोते वधूमतः । सचा पूतक्रतौ सनम् १७
ऐषु चेतद्वृषण्व—त्यन्तर्ऋज्रेष्वरुषी । स्वभीशुः कशावती १८
न युष्मे वाजबन्धवो निनित्सुश्चन मर्त्यः । अवद्यमधि दीधरत् १९

११३ उर्वशी ।

॥ १ ॥ (१०।९५।१,३,६,८-१०,१२,१४,१७)

(१-९) पुरूरवा ऐळ ऋषिः । त्रिष्टुप् ।

हये जाये मनसा तिष्ठ घोरे वचांसि मिश्रा कृणवावहै नु ।
न नौ मन्त्रा अनुदितास एते मयस्करन् परतरे चनाहन् १ २७८०
इषुर्न श्रिय इषुधेरसना गोषाः शतसा न रंहिः ।
अवीरे क्रतौ वि दविद्युतन्नो—रा न मायुं चितयन्त धुनयः ३
या सुजूर्णिः श्रेणिः सुम्नआपि—र्ह्रदेचक्षुर्न ग्रन्थिनी चरण्युः ।
ता अञ्जयोऽरुणयो न सस्रुः श्रिये गावो न धेनवोऽनवन्त ६

सचा यदासु जहतीष्वत्क— ममानुषीषु मानुषो निषेवे ।
अप स्म मत्तरसन्ती न भुज्यु— स्ता अत्रसन् रथस्पृशो नाश्वाः ८
यदासु मर्तो अमृतासु निस्पृक् सं क्षोणीभिः क्रतुभिर्न पृङ्क्ते ।
ता आतयो न तन्वः शुम्भत स्वा अश्वासो न क्रीळयो दन्दशानाः ९
विद्युन्न या पतन्ती दविद्यो— द्भरन्ती मे अप्या काम्यानि ।
जनिष्टो अपो नर्यः सुजातः प्रोर्वशी तिरत दीर्घमायुः १० २७८५
कदा सूनुः पितरं जात इच्छा— च्चक्रन्नाश्रु वर्तयद्विजानन् ।
को दंपती समनसा वि यूयो— दध यदग्निः श्वशुरेषु दीदयत् १२
सुदेवो अद्य प्रपतेदनावृत् परावतं परमां गन्तवा उ
अधा शयीत निर्ऋतेरुपस्थे ऽधैनं वृका रभसासो अद्युः १४
अन्तरिक्षप्रां रजसो विमानी— मुप शिक्षाम्युर्वशीं वसिष्ठः ।
उप त्वा रातिः सुकृतस्य तिष्ठा— न्नि वर्तस्व हृदयं तप्यते मे १७

---

११४ पुरूरवा ।

॥ १ ॥ (ऋ० १०।९५।२,४-५,७,११,१३,१५-१६,१८)
(१-९) उर्वशी ऋषिका । त्रिष्टुप् ।

किमेता वाचा कृणवा तवाहं प्राक्रमिषमुषसामग्रियेव ।
पुरूरवः पुनरस्तं परेहि दुरापना वात इवाहमस्मि २
सा वसु दधती श्वशुराय वय उषो यदि वष्ट्यन्तिगृहात् ।
अस्तं ननक्षे यस्मिञ्चाकन् दिवा नक्तं श्नथिता वैतसेन ४ २७९०
त्रिः स्म माह्नः श्नथयो वैतसेनो— त स्म मेऽव्यत्यै पृणासि ।
पुरूरवोऽनु ते केतमायं राजा मे वीर तन्वस्तदासीः ५
समस्मिञ्जायमान आसत ग्ना उतेमवर्धन् नद्यः स्वगूर्ताः ।
महे यत् त्वा पुरूरवो रणाया— वर्धयन् दस्युहत्याय देवाः ७
जज्ञिष इत्था गोपीथ्याय हि दधाथ तत् पुरूरवो म ओजः ।
अशासं त्वा विदुषी सस्मिन्नहन् न म आशृणोः किमभुग्वदासि ११

प्रति ब्रवाणि वर्तयते अश्रु चक्रन् न क्रन्ददाध्ये शिवायै ।
प्र तत् ते हिनवा यत् ते अस्मे परेह्यस्तं नहि मूर मापः १३
पुरूरवो मा मृथा मा प्र पप्तो मा त्वा वृकासो अशिवास उ क्षन् ।
न वै स्त्रैणानि सख्यानि सन्ति सालावृकाणां हृदयान्येता १५ २७९५
यद्विरूपाचरं मर्त्ये्ष्ववसं रात्रीः शरदश्चतस्रः ।
घृतस्य स्तोकं सकृदह्न आश्नां तादेवेदं तातृपाणा चरामि १६
इति त्वा देवा इम आहुरैळ यथेमेतद्भवसि मृत्युबन्धुः ।
प्रजा ते देवान् हविषा यजाति स्वर्ग उ त्वमपि मादयासे १८

---

११५ दक्षिणा, दक्षिणादातारो वा।

॥ १ ॥ (ऋ० १०।१०७।१—११)

(१-११) दिव्य आङ्गिरसः, दक्षिणा वा प्राजापत्या । त्रिष्टुप्, ४ जगती ।

आविरभून्महि माघोनमेषां विश्वं जीवं तमसो निरमोचि ।
महि ज्योतिः पितृभिर्दत्तमागा्दुरुः पन्था दक्षिणाया अदर्शि । १
उच्चा दिवि दक्षिणावन्तो अस्थु्र्ये अश्वदाः सह ते सूर्येण ।
हिरण्यदा अमृतत्वं भजन्ते वासोदाः सोम प्र तिरन्त आयुः २
दैवी पूर्तिर्दक्षिणा देवयज्या न कवारिभ्यो नहि ते पृणन्ति ।
अथा नरः प्रयतदक्षिणासो ऽवद्यभिया बहवः पृणन्ति । ३ १८००
शतधारं वायुमर्कं स्वर्विदं नृचक्षसस्ते अभि चक्षते हविः ।
ये पृणन्ति प्र च यच्छन्ति संगमे ते दक्षिणां दुहते सप्तमातरम् ४
दक्षिणावान् प्रथमो हूत एति दक्षिणावान् ग्रामणीरग्रमेति ।
तमेव मन्ये नृपतिं जनानां यः प्रथमो दक्षिणामाविवाय ५
तमेव ऋषिं तमु ब्रह्माणमाहु्र्यज्ञन्यं सामगामुक्थशासम् ।
स शुक्रस्य तन्वो वेद तिस्रो यः प्रथमो दक्षिणया रराध ६
दक्षिणाश्वं दक्षिणा गां ददाति दक्षिणा चन्द्रमुत यद्धिरण्यम् ।
दक्षिणान्नं वनुते यो न आत्मा दक्षिणां वर्म कृणुते विजानन् ७

न भोजा मम्रुर्न न्यर्थमीयु—र्न रिष्यन्ति न व्यथन्ते ह भोजाः ।
इदं यद्विश्वं भुवनं स्वश्चै—तत् सर्वं दक्षिणैभ्यो ददाति ८ २८०५
भोजा जिग्युः सुरभिं योनिमग्रे भोजा जिग्युर्वध्वं या सुवासाः ।
भोजा जिग्युरन्तःपेयं सुराया भोजा जिग्युर्ये अहूताः प्रयन्ति ९
भोजायाश्वं सं मृजन्त्याशुं भोजायास्ते कन्या शुम्भमाना ।
भोजस्येदं पुष्करिणीव वेश्म परिष्कृतं देवमानेव चित्रम् १०
भोजमश्वाः सुष्ठुवाहो वहन्ति सुवृद्रथो वर्तते दक्षिणायाः ।
भोजं देवासोऽवता भरेषु भोजः शत्रून्त्समनीकेषु जेता ११

---

११६ शत्रुसेनामोहनम् ।

॥ १ ॥ (अथर्व० ३।१।५)×

अथर्वा । इन्द्रः । विराट् पुर उष्णिक् ।

इन्द्र सेनां मोहयामित्राणाम् । अग्नेर्वातस्य ध्राज्या तान् विषूचो वि नाशय ५

॥ २ ॥ (अथर्व० ३।२।४)+ अनुष्टुप् ।

व्याकूतय एषामिताथो चित्तानि मुह्यत । अथो यदद्यैषां हृदि तदेषां परि निर्जहि ४ २८१०

---

११७ शत्रुनाशनम् ।

॥ १ ॥ (अथर्व० २।२३।१-५)

(१-८) आपः । (एकावसानम्) । १-४ निचृद्विषमा गायत्री, ५ भुरिग्विषमा ।

आपो यद्वस्तपस्तेन तं प्रति तपत योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः १
आपो यद्वो हरस्तेन तं प्रति हरत योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः २

× अथर्व० ३,१,१-३,६=दै० [अग्निः] २१५२-५५। अथर्व० ३,१,२=दै० [मरुतः] ४३४। अथर्व० ३,१,४=दै० [इन्द्रः] ११४३। + अथर्व० ३,२,१-३=दै० [अग्निः] २१५६—५८। अथर्व० ३,२,५=दै० [इन्द्रः] २९३३। अथर्व० ३,२,६=दै० [मरुतः] ४३५।

आपो यद्वोऽर्चिस्तेन तं प्रत्यर्चत योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ३

आपो यद्वः शोचिस्तेन तं प्रति शोचत योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ४

आपो यद्वस्तेजस्तेन तमतेजसं कृणुत योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः ५ २८१५

॥ २ ॥ (अथर्व० ६।६५।१-३)

(चन्द्रमाः), इन्द्रः, पराशर. । अनुष्टुप् , १ पथ्यापङ्क्तिः ।

अव मन्युरवायतावबाहू मनोयुजा । पराशर त्वं तेषां पराञ्चं शुष्ममर्दयाधा नो रयिमा कृधि १

निर्हस्तेभ्यो नैर्हस्तं यं देवाः शरुमस्यथ । वृश्चामि शत्रूणां बाहूननेन हविषाऽहम् २

इन्द्रश्चकार प्रथमं नैर्हस्तमसुरेभ्यः । जयन्तु सत्वानो मम स्थिरेणेन्द्रेण मेदिना ३(८)

॥ ३ ॥ (अथर्व० ५।३।११)

(९) बृहद्दिवोऽथर्वा । इन्द्रः (विजयाय प्रार्थना) । त्रिष्टुप् ।

अर्वाञ्चमिन्द्रममुतो हवामहे यो गोजिद्धनजिदश्वजिद्यः ।

इमं नो यज्ञं विहवे शृणोत्वस्माकमभूर्हर्यश्व मेदी ११

॥ ४ ॥ (अथर्व० २।१८।१-५)

(१०-१५) चातनः । अग्निः । (द्वैपदम्) साम्नी बृहती ।

भ्रातृव्यक्षयणमसि भ्रातृव्यचातनं मे दाः स्वाहा १ २८२०

सपत्नक्षयणमसि सपत्नचातनं मे दाः स्वाहा २

अरायक्षयणमस्यरायचातनं मे दाः स्वाहा ३

पिशाचक्षयणमसि पिशाचचातनं मे दाः स्वाहा ४

सदान्वाक्षयणमसि सदान्वाचातनं मे दाः स्वाहा ५

॥ ५ ॥ (अथर्व० ८।३।२५)

अग्निः । पञ्चपदा बृहतीगर्भा जगती ।

ये ते शृङ्गे अजरे जातवेदस्तिग्महेती ब्रह्मसंशिते ।

ताभ्यां दुर्हार्दमभिदासन्तं किमीदिनं प्रत्यञ्चमर्चिषा जातवेदो वि निक्ष्व २५(१५)

॥ ६ ॥ (अथर्व० २।२४।१-८)

(१६-३८) ब्रह्मा । (आयुष्यम्) । पङ्क्तिः ।

शेरभक शेरभ पुनर्वो यन्तु यातवः पुनर्हेतिः किमीदिनः ।

यस्य स्थ तमत्त यो वः प्राहैत् तमत्त स्वा मांसान्यत्त १

शेवृधक शेवृध पुनर्वो यन्तु यातवः पुनर्हेतिः किमीदिनः । यस्य स्थ तमत्त यो वः० २

म्रोकानुम्रोक पुनर्वो यन्तु यातवः पुनर्हेतिः किमीदिनः । यस्य स्थ तमत्त यो वः० ३

सर्पानुसर्प पुनर्वो यन्तु यातवः पुनर्हेतिः किमीदिनः । यस्य स्थ तमत्त यो वः प्राहैत्० ४
जूर्णि पुनर्वो यन्तु यातवः पुनर्हेतिः किमीदिनीः । यस्य स्थ तमत्त यो वः प्राहैत्० ५ १८३०
उपब्दे पुनर्वो यन्तु यातवः पुनर्हेतिः किमीदिनीः । यस्य स्थ तमत्त यो वः प्राहैत्० ६
अर्जुनि पुनर्वो यन्तु यातवः पुनर्हेतिः किमीदिनीः । यस्य स्थ तमत्त यो वः प्राहैत्० ७
भरूजि पुनर्वो यन्तु यातवः पुनर्हेतिः किमीदिनीः । यस्य स्थ तमत्त यो वः प्राहैत्० ८

॥ ७ ॥ (अथर्व० १०।५।[६-७]३६-५०)×

(१-६) ब्रह्मा । मंत्रोक्ताः । ३६ मार्त्री पञ्चपदातिशाक्वरातिजागतगर्भाष्टिः; ३७ विराट् पुरस्ताद्बृहती; ३८ पुर उष्णिक्; ३९,४१ आर्षी गायत्री; ४० विराड्विषमा गायत्री ।

(१-९) विहव्यः । प्राजापत्या । प्राजापत्या अनुष्टुप्; ४४ त्रिपदा गायत्रीगर्भाऽनुष्टुप्; ५० त्रिष्टुप् ।

जितमस्माकमुद्भिन्नमस्माकमभ्यष्ठां विश्वाः पृतना अरातीः ।
इदमहमामुष्यायणस्यामुष्याः पुत्रस्य वर्चस्तेजः प्राणमायुर्नि
वेष्टयामीदमेनमधराञ्चं पादयामि ३६

सूर्यस्यावृतमन्वावर्ते दक्षिणामन्वावृतम् । सा मे द्रविणं यच्छतु सा मे ब्राह्मणवर्चसम् ३७(२५)
दिशो ज्योतिष्मतीरभ्यावर्ते । ता मे द्रविणं यच्छन्तु ता मे ब्राह्मणवर्चसम् ३८
सप्तऋषीनभ्यावर्ते । ते मे द्रविणं यच्छन्तु ते मे ब्राह्मणवर्चसम् ३९
ब्रह्माभ्यावर्ते । तन्मे द्रविणं यच्छतु तन्मे ब्राह्मणवर्चसम् ४०
ब्राह्मणाँ अभ्यावर्ते । ते मे द्रविणं यच्छन्तु ते मे ब्राह्मणवर्चसम् ४१
यं वयं मृगयामहे तं वधै स्तृणवामहै । व्यात्ते परमेष्ठिनो ब्रह्मणापीपदाम तम् ४२ १८४०
वैश्वानरस्य दंष्ट्राभ्यां हेतिस्तं समधादभि । इयं तं प्सात्वाहुतिः समिद्देवी सहीयसी ४३
राज्ञो वरुणस्य बन्धोऽसि । सोऽमुमामुष्यायणममुष्याः पुत्रमन्ने प्राणे बधान ४४
यत् ते अन्नं भुवस्पत आक्षियति पृथिवीमनु । तस्य नस्त्वं भुवस्पते संप्रयच्छ प्रजापते ४५
अपो दिव्या अचायिषं रसेन समपृक्ष्महि । पयस्वानग्न आगमं तं मा सं सृज वर्चसा ४६
सं माग्ने वर्चसा सृज सं प्रजया समायुषा । विद्युर्मे अस्य देवा इन्द्रो विद्यात् सह ऋषिभिः ४७(३५)
यदग्ने अद्य मिथुना शपातो यद्वाचस्तृष्टं जनयन्त रेभाः ।
मन्योर्मनसः शरव्या जायते या तया विध्य हृदये यातुधानान् ४८
परा शृणीहि तपसा यातुधानान् पराग्ने रक्षो हरसा शृणीहि ।
पराचिषा मूरदेवाञ्छृणीहि परासुतृपः शोशुचतः शृणीहि ४९

× अथर्व० १०,५,४६ – ४९=ऋ० १,२३,२३-२४; १०,८७,१३-१४ ।

अपामस्मै वज्रं प्र हरामि चतुर्भृष्टिं शीर्षभिद्याय विद्वान् ।
सो अस्याङ्गानि प्र शृणातु सर्वा तन्मे देवा अनु आनन्तु विश्वे ५०(३८)

॥ ८ ॥ (अथर्व० २।२७।१-७)

(३९-४९) कपिञ्जलः । १-५ वनस्पतिः, ६ रुद्रः, ७ इन्द्रः । अनुष्टुप् ।

नेच्छत्रुः प्राशं जयाति सहमानाभिभूरसि । प्राशं प्रतिप्राशो जह्यरसान् कृण्वोषधे १
सुपर्णस्त्वान्वविन्दत् सूकरस्त्वाखनन्नसा । प्राशं प्रतिप्राशो जह्यरसान् कृण्वोषधे २ २८५०
इन्द्रो ह चक्रे त्वा बाहावसुरेभ्य स्तरीतव । प्राशं प्रतिप्राशो जह्यरसान् कृण्वोषधे ३
पाटामिन्द्रो व्याश्नादसुरेभ्य स्तरीतवे । प्राशं प्रतिप्राशो जह्यरसान् कृण्वोषधे ४
तयाऽहं शत्रून्त्साक्ष इन्द्रः सालावृकाँ इव । प्राशं प्रतिप्राशो जह्यरसान् कृण्वोषधे ५
रुद्र जलाषभेषज नीलशिखण्ड कर्मकृत् । प्राशं प्रतिप्राशो जह्यरसान् कृण्वोषधे ६
तस्य प्राशं त्वं जहि यो न इन्द्राभिदासति ।
अधि नो ब्रूहि शक्तिभिः प्राशि मामुत्तरं कृधि ७

॥ ९ ॥ (अथर्व० ७।९५।१-३)

गृध्रौ । अनुष्टुप्, २—३ भुरिक् ।

उदस्य श्यावौ विथुरौ गृध्रौ द्यामिव पेततुः । उच्छोचनप्रशोचनावस्योच्छोचनौ हृदः १
अहमेनावुदतिष्ठिपं गावौ श्रान्तसदाविव । कुर्कुराविव कूजन्तावुदवन्तौ वृकाविव २
आतोदिनौ नितोदिनावथो संतोदिनावुत । अपि नह्याम्यस्य मेढ्रं य इतः स्त्री पुमान् जभार ३

॥ १० ॥ (अथर्व० ७।९६।१)

वयः । अनुष्टुप् ।

असदन् गावः सदनेऽपप्तद्वसतिं वयः । आस्थाने पर्वता अस्थुः स्थाम्नि वृक्कावतिष्ठिपम् १(४९)

॥ ११ ॥ (अथर्व० ३।६।१-८)

(५०-५७) जगद्बीजं पुरुषः । वानस्पत्योऽश्वत्थः । अनुष्टुप् ।

पुमान् पुंसः परिजातोऽश्वत्थः खदिरादधि ।
स हन्तु शत्रून् मामकान् यानहं द्वेष्मि ये च माम् १ २८६०
तानश्वत्थ निः शृणीहि शत्रून् वैबाधदोधतः ।
इन्द्रेण वृत्रघ्ना मेदी मित्रेण वरुणेन च २
यथाऽश्वत्थ निरभनोऽन्तर्महत्यर्णवे ।
एवा तान्त्सर्वान् निर्भङ्ग्धि यानहं द्वेष्मि ये च माम् ३

यः सहमानश्चरसि सासहान इव ऋषभः ।
तेनाश्वत्थ त्वया वयं सपत्नान्त्सहिषीमहि ४
सिनात्वेनान् निर्ऋतिर्मृत्योः पाशैरमोक्यैः ।
अश्वत्थ शत्रून् मामकान् यानहं द्वेष्मि ये च माम् ५
यथाऽश्वत्थ वानस्पत्यानारोहन् कृणुषेऽधरान् ।
एवा मे शत्रोर्मूर्धानं विष्वग्भिन्द्धि सहस्व च ६ १८६५
तेऽधराञ्चः प्र प्लवन्तां छिन्ना नौरिव बन्धनात् ।
न वैबाधप्रणुत्तानां पुनरस्ति निवर्तनम् ७
प्रैणान् नुदे मनसा प्र चित्तेनोत ब्रह्मणा । प्रैणान् वृक्षस्य शाखयाऽश्वत्थस्य नुदामहे ८(५७)

॥ १२ ॥ (अथर्व० ४।४०।२,४,७-८)×

(५८—६४) शुक्रः । २ यमः, ४ सोमः, ७ सूर्यः, ८ दिशः । २ जगती; ४,७ त्रिष्टुप्, ८ पुरोऽतिशक्वरी पादयुग्जगती ।

ये दक्षिणतो जुह्वति जातवेदो दक्षिणाया दिशोऽभिदासन्त्यस्मान् ।
यममृत्वा ते पराञ्चो व्यथन्तां प्रत्यगेनान् प्रतिसरेण हन्मि २
य उत्तरतो जुह्वति जातवेद उदीच्या दिशोऽभिदासन्त्यस्मान् । सोममृत्वा ते पराञ्चो० ४
य उपरिष्टाज्जुह्वति जातवेद ऊर्ध्वाया दिशोऽभिदासन्त्यस्मान् । सूर्यमृत्वा ते पराञ्चो० ७ १८७०
ये दिशामन्तर्देशेभ्यो जुह्वति जातवेदः सर्वाभ्यो दिग्भ्योऽभिदासन्त्यस्मान् । ब्रह्मर्त्वा ते० ८

॥ १३ ॥ (अथर्व० ६।१३४।१-३)

वज्रः । १ परानुष्टुप् त्रिष्टुप्, २ अनुष्टुप्, ३ भुरिक् त्रिपदा गायत्री ।

अयं वज्रस्तर्पयतामृतस्यावास्य राष्ट्रमप हन्तु जीवितम् ।
शृणातु ग्रीवाः प्र शृणातूष्णिहा वृत्रस्येव शचीपतिः १
अधरोऽधर उत्तरेभ्यो गूढः पृथिव्या मोत्सृपत् । वज्रेणावहतः शयाम् २
यो जिनाति तमन्विच्छ यो जिनाति तमिज्जहि ।
जिनतो वज्र त्वं सीमन्तमन्वञ्चमनु पातय ३(६४)

× ४,४०,१,३,५-६=दै० [अग्निः] २३४२; दै० [वरुणः] १५१; =दै० [तृ० भागः] १७८८; दै० [तृ० भागः] ९३ ।

॥ १४ ॥ (अथर्व० ७।९०।१-३)

(६५-६७) अङ्गिराः । मन्त्रोक्ताः । १ गायत्री, २ विराट् पुरस्ताद्बृहती, ३ त्र्यवसाना षट्पदा भुरिग्जगती ।

अपि वृश्च पुराणवद्व्रततेरिव गुष्पितम् । ओजो दासस्य दम्भय १ २८७५

वयं तदस्य संभृतं वस्विन्द्रेण वि भजामहै । म्लापयामि भ्रजः शिभ्रं वरुणस्य व्रतेन ते २

यथा शेपो अपायातै स्त्रीषु चासदनावयाः। अवस्थस्य क्नदीवतः शाङ्कुरस्य नितोदिनः।

यदाततमव तत् तनु यदुत्ततं नि तत् तनु ३

॥ १५ ॥ (अथर्व० ८।८।१-२४)

(६८-११८) भृग्वङ्गिराः । इन्द्रः, वनस्पतिः, परसेनाहननं च । अनुष्टुप्; २,८-१०,२३ उपरिष्टाद्बृहती; ३ विराड्बृहती; ४ बृहती पुरस्तात्प्रस्तारपङ्क्तिः, ६ आस्तारपङ्क्तिः, ७ विपरीत पादलक्ष्मा चतुष्पदातिजगती; ११ पथ्याबृहती; १२ भुरिक्; १९ पुरस्ताद्विराड्बृहती; २० पुरस्तान्निचृद्बृहती; २१ त्रिष्टुप् ; २२ चतुष्पदा शक्वरी; २४ त्र्यवसाना त्रिष्टुबुष्णिग्गर्भा पराशक्वरी पञ्चपदा जगती ।

इन्द्रो मन्थतु मन्थिता शक्रः शूरः पुरंदरः । यथा हनाम सेना अमित्राणां सहस्रशः १

पूतिरज्जुरुपध्मानी पूतिं सेनां कृणोत्वमूम् । धूममग्निं परादृश्यामित्रा हृत्स्वा दधतां भयम् २

अमूनश्वत्थ निः शृणीहि खादामून् खदिराजिरम् ।

ताजद्भङ्ग इव भज्यन्तां हन्त्वेनान् वधको वधैः ३(७०)

परुषानमून् परुषाह्वः कृणोतु हन्त्वेनान् वधको वधैः ।

क्षिप्रं शर इव भज्यन्तां बृहज्जालेन संदिताः ४

अन्तरिक्षं जालमासीज्जालदण्डा दिशो महीः । तेनाभिधाय दस्यूनां शक्रः सेनामपावपत् ५

बृहद्धि जालं बृहतः शक्रस्य वाजिनीवतः ।

तेन शत्रूनभि सर्वान् न्युब्ज यथा न मुच्यातै कतमश्चनैषाम् ६

बृहत् ते जालं बृहत इन्द्र शूर सहस्रार्घस्य शतवीर्यस्य ।

तेन शतं सहस्रमयुतं न्यर्बुदं जघान शक्रो दस्यूनामभिधाय सेनया ७

अयं लोको जालमासीच्छक्रस्य महतो महान् ।

तेनाहमिन्द्रजालेनामूंस्तमसाभि दधामि सर्वान् ८ २८८५

सेदिरुग्रा व्यृद्धिरार्तिश्चानपवाचना । श्रमस्तन्द्रीश्च मोहश्च तैरमूनभि दधामि सर्वान् ९

मृत्यवेऽमून् प्र यच्छामि मृत्युपाशैरमी सिताः ।

मृत्योर्ये अघला दूतास्तेभ्य एनान् प्रति नयामि बद्ध्वा १०

नयतामून् मृत्युदूता यमदूता अपोम्भत ।
परःसहस्रा हन्यन्तां तृणेढ्वेनान् मत्यं भवस्य ११
साध्या एकं जालदण्डमुद्यत्य यन्त्योजसा । रुद्रा एकं वसव एकमादित्यैरेक उद्यतः १२
विश्वे देवा उपरिष्टादुब्जन्तो यन्त्वोजसा । मध्येन घ्नन्तो यन्तु सेनामङ्गिरसो महीम् १३ १८९०
वनस्पतीन् वानस्पत्यानोषधीरुत वीरुधः ।
द्विपाच्चतुष्पादिष्णामि यथा सेनाममूं हनन् १४
गन्धर्वाप्सरसः सर्पान् देवान् पुण्यजनान् पितॄन् ।
दृष्टानदृष्टानिष्णामि यथा सेनाममूं हनन् १५
इम उप्ता मृत्युपाशा यानाक्रम्य न मुच्यसे ।
अमुष्या हन्तु सेनाया इदं कूटं सहस्रशः १६
घर्मः समिद्धो अग्निनाऽयं होमः सहस्रहः ।
भवश्च पृश्निबाहुश्च शर्व सेनाममूं हतम् १७
मृत्योराषमा पद्यन्तां क्षुधं सेदिं वधं भयम् ।
इन्द्रश्चाक्षुजालाभ्यां शर्व सेनाममूं हतम् १८(८५)
पराजिताः प्र त्रसतामित्रा नुत्ता धावत ब्रह्मणा ।
बृहस्पतिप्रणुत्तानां माऽमीषां मोचि कश्चन १९
अव पद्यन्तामेषामायुधानि मा शकन् प्रतिधामिषुम् ।
अथैषां बहु बिभ्यतामिषवो घ्नन्तु मर्मणि २०
सं क्रोशतामेनान् द्यावापृथिवी समन्तरिक्षं सह देवताभिः
मा ज्ञातारं मा प्रतिष्ठां विदन्त मिथो विघ्नाना उप यन्तु मृत्युम् २१
दिशश्चतस्रोऽश्वतर्यो देवरथस्य पुरोडाशाः शफा अन्तरिक्षमुद्धिः ।
द्यावापृथिवी पक्षसी ऋतवोऽभीशवोऽन्तर्देशाः किंकरा वाक् परिरथ्यम् २२
संवत्सरो रथः परिवत्सरो रथोपस्थो विराडीषाग्नी रथमुखम् ।
इन्द्रः सव्यष्ठाश्चन्द्रमाः सारथिः २३ १९००
इतो जयेतो वि जय सं जय जय स्वाहा ।
इमे जयन्तु परामी जयन्तां स्वाहैभ्यो दुराहामीभ्यः ।
नीललोहितेनामूनभ्यवतनोमि २४

॥ १६ ॥ (अथर्व० ११।१०।१—२७)

त्रिषन्धिः । अनुष्टुप् ; १ विराट् पथ्याबृहती; २ त्र्यवसाना षट्पदा त्रिष्टुब्गर्भातिजगती;
३ विराडास्तारपङ्क्तिः; ४ विराट् ; ८ विराट् त्रिष्टुप्; ९ पुरोविराट् पुरस्ताज्ज्योतिस्त्रिष्टुप्;
१२ पञ्चपदा पथ्यापंक्तिः; १३ षट्पदा जगती; १६ त्र्यवसाना षट्पदा
ककुम्मत्यनुष्टुप्त्रिष्टुब्गर्भा शक्वरी; १७ पथ्यापंक्तिः; २१ त्रिपदा गायत्री;
२२ विराट्पुरस्ताद्बृहती; २५ ककुप्;
२६ प्रस्तारपंक्तिः ।

उत्तिष्ठत सं नह्यध्वमुदाराः केतुभिः सह । सर्पा इतरजना रक्षांस्यमित्राननु धावत १ २९०२
ईशां वो वेद राज्यं त्रिषंधे अरुणैः केतुभिः सह ।
ये अन्तरिक्षे ये दिवि पृथिव्यां ये च मानवाः । त्रिषंधेस्ते चेतसि दुर्णामान उपासताम् २
अयोमुखाः सूचीमुखा अथो विकङ्कतीमुखाः ।
क्रव्यादो वातरंहस आ सजन्त्वमित्रान् वज्रेण त्रिषंधिना ३
अन्तर्धेहि जातवेद आदित्य कुणपं बहु । त्रिषंधेरियं सेना सुहितास्तु मे वशे ४(९५)
उत्तिष्ठ त्वं देवजनार्बुदे सेनया सह । अयं बलिर्व आहुतस्त्रिषंधेराहुतिः प्रिया ५
शितिपदी सं द्यतु शरव्येऽयं चतुष्पदी । कृत्येऽमित्रेभ्यो भव त्रिषंधेः सह सेनया ६
धूमाक्षी सं पततु कृधुकर्णी च क्रोशतु । त्रिषंधेः सेनया जिते अरुणाः सन्तु केतवः ७
अवायन्तां पक्षिणो ये वयांस्यन्तरिक्षे दिवि ये चरन्ति ।
श्वापदो मक्षिकाः सं रभन्तामामादो गृध्राः कुणपे रदन्ताम् ८
यामिन्द्रेण संधां समधत्था ब्रह्मणा च बृहस्पते ।
तयाऽहमिन्द्रसंधया सर्वान् देवानिह हुव इतो जयत मामुतः ९ २९१०
बृहस्पतिराङ्गिरस ऋषयो ब्रह्मसंशिताः । असुरक्षयणं वधं त्रिषंधिं दिव्याश्रयन् १०
येनासौ गुप्त आदित्य उभाविन्द्रश्च तिष्ठतः । त्रिषंधिं देवा अभजन्तौजसे च बलाय च ११
सर्वांल्लोकान्त्समजयन् देवा आहुत्यानया ।
बृहस्पतिराङ्गिरसो वज्रं यमसिञ्चतासुरक्षयणं वधम् १२
बृहस्पतिराङ्गिरसो वज्रं यमसिञ्चतासुरक्षयणं वधम् ।
तेनाहममूं सेनां नि लिम्पामि बृहस्पतेऽमित्रान् हन्म्योजसा १३
सर्वे देवा अत्यायन्ति ये अश्नन्ति वषट् कृतम् । इमां जुषध्वमाहुतिमितो जयत मामुतः १४(१०५)
सर्वे देवा अत्यायन्तु त्रिषंधेराहुतिः प्रिया । संधां महतीं रक्षत ययाग्रे असुरा जिताः १५

वायुरमित्राणामिष्वग्राण्याञ्चतु । इन्द्र एषां बाहून् प्रति भनक्तु मा शकन् प्रतिधामिषुम् ।
आदित्य एषामस्त्रं वि नाशयतु चन्द्रमा युतामगतस्य पन्थाम् १६ ११९७
यदि प्रेयुर्देवपुरा ब्रह्म वर्माणि चक्रिरे ।
तनूपानं परिपाणं कृण्वाना यदुपोचिरे सर्वं तदरसं कृधि १७
क्रव्यादानुवर्तयन्मृत्युना च पुरोहितम् । त्रिषंधे प्रेहि सेनया जयामित्रान् प्र पद्यस्व १८
त्रिषंधे तमसा त्वममित्रान् परि वारय । पृषदाज्यप्रणुत्तानां माऽमीषां मोचि कश्चन १९(११०)
शितिपदी सं पतत्वमित्राणाममूः सिचः । मुह्यन्त्वद्यामूः सेना अमित्राणां न्यर्बुदे २०
मूढा अमित्रा न्यर्बुदे जह्येषां वरंवरम् । अनया जहि सेनया २१
यश्च कवची यश्चाकवचोऽमित्रो यश्चाज्मनि । ज्यापाशैः कवचपाशैरज्मनाऽभिहतः शयाम् २२
ये वर्मिणो येऽवर्माणो अमित्रा ये च वर्मिणः । सर्वांस्ताँ अर्बुदे हतांछ्वानोऽदन्तु भूम्याम् २३
ये रथिनो ये अरथा असादा ये च सादिनः ।
सर्वानदन्तु तान् हतान् गृध्राः श्येनाः पतत्रिणः २४ ११२५
सहस्रकुणपा शेतामामित्री सेना समरे वधानाम् । विविद्धा ककजाकृता २५
मर्माविधं रोरुवतं सुपर्णैरदन्तु दुश्चितं मृदितं शयानम् ।
य इमां प्रतीचीमाहुतिममित्रो नो युयुत्सति २६
यां देवा अनुतिष्ठन्ति यस्या नास्ति विराधनम् । तयेन्द्रो हन्तु वृत्रहा वज्रेण त्रिषंधिना २७

॥ १७ ॥ (अथर्व० ७।११३।१-२)

(११९-१२०) भार्गवः । तृष्टिका । १ विराडनुष्टुप्; २ शंकुमती चतुष्पदा भुरिगुष्णिक् ।

तृष्टिके तृष्टवन्दन उदमूं छिन्धि तृष्टिके । यथा कृतद्विष्टासोऽमुष्मै शेप्यावते १
तृष्टासि तृष्टिका विषा विषातक्य सि । परिवृक्ता यथाससि ऋषभस्य वशेव २(१२०)

॥ १८ ॥ (अथर्व० ११।९।१-२६)

(१२१-१४६) काङ्कायनः । अर्बुदिः । अनुष्टुप्; १ सप्तपदा विराट् शक्वरी त्र्यवसाना; ३ पुरोष्णिक्; ४ त्र्यवसाना उष्णिग्बृहतीगर्भा परा त्रिष्टुप् षट्पदातिजगती; ९,११,१४,२३,२६ पथ्यापंक्तिः; १५,२२,२४-२५ त्र्यवसाना सप्तपदा शक्वरी; १६ त्र्यवसाना पञ्चपदा विराडुपरिष्टाज्ज्योतिस्त्रिष्टुप्, १७ त्रिपदा गायत्री ।

ये बाहवो या इषवो धन्वनां वीर्याणि च । असीन् परशूनायुधं चित्ताकूतं च यद्धृदि ।
सर्वं तदर्बुदे त्वममित्रेभ्यो दृशे कुरूदारांश्च प्र दर्शय १ ११२१

उत्तिष्ठत सं नह्यध्वं मित्रा देवजना यूयम् । संदृष्टा गुप्ता वः सन्तु या नो मित्राण्यर्बुदे २
उत्तिष्ठतमा रभेथामादानसंदानाभ्याम् । अमित्राणां सेना अभि धत्तमर्बुदे ३
अर्बुदिर्नाम यो देव ईशानश्च न्यर्बुदिः । याभ्यामन्तरिक्षमावृतमियं च पृथिवी मही ।
ताभ्यामिन्द्रमेदिभ्यामहं जितमन्वेमि सेनया ४
उत्तिष्ठ त्वं देवजनार्बुदे सेनया सह । भञ्जन्नमित्राणां सेनां भोगेभिः परि वारय ५ २९३५
सप्त जातान् न्यर्बुद उदाराणां समीक्षयन् । तेभिष्ट्वमाज्ये हुते सर्वैरुत्तिष्ठ सेनया ६
प्रतिघ्नानाश्रुमुखी कृधुकर्णी च क्रोशतु । विकेशी पुरुषे हते रदिते अर्बुदे तव ७
संकर्षन्ती करूकरं मनसा पुत्रमिच्छन्ती । पतिं भ्रातरमात्स्वान् रदिते अर्बुदे तव ८
अलिक्लवा जाष्कमदा गृध्राः श्येनाः पतत्रिणः ।
ध्वाङ्क्षाः शकुनयस्तृप्यन्त्वमित्रेषु समीक्षयन् रदिते अर्बुदे तव ९
अथो सर्वं श्वापदं मक्षिका तृप्यतु क्रिमिः । पौरुषेयेऽधि कुणपे रदिते अर्बुदे तव १०(१३०)
आ गृह्णीतं सं बृहतं प्राणापानान् न्यर्बुदे ।
निवाशा घोषाः सं यन्त्वमित्रेषु समीक्षयन् रदिते अर्बुदे तव ११
उद्वेपय सं विजन्तां भियामित्रान्त्सं सृज । उरुग्राहैर्बाह्वङ्कैर्विध्यामित्रान् न्यर्बुदे १२
मुह्यन्त्वेषां बाहवश्चित्ताकूतं च यद्धृदि । मैषामुच्छेषि किं चन रदिते अर्बुदे तव १३
प्रतिघ्नानाः सं धावन्तूरः पटूरावाघ्नानाः ।
अघारिणीर्विकेश्यो रुदत्यः पुरुषे हते रदिते अर्बुदे तव १४
श्वन्वतीरप्सरसो रूपका उतार्बुदे । अन्तःपात्रे रेरिहतीं रिशां दुर्णिहितैषिणीम् ।
सर्वास्ता अर्बुदे त्वममित्रेभ्यो दृशे कुरूदारांश्च प्र दर्शय १५ २९४५
खडूरेऽधिचङ्क्रमां खर्विकां खर्ववासिनीम् ।
य उदारा अन्तर्हिता गन्धर्वाप्सरसश्च ये । सर्पा इतरजना रक्षांसि १६
चतुर्दंष्ट्रांछ्यावदतः कुम्भमुष्काँ असृङ्मुखान् । स्वभ्यसा ये चोद्भ्यसाः १७
उद्वेपय त्वमर्बुदेऽमित्राणाममूः सिचः । जयांश्च जिष्णुश्चामित्राँ जयतामिन्द्रमेदिनौ १८
प्रब्लीनो मृदितः शयां हतोऽमित्रो न्यर्बुदे ।
अग्निजिह्वा धूमशिखा जयन्तीर्यन्तु सेनया १९
तयार्बुदे प्रणुत्तानामिन्द्रो हन्तु वरंवरम् । अमित्राणां शचीपतिर्मामीषां मोचि कश्चन २०(१४०)
उत्कसन्तु हृदयान्यूर्ध्वः प्राण उदीषतु । शौष्कास्यमनु वर्ततामामित्रान्मोत मित्रिणः २१

ये च धीरा ये चाधीराः परांञ्चो बधिराश्च ये ।
तमसा ये च तूपरा अथो बस्ताभिवासिनंः ।
सर्वांस्ताँ अंर्बुदे त्वममित्रेभ्यो दृशे कुरूदाराँश्च प्र दर्शय २२ २९५२
अर्बुदिश्च त्रिषंधिश्चामित्रान् नो वि विंध्यताम् ।
यथैषामिन्द्र वृत्रहन् हनांम शचीपतेऽमित्राणां सहस्रशः २३
वनस्पतीन् वानस्पत्यानोषधीरुत वीरुधः । गन्धर्वाप्सरसः सर्पान् देवान् पुण्यजनान् पितॄन् ।
सर्वांस्ताँ अंर्बुदे त्वममित्रेभ्यो दृशे कुरूदाराँश्च प्र दर्शय २४
ईशां वो मरुतो देव आदित्यो ब्रह्मणस्पतिः । ईशां व इन्द्रश्चाग्निश्च धाता मित्रः प्रजापतिः ।
ईशां व ऋषयश्चक्रुरमित्रेषु समीक्षयन् रदिते अंर्बुदे तव २५
तेषां सर्वेषामीशाना उत्तिष्ठत सं नह्यध्वं मित्रा देवजना यूयम् ।
इमं संग्रामं संजित्य यथालोकं वि तिष्ठध्वम् २६(१४६)

॥ १९ ॥ (अथर्व० १०।५।१-२४)

(१४७-१७०) सिन्धुद्वीपः । आपः, चन्द्रमाः (विजयप्राप्तिः) । अनुष्टुप् , १-५ त्रिपदा पुरोभिकृतिककुम्मतीगर्भा पङ्क्तिः; ६ चतुष्पदा जगतीगर्भा जगती, ७—१४ त्र्यवसाना पञ्चपदा विपरीतपादलक्ष्मा बृहती (११,१४ पथ्यापङ्क्तिः); १५-२१ चतुरवसाना दशपदा त्रैष्टुब्गर्भातिधृतिः (१९,२० कृतिः; २४ त्रिपदा विराड् गायत्री)

इन्द्रस्यौज स्थेन्द्रस्य सह स्थेन्द्रस्य बलं स्थेन्द्रस्य वीर्यं1 स्थेन्द्रस्य नृम्णं स्थ ।
जिष्णवे योगाय ब्रह्मयोगैर्वो युनज्मि १
इन्द्रस्यौज स्थेन्द्रस्य सह स्थेन्द्रस्य० । जिष्णवे योगाय क्षत्रयोगैर्वो युनज्मि २
इन्द्रस्यौज स्थेन्द्रस्य सह स्थेन्द्रस्य० । जिष्णवे योगायेन्द्रयोगैर्वो युनज्मि ३
इन्द्रस्यौज स्थेन्द्रस्य सह स्थेन्द्रस्य० । जिष्णवे योगाय सोमयोगैर्वो युनज्मि ४ २९६०
इन्द्रस्यौज स्थेन्द्रस्य सह स्थेन्द्रस्य० । जिष्णवे योगायाप्सुयोगैर्वो युनज्मि ५
इन्द्रस्यौज स्थेन्द्रस्य सह स्थेन्द्रस्य बलं स्थेन्द्रस्य वीर्यं1 स्थेन्द्रस्य नृम्णं स्थ ।
जिष्णवे योगाय विश्वानि मा भूतान्युप तिष्ठन्तु युक्ता म आप स्थ ६
अग्नेर्भाग स्थ । अपां शुक्रमापो देवीर्वर्चो अस्मासु धत्त ।
प्रजापतेर्वो धाम्नास्मै लोकाय सादये ७
इन्द्रस्य भाग स्थ । अपां शुक्रमापो देवीर्वर्चो० । प्रजापतेर्वो धाम्नास्मै लोकाय सादये ८

सोम॑स्य भाग स्थ। अ॒पां शु॒क्रमा॑पो दे॒वी॒र्वर्चो॑०। प्र॒जाप॑ते॒र्वो॒ धाम्ना॒स्मै लो॒काय॑ सादये ९ (१५५)

वरु॑णस्य भाग स्थ। अ॒पां शु॒क्रमा॑पो दे॒वी॒र्वर्चो॑०। प्र॒जाप॑ते॒र्वो॒ धाम्ना॒स्मै लो॒काय॑ सादये १०

मि॒त्रावरु॑णयो॒र्भाग स्थ। अ॒पां शु॒क्रमा॑पो दे॒वी॒र्वर्चो॑०। प्र॒जाप॑ते॒र्वो॒ धाम्ना॒स्मै लो॒काय॑० ११

य॒मस्य॑ भाग स्थ। अ॒पां शु॒क्रमा॑पो दे॒वी॒र्वर्चो॑०। प्र॒जाप॑ते॒र्वो॒ धाम्ना॒स्मै लो॒काय॑ सादये १२

पि॒तॄणां॑ भाग स्थ। अ॒पां शु॒क्रमा॑पो दे॒वी॒र्वर्चो॑०। प्र॒जाप॑ते॒र्वो॒ धाम्ना॒स्मै लो॒काय॑ सादये १३

दे॒वस्य॑ स॒वि॒तुर्भाग स्थ। अ॒पां शु॒क्रमा॑पो दे॒वी॒र्वर्चो॑०। प्र॒जाप॑ते॒र्वो॒ धाम्ना॒स्मै लो॒काय॑० १४ १९७०

यो व॑ आपो॒ऽपां भा॒गो॒३॒ऽप्स्व॒१॒न्तर्य॑जु॒ष्यो॒ दे॒व॒यज॑नः।

इ॒दं तमति॑ सृजा॒मि तं माभ्यव॑निक्षि।

ते॒न॒ तम॒भ्यति॑सृजा॒मो यो॒३॒ऽस्मान् द्वेष्टि॒ यं व॒यं द्वि॒ष्मः।

तं व॑धेयं॒ तं स्तृ॑षीया॒नेन॒ ब्रह्म॑णा॒ऽनेन॒ कर्म॑णा॒ऽनया॑ मे॒न्या १५

यो व॑ आपो॒ऽपामू॒र्मिर॒प्स्व॒१॒न्तर्य॑जु॒ष्यो॒ दे॒व॒यज॑नः। इ॒दं०। ते॒न॒०। तं व॑धेयं॒ तं स्तृ॑षी० १६

यो व॑ आपो॒ऽपां व॒त्सो॒३॒ऽप्स्व॒१॒न्तर्य॑जु॒ष्यो॒ दे॒व॒यज॑नः। इ॒दं०। ते॒न॒०। तं व॑धेयं॒ तं० १७

यो व॑ आपो॒ऽपां वृ॑ष॒भो॒३॒ऽप्स्व॒१॒न्तर्य॑जु॒ष्यो॒ दे॒व॒यज॑नः। इ॒दं०। ते॒न॒०। तं व॑धेयं॒ तं० १८

यो व॑ आपो॒ऽपां हि॑रण्यग॒र्भो॒३॒ऽप्स्व॒१॒न्तर्य॑जु॒ष्यो॒ दे॒व॒यज॑नः। इ॒दं०। ते॒न॒०। तं व॑धेयं॒० १९ (१६५)

यो व॑ आपो॒ऽपाम॒श्मा पृश्नि॑र्दि॒व्यो॒३॒ऽप्स्व॒१॒न्तर्य॑जु॒ष्यो॒ दे॒व॒यज॑नः। इ॒दं०। ते॒न॒०। तं व॑धेयं॒० २०

ये व॑ आपो॒ऽपाम॒ग्नयो॒ऽप्स्व॒१॒न्तर्य॑जु॒ष्या॒ दे॒व॒यज॑नाः।

इ॒दं तानति॑ सृजा॒मि तान्माभ्यव॑निक्षि।

तैस्तम॒भ्यति॑सृजा॒मो॒०। तं व॑धेयं॒ तं स्तृ॑षीया॒नेन॒ ब्रह्म॑णा॒ऽनेन॒ कर्म॑णा॒ऽनया॑ मे॒न्या० २१

यद॑र्वा॒चीनं॑ त्रैहाय॒णादनृ॑तं॒ किं चो॑दि॒म। आपो॑ मा॒ तस्मा॑त् सर्व॑स्माद्दुरि॒तात् पा॒न्त्वंह॑सः २२

स॒मु॒द्रं व॒ः प्र हि॑णोमि॒ स्वां योनि॒मपी॑तन।

अरि॑ष्टाः॒ सर्व॑हायसो॒ मा च॑ न॒ः किं च॒नाम॑मत् २३

अ॒रि॒प्रा आपो॒ अप॑ रि॒प्रम॒स्मत्। प्रास्मदेनो॑ दुरि॒तं सु॒प्रती॑काः॒ प्र दु॒ष्वप्न्यं॒ प्र मलं॑ वहन्तु २४ १९८०



११८ श्रेयःप्राप्तिः ।

॥ १ ॥ (अथर्व० २।११।१-५)

(१-८) शुक्रः । कृत्यादूषणम् । १ चतुष्पदा विराट् गायत्री, २—५ त्रिपदा परोष्णिक्, ४ पिपीलिकमध्या निचृत् ।

दूष्या दूषिरसि हेत्या हेतिरसि मेन्या मेनिरसि । आप्नुहि श्रेयांसमति समं क्राम १ १९८१
स्रक्त्योऽसि प्रतिसरोऽसि प्रत्यभिचरणोऽसि । आप्नुहि श्रेयांसमति समं क्राम २
प्रति तमभि चर यो३ऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः । आप्नुहि श्रेयांसमति समं क्राम ३
सूरिरसि वर्चोधा असि तनूपानोऽसि । आप्नुहि श्रेयांसमति समं क्राम ४
शुक्रोऽसि भ्राजोऽसि स्वरसि ज्योतिरसि । आप्नुहि श्रेयांसमति समं क्राम ५

११९ बलप्राप्तिः ।

॥ १ ॥ (अथर्व० ६।१३५।१-३)

(६—८) वज्रः । अनुष्टुप् ।

यदश्नामि बलं कुर्व इत्थं वज्रमा ददे । स्कन्धानमुष्य शातयन् वृत्रस्येव शचीपतिः १
यत् पिबामि सं पिबामि समुद्र इव संपिबः । प्राणानमुष्य संपाय सं पिबामो अमुं वयम् २
यद्गिरामि सं गिरामि समुद्र इव संगिरः । प्राणानमुष्य संगीर्य सं गिरामो अमुं वयम् ३(८)

१२० वर्चःप्राप्तिः ।

॥ १ ॥ (अथर्व० ६।५।१-३)

(१—४१) अथर्वा । १ अग्निः, २ इन्द्रः, ३ अग्निः, सोमः, ब्रह्मणस्पतिः । अनुष्टुप्, २ भुरिक् ।

उदेनमुत्तरं नयाग्ने घृतेनाहुत । समेनं वर्चसा सृज प्रजया च बहुं कृधि १
इन्द्रेमं प्रतरं कृधि सजातानामसद्वशी । रायस्पोषेण सं सृज जीवातवे जरसे नय २ १९९०
यस्य कृण्मो हविर्गृहे तमग्ने वर्धया त्वम् । तस्मै सोमो अधि ब्रवदयं च ब्रह्मणस्पतिः ३

१२१ ऊर्जःप्राप्तिः।

॥ १ ॥ (अथर्व० ६।७९।१-३)

संस्फानम्। गायत्री, ३ त्रिपदा प्राजापत्या गायत्री।

अयं नो नभसस्पतिः संस्फानो अभि रक्षतु। असमातिं गृहेषु नः १

त्वं नो नभसस्पत ऊर्जं गृहेषु धारय। आ पुष्टमेत्वा वसु २

देव संस्फान सहस्रापोषस्येशिषे। तस्य नो रास्व तस्य नो धेहि तस्य ते भक्तिवांसः स्याम ३



१२२ अनुमतिः।

॥ १ ॥ (अथर्व० ७।२०।१-६)×

१-२ अनुष्टुप्; ३ त्रिष्टुप्, ४ भुरिक्, ५ जगती, ६ अतिशाक्करगर्भा जगती।

अन्वद्य नोऽनुमतिर्यज्ञं देवेषु मन्यताम्। अग्निश्च हव्यवाहनो भवतां दाशुषे मम १ १९९५

अन्विदनुमते त्वं मंससे शं च नस्कृधि। जुषस्व हव्यमाहुतं प्रजां देवि ररास्व नः २

अनु मन्यतामनुमन्यमानः प्रजावन्तं रयिमक्षीयमाणम्।

तस्य वयं हेडसि माऽपि भूम सुमृडीके अस्य सुमतौ स्याम ३

यत्ते नाम सुहवं सुप्रणीतेऽनुमते अनुमतं सुदानु।

तेना नो यज्ञं पिपृहि विश्ववारे रयिं नो धेहि सुभगे सुवीरम् ४(१०)

एमं यज्ञमनुमतिर्जगाम सुक्षेत्रतायै सुवीरतायै सुजातम्।

भद्रा ह्यस्याः प्रमतिर्बभूव सेमं यज्ञमवतु देवगोपा ५

अनुमतिः सर्वमिदं बभूव यत्तिष्ठति चरति यदु च विश्वमेजति।

तस्यास्ते देवि सुमतौ स्यामानुमते अनु हि मंससे नः ६

× अथर्व० ७,२०,१-२ = वा० य० ३४,८-९,१० [उत्तरार्धः]।

१२३ केवलः पतिः ।

॥ १ ॥ (अथर्व० ७।३८।१-५)

वनस्पतिः । अनुष्टुप्, ३ चतुष्पदा उष्णिक् ।

इदं खनामि भेषजं मांपश्यमभिरोरुदम् । परायतो निवर्तनमायतः प्रतिनन्दनम् १

येना निचक्र आसुरीन्द्रं देवेभ्यस्परि । तेना नि कुर्वे त्वामहं यथा तेऽसानि सुप्रिया २

प्रतीची सोमंमसि प्रतीच्युत सूर्यम् । प्रतीची विश्वान् देवान् तां त्वाऽच्छावंदामसि ३(१५)

अहं वदामि नेत्त्वं सभायामह त्वं वद । ममेदसस्त्वं केवलो नान्यासां कीर्तयांश्चन ४

यदि वाऽसि तिरोजनं यदि वा नद्यस्तिरः । इयं ह मह्यं त्वामोषधिर्बद्ध्वेव न्यानयत् ५ ३००५

१२४ मधुविद्या ।

॥ १ ॥ (अथर्व० ९।१।१-२४)

मधु, अश्विनौ । त्रिष्टुप्, २ त्रिष्टुब्गर्भा पङ्क्तिः; ३ पराऽनुष्टुप्, ६ अतिशक्वरीगर्भा महाबृहती;
७ अतिजागतगर्भा महाबृहती; ८ बृहतीगर्भा संस्तारपङ्क्तिः; ९ पराबृहती प्रस्तारपङ्क्तिः;
१० परोष्णिक्पङ्क्तिः; ११-१३,१५-१६,१८-१९ अनुष्टुप्; १४ पुर उष्णिक्;
१७ उपरिष्टाद्विराड् बृहती; २० भुरिग्विष्टारपङ्क्तिः; २१ एकावसाना
द्विपदार्च्यनुष्टुप्, २२ त्रिपदा ब्राह्मी पुर उष्णिक्; २३ द्विपदा
आर्ची पंक्तिः, २४ त्र्यवसाना षट् पदाष्टिः ।

दिवस्पृथिव्या अन्तरिक्षात् समुद्रादग्नेर्वातान्मधुकशा हि जज्ञे ।
तां चायित्वामृतं वसानां हृद्भिः प्रजाः प्रति नन्दन्ति सर्वाः १

महत् पयो विश्वरूपमस्याः समुद्रस्य त्वोत रेत आहुः ।
यत ऐति मधुकशा रराणा तत् प्राणस्तदमृतं निविष्टम् २

पश्यन्त्यस्याश्चरितं पृथिव्यां पृथङ्नरो बहुधा मीमांसमानाः ।
अग्नेर्वातान्मधुकशा हि जज्ञे मरुतामुग्रा नप्तिः ३(२०)

माताऽऽदित्यानां दुहिता वसूनां प्राणः प्रजानाममृतस्य नाभिः ।
हिरण्यवर्णा मधुकशा घृताची महान् भर्गश्चरति मर्त्येषु ४

मधोः कशामजनयन्त देवास्तस्या गर्भो अभवद्विश्वरूपः।
तं जातं तरुणं पिपर्ति माता स जातो विश्वा भुवना वि चष्टे ५ ३०१०
कस्तं प्र वेद क उ तं चिकेत यो अस्या हृदः कलशः सोमधानो अक्षितः।
ब्रह्मा सुमेधाः सो अस्मिन् मदेत ६
स तौ प्र वेद स उ तौ चिकेत यावस्याः स्तनौ सहस्रधारावक्षितौ।
ऊर्जं दुहाते अनपस्फुरन्तौ ७
हिङ्करिक्रती बृहती वयोधा उच्चैर्घोषाभ्येति या व्रतम्।
त्रीन् घर्मानभि वावशाना मिमाति मायुं पयते पयोभिः ८(२५)
यामापीनामुपसीदन्त्यापः शाक्वरा वृषभा ये स्वराजः।
ते वर्षन्ति ते वर्षयन्ति तद्विदे काममूर्जमापः ९
स्तनयित्नुस्ते वाक् प्रजापते वृषा शुष्मं क्षिपसि भूम्यामधि।
अग्नेर्वातान्मधुकशा हि यज्ञे मरुतामुग्रा नप्तिः १०
यथा सोमः प्रातःसवने अश्विनोर्भवति प्रियः।
एवा मे अश्विना वर्च आत्मनि ध्रियताम् ११
यथा सोमो द्वितीये सवन इन्द्राग्न्योर्भवति प्रियः।
एवा म इन्द्राग्नी वर्च आत्मनि ध्रियताम् १२
यथा सोमस्तृतीये सवन ऋभूणां भवति प्रियः।
एवा म ऋभवो वर्च आत्मनि ध्रियताम् १३
मधु जनिषीय मधु वंशिषीय। पयस्वानग्न आगमं तं मा सं सृज वर्चसा १४
सं माग्ने वर्चसा सृज सं प्रजया समायुषा।
विद्युर्मे अस्य देवा इन्द्रो विद्यात् सह ऋषिभिः १५ ३०२०
यथा मधु मधुकृतः संभरन्ति मधावधि। एवा मे अश्विना वर्च आत्मनि ध्रियताम् १६
यथा मक्षा इदं मधु न्यञ्जन्ति मधावधि।
एवा मे अश्विना वर्चस्तेजो बलमोजश्च ध्रियताम् १७
यद्गिरिषु पर्वतेषु गोष्वश्वेषु यन्मधु। सुरायां सिच्यमानायां यत् तत्र मधु तन्मयि १८(३५)
अश्विना सारघेण मा मधुनाऽङ्क्तं शुभस्पती।
यथा वर्चस्वतीं वाचमावदानि जनाँ अनु १९

स्तनयित्नुस्ते वाक् प्रजापते वृषा शुष्मं क्षिपसि भूम्यां दिवि ।
तां पशव उप जीवन्ति सर्वे तेनो सेषमूर्जं पिपर्ति २० ३०२५
पृथिवी दुण्डोऽ३ऽन्तरिक्षं गर्भो द्यौः कशा विद्युत् प्रकशो हिरण्ययो बिन्दुः २१
यो वै कशायाः सप्त मधूनि वेद मधुमान् भवति ।
ब्राह्मणश्च राजा च धेनुश्चानड्वांश्च व्रीहिश्च यवश्च मधु सप्तमम् २२
मधुमान् भवति मधुमदस्याहार्यं भवति । मधुमतो लोकान् जयति य एवं वेद २३
यद्वीध्रे स्तनयति प्रजापतिरेव तत् प्रजाभ्यः प्रादुर्भवति ।
तस्मात् प्राचीनोपवीतस्तिष्ठे प्रजापतेऽनु मा बुध्यस्वेति ।
अन्वेनं प्रजा अनु प्रजापतिर्बुध्यते य एवं वेद २४(४१)

१२५ अध्यापकविघ्नशमनम् ।

॥ १ ॥ (अथर्व० ७।५४।१-२)×

(१–२) १ ब्रह्मा, २ भृगुः । १ ऋक्सामनी, २ इन्द्रः । अनुष्टुप् ।

ऋचं साम यजामहे याभ्यां कर्माणि कुर्वते । एते सदसि राजतो यज्ञं देवेषु यच्छतः १
ऋचं साम यदप्राक्षं हविरोजो यजुर्बलम् ।
एष मा तस्मान्मा हिंसीद्वेदः पृष्टः शचीपते २ ३०३१

१२६ अतिथि-सत्कारः ।

॥ १ ॥ (अथर्व० ९।६।१-६२)

प्रथमः पर्यायः ॥१॥

(१–७३) (षट्पर्यायाः) १–१७ ब्रह्मा । अतिथिः, विद्या । १ नागी नाम त्रिपदा गायत्री; २ त्रिपदाऽऽर्षी गायत्री; ३, ७ साम्नी त्रिष्टुप्; ४,९ आर्च्यनुष्टुप्; ५ आसुरी गायत्री; ६ त्रिपदा साम्नी जगती; ८ याजुषी त्रिष्टुप्; १० साम्नी भुरिग्बृहती; ११,१४-१६ साम्न्यनुष्टुप्; १२ विराड् गायत्री; १३ साम्नी निचृत्पङ्क्तिः; १७ त्रिपदा विराड् भुरिग्गायत्री ।

यो विद्याद्ब्रह्म प्रत्यक्षं परूंषि यस्य संभारा ऋचो यस्यानूक्यम् १
सामानि यस्य लोमानि यजुर्हृदयमुच्यते परिस्तरणमिद्धविः २(१)

× अथर्व० ७।५४।१=सा० ३६९ ।

यद्वा अतिथिपतिरतिथीन् प्रतिपश्यति देवयजनं प्रेक्षते ३
यदभिवदति दीक्षामुपैति यदुदकं याचत्यपः प्र णयति ४ ३०३५
या एव यज्ञ आपः प्रणीयन्ते ता एव ताः ५
यत् तर्पणमाहरन्ति य एवाग्नीषोमीयः पशुर्बध्यते स एव सः ६
यदावसथान् कल्पयन्ति सदोहविर्धानान्येव तत् कल्पयन्ति ७
यदुपस्तृणन्ति बर्हिरेव तत् ८
यदुपरिशयनमाहरन्ति स्वर्गमेव तेन लोकमव रुन्द्धे ९
यत् कशिपूपबर्हणमाहरन्ति परिधय एव ते १०
यदाञ्जनाभ्यञ्जनमाहरन्त्याज्यमेव तत् ११
यत् पुरा परिवेषात् खादमाहरन्ति पुरोडाशावेव तौ १२
यदशनकृतं ह्वयन्ति हविष्कृतमेव तद् ध्वयन्ति १३
ये व्रीहयो यवा निरुप्यन्तेंऽशव एव ते १४ यान्युलूखलमुसलानि ग्रावाण एव ते १५(१५)
शूर्पं पवित्रं तुषा ऋजीषाभिषवणीरापः १६
स्रुग्दर्विर्नेक्षणमायवनं द्रोणकलशाः कुम्भ्यो॒ वायव्या॒नि पात्राणीयमेव कृष्णाजिनम् १७

द्वितीयः पर्यायः॥२॥

(१-१३)= १ विराट् पुरस्ताद्बृहती; २, १२ साम्नी त्रिष्टुप्; ३ आसुरी अनुष्टुप्; ४ साम्नी उष्णिक्; ५, ११ साम्नी बृहती (११ भुरिक्); ६ आर्च्यनुष्टुप्; ७ त्रिपदा स्वराडनुष्टुप्; ८ आसुरी गायत्री; ९ साम्नी अनुष्टुप्; १० त्रिपदाऽऽर्ची त्रिष्टुप्; १३ त्रिपदाऽऽर्ची पङ्क्तिः (७ पञ्चपदा विराट् पुरस्ताद्बृहती; ८ साम्न्यनुष्टुप् वा)।

यजमानब्राह्मणं वा एतदतिथिपतिः कुरुते यदाहार्या॒णि
प्रेक्षत इदं भूया३ इदा३मिति १
यदाह भूय उद्धरेति प्राणमेव तेन वर्षीयांसं कुरुते २
उप हरति हवींष्या सादयति ३ तेषामासन्नानामतिथिरात्मन् जुहोति ४ ३०५१
स्रुचा हस्तेन प्राणे यूपे स्रुक्कारेण वषट्कारेण ५
एते वै प्रियाश्चाप्रियाश्चर्त्विजः स्वर्गं लोकं गमयन्ति यदतिथयः ६
स य एवं विद्वान्न द्विषन्नश्नीयान्न द्विषतोऽन्नमश्नीयान्न मीमांसितस्य न मीमांसमानस्य ७

सर्वो वा एष जग्धपाप्मा यस्यान्नमश्नन्ति ८(२५)
सर्वो वा एषोऽजग्धपाप्मा यस्यान्नं नाश्नन्ति ९
सर्वदा वा एष युक्तग्रावार्द्रपवित्रो विततध्वर आहृतयज्ञक्रतुर्य उपहरति १०
प्राजापत्यो वा एतस्य यज्ञो विततो य उपहरति ११
प्रजापतेर्वा एष विक्रमाननुविक्रमते य उपहरति १२
योऽतिथीनां स आहवनीयो यो वेश्मनि स गार्हपत्यो यस्मिन् पचन्ति स दक्षिणाग्निः १३ ३०६०

तृतीयः पर्यायः ॥३॥

(१-९)= १-६, ९ त्रिपदा पिपीलिकमध्या गायत्री, ७ साम्नी बृहती; ८ पिपीलिकमध्योष्णिक् ।

इष्टं च वा एष पूर्तं च गृहाणामश्नाति यः पूर्वोऽतिथेरश्नाति १
पयश्च वा एष रसं च गृहाणामश्नाति यः पूर्वोऽतिथेरश्नाति २
ऊर्जां च वा एष स्फातिं च गृहाणामश्नाति यः पूर्वोऽतिथेरश्नाति ३
प्रजां च वा एष पशूंश्च गृहाणामश्नाति यः पूर्वोऽतिथेरश्नाति ४
कीर्तिं च वा एष यशश्च गृहाणामश्नाति यः पूर्वोऽतिथेरश्नाति ५(३५)
श्रियं च वा एष संविदं च गृहाणामश्नाति यः पूर्वोऽतिथेरश्नाति ६
एष वा अतिथिर्यच्छ्रोत्रियस्तस्मात् पूर्वो नाश्नीयात् ७
अशितावत्यतिथावश्नीयाद्यज्ञस्य सात्मत्वाय यज्ञस्याविच्छेदाय तद् व्रतम् ८
एतद्वा उ स्वादीयो यदधिगवं क्षीरं वा मांसं वा तदेव नाश्नीयात् ९

चतुर्थः पर्यायः ॥४॥

(१-१०)=१-४ प्राजापत्यानुष्टुप् ; २-५ त्रिपदा गायत्री, ९ भुरिक् ; १० चतुष्पदा प्रस्तारपंक्तिः ।

स य एवं विद्वान् क्षीरमुपसिच्योपहरति १ ३०७०
यावदग्निष्टोमेनेष्ट्वा सुसमृद्धेनावरुन्धे तावदेनेनाव रुन्धे २
स य एवं विद्वान्त्सर्पिरुपसिच्योपहरति ३
यावदतिरात्रेणेष्ट्वा सुसमृद्धेनावरुन्धे तावदेनेनाव रुन्धे ४
स य एवं विद्वान् मधूपसिच्योपहरति ५
यावत् सत्त्रसद्येनेष्ट्वा सुसमृद्धेनावरुन्धे तावदेनेनाव रुन्धे ६(४५)

स य एवं विद्वान् मांसमुपसिच्योपहरति ७ ३०७६
यावद् द्वादशाहेनेष्ट्वा सुसमृद्धेनावरुन्धे तावदेनेनाव रुन्धे ८
स य एवं विद्वानुदकमुपसिच्योपहरति ९
प्रजानां प्रजननाय गच्छति प्रतिष्ठां प्रियः प्रजानां भवति
य एवं विद्वानुदकमुपासिच्योपहरति १०

पञ्चमः पर्यायः ॥५॥

(१-१०) = १ साम्नी उष्णिक्; २ पुर उष्णिक्; ३,१० साम्नी भुरिग्बृहती; ४,६,९ साम्नी अनुष्टुप्; ५ त्रिपदा निचृद्विषमा नाम गायत्री; ७ त्रिपदा विराड्विषमा नाम गायत्री; ८ त्रिपदा विराडनुष्टुप्।

तस्मा उषा हिङ्कृणोति सविता प्र स्तौति १(५०)
बृहस्पतिरूर्जयोद्गायति त्वष्टा पुष्ट्या प्रति हरति विश्वे देवा निधनम् २
निधनं भूत्याः प्रजायाः पशूनां भवति य एवं वेद ३
तस्मा उद्यन्त्सूर्यो हिङ्कृणोति संगवः प्र स्तौति ४
मध्यन्दिन उद्गायत्यपराह्णः प्रति हरत्यस्तंयन् निधनम्।
निधनं भूत्याः प्रजायाः पशूनां भवति य एवं वेद ५
तस्मा अभ्रो भवन् हिङ्कृणोति स्तनयन् प्र स्तौति ६
विद्योतमानः प्रति हरति वर्षन्नुद्गायत्युद्गृह्णन् निधनम्।
निधनं भूत्याः प्रजायाः पशूनां भवति य एवं वेद ७
अतिथीन् प्रति पश्यति हिङ्कृणोत्यभि वदति प्र स्तौत्युदकं याचत्युद्गायति ८
उप हरति प्रति हरत्युच्छिष्टं निधनम् ९
निधनं भूत्याः प्रजायाः पशूनां भवति य एवं वेद १०

षष्ठः पर्यायः ॥६॥

(१-१४) = १ आसुरी गायत्री; २ साम्नी अनुष्टुप्; ३-५ त्रिपदाऽऽर्ची पङ्क्तिः; ४ एकपदा प्राजापत्या गायत्री; ६-११ आर्ची बृहती, १२ एकपदाऽऽसुरी जगती; १३ याजुषी त्रिष्टुप्, १४ एकपदाऽऽसुरी उष्णिक्।

यत् क्षत्तारं ह्वयत्या श्रावयत्येव तत् १ यत् प्रतिशृणोति प्रत्याश्रावयत्येव तत् २ ३०९१
यत् परिवेष्टारः पात्रहस्ताः पूर्वे चापरे च प्रपद्यन्ते चमसाध्वर्यव एव ते ३

*

तेषां न कश्चनाहोता ४
यद्वा अतिथिपतिरतिथीन् परिविष्य गृहानुपोदैत्यवभृथमेव तदुपावैति ५
यत् संभागयति दाक्षिणाः सभागयति यदनुतिष्ठत उदवस्यत्येव तत् ६(६५)
स उपहूतः पृथिव्यां भक्षयत्युपहूतस्तस्मिन् यत् पृथिव्यां विश्वरूपम् ७
स उपहूतोऽन्तरिक्षे भक्षयत्युपहूतस्तस्मिन् यदन्तरिक्षे विश्वरूपम् ८
स उपहूतो दिवि भक्षयत्युपहूतस्तस्मिन् यद्दिवि विश्वरूपम् ९
सउपहूतो देवेषु भक्षयत्युपहूतस्तस्मिन् य देवेषु विश्वरूपम् १०
स उपहूतो लोकेषु भक्षयत्युपहूतस्तस्मिन् यल्लोकेषु विश्वरूपम् ११ ३१००
स उपहूत उपहूतः १२ आप्नोतीमं लोकमाप्नोत्यमुम् १३
ज्योतिष्मतो लोकान् जयति य एवं वेद १४(७३)

---

१२७ विद्युत् ।

॥ १ ॥ (अथर्व० १।१३।१-४)×

(१—४) भृग्वङ्गिराः । अनुष्टुप्; ३ चतुष्पाद्विराड् जगती, ४ त्रिष्टुप्परा बृहतीगर्भा पंक्तिः ।

नमस्ते अस्तु विद्युते नमस्ते स्तनयित्नवे । नमस्ते अस्त्वश्मने येना दूडाशे अस्यसि १
नमस्ते प्रवतो नपाद्यतस्तपः समूहसि । मृडया नस्तनूभ्यो मयस्तोकेभ्यस्कृधि २ ३१०५
प्रवतो नपान्नम एवास्तु तुभ्यं नमस्ते हेतये तपुषे च कृण्मः ।
विद्म ते धाम परमं गुहा यत् समुद्रे अन्तर्निहितासि नाभिः ३
यां त्वा देवा असृजन्त विश्व इषुं कृण्वाना असनाय धृष्णुम् ।
सा नो मृड विदथे गृणाना तस्यै ते नमो अस्तु देवि ४(४)

× नमस्ते......स्तनयित्नवे । वा० य० ३६,२१ (पूर्वार्धः) । विद्मा ... नाम परमं०...यत् । वा० य० १२,१९ ।

१२८ कामिनीमनोऽभिमुखीकरणम्।

॥ १ ॥ (अथर्व० २।३०।३-४)×

(१—२) प्रजापतिः। औषधिः। ३ भुरिक्, ४ अनुष्टुप्।

यत् सुपर्णा विवक्षवो अनमीवा विवक्षवः। तत्र मे गच्छताद्धवं शल्य इव कुल्मलं यथा ३

यदन्तरं तद्बाह्यं यद्बाह्यं तदन्तरम्। कन्यानां विश्वरूपाणां मनो गृभायौषधे ४

---

१२९ रयिसंवर्धनम्।

॥ १ ॥ (अथर्व० ३।२०।८-९)+

(१-२) वसिष्ठः। ८ विश्वा भुवनानि, ९ पञ्च प्रदिशः। ८ विराड् जगती, ९ अनुष्टुप्।

वाजस्य नु प्रसवे सं बभूविमेमा च विश्वा भुवनान्यन्तः।

उतादित्सन्तं दापयतु प्रजानन् रयिं च नः सर्ववीरं नि यच्छ ८ ३११०

दुह्रां मे पञ्च प्रदिशो दुह्रामुर्वीर्यथाबलम्। प्रापेयं सर्वा आकूतीर्मनसा हृदयेन च ९

---

१३० शितिपाद् अविः।

॥ १ ॥ (अथर्व० ३।२९।१-६)

(१-६) उद्दालकः। शितिपाद् अविः। अनुष्टुप्, १,३ पथ्या पङ्क्तिः, ७ त्र्यवसाना षट्पदा उपरिष्टाद्दैवी बृहती ककुम्मतीगर्भा विराड्जगती; ८ उपरिष्टाद्बृहती।

यद्राजानो विभजन्त इष्टापूर्तस्य षोडशं यमस्यामी सभासदः।

अविस्तस्मात् प्र मुञ्चति दत्तः शितिपात् स्वधा १

सर्वान् कामान् पूरयत्याभवन् प्रभवन् भवन्।

आकूतिप्रोऽविर्दत्तः शितिपान्नोप दस्यति २

× अथर्व० २,३०,१-२,५=दै० [तृ० भा०] १५८३। दै० [अश्विनौ] ६४६। दै० [तृ० भा०] १६८४।

+ अथर्व० ३,२०,१,२-७,१०=दै० [अग्निः] ५६७। दै० [विश्वे देवाः] ८१९-८२१। दै० [तृ० भा०]११२०।

यो ददाति शितिपादमविं लोकेन संमितम् ।
स नाकमभ्यारोहति यत्र शुल्को न क्रियते अबलेन बलीयसे ३
पञ्चापूपं शितिपादमविं लोकेन संमितम् । प्रदातोप जीवति पितॄणां लोकेऽक्षितम् ४
पञ्चापूपं शितिपादमविं लोकेन संमितम् । प्रदातोप जीवति सूर्यामासयोरक्षितम् ५
इरेव नोप दस्यति समुद्र इव पयो महत् । देवौ सवासिनाविव शितिपान्नोप दस्यति ६ ३११७

१३१ विश्वजित् ।

॥ १ ॥ (अथर्व० ६।१०७।१-४)
(१-४) शन्तातिः । अनुष्टुप् ।

विश्वजित् त्रायमाणायै मा परि देहि ।
त्रायमाणे द्विपाच्च सर्वं नो रक्ष चतुष्पाद्यच्च नः स्वम् १
त्रायमाणे विश्वजिते मा परि देहि । विश्वजिद् द्विपाच्च सर्वं नो रक्ष चतुष्पाद्यच्च नः स्वम् २
विश्वजित् कल्याण्यै मा परि देहि । कल्याणि द्विपाच्च सर्वं नो रक्ष चतुष्पाद्यच्च नः स्वम् ३
कल्याणि सर्वविदे मा परि देहि । सर्वविद् द्विपाच्च सर्वं नो रक्ष चतुष्पाद्यच्च नः स्वम् ४

१३२ तारके ।

॥ १ ॥ (अथर्व० ६।१२१।३)
(१) कौशिकः । (सुकृतलोक-प्राप्तिः) । अनुष्टुप् ।

उदगातां भगवती विचृतौ नाम तारके । प्रेहामृतस्य यच्छतां प्रैतु बद्धकमोचनम् ३ ३१२२

१३३ मेखलाबन्धनम् ।

॥ १ ॥ (अथर्व० ६।१३३।१-५)

(१-५) अगस्त्यः । मेखला । १ भुरिक्; २,५ अनुष्टुप्; ३ त्रिष्टुप्; ४ जगती ।

य इमां देवो मेखलामाबबन्ध यः संननाह य उ नो युयोज ।
यस्य देवस्य प्रशिषा चरामः स पारमिच्छात्स उ नो वि मुञ्चात् १
आहुतास्यभिहुत ऋषीणामस्यायुधम् ।
पूर्वा व्रतस्य प्राश्नती वीरघ्नी भव मेखले २
मृत्योरहं ब्रह्मचारी यदस्मि निर्याचन् भूतात् पुरुषं यमाय ।
तमहं ब्रह्मणा तपसा श्रमेणानयैनं मेखलया सिनामि ३ ३११५
श्रद्धाया दुहिता तपसोऽधि जाता स्वसा ऋषीणां भूतकृतां बभूव ।
सा नो मेखले मतिमा धेहि मेधामथो नो धेहि तप इन्द्रियं च ४
यां त्वा पूर्वे भूतकृत ऋषयः परिबेधिरे । सा त्वं परि ष्वजस्व मां दीर्घायुत्वाय मेखले ५(५)

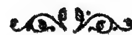
---

१३४ राष्ट्रसभा ।

॥ १ ॥ (अथर्व० ७।१२।१-३)+

(१-३) शौनकः । १—२ सभा, पितरः, ३ इन्द्रः । अनुष्टुप्, १ भुरिक् त्रिष्टुप् ।

सभा च मा समितिश्चावतां प्रजापतेर्दुहितरौ संविदाने ।
येना संगच्छा उप मा स शिक्षाच्चारु वदानि पितरः संगतेषु १
विद्म ते सभे नाम नरिष्टा नाम वा असि । ये ते के च सभासदस्ते मे सन्तु सवाचसः २
एषामहं समासीनानां वर्चो विज्ञानमा ददे ।
अस्याः सर्वस्याः संसदो मामिन्द्र भगिनं कृणु ३ ३१२०



+ अथर्व० ७।१२।४—दै० तृ० भा० (मनः) १५८४ ।

१३५ विवाह-प्रकरणम् ।

॥ १ ॥ (अथर्व० १४।१।१-६४)

(१-६४) सूर्या सावित्री । आत्मा; १—५ सोमः, ६ स्वविवाहः, २३ सोमार्कौ, २४ चन्द्रमाः, २५ नृणां विवाहमन्त्राशिषः; २५,२७ वधूवासः संस्पर्शमोचनम् । अनुष्टुप्; १४ विराट्प्रस्तारपङ्क्तिः; १५ आस्तारपंक्तिः; १९-२०,२३-२४;३१-३३,३७,३९-४०,४५,४७,४९-५०, ५३,५६-५९,६१ त्रिष्टुप् (२३,३१,४५ बृहतीगर्भा); २१,४६, ५४,६४ जगती (५४,६४ भुरिक् त्रिष्टुप्); २९,५५ पुरस्ताद्बृहती; ३४ प्रस्तारपंक्तिः; ३८ पुरोबृहती त्रिपदा परोष्णिक्; (४८ पथ्यापंक्तिः) ६० पराऽनुष्टुप् ।

सत्येनोत्तभिता भूमिः सूर्येणोत्तभिता द्यौः । ऋतेनादित्यास्तिष्ठन्ति दिवि सोमो अधि श्रितः १
सोमेनादित्या बलिनः सोमेन पृथिवी मही । अथो नक्षत्राणामेषामुपस्थे सोम आहितः २
सोमं मन्यते पपिवान् यत् संपिंषन्त्योषधिम् ।
सोमं यं ब्रह्माणो विदुर्न तस्याश्नाति पार्थिवः ३
यत् त्वा सोम प्रपिबन्ति तत आ प्यायसे पुनः ।
वायुः सोमस्य रक्षिता समानां मास आकृतिः ४
आच्छद्विधानैर्गुपितो बार्हतैः सोम रक्षितः ।
ग्राव्णामिच्छृण्वन् तिष्ठसि न ते अश्नाति पार्थिवः ५(५)
चित्तिरा उपबर्हणं चक्षुरा अभ्यञ्जनम् । द्यौर्भूमिः कोश आसीद् यदयात् सूर्या पतिम् ६
रैभ्यासीदनुदेयी नाराशंसी न्योचनी । सूर्याया भद्रमिद् वासो गाथयैति परिष्कृता ७
स्तोमा आसन् प्रतिधयः कुरीरं छन्द ओपशः ।
सूर्याया अश्विना वराग्निरासीत् पुरोगवः ८
सोमो वधूयुरभवदश्विनास्तामुभा वरा । सूर्या यत् पत्ये शंसन्तीं मनसा सविताददात् ९
मनो अस्या अन आसीद् द्यौरासीदुत च्छदिः ।
शुक्रावनड्वाहावास्तां यदयात् सूर्या पतिम् १० ३१४०
ऋक्सामाभ्यामभिहितौ गावौ ते सामनावैताम् ।
श्रोत्रे ते चक्रे आस्तां दिवि पन्थाश्चराचरः ११
शुची ते चक्रे यात्या व्यानो अक्ष आहतः । अनो मनस्मयं सूर्यारोहत् प्रयती पतिम् १२

सूर्याया वहतुः प्रागात् सविता यमवासृजत्। मघासु हन्यन्ते गावः फल्गुनीषु व्युह्यते १३
यदश्विना पृच्छमानावयातं त्रिचक्रेण वहतुं सूर्यायाः ।
क्वैकं चक्रं वामासीत् क्व देष्ट्राय तस्थथुः १४
यदयातं शुभस्पती वरेयं सूर्यामुप । विश्वे देवा अनु तद् वामजानन् पुत्रः पितरमवृणीत पूषा १५ ३१४५
द्वे ते चक्रे सूर्ये ब्रह्माण ऋतुथा विदुः । अथैकं चक्रं यद् गुहा तदद्धातय इद् विदुः १६
अर्यमणं यजामहे सुबन्धुं पतिवेदनम् । उर्वारुकमिव बन्धनात् प्रेतो मुञ्चामि नामुतः १७
प्रेतो मुञ्चामि नामुतः सुबद्धाममुतस्करम् । यथेयमिन्द्र मीढ्वः सुपुत्रा सुभगासति १८
प्र त्वा मुञ्चामि वरुणस्य पाशाद् येन त्वाबध्नात् सविता सुशेवाः ।
ऋतस्य योनौ सुकृतस्य लोके स्योनं ते अस्तु सहसंभलायै १९
भगस्त्वेतो नयतु हस्तगृह्याश्विना त्वा प्र वहतां रथेन ।
गृहान् गच्छ गृहपत्नी यथासो वशिनी त्वं विदथमा वदासि २०(२०)
इह प्रियं प्रजायै ते समृध्यतामस्मिन् गृहे गार्हपत्याय जागृहि ।
एना पत्या तन्वं सं स्पृशस्वाथ जिर्विर्विदथमा वदासि २१
इहैव स्तं मा वि यौष्टं विश्वमायुर्व्यश्नुतम् । क्रीडन्तौ पुत्रैर्नप्तृभिर्मोदमानौ स्वस्तकौ २२
पूर्वापरं चरतो माययैतौ शिशू क्रीडन्तौ परि यातोऽर्णवम् ।
विश्वान्यो भुवना विचष्ट ऋतूँरन्यो विदधज्जायसे नवः २३
नवोनवो भवसि जायमानोऽह्नां केतुरुषसामेष्यग्रम् ।
भागं देवेभ्यो वि दधास्यायन् प्र चन्द्रमास्तिरसे दीर्घमायुः २४
परा देहि शामुल्यं ब्रह्मभ्यो वि भजा वसु । कृत्यैषा पद्वती भूत्वा जाया विशते पतिम् २५ ३१५५
नीललोहितं भवति कृत्यासक्तिर्व्यज्यते । एधन्ते अस्या ज्ञातयः पतिर्बन्धेषु बध्यते २६
अश्लीला तनूर्भवति रुशती पापयामुया । पतिर्यद् वध्वोऽ वाससः स्वमङ्गमभ्यूर्णुते २७
आशसनं विशसनमथो अधिविकर्तनम् । सूर्यायाः पश्य रूपाणि तानि ब्रह्मोत शुम्भति २८
तृष्टमेतत् कटुकमपाष्ठवद् विषवन्नैतदत्तवे । सूर्यां यो ब्रह्मा वेद स इद् वाधूयमर्हति २९
स इत् तत् स्योनं हरति ब्रह्मा वासः सुमङ्गलम् ।
प्रायश्चित्तिं यो अध्येति येन जाया न रिष्यति ३०(३०)
युवं भगं सं भरतं समृद्धमृतं वदन्तावृतोद्येषु ।
ब्रह्मणस्पते पतिमस्यै रोचय चारु संभलो वदतु वाचमेताम् ३१

इहेदसाथ न परो गमाथेमं गावः प्रजया वर्धयाथ ।
शुभं यतीरुस्रियाः सोमवर्चसो विश्वे देवाः क्रन्निह वो मनांसि ३२
इमं गावः प्रजया सं विशाथायं देवानां न मिनाति भागम् ।
अस्मै वः पूषा मरुतश्च सर्वे अस्मै वो धाता सविता सुवाति ३३
अनृक्षरा ऋजवः सन्तु पन्थानो येभिः सखायो यन्ति नो वरेयम् ।
सं भगेन समर्यम्णा सं धाता सृजतु वर्चसा ३४
यच्च वर्चो अक्षेषु सुरायां च यदाहितम् । यद् गोष्वश्विना वर्चस्तेनेमां वर्चसावतम् ३५ ३१६५
येन महानघ्न्या जघनमश्विना येन वा सुरा ।
येनाक्षा अभ्यषिच्यन्त तेनेमां वर्चसावतम् ३६
यो अनिध्मो दीदयदप्स्व१न्तर्यं विप्रास ईडते अध्वरेषु ।
अपां नपान्मधुमतीरपो दा याभिरिन्द्रो वावृधे वीर्यावान् ३७
इदमहं रुशन्तं ग्राभं तनूदूषिमपोहामि । यो भद्रो रोचनस्तमुदचामि ३८
आस्यै ब्राह्मणाः स्नपनीर्हरन्त्ववीरघ्नीरुदजन्त्वापः ।
अर्यम्णो अग्निं पर्येतु पूषन् प्रतीक्षन्ते श्वशुरो देवरश्च ३९
शं ते हिरण्यं शमु सन्त्वापः शं मेथिर्भवतु शं युगस्य तर्द्म ।
शं त आपः शतपवित्रा भवन्तु शमु पत्या तन्व१ं सं स्पृशस्व ४०(४०)
खे रथस्य खेऽनसः खे युगस्य शतक्रतो । अपालामिन्द्र त्रिष्पूत्वाकृणोः सूर्यत्वचम् ४१
आशासाना सौमनसं प्रजां सौभाग्यं रयिम् । पत्युरनुव्रता भूत्वा सं नह्यस्वामृताय कम् ४२
यथा सिन्धुर्नदीनां साम्राज्यं सुषुवे वृषा । एवा त्वं सम्राज्ञ्येधि पत्युरस्तं परेत्य ४३
सम्राज्ञ्येधि श्वशुरेषु सम्राज्ञ्युत देवृषु । ननान्दुः सम्राज्ञ्येधि सम्राज्ञ्युत श्वश्र्वाः ४४
या अकृन्तन्नवयन् याश्च तत्निरे या देवीरन्ताँ अभितोऽददन्त ।
तास्त्वा जरसे सं व्ययन्त्वायुष्मतीदं परि धत्स्व वासः ४५ ३१७५
जीवं रुदन्ति वि नयन्त्यध्वरं दीर्घामनु प्रसितिं दीध्युर्नरः ।
वामं पितृभ्यो य इदं समीरिरे मयः पतिभ्यो जनये परिष्वजे ४६
स्योनं ध्रुवं प्रजायै धारयामि तेऽश्मानं देव्याः पृथिव्या उपस्थे ।
तमा तिष्ठानुमाद्या सुवर्चा दीर्घं त आयुः सविता कृणोतु ४७
येनाग्निरस्या भूम्या हस्तं जग्राह दक्षिणम् ।
तेन गृह्णामि ते हस्तं मा व्यथिष्ठा मया सह प्रजया च धनेन च ४८

देवस्ते सविता हस्तं गृह्णातु सोमो राजा सुप्रजसं कृणोतु ।
अग्निः सुभगां जातवेदाः पत्ये पत्नीं जरदष्टिं कृणोतु ४९
गृह्णामि ते सौभगत्वाय हस्तं मया पत्या जरदष्टिर्यथासः ।
भगो अर्यमा सविता पुरंधिर्मह्यं त्वादुर्गार्हपत्याय देवाः ५० ३१८०
भगस्ते हस्तमग्रहीत् सविता हस्तमग्रहीत् । पत्नी त्वमसि धर्मणाहं गृहपतिस्तव ५१
ममेयमस्तु पोष्या मह्यं त्वादाद् बृहस्पतिः ।
मया पत्या प्रजावति सं जीव शरदः शतम् ५२
त्वष्टा वासो व्यदधाच्छुभे कं बृहस्पतेः प्रशिषा कवीनाम् ।
तेनेमां नारीं सविता भगश्च सूर्यामिव परि धत्तां प्रजया ५३
इन्द्राग्नी द्यावापृथिवी मातरिश्वा मित्रावरुणा भगो अश्विनोभा ।
बृहस्पतिर्मरुतो ब्रह्म सोम इमां नारीं प्रजया वर्धयन्तु ५४
बृहस्पतिः प्रथमः सूर्यायाः शीर्षे केशाँ अकल्पयत् ।
तेनेमामश्विना नारीं पत्ये सं शोभयामसि ५५(५५)
इदं तद् रूपं यदवस्त योषा जायां जिज्ञासे मनसा चरन्तीम् ।
तामन्वर्तिष्ये सखिभिर्नवग्वैः क इमान् विद्वान् वि चचर्त पाशान् ५६
अहं वि ष्यामि मयि रूपमस्या वेददित् पश्यन् मनसः कुलायम् ।
न स्तेयमद्मि मनसोदमुच्ये स्वयं श्रथ्नानो वरुणस्य पाशान् ५७
प्र त्वा मुञ्चामि वरुणस्य पाशाद् येन त्वाबध्नात् सविता सुशेवाः ।
उरुं लोकं सुगमत्र पन्थां कृणोमि तुभ्यं सहपत्न्यै वधु ५८
उद्यच्छध्वमप रक्षो हनाथेमां नारीं सुकृते दधात
धाता विपश्चित् पतिमस्यै विवेद भगो राजा पुर एतु प्रजानन् ५९
भगस्ततक्ष चतुरः पादान् भगस्ततक्ष चत्वार्युष्पलानि ।
त्वष्टा पिपेश मध्यतोऽनु वर्ध्रान्त्सा नो अस्तु सुमङ्गली ६० ३१९०
सुकिंशुकं वहतुं विश्वरूपं हिरण्यवर्णं सुवृतं सुचक्रम् ।
आ रोह सूर्ये अमृतस्य लोकं स्योनं पतिभ्यो वहतुं कृणु त्वम् ६१
अभ्रातृघ्नीं वरुणापशुघ्नीं बृहस्पते । इन्द्रापतिघ्नीं पुत्रिणीमास्मभ्यं सवितर्वह ६२
मा हिंसिष्टं कुमार्यं स्थूणे देवकृते पथि । शालाया देव्या द्वारं स्योनं कृण्मो वधूपथम् ६३

*

ब्रह्मापरं युज्यतां ब्रह्म पूर्वं ब्रह्मान्ततो मध्यतो ब्रह्म सर्वतः ।
अनाव्याधां देवपुरां प्रपद्य शिवा स्योना पतिलोके वि राज ६४

॥ २ ॥ (अथर्व० १४।२।१-७५)

आत्मा, १० यक्ष्मनाशनी, ११ दम्पत्योः परिपन्थिनाशनी, ३६ देवाः । अनुष्टुप् ; ५-६,१२,३१,३७,३९-४० जगती (३७,३९ भुरिक् त्रिष्टुप्); ९ व्यवसाना षट्पदा विराडत्यष्टिः; १३-१४,१७-१९, ३४,३६,३८,४१-४२,४९,६१,७०,७४-७५ त्रिष्टुप्; १५,५१ भुरिक्; २० पुरस्ताद् बृहती; १३,२४-२५,३२-३३ पुरोबृहती (२६ त्रिपदा विराण्नाम गायत्री); ३३ विराडास्तारपङ्क्तिः; ३५ पुरोबृहती त्रिष्टुप् ; ४३ त्रिष्टुब्गर्भा पङ्क्तिः; ४४ प्रस्तारपंक्तिः; ४७ पथ्याबृहती; ४८ सतः पङ्क्तिः; ५० उपरिष्टाद्बृहती निचृत् ; ५२ विराट् पुर उष्णिक्; ५९-६०,६२ पथ्यापङ्क्तिः; ६८ पुर उष्णिक्; ६९ व्यवसाना षट्पदाऽतिशक्वरी, ७१ बृहती

तुभ्यमग्रे पर्यवहन्सूर्यां वहतुना सह । स नः पतिभ्यो जायां दा अग्ने प्रजया सह १(६५)
पुनः पत्नीमग्निरदादायुषा सह वर्चसा । दीर्घायुरस्या यः पतिर्जीवाति शरदः शतम् २
सोमस्य जाया प्रथमं गन्धर्वस्तेऽपरः पतिः ।
तृतीयो अग्निष्टे पतिस्तुरीयस्ते मनुष्यजाः ३
सोमो ददद् गन्धर्वाय गन्धर्वो ददद्ग्नये । रयिं च पुत्रांश्चादादग्निर्मह्यमथो इमाम् ४
आ वामगन्त्सुमतिर्वाजिनीवसू न्यश्विना हृत्सु कामा अरंसत ।
अभूतं गोपा मिथुना शुभस्पती प्रिया अर्यम्णो दुर्यां अशीमहि ५
सा मन्दसाना मनसा शिवेन रयिं धेहि सर्ववीरं वचस्यम् ।
सुगं तीर्थं सुप्रपाणं शुभस्पती स्थाणुं पथिष्ठामप दुर्मतिं हतम् ६ ३१००

या ओषधयो या नद्यो यानि क्षेत्राणि या वना ।
तास्त्वा वधु प्रजावतीं पत्ये रक्षन्तु रक्षसः ७
एमं पन्थामरुक्षाम सुगं स्वस्तिवाहनम् । यस्मिन् वीरो न रिष्यत्यन्येषां विन्दते वसु ८
इदं सु मे नरः शृणुत ययाशिषा दंपती वाममश्नुतः ।
ये गन्धर्वा अप्सरसश्च देवीरेषु वानस्पत्येषु येऽधि तस्थुः ।
स्योनास्ते अस्यै वध्वै भवन्तु मा हिंसिषुर्वहतुमुह्यमानम् ९

ये वध्वश्चन्द्रं वहतुं यक्ष्मा यन्ति जनाँ अनु ।
पुनस्तान् यज्ञिया देवा नयन्तु यत आगताः १०

मा विदन् परिपन्थिनो य आसीदन्ति दंपती । सुगेन दुर्गमतीतामप द्रान्त्वरातयः ११ (७५)

सं काशयामि वहतुं ब्रह्मणा गृहैरघोरेण चक्षुषा मित्रियेण ।
पर्याणद्धं विश्वरूपं यदस्ति स्योनं पतिभ्यः सविता तत् कृणोतु १२

शिवा नारीयमस्तमागन्निमं धाता लोकमस्यै दिदेश ।
तामर्यमा भगो अश्विनोभा प्रजापतिः प्रजया वर्धयन्तु १३

आत्मन्वत्युर्वरा नारीयमागन् तस्यां नरो वपत बीजमस्याम् ।
सा वः प्रजां जनयद् वक्षणाभ्यो बिभ्रती दुग्धमृषभस्य रेतः १४

प्रति तिष्ठ विराडसि विष्णुरिवेह सरस्वति ।
सिनीवालि प्र जायतां भगस्य सुमतावसत् १५

उद् व ऊर्मिः शम्या हन्त्वापो योक्त्राणि मुञ्चत ।
मादुष्कृतौ व्येनसावघ्न्यावशुनमारताम् १६ ३२१०

अघोरचक्षुरपतिघ्नी स्योना शग्मा सुशेवा सुयमा गृहेभ्यः ।
वीरसूर्देवृकामा[1] सं त्वयैधिषीमहि सुमनस्यमाना १७

अदेवृघ्न्यपतिघ्नीहैधि शिवा पशुभ्यः सुयमा सुवर्चाः ।
प्रजावती वीरसूर्देवकामा[1] स्योनेममग्निं गार्हपत्यं सपर्य १८

उत् तिष्ठेतः किमिच्छन्तीदमागा अहं त्वेडे अभिभूः स्वाद् गृहात् ।
शून्यैषी निर्ऋते याजगन्थोत्तिष्ठाराते प्र पत मेह रंस्थाः १९

यदा गार्हपत्यमसपर्यैत् पूर्वमग्निं वधूरियम् । अधा सरस्वत्यै नारि पितृभ्यश्च नमस्कुरु २०

शर्म वर्मैतदा हरास्यै नार्या उपस्तरे । सिनीवालि प्र जायतां भगस्य सुमतावसत् २१ (८५)

यं बल्बजं न्यस्यथ चर्म चोपस्तृणीथन । तदा रोहतु सुप्रजा या कन्या विन्दते पतिम् २२

उप स्तृणीहि बल्बजमधि चर्मणि रोहिते । तत्रोपविश्य सुप्रजा इममग्निं सपर्यतु २३

आ रोह चर्मोप सीदाग्निमेष देवो हन्ति रक्षांसि सर्वा ।
इह प्रजां जनय पत्ये अस्मै सुज्यैष्ठ्यो भवत् पुत्रस्त एषः २४

---

१ 'देवृकामा' इति पाठभेदोऽत्र केषुचित्पुस्तकेषु दृश्यते । ऋग्वेदे (१०।८५।४४), पैप्पलादे (१४।१७) च 'देवकामा' इत्येव पाठः । पैप्पलादे (१४।१८ इत्यत्र) 'देवृकामा' इति पाठः ।

वि तिष्ठन्तां मातुरस्या उपस्थान्नानारूपाः पशवो जायमानाः ।
सुमङ्गल्युप सीदेममग्निं संपत्नी प्रति भूषेह देवान् २५
सुमङ्गली प्रतरणी गृहाणां सुशेवा पत्ये श्वशुराय शंभूः ।
स्योना श्वश्र्वै प्र गृहान् विशेमान् २६ ३११०
स्योना भव श्वशुरेभ्यः स्योना पत्ये गृहेभ्यः ।
स्योनास्यै सर्वस्यै विशे स्योना पुष्टायैषां भव २७
सुमङ्गलीरियं वधूरिमां समेत पश्यत । सौभाग्यमस्यै दत्त्वा दौर्भाग्यैर्विपरेतन २८
या दुर्हार्दो युवतयो याश्चेह जरतीरपि ।
वर्चो न्व१स्यै सं दत्ताथास्तं विपरेतन २९
रुक्मप्रस्तरणं वह्यं विश्वा रूपाणि बिभ्रतम् ।
आरोहत् सूर्या सावित्री बृहते सौभगाय कम् ३०
आ रोह तल्पं सुमनस्यमानेह प्रजां जनय पत्ये अस्मै ।
इन्द्राणीव सुबुधा बुध्यमाना ज्योतिरग्रा उषसः प्रति जागरासि ३१(९५)
देवा अग्रे न्यपद्यन्त पत्नीः समस्पृशन्त तन्व१स्तनूभिः ।
सूर्येव नारि विश्वरूपा महित्वा प्रजावती पत्या सं भवेह ३२
उत् तिष्ठेतो विश्वावसो नमसेडामहे त्वा ।
जामिमिच्छ पितृषदं न्यक्तां स ते भागो जनुषा तस्य विद्धि ३३
अप्सरसः सधमादं मदन्ति हविर्धानमन्तरा सूर्यं च ।
तास्ते जनित्रमभि ताः परेहि नमस्ते गन्धर्वर्तुना कृणोमि ३४
नमो गन्धर्वस्य नमसे नमो भामाय चक्षुषे च कृण्मः ।
विश्वावसो ब्रह्मणा ते नमोऽभि जाया अप्सरसः परेहि ३५
राया वयं सुमनसः स्यामोदितो गन्धर्वमावीवृताम ।
अगन्त्स देवः परमं सधस्थमगन्म यत्र प्रतिरन्त आयुः ३६ ३१२०
सं पितरावृत्विये सृजेथां माता पिता च रेतसो भवाथः ।
मर्य इव योषामधिरोहयैनां प्रजां कृण्वाथामिह पुष्यतं रयिम् ३७
तां पूषञ्छिवतमामेरयस्व यस्यां बीजं मनुष्या३ वपन्ति ।
या न ऊरू उशती विश्रयाति यस्यामुशन्तः प्रहरेम शेपः ३८

आ रो॑हो॒रुमुप॑ धत्स्व॒ हस्तं॒ परि॑ ष्वजस्व जा॒यां सु॑मन॒स्यमा॑नः ।
प्र॒जां कृ॑ण्वाथामि॒ह मोद॑मानौ दी॒र्घं वा॒मायुः॑ सवि॒ता कृ॑णोतु　३९
आ वां॑ प्र॒जां ज॑नयतु प्र॒जाप॑तिरहोरा॒त्राभ्यां॒ सम॑नक्त्वर्य॒मा ।
अदु॑र्मङ्गली पति॒लोक॒मा वि॑शे॒मं शं नो॑ भव द्वि॒पदे॒ शं चतु॑ष्पदे　४०
दे॒वैर्द॒त्तं मनु॑ना सा॒कमे॒तद् वाधू॑यं॒ वासो॑ व॒ध्वश्च॒ वस्त्र॑म् ।
यो ब्र॒ह्मणे॑ चिकि॒तुषे॒ ददा॑ति॒ स इद् रक्षां॑सि॒ तल्पा॑नि हन्ति　४१(१०५)
यं मे॑ द॒त्तो ब्र॑ह्मभा॒गं व॑धूयो॒र्वाधू॑यं॒ वासो॑ व॒ध्वश्च॒ वस्त्र॑म् ।
यु॒वं ब्र॒ह्मणे॑ऽनुम॒न्यमा॑नौ बृह॑स्पते सा॒कमिन्द्र॑श्च द॒त्तम्　४२
स्यो॒नाद्योने॒रधि॒ बुध्य॑मानौ हसा॒मुदौ॒ मह॑सा॒ मोद॑मानौ ।
सु॒गू सु॑पु॒त्रौ सु॑गृ॒हौ त॑राथो जी॒वावु॒षसो॑ वि॒भा॒तीः　४३
नव॒ं वसा॑नः सुर॒भिः सु॒वासा॑ उ॒दागां॑ जी॒व उ॒षसो॑ वि॒भा॒तीः ।
आ॒ण्डात् प॑तत्रीवा॑मुक्षि॒ विश्व॑स्मा॒देन॑स॒स्परि॑　४४
शु॒म्भ॑नी॒ द्यावा॑पृथि॒वी अन्ति॑सु॒म्ने महि॑व्रते ।
आप॑ः स॒प्त सु॑स्रुवु॒र्दे॑वीस्ता नो॑ मुञ्च॒न्त्वंह॑सः　४५
सूर्या॑यै दे॒वेभ्यो॑ मि॒त्राय॒ वरु॑णाय च । ये भू॒तस्य॒ प्रचे॑तस॒स्तेभ्य॑ इ॒दम॑करं॒ नम॑ः　४६　३२४०
य ऋ॒ते चि॑द॒भि॒श्रिष॑ः पु॒रा ज॒त्रुभ्य॑ आ॒तृद॑ः ।
सं॒धा॒ता सं॒धिं म॒घवा॑ पुरू॒वसु॒र्निष्क॑र्ता॒ विह्रु॑तं॒ पुन॑ः　४७
अपा॒स्मत् तम॑ उच्छ॒तु नील॑ं पि॒शङ्ग॑मु॒त लोहि॑त॒ं यत् ।
नि॒र्द॒हनी या पृ॑षातक्य॒१स्मिन् तां स्था॒णाव॒ध्या स॑जामि　४८
याव॑तीः कृ॒त्या उ॑प॒वास॑ने॒ याव॑न्तो॒ राज्ञो॒ वरु॑णस्य॒ पाशा॑ः ।
व्यृ॑द्धयो॒ या अस॑मृद्धयो॒ या अ॒स्मिन् ता स्था॒णावधि॑ सादयामि　४९
या मे॑ प्रि॒यत॑मा त॒नूः सा मे॑ बिभाय॒ वास॑सः ।
तस्या॒ग्रे त्वं व॑नस्पते नी॒विं कृ॑णुष्व॒ मा व॒यं रि॑षाम　५०
ये अन्ता॒ याव॑तीः॒ सिचो॒ य ओत॑वो॒ ये च॒ तन्त॑वः ।
वासो॒ यत् पत्नी॑भिरु॒तं तन्न॑ः स्यो॒नमुप॑ स्पृशात्　५१(११५)
उ॒श॒तीः क॒न्यला॑ इ॒माः पि॑तृ॒लोका॒त् पतिं॑ य॒तीः । अव॑ दी॒क्षाम॑सृक्षत॒ स्वाहा॑　५२
बृ॒हस्पति॒नाव॑सृष्टां॒ विश्वे॑ दे॒वा अ॑धारयन् । वर्चो॒ गोषु॒ प्रवि॑ष्टं॒ यत् तेने॒मां सं सृ॑जामसि　५३
बृ॒हस्पति॒नाव॑सृष्टां॒ विश्वे॑ दे॒वा अ॑धारयन् । तेजो॒ गोषु॒ प्रवि॑ष्टं॒ यत् तेने॒मां सं सृ॑जामसि　५४

बृहस्पतिनावसृष्टां विश्वे देवा अधारयन्। भगो गोषु प्रविष्टो यस्तेनेमां सं सृजामसि ५५

बृहस्पतिनावसृष्टां विश्वे देवा अधारयन्। यशो गोषु प्रविष्टं यत् तेनेमां सं सृजामसि ५६ ३२५०

बृहस्पतिनावसृष्टां विश्वे देवा अधारयन् । पयो गोषु प्रविष्टं यत् तेनेमां सं सृजामसि ५७

बृहस्पतिनावसृष्टां विश्वे देवा अधारयन्। रसो गोषु प्रविष्टो यस्तेनेमां सं सृजामसि ५८

यदीमे केशिनो जना गृहे ते समनर्तिषू रोदेन कृण्वन्तो३ऽघम् ।
अग्निष्ट्वा तस्मादेनसः सविता च प्र मुञ्चताम् ५९

यदीयं दुहिता तव विकेश्यरुदद् गृहे रोदेन कृण्वत्य१घम्। अग्निष्ट्वा तस्मादेनसः० ६०

यज्जामयो यद् युवतयो गृहे ते समनर्तिषू रोदेन कृण्वतीरघम्। अग्निष्ट्वा तस्मादेनसः० ६१(१२५)

यत् ते प्रजायां पशुषु यद् वा गृहेषु निष्ठितमघकृद्भिरघं कृतम् । अग्निष्ट्वा तस्मा० ६२

इयं नार्युप ब्रूते पूल्यान्यावपन्तिका । दीर्घायुरस्तु मे पतिर्जीवाति शरदः शतम् ६३

इहेमाविन्द्र सं नुद चक्रवाकेव दंपती । प्रजयैनौ स्वस्तकौ विश्वमायुर्व्यश्नुताम् ६४

यदासन्द्यामुपधाने यद् वोपवासने कृतम्। विवाहे कृत्यां यां चक्रुरास्नाने तां नि दध्मसि ६५

यद् दुष्कृतं यच्छमलं विवाहे वहतौ च यत्। तत् संभलस्य कम्बले मृज्महे दुरितं वयम् ६६ ३२६०

संभले मलं सादयित्वा कम्बले दुरितं वयम्। अभूम यज्ञियाः शुद्धाः प्र ण आयूंषि तारिषत् ६७

कृत्रिमः कण्टकः शतदन् य एषः । अपास्याः केश्यं मलमप शीर्षण्यं लिखात् ६८

अङ्गादङ्गाद् वयमस्या अप यक्ष्मं नि दध्मसि ।
तन्मा प्रापत् पृथिवीं मोत देवान् दिवं मा प्रापदुर्व१न्तरिक्षम् ।
अपो मा प्रापन्मलमेतदग्ने यमं मा प्रापत् पितॄंश्च सर्वान् ६९

सं त्वा नह्यामि पयसा पृथिव्याः सं त्वा नह्यामि पयसौषधीनाम् ।
सं त्वा नह्यामि प्रजया धनेन सा संनद्धा सनुहि वाजमेमम् ७०

अमोऽहमस्मि सा त्वं सामाहमस्म्यृक् त्वं द्यौरहं पृथिवी त्वम् ।
ताविह सं भवाव प्रजामा जनयावहै ७१(१३५)

जनियन्ति नावग्रवः पुत्रियन्ति सुदानवः । अरिष्टासू सचेवहि बृहते वाजसातये ७२

ये पितरो वधूदर्शा इमं वहतुमागमन् । ते अस्यै वध्वै संपत्न्यै प्रजावच्छर्म यच्छन्तु ७३

येदं पूर्वागन् रशनायमाना प्रजामस्यै द्रविणं चेह दत्त्वा ।
तां वहन्त्वगतस्यानु पन्थां विराडियं सुप्रजा अत्यजैषीत् ७४

प्र बुध्यस्व सुबुधा बुध्यमाना दीर्घायुत्वाय शतशारदाय ।
गृहान् गच्छ गृहपत्नी यथासो दीर्घं त आयुः सविता कृणोतु ७५ ३२६९

॥ ३ ॥ (वा० य० २३।३३)

गायत्री त्रिष्टुब्जगत्यनुष्टुप्पङ्क्त्या सह । बृहत्युष्णिहा ककुप्सूचीभिः शम्यन्तु त्वा ३३ ३२७०

॥ ४ ॥ (अथर्व० १९।२१।१)

(२-४) ब्रह्मा। छन्दांसि । एकावसाना द्विपदा साम्नी बृहती ।

गायत्र्युष्णिगनुष्टुब्बृहती पङ्क्तिस्त्रिष्टुब्जगत्यै १

॥ ५ ॥ (अथर्व० १९।४१।१)

तपः [राष्ट्रं बलमोजश्च]। त्रिष्टुप्।

भद्रमिच्छन्त ऋषयः स्वर्विदस्तपो दीक्षामुपनिषेदुरग्रे ।
ततो राष्ट्रं बलमोजश्च जातं तदस्मै देवा उपसंनमन्तु १

॥ ६ ॥ (अथर्व० १९।६८।१)

कर्म (वेदोक्तं)। अनुष्टुप्।

अव्यसश्च व्यचसश्च बिलं वि ष्यामि मायया । ताभ्यामुद्धृत्य वेदमथ कर्माणि कृण्महे १

॥ ७ ॥ (अथर्व० १९।२६।१-४)

(५—८) अथर्वा । अग्निः, हिरण्यं च [हिरण्यधारणम्]। त्रिष्टुप् ; ३ अनुष्टुप् ; ४ पथ्यापङ्क्तिः ।

अग्नेः प्रजातं परि यद्धिरण्यममृतं दध्रे अधि मर्त्येषु ।
य एनद्वेद स इदेनमर्हति जरामृत्युर्भवति यो बिभर्ति १(५)
यद्धिरण्यं सूर्येण सुवर्णं प्रजावन्तो मनवः पूर्व ईषिरे ।
तत्त्वा चन्द्रं वर्चसा सं सृजत्यायुष्मान् भवति यो बिभर्ति २ ३२७५
आयुषे त्वा वर्चसे त्वौजसे च बलाय च । यथा हिरण्यतेजसा विभासासि जनाँ अनु ×३
यद्वेद राजा वरुणो वेद देवो बृहस्पतिः ।
इन्द्रो यद्वृत्रहा वेद तत्त आयुष्यं भुवत् तत्ते वर्चस्यं भुवत् ४

॥ ८ ॥ (अथर्व० २०।३४।१२,१६-१७)

(९-११) गृत्समदः । इन्द्रः । त्रिष्टुप्।

यः शम्बरं पर्यतरत् कसीभिर्योऽचारुकास्नापिबत् सुतस्य ।
अन्तर्गिरौ यजमानं बहुं जनं यस्मिन्नामूर्च्छत् स जनास इन्द्रः १२

× आयुषे त्वा...कृष्यै त्वा क्षेमाय...। वा० य० १४,२१ (उत्तरार्धः) ।

जातो व्यख्यत् पित्रोरुपस्थे भुवो न वेद जनितुः परस्य ।
स्तविष्यमाणो नो यो अस्मद्व्रता देवानां स जनास इन्द्रः १६(१०)
यः सोमकामो हर्यश्वः सूरिर्यस्माद् रेजन्ते भुवनानि विश्वा ।
यो जघान शम्बरं यश्च शुष्णं य एकवीरः स जनास इन्द्रः १७ ३२८०

॥ ९ ॥ (अथर्व० २०।१०७।१३)

(१२) बृहद्दिवः । इन्द्रः । गायत्री ।

चित्रं देवानां केतुरनीकं ज्योतिष्मान् प्रदिशः सूर्य उद्यन् ।
दिवाकरोऽति द्युम्नैस्तमांसि विश्वातारीदुरितानि शुक्रः १३

॥ १० ॥ [१३-४१] (सा० १०,६३,८२,९०,६१५-६१६)

अग्ने विवस्वदा भरास्मभ्यमूतये महे । देवो ह्यसि नो दृशे १०
आ जुहोता हविषा मर्जयध्वं नि होतारं गृहपतिं दधिध्वम् ।
इडस्पदे नमसा रातहव्यं सपर्यता यजतं पस्त्यानाम् १
यदि वीरो अनु ष्यादग्निमिन्धीत मर्त्यः ।
आजुह्वद्धव्यमानुषक् शर्म भक्षीत दैव्यम् २(१५)
जातः परेण धर्मणा यत्सवृद्भिः सहाभुवः ।
पिता यत् कश्यपस्याग्निः श्रद्धा माता मनुः कविः १० ३२८५
भ्राजन्त्यग्ने समिधान दीदिवो जिह्वा चरत्यन्तरासनि ।
स त्वं नो अग्ने पयसा वसुविद्रयिं वर्चो दृशेऽदाः १
वसन्त इन्नु रन्त्यो ग्रीष्म इन्नु रन्त्यः । वर्षाण्यनु शरदो हेमन्तः शिशिर इन्नु रन्त्यः २

॥ ११ ॥ (सा० ६१)

इत एत उदारुहन् दिवः पृष्ठान्या रुहन् । प्र भूर्जयो यथा पथोद्यामङ्गिरसो ययुः २

॥१२॥ (सा० १५४,२१४,२८८,३५३,३६१,४३७,४४१,४५०,६०८)

सोमः पूषा च चेततुर्विश्वासां सुक्षितीनाम् । देवत्रा रथ्योर्हिता १०(२०)

कदु प्रचेतसे मह्ने वचो देवाय शस्यते । तदिद्ध्यस्य वर्धनम् ×२ ३२९०
यदा कदा च मीढुषे स्तोता जरेत मर्त्यः ।
आदिद्वन्देत वरुणं विपा गिरा धर्तारं विव्रतानाम् ६
आ नो वयो वयःशयं महान्तं गह्वरेष्ठां महान्तं पूर्विणेष्ठाम् । उग्रं वचो अपावधीः २
कश्यपस्य स्वर्विदो यावाहुः सयुजाविति ।
ययोर्विश्वमपि व्रतं यज्ञं धीरा निचाय्य २
विश्वतोदावन् विश्वतो न आ भर यं त्वा शविष्ठमीमहे १(२५)
शं पदं मघं रयीषिणो न काममव्रतो हिनोति न स्पृशद्रयिम् ५
विश्वस्य प्र स्तोभ पुरो वा सन्यदि वेह नूनम् ४
आ प्रागाद्भद्रा युवतिरह्नः केतून्त्समीर्त्सति ।
अभूद्भद्रा निवेशनी विश्वस्य जगतो रात्री ७

॥१३॥ (सा० ५९४)

अहमस्मि प्रथमजा ऋतस्य पूर्वं देवेभ्यो अमृतस्य नाम ।
यो मा ददाति स इदेवमावदहमन्नमन्नमदन्तमद्मि ९

॥१४॥ (सा० १६५४-१६५६)

सुमन्मा वस्वी रन्ती सूनरी १
सरूप वृषन्ना गहीमौ भद्रौ धुर्यावभि । ताविमा उप सर्पतः २ ३३००
नीव शीर्षाणि मृढ्वं मध्य आपस्य तिष्ठति । शृङ्गेभिर्दशभिर्दिशन् ३

॥१५॥ (सा० १७६९,१८२५,१७२८-३१,१८४३-४५)

त्वामिच्छवसस्पते यन्ति गिरो न संयतः २
अग्निरिन्द्राय पवते दिवि शुक्रो वि राजति । महिषीव वि जायते १

× ऋ० ८।९२।५ (उत्तरार्धः)=दै० (इन्द्रः) २४०१ [उत्तरार्धः] ।

नमः सखिभ्यः पूर्वसद्भ्यो नमः साकंनिषेभ्यः । युञ्जे वाचं शतपदीम् १
युञ्जे वाचं शतपदीं गाये सहस्रवर्तनि । गायत्रं त्रैष्टुभं जगत् २ ३३०५
गायत्रं त्रैष्टुभं जगद्विश्वा रूपाणि सम्भृता । देवा ओकांसि चक्रिरे ३
अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निरिन्द्रो ज्योतिर्ज्योतिरिन्द्रः । सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः ×१
अभि वाजी विश्वरूपो जनित्रं हिरण्ययं बिभ्रदत्कं सुपर्णः ।
सूर्यस्य भानुमृतुथा वसानः परि स्वयं मेधमृज्रो जजान १
अप्सु रेतः शिश्रिये विश्वरूपं तेजः पृथिव्यामधि यत् संबभूव ।
अन्तरिक्षे स्वं महिमानं मिमानः कनिक्रन्ति वृष्णो अश्वस्य रेतः २(४०)
अयं सहस्रा परि युक्ता वसानः सूर्यस्य भानुं यज्ञो दाधार ।
सहस्रदाः शतदा भूरिदावा धर्ता दिवो भुवनस्य विश्पतिः ३ ३३१०

१३६ अथ परिशिष्टानि ।

अथ खिलसूक्तानि ।

(१)

शनैश्चिदद्य सूर्येणादित्येन सहीयसा । अहं यशस्विनां यशो विद्यारूपमुपा ददे १
उद्यन्नद्य वि नो भज पिता पुत्रेभ्यो यथा । दीर्घायुत्वस्य हेशिषे तस्य नो धेहि सूर्य २
उद्यन्तं त्वा मित्रमह आरोहन्तं विचक्षण । पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतम् ३

(२)

मा बिभेर्न मरिष्यसि परि त्वा पामि सर्वतः । घनेन हन्मि वृश्चिकमहिं दण्डेनागतम् १
आदित्यरथवेगेन विष्णुबाहुबलेन च । गरुडपक्षनिपातेन भूमिं गच्छ महायशाः २(५)

× वा० य० ३,९ ।

गरुडस्य पातमात्रेण त्रयो लोकाः प्रकंपिताः । प्रकंपिता मही सर्वा सशैलवनकानना ३
गगनं नष्टचन्द्रार्कं ज्योतिषं न प्रकाशते ।
देवता भयभीताश्च मारुतो न प्लवायति [मारुतो न प्लवायत्यों नमः] ४
भो सर्प भद्र भद्रं ते दूरं गच्छ महाविष । जन्मेजयस्य यज्ञान्ते आस्तीकवचनं स्मर ५
आस्तीकवचनं श्रुत्वा यः सर्पो न निवर्तते । शतधा भिद्यते मूर्ध्नि शिंशवृक्षफलं यथा ६
नर्मदायै नमः प्रात — र्नर्मदायै नमो निशि । नमोऽस्तु नर्मदे तुभ्यं त्राहि मां विषसर्पतः ७ ३३१०
यो जरत्कारुणा जातो जरत्कार्वां महायशाः । तस्य स्मरामि भद्रं ते दूरं गच्छ महाविष ८
असितिं चार्थसिद्धिं च सुनीतिं चापि यः स्मरेत् ।
दिवा वा यदि वा रात्रौ नास्ति सर्पभयं भवेत् ९
अगस्तिर्माधवश्चैव मुचुकुन्दो महामुनिः । कपिलो मुनिरास्तीकः पञ्चैते सुखशायिनः १०

(३)

हिरण्यगर्भः । १-२ कुहूः, ३-४ अनुमतिः, ५-८ धाता । त्रिष्टुप्, ५ गायत्री, ३,४,७ अनुष्टुप् ।

कुहूमहं सुवृतं विद्मनापस — मस्मिन् यज्ञे सुहवां जोहवीमि ।
सा नो ददातु श्रवणं पितॄणां तस्यै ते देवि हविषा विधेम १
कुहूर्देवानाममृतस्य पत्नी हव्या नो अस्य हविषः शृणोतु ।
सं दाशुषे किरतु भूरि वामं रायस्पोषं यजमाने दधातु २
अनु नोऽद्यानुमति — र्यज्ञं देवेषु मन्यताम् । अग्निश्च हव्यवाहनो भवतं दाशुषे मयः ३
अन्विदनुमते त्वं मन्यासै शं च नस्कृधि ।
क्रत्वे दक्षाय नो हिनु प्र ण आयूंषि तारिषत् ४
धाता दधातु नो रयि — मीशानो जगतस्पतिः । स नः पूर्णेन वावनत् ५
धाता ददातु दाशुषे वसूनि प्रजाकामाय मीळ्हुषे दुरोणे ।
तस्मै देवा अमृताः सं व्ययन्तां विश्वे देवासो अदितिः सजोषाः ६
धाता ददातु दाशुषे प्राचीं जीवातुमक्षिताम् । वयं देवस्य धीमहि सुमतिं वाजिनीवतः ७ ३३२०
धाता प्रजानामुत राय ईशे धातेदं विश्वं भुवनं जजान ।
धाता कृष्टीरनिमिषाभिचष्टे धात्र इद्धव्यं घृतवज्जुहोत ८

(४)

भद्रं वद दक्षिणतो भद्रमुत्तरतो वद । भद्रं पुरस्तान्नो वद भद्रं पश्चात् कपिंजल १

भद्रं वद पुत्रै–र्भद्रं वद गृहेषु च । भद्रमस्माकं नो वद भद्रं नो अभयं वद २
भद्रमधस्तान्नो वद भद्रमुपरिष्टान्नो वद । भद्रंभद्रं न आ वद भद्रं नः सर्वतो वद ३
असपत्नः पुरस्तान्नः शिवं दक्षिणतस्कृधि । अभयं सततं पश्चाद् भद्रमुत्तरतो गृहे ४(२५)
यौवनानि महयसि जिग्युषामिव दुंदुभिः । शकुन्तक प्रदक्षिणं शतपत्राभि नो वद ५
आवदंस्त्वं शकुने भद्रमा वद तूष्णीमासीनः सुमतिं चिकिद्धि नः ।
यदुत्पतन् वदसि कर्करिर्यथा बृहद्वदेम विदथे सुवीराः ६

(५)

जागर्षि त्वं भुवने जातवेदो जागर्षि यत्र यजते हविष्मान् ।
इदं हविः श्रद्दधानो जुहोमि तेन पासि गुह्यं नाम गोनाम् १

(६)

सूक्तान्तेऽस्येत्तृणान्यग्ना–विरिणे वोदकेऽपि वा । यदुस्तृणैरधीतं तत् तृणानि भवति ध्रुवम् १
वापीकूपतडागानां समुद्रं गच्छ स्वाहा [अग्निं गच्छ स्वाहा] २ ३३४०

(७)

स्वस्त्ययनं तार्क्ष्यमरिष्टनेमिं महद्भूतं वायसं देवतानाम् ।
असुरघ्नमिन्द्रसखं समत्सु बृहद्यशो नावमिवा रुहेम १
अंहोमुचमाङ्गिरसं गयं च स्वस्त्यात्रेयं मनसा च तार्क्ष्यम् ।
प्रयतपाणिः शरणं प्र पद्ये स्वस्ति संबाधेष्वभयं नो अस्तु २

(८)

वर्षन्तु ते विभावरि दिवो अभ्रस्य विद्युतः । रोहन्तु सर्वबीजा–न्यव ब्रह्मद्विषो जहि १

(९)

आ ते गर्भो योनिमैतु पुमान् बाण इवेषुधिम् । आ वीरो जायतां पुत्रस्ते दशमास्यः १
करोमि ते प्राजापत्य–मा गर्भो योनिमैतु ते । अनूनः पूर्णो जायता–मश्लोणोऽपिशाचधीतः २(३५
पुमांस्ते पुत्रो नारि तं पुमाननुजायताम् । तानि भद्राणि बीजा–न्यृषभा जनयन्ति नौ ३
यानि भद्राणि बीजा–न्यृषभा जनयन्ति नः ।
तैस्त्वं पुत्रान् विन्दस्व सा प्रसूर्धेनुका भव ४
कामः समृद्ध्यतां मह्य–मपराजितमेव मे । यं कामं कामये देव तं मे वायो समर्द्धय ५

(१०)

अग्निरैतु प्रथमो देवतानां सोऽस्यै प्रजां मुञ्चतु मृत्युपाशात् ।
तदयं राजा वरुणोऽनुमन्यतां यथेयं स्त्री पौत्रमघं न रोदात् १
इमामग्निस्त्रायतां गार्हपत्यः प्रजामस्यै नयतु दीर्घमायुः ।
अशून्योपस्था जीवतामस्तु माता पौत्रमानन्दमभि प्रबुध्यतामियम् २ ३३५०
मा ते गृहे निशि घोष उत्था दन्यत्र त्वद्रुदत्यः सं विशन्तु ।
मा त्वं विकेश्युर आवधिष्ठा जीवपत्नी पतिलोके विराज पश्यन्ती प्रजां सुमनस्यमाना ३
अप्रजस्तां पौत्रमृत्युं पाप्मानमुत वाघम् ।
शीर्ष्णः स्रजमिवोन्मुच्य द्विषद्भ्यः प्रतिमुञ्चामि पाशम् ४
देवकृतं ब्राह्मणं कल्पमानं तेन हन्मि योनिषदः पिशाचान् ।
क्रव्यादो मृत्यूनधरान् पातयामि दीर्घमायुस्तव जीवन्तु पुत्राः ५

(११)

॥ अथ श्रीसूक्तम् ॥

(ऋषयः- आनन्द-कर्दम-श्रीद-चिक्लीताः श्रीपुत्राः । देवता-श्रीरग्निश्च । छन्दः-अनुष्टुप् , ४ बृहती, ५-६ त्रिष्टुप् , १५ आस्तारपंक्तिः ।)

हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्णरजतस्रजाम् । चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आ वह १
तां म आ वह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् ।
यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम् २(४५)
अश्वपूर्वां रथमध्यां हस्तिनादप्रमोदिनीम् । श्रियं देवीमुप ह्वये श्रीर्मा देवी जुषताम् ३
कां सोऽस्मितां हिरण्यप्राकारामार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्तां तर्पयन्तीम् ।
पद्मेस्थितां पद्मवर्णां तामिहोप ह्वये श्रियम् ४
चन्द्रां प्रभासां यशसा ज्वलन्तीं श्रियं लोके देवजुष्टामुदाराम् ।
तां पद्मिनीमीं शरणं प्र पद्ये ऽलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वां वृणे ५
आदित्यवर्णे तपसोऽधि जातो वनस्पतिस्तव वृक्षोऽथ बिल्वः
तस्य फलानि तपसा नुदन्तु या अन्तरा याश्च बाह्या अलक्ष्मीः ६
उपैतु मां देवसखः कीर्तिश्च मणिना सह ।
प्रादुर्भूतोऽस्मि राष्ट्रेऽस्मिन् कीर्तिमृद्धिं ददातु मे ७ ३३६०

क्षुत्पिपासामलां ज्येष्ठा—मलक्ष्मीं नाशयाम्यहम् ।
अभूतिमसमृद्धिं च सर्वां निर्णुद मे गृहात् ८ ३३६१
गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम् । ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोप ह्वये श्रियम् ९
मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीमहि । पशूनां रूपमन्नस्य मयि श्रीः श्रयतां यशः १०
कर्दमेन प्रजा भूता मयि संभव कर्दम । श्रियं वासय मे कुले मातरं पद्ममालिनीम् ११
आपः सृजन्तु स्निग्धानि चिक्लीत वस मे गृहे ।
नि च देवीं मातरं श्रियं वासय मे कुले १२(५५)
आर्द्रां पुष्करिणीं पुष्टिं पिङ्गलां पद्ममालिनीम् ।
चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आ वह १३
आर्द्रां यःकरिणीं यष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम् ।
सूर्यां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आ वह १४
तां म आ वह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् ।
यस्यां हिरण्यं प्रभूतं गावो दास्योऽश्वान् विन्देयं पुरुषानहम् १५
यः शुचिः प्रयतो भूत्वा जुहुयादाज्यमन्वहम् ।
सूक्तं पञ्चदशर्चं च श्रीकामः सततं जपेत् १६
पद्मानने पद्मविपद्मपत्रे पद्मप्रिये पद्मदलायताक्षि ।
विश्वप्रिये विष्णुमनोऽनुकूले त्वत्पादपद्मं मयि सं नि धत्स्व १७ ३३७०
पद्मानने पद्मऊरु पद्माक्षि पद्मसंभवे ।
तन्मे भजसि पद्माक्षि येन सौख्यं लभाम्यहम् १८
अश्वदायि गोदायि धनदायि महाधने । धनं मे जुषतां देवि सर्वकामांश्च देहि मे १९
पुत्रपौत्रधनं धान्यं हस्त्यश्वाश्वतरी रथम् । प्रजानां भवसि माता आयुष्मन्तं करोतु मे २०
धनमग्निर्धनं वायु—र्धनं सूर्यो धनं वसुः । धनमिन्द्रो बृहस्पति—र्वरुणो धनमश्विना २१
वैनतेय सोमं पिब सोमं पिबतु वृत्रहा । सोमं धनस्य सोमिनो मह्यं ददातु सोमिनः २२(६५)
न क्रोधो न च मात्सर्यं न लोभो नाशुभा मतिः ।
भवन्ति कृतपुण्यानां भक्त्या श्रीसूक्तजापिनाम् २३
सरसिजनिलये सरोजहस्ते धवलतरांशुकगंधमाल्यशोभे ।
भगवति हरिवल्लभे मनोज्ञे त्रिभुवनभूतिकरि प्र सीद मह्यम् २४

विष्णुपत्नीं क्षमां देवीं माधवीं माधवप्रियाम् ।
लक्ष्मीं प्रियसखीं भूमिं नमाम्यच्युतवल्लभाम् २५
महालक्ष्म्यै च विद्महे विष्णुपत्न्यै च धीमहि । तन्नो लक्ष्मीः प्र चोदयात् २६
आनन्दः कर्दमः श्रीद श्चिक्लीत इति विश्रुताः ।
ऋषयः श्रियः पुत्राश्च श्रीर्देवीर्देवता मताः २७(७०)
ऋणरोगादिदारिद्र्य पापक्षुदपमृत्यवः । भयशोकमनस्तापा नश्यन्तु मम सर्वदा २८
श्रीवर्चस्वमायुष्यमारोग्यमाविधा च्छोभमानं महीयते ।
धनं धान्यं पशुं बहुपुत्रलाभं शतसंवत्सरं दीर्घमायुः २९

॥ इति श्रीसूक्तम् ॥×

(१२)

चक्षुश्च श्रोत्रं च मनश्च वाक् च प्राणापानौ देह इदं शरीरम् ।
द्वौ प्रत्यञ्चावनुलोमौ विसर्गावेतं तं मन्ये दशयन्त्रमुत्सम् १
नखश्च पृष्ठश्च करौ च बाहू जङ्घे चोरू उदरं शिरश्च ।
रोमाणि मांसं रुधिरास्थिमज्जमेतच्छरीरं जलबुद्बुदोपमम् २
भ्रुवौ ललाटे च तथा च कर्णौ हनू कपोलौ छुबुकस्तथा च ।
ओष्ठौ च दन्ताश्च तथैव जिह्वा मे तच्छरीरं मुखरत्नकोशम् ३ ३३८५

× श्रीसूक्तस्यान्ते एते श्लोकाः केषुचित्पुस्तकेषु दृश्यन्ते—

(१)

विश्वेश्वर विरूपाक्ष विश्वरूप सदाशिव । शरणं भव भूतेश करुणाकर शंकर १
हर शंभो महादेव विश्वेशामरवल्लभ । शिव शंकर सर्वात्मन् नीलकण्ठ नमोऽस्तु ते २
मृत्युञ्जयाय रुद्राय नीलकण्ठाय शम्भवे । अमृतेशाय शर्वाय महादेवाय ते नमः ३
एतानि शिवनामानि यः पठेन्नियतः सकृत् । नास्ति मृत्युभयं तस्य पापरोगादि किंचन ४

(२)

यज्ञेशाच्युत गोविन्द माधवानन्त केशव । कृष्ण विष्णो हृषीकेश वासुदेव नमोऽस्तु ते १
कृष्णाय गोपिनाथाय चक्रिणे मुरवैरिणे । अमृतेशाय गोपाय गोविन्दाय नमो नमः २
एतान्यनन्तनामानि मण्डलान्ते (सदा) पठेत् । ३

(३)

वासनाद् वासुदेवोऽसि वासितं ते जगत्त्रयम् । सर्वभूतनिवासोऽसि वासुदेव नमोऽस्तु ते १
दश सप्त च नामानि मण्डलान्तेषु यः पठेत् । स शिवस्य पदं गत्वा शिवलोके महीयते २
एतानि शिवनामानि मण्डलान्ते सकृत्पठेत् ।

(१३)९

सूक्तान्तेऽस्येत्तृणान्यग्ना—विरिणे वोदकेऽपि वा ।
यदुस्तृणैरधीतं तत् तृणानि भवति ध्रुवम् १ ३३८६
वापीकूपतडागानां समुद्रं गच्छ स्वाहा [अग्निं गच्छ स्वाहा] २

(१४)

शंवतीः पारयन्त्येते तं पृच्छन्ति वचो युजा । अभ्यारं तं यमाकेतुं य एवेदमिति ब्रवन् १
भासाकेतुं परिस्रुतं भारतीर्ब्रह्मवर्धनीः । संजानाना मही माता य एवेदमिति ब्रवत् २
इन्द्रस्तं किं विभुं प्रभुं भानुनेयं सरस्वतीम् । येन सूर्यमरोचय—द्येनेमे रोदसी उभे ३(८०)
जुषस्वाग्ने अङ्गिरः काण्वं मेध्यातिथिम् ।
मा त्वा सोमस्य बर्बृहत् सुतस्य मधुमत्तमः ४
त्वमग्ने अङ्गिरः शोचस्व देववीतमः ।
आ शंतम शंतमाभि—रभिष्टिभिः शान्तिः स्वस्तिमकुर्वत ५
शं नः कनिक्रदद् देवः पर्जन्यो अभि वर्षतु ।
शं नो द्यावापृथिवी शं प्रजाभ्यः शं न एधि द्विपदे शं चतुष्पदे ६

(१५)

स्वप्न स्वप्नाधिकरणे सर्वं नि ष्वापया जनम् ।
आसूर्यमन्यान्त्स्वापया—व्युषं जागृयामहम् १
अजगरो नाम सर्पः सर्पिरविषो महान् ।
तस्मिन् हि सर्पः सुधित—स्तेन त्वा स्वापयामसि २ ३३९५
सर्पः सर्पो अजगरः सर्पिरविषो महान् । तस्य सर्पात् सिन्धव—स्तस्य गाधमशीमहि ३
कालिको नाम सर्पो नवनागसहस्रबळः । यमुनह्रदे ह सो जातो यो नारायणवाहनः ४
यदि कालिकदूतस्य यदि काःकालिकाद्भयात् ।
जन्मभूमिमतिक्रान्तो निर्विषो याति कालिकः ५
आ याहीन्द्र पथिभिरीळितेभि—र्यज्ञमिमं नो भागधेयं जुषस्व ।
तृप्तां जहुर्मातुलस्येव योषा भागस्ते पैतृष्वसेयी वपामिव ६
यशस्करं बलवन्तं प्रभुत्वं तमेव राजाधिपतिर्बभूव ।
संकीर्णनागाश्वपतिर्नराणां सुमङ्गल्यं सततं दीर्घमायुः ७(९०)

कर्कोटको नाम सर्पो यो दृष्टीविष उच्यते। तस्य सर्पस्य सर्पत्वं तस्मै सर्प नमोऽस्तु ते ८(९१)
येऽदो रोचने दिवो ये वा सूर्यस्य रश्मिषु। येषामप्सु सदस्कृतं तेभ्यः सर्पेभ्यो नमः ९×
या इषवो यातुधानानां ये वा वनस्पतीनंनु। ये वावटेषु शेरते तेभ्यः सर्पेभ्यो नमः १०
नमो अस्तु सर्पेभ्यो ये के च पृथिवीमनु।
ये अन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्यः सर्पेभ्यो नमः ११
उग्रायुधाः प्रमतिनः प्रवीरा मायाविनो बलिनो मिच्छमानाः।
ये देवानसुराः पराभवन् तांस्त्वं वज्रेण मघवन् निवारय १२ ३४०५

(१६)

यस्य व्रतं पशवो यान्ति सर्वे यस्य व्रतमुपतिष्ठन्त आपः।
यस्य व्रते पुष्टिपतिर्निविष्ट स्तं सरस्वन्तमवसे हुवेम १

(१७)

उपप्लवत मण्डूकि वर्षमा वद तादुरि। मध्ये ह्रदस्य प्लवस्व निगृह्य चतुरः पदः १

(१८)

पावमानीः स्वस्त्ययनीः सुदुघा हि घृतश्चुतः।
ऋषिभिः संभृतो रसो ब्राह्मणेष्वमृतं हितम् १
पावमानीर्दिशन्तु न इमं लोकमथो अमुम्।
कामान्त्समर्धयन्तु नो देवीर्देवैः समाहिताः २
येन देवाः पवित्रेणा त्मानं पुनते सदा। तेन सहस्रधारेण पावमान्यः पुनन्तु माम् ३(१००)
प्राजापत्यं पवित्रं शतोद्यामं हिरण्मयम्। तेन ब्रह्मविदो वयं पूतं ब्रह्म पुनीमहे ४
इन्द्रः पुनीती सह मा पुनातु सोमः स्वस्त्या वरुणः समीच्या।
यमो राजा प्रमृणाभिः पुनातु मा जातवेदा मूर्जयन्त्या पुनातु ५
ऋषयस्तु तपस्तेपुः सर्वे स्वर्गजिगीषवः। तपन्तस्तपसोग्रेण पावमानीर्ऋचोऽब्रुवन् ६
यन्मे गर्भे वसतः पापमुग्रं यज्जायमानस्य च किञ्चिदन्यत्।
जातस्य च यच्चापि च वर्धतो मे तत् पावमानीभिरहं पुनामि ७
मातापित्रोर्यन्न कृतं वचो मे यत् स्थावरं जङ्गममाबभूव।
विश्वस्य तत् प्रहृषितं वचो मे तत् पावमानीभिरहं पुनामि ८ ३४१५

× (९—११) ये वामी। वा० य० १३।६-८।

गोघ्नात् तस्करत्वात् स्त्रीवधाद्यच्च किल्बिषम् ।
पापकं च चरणेभ्य-स्तत् पावमानीभिरहं पुनामि ९(१०६)
ब्रह्मवधात् सुरापानात् स्वर्णस्तेयाद् वृषलिगमनमैथुनसंगमात् ।
गुरोर्दाराधिगमनाच्च तत् पावमानीभिरहं पुनामि १०
बालघ्नान्मातृपितृवधाद्भूमितस्करान् सर्ववर्णगमनमैथुनसंगमात् ।
पापेभ्यश्च प्रतिग्रहात् सद्यः प्रहरति सर्वदुष्कृतं तत् पावमानीभिरहं पुनामि ११
क्रयविक्रयाद्योनिदोषाद् भक्षाद्भोज्यात् प्रतिग्रहात् ।
असंभोजनाच्चापि नृशंसं तत् पावमानीभिरहं पुनामि १२
दुरिष्टं दुरधीतं पापं यच्चाज्ञानतो कृतम् ।
अयाजिताश्चासंयाज्या-स्तत् पावमानीभिरहं पुनामि १३ ३४२०
अमन्त्रमन्नं यत् किञ्चि-द्धूयते च हुताशने ।
संवत्सरकृतं पापं तत् पावमानीभिरहं पुनामि १४
ऋतस्य योनयोऽमृतस्य धाम विश्वा देवेभ्यः पुण्यगन्धाः ।
ता न आपः प्र वहन्तु पापं शुद्धा गच्छामि सुकृतामु लोकं तत् पावमानीभिरहं पुनामि १५
पावमानीः स्वस्त्ययनी-र्याभिर्गच्छति नान्दनम् ।
पुण्यांश्च भक्षान् भक्षय-त्यमृतत्वं च गच्छति १६
पावमानीः पितॄन्देवान् ध्यायेद्यश्च सरस्वतीम् । पितॄंस्तस्योप वर्तेत क्षीरं सर्पिर्मधूदकम् १७
पावमानं परं ब्रह्म शुक्रं ज्योतिः सनातनम् । ऋषींस्तस्योप तिष्ठेत क्षीरं सर्पिर्मधूदकम् १८(११५)
पावमानं परं ब्रह्म ये पठन्ति मनीषिणः । सप्त जन्म भवेद्विप्रो धनाढ्यो वेदपारगः १९
दशोत्तराण्यृचाश्चैव पावमानीः शतानि षट् ।
एतज्जुह्वन् जपेन्मन्त्रं घोरमृत्युभयं हरेत् २०
एतत् पुण्यं पापहरं रोगमृत्युभयापहम् । पठतां शृण्वतां चैव ददाति परमां गतिम् २१

(१९)

इळेव वामनु वस्तां घृतेन यस्याः पदे पुनते देवयन्तः ।
घृतपदी शक्वरी सोमपृष्ठो-प यज्ञमस्थित वैश्वदेवी १
वैश्वदेवी पुनती देव्या गा-द्यस्यामिमा बह्व्यस्तन्वो वीतपृष्ठाः ।
तया मदन्तः सधमादेषु वयं स्याम पतयो रयीणाम् *२ ३४३०

* वा० य० १९,४४ ।

(२०)

यत्र तत् परमं पदं विष्णोर्लोके महीयते ।
देवैः सुकृतकर्मभि—स्तत्र माममृतं कृधी—न्द्रायेन्दो परि स्रव १(१२१)
यत्र तत् परमाप्यं भूतानामधिपतिम् । भावभावी च योगींश्च तत्र माममृतं कृधी० २
यत्र लोकास्तनूत्यजः श्रद्धया तपसा जिताः । तेजश्च यत्र ब्रह्म च तत्र माममृतं० ३
यत्र देवा महात्मानः सेन्द्राश्च समरुद्गणाः । ब्रह्मा च यत्र विष्णुश्च तत्र माममृतं० ४
यत्र गंगा च यमुना च यत्र प्राची सरस्वती । यत्र सोमेश्वरो देव—स्तत्र माममृतं० ५ ३४३५
यत्र तद्विष्णुर्महीयते नराणामधिपतिम् । यत्र शङ्खचक्रगदाधरस्मरणं मुक्तिश्च तत्र० ६

(२१)

सस्रुषीस्तदपसो दिवा नक्तं च सस्रुषीः । वरेण्यक्रतूरहमा देवीरवसे हुवे १

(२२)

सितासिते सरिते यत्र संगथे तत्राप्लुतासो दिवमुत्पतन्ति ।
ये वै तन्वं वि सृजन्ति धीरा—स्ते जनासो अमृतत्वं भजन्ते १

(२३)

अविधवा भव वर्षाणि शतं साग्रं तु सुव्रता ।
तेजस्वी च यशस्वी च धर्मपत्नी पतिव्रता १
जनयद्बहुपुत्राणि मा च दुःखं लभेत् क्वचित् ।
भर्ता ते सोमपा नित्यं भवेद्धर्मपरायणः २(१३०)
अष्टपुत्रा भव त्वं च सुभगा च पतिव्रता । भर्तुश्चैव पितुर्भ्रातु—र्हृदयानन्दिनी सदा ३
इन्द्रस्य तु यथेन्द्राणी श्रीधरस्य यथा श्रिया । शंकरस्य यथा गौरी तद्भर्तुरपि भर्तरि ४
अत्रेर्यथाऽनुसूया स्याद् वसिष्ठस्याप्यरुन्धती ।
कौशिकस्य यथा सती तथा त्वमपि भर्तरि ५
ध्रुवैधि पोष्या मयि मह्यं त्वादाद्बृहस्पतिः । मया पत्या प्रजावती सं जीव शरदः शतम् ६

(२४)

असौ या सेना मरुतः परेषा—मभ्यैति न ओजसा स्पर्धमाना ।
तां गूहत तमसाऽपव्रतेन यथाऽमीषामन्यो अन्यं न जानात् ×१ ३४४५

× वा० य० १७,४७ ।

अन्धा अमित्रा भवता शीर्षाणा अहय इव ।
तेषां वो अग्निदग्धाना मग्निमूळ्हाना मिन्द्रो हन्तु वरंवरम् २(१३६)

(२५)

हविर्भिरेके स्वरितः सचन्ते सुन्वन्त एके सवनेषु सोमान् ।
शचीर्मदन्त उत दक्षिणाभि र्नैज्जिह्मायन्त्यो नरके पताम १

(२६)

॥ अथ रात्रीसूक्तम् ॥

आ रात्रि पार्थिवं रजः पितरः प्रायु धामभिः ।
दिवः सदांसि बृहती वि तिष्ठस आ त्वेषं वर्तते तमः १
ये ते रात्रि नृचक्षसो युक्तासो नवतिर्नव । अशीतिः संत्वष्टा उतो ते सप्त सप्ततीः २
रात्रीं प्र पद्ये जननीं सर्वभूतनिवेशनीम् ।
भद्रां भगवतीं कृष्णां विश्वस्य जगतो निशाम् ३ १४५०
संवेशिनीं संयमिनीं ग्रहनक्षत्रमालिनीम् ।
प्रपन्नोऽहं शिवां रात्रीं भद्रे पारमशीमहि [भद्रे पारमशीमह्यों नमः] ४
स्तोष्यामि प्रयतो देवीं शरण्यां बह्वृचप्रियाम् ।
सहस्रसंमितां दुर्गां जातवेदसे सुनवाम सोमम् ५
शान्त्यर्थं तद् द्विजातीना मृषिभिः सोमपाश्रिताः ।
ऋग्वेदे त्वं समुत्पन्ना ऽरातीयतो नि दहाति वेदः ६
ये त्वां देवि प्र पद्यन्ति ब्राह्मणा हव्यवाहनीम् ।
अविद्या बहुविद्या वा स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा ७
ये अग्निवर्णां शुभां सौम्यां कीर्तयिष्यन्ति ये द्विजाः ।
तांस्तारयति दुर्गाणि नावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः ८(१४५)
दुर्गेषु विषमे घोरे संग्रामे रिपुसंकटे । अग्निचोरनिपातेषु दुष्टग्रहनिवारिणि ९
दुर्गेषु विषमेषु त्वं संग्रामेषु वनेषु च ।
मोहयित्वा प्र पद्यन्ते तेषां मे अभयं कुरु [तेषां मे अभयं कुर्वों नमः] १०
केशिनीं सर्वभूतानां पञ्चमीति च नाम च ।
सा मां समा निशा देवी सर्वतः परि रक्षतु [सर्वतः परि रक्षत्वों नमः] ११ १४५८

तामग्निवर्णां तपसा ज्वलन्तीं वैरोचनीं कर्मफलेषु जुष्टाम् ।
दुर्गां देवीं शरणमहं प्र पद्ये सुतरसि तरसे नमः सुतरसि तरसे नमः १२
दुर्गा दुर्गेषु स्थानेषु शं नो देवीरभिष्टये। य इमं दुर्गास्तवं पुण्यं रात्रौरात्रौ सदा पठेत् १३ ३४६०

[रात्रिः कुशिकः सोभरो रात्रिर्वा भारद्वाजो रात्रिस्तवो गायत्री ।]

रात्रीसूक्तं जपेन्नित्यं तत्कालमुपपद्यते। न योनिं पुनरायाति सर्वपापैः प्रमुच्यते १४
क्षीरेण स्नापिता दुर्गा चन्दनेन विलेपिता ।
बिल्वपत्रकृतापीडा नमो दुर्गे नमो नमः १५
सर्वभूतपिशाचेभ्यः सर्वसर्पसरीसृपैः। देवेभ्यो मानुषेभ्यश्च उभयेभ्योऽभिरक्ष माम् १६
या ऋग्वेदे स्तुता देवी काश्यपेन उदाहृता ।
जातवेदप्रभा गौरी जातवेदसे सुनवाम सोमम् १७
सुरासुरैर्द्विजवरैः पिशाचोरगराक्षसैः। अरातिभय उत्पन्ने अरातीयतो नि दहाति वेदः १८(१५५)
गजद्वारेऽपथे घोरे संग्रामेषु च गौतमी ।
सर्वं रक्षतु दुरितं स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा १९
महाभये समुत्पन्ने स्मरन्ति च जपन्ति च ।
सर्वं तारयते दुर्गा नावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः २०
य इमं दुर्गास्तवं पुण्यं शृण्वन्ति च जपन्ति च ।
त्रिषु लोकेषु विख्यातं त्रिषु लोकेषु पूजितम् २१
अपुत्रो लभते पुत्रान् धनहीनो धनं लभेत् ।
अचक्षुर्लभते चक्षु—र्बद्धो मुच्येत बन्धनात् २२
व्याधितो मुच्यते रोगा—दुरोगी श्रियमाप्नुयात् ।
ददाति कामितं सर्वं कात्यायनि नमोऽस्तु ते २३ ३४७०

(२७)×

सनक-सनन्दन-सनातनादयः। हिरण्यम्। अनुष्टुप्; ५,८-९ त्रिष्टुप्, ७ अतिशक्वरी, ११ जगती।

आयुष्यं वर्चस्यं रायस्पोषमौद्भिदम्। इदं हिरण्यं वर्चस्व—ज्जैत्रायाविशतादिमाम् १
उच्चैर्वाजि पृतनाषाट् सभासाहं धनंजयम्।
सर्वाः समग्रा ऋद्धयो हिरण्येऽस्मिन्त्समाहिताः २
शुनमहं हिरण्यस्य पितुर्नामेव जग्रभ। तेन मां सूर्यत्वच—मकरं पूरुषं प्रियम् ३

× २७,१,७-८=वा० य० ३४,५०—५१।

सम्राजं च विराजं चा॒भिष्टिर्या च मे ध्रुवा ।
लक्ष्मी राष्ट्रस्य या मुखे तया मामिन्द्र सं सृज ४
अग्नेः प्रजातं परि यद्धिरण्य॒ममृतं दध्रे अधि मर्त्येषु ।
य एनद्वेद स इदेनमर्हति जरामृत्युर्भवति यो बिभर्ति ५(१६५)
यद्वेद राजा वरुणो यदु देवी सरस्वती । इन्द्रो यद्वृत्रहा वेद तन्मे वर्चस आयुषे ६
न तद्रक्षांसि न पिशाचास्तरन्ति देवानामोजः प्रथमजं ह्ये१तत् ।
यो बिभर्ति दाक्षायणा हिरण्यं स देवेषु कृणुते दीर्घमायुः स मनुष्येषु कृणुते दीर्घमायुः ७
यदाबध्नन् दाक्षायणा हिरण्यं शतानीकाय सुमनस्यमानाः ।
तन्न आ बध्नामि शतशारदाया॒युष्मान् जरदष्टिर्यथाऽसत् ८
घृतादुल्लुप्तं मधुमत्सुवर्णं धनंजयं धरुणं धारयिष्णु ।
ऋणक् सपत्नादधरांश्च कृण्वदा॒रोह मां महते सौभगाय ९
प्रियं मा कुरु देवेषु प्रियं राजसु मा कुरु ।
प्रियं विश्वेषु गोप्तेषु मयि धेहि रुचा रुचम् १० ३४८०
अग्निर्येन विराजति सूर्यो येन विराजति ।
विराज्येन विराजति तेनास्मान् ब्रह्मणस्पते विराज समिधं कुरु ११

(२८)

(विहव्य आंगिरसः । इन्द्रः । जगती)

अर्वाञ्चमिन्द्रममुतो हवामहे यो गोजिद्धनजिदश्वजिद्यः ।
इमं नो हव्यं विहवे जुषस्वा॒स्म कुल्मो हरिवो मेदिनं त्वा १

(२९)

यां कल्पयन्ति नोऽरयः क्रूरां कृत्यां वधूमिव ।
तां ब्रह्मणाऽप निर्णुद्मः प्रत्यक्कर्तारमृच्छतु १
शीर्षण्वतीं कर्णवतीं विश्वरूपां भयंकरीम् ।
यः प्राहिणोदिहाद्य त्वां वि तं त्वं योजयासुभिः २
येन दिष्टेह वहसि प्रतिकूलमघायिनि । तमेवेतो निवर्तस्व माऽस्मान् मृच्छो अनागसः ३(१७५)
अभिवर्तस्व कर्तारं मिरस्तास्माभिरोजसा ।
आयुरस्य निकृन्तस्व प्रजां च पुरुषादिनि ४ ३४८६

यस्त्वा कृत्ये चकारेह तं त्वं गच्छ पुनर्नवे ।
अरातीः कृत्ये नाशय सर्वाश्च यातुधान्यः ५
क्षिप्रं कृत्ये निवर्तस्व कर्तुरेव गृहान् प्रति ।
पशूंश्चैवास्य नाशय वीरांश्चास्य नि बर्हय ६
यस्त्वा कृत्ये प्रजिघाय विद्वाँ अविदुषो गृहान् ।
तस्यैवेतः परेत्याशु तनुं कृधि परुष्परुः ७
प्रतीची त्वाऽपसेधतु अर्क रोचिष्णवमित्रहा ।
अग्निश्च कृत्ये रक्षोहा रिप्रहा चाज एकपात् ८ ३४९०
यथा त्वाऽङ्गिरसः पूर्वे भृगवश्चाप सेधिरे ।
अत्रयश्च वसिष्ठाश्च तथैव त्वाऽप सेधिम ९
यस्ते परूंषि सन्दधौ रथस्येव विभुर्धिया ।
तं गच्छ तत्र तेऽयन मज्ञातस्ते अयं जनः १०
यो नः कश्चिद्रणस्थो वा कश्चिद्वान्योऽभि हिंसति ।
तस्य त्वं द्रोरिवेद्धोऽग्नि स्तनूमृच्छस्व हेळिता ११
भवाशर्वा देवहेळि मस्यतं पापकृत्वने ।
हरस्वती त्वं च कृत्ये मोच्छिषस्तस्य किंचन १२
यो नः कश्चिद्दुहाराति र्मनसा प्रतिभूषति ।
दूरस्थो वाऽन्तिकस्थो वा तस्य हृद्यमसृक् पिब १३(१८५)
येनासि कृत्ये प्रहिता दूढ्येनास्माज्जिघांसया ।
तस्य व्यानच्चाप्यानच्च हिनस्तु हरसाऽशनिः १४
ये नः शिवासः पन्थानः परायन्ति परावतम् ।
तैर्देवि राज्याः कृत्या नो गमयस्वानुकृत्तये १५
यदि वैषि द्विपद्यस्मान् यदि वैषि चतुष्पदी ।
निरस्तेतो व्रजास्माभिः कर्तुरष्टापदी गृहान् १६
यो नः शपादशतो यश्च नः शपतः शपात् ।
वृक्षमिव विद्युदाशु तमामूलादनु शोषय १७
यं द्विष्मो यश्च नो द्वेष्टय घायुर्यश्च नः शपात् ।
शुने पिष्टमिव क्षामं तं प्रत्यस्य स्वमृत्यवे १८ ३५००

यश्च सापत्नः शपथो यश्च यामी शपाति नः ।
ब्रह्मा च यत् क्रुद्धः शंपात् सर्वं तत् कृध्यधस्पदम् १९(१९१)
सबन्धुश्चाप्यबन्धुश्च यो अस्माँ अभि दासति ।
तस्य त्वं भिन्ध्यधिष्ठाय पदा विस्फूर्य तच्छिरः २०
अभि प्रेहि सहस्राक्षं युक्त्वा तु शपथं रथे ।
शत्रूनान्विच्छती कृत्ये वृकीवाविमतो गृहान् २१
परि णो वृङ्धि शपथान् दहन्नग्निरिव ह्रदम् ।
शत्रूनेवाभितो जहि दिव्या वृक्षमिवाशनिः २२
शत्रून् मे प्रोथ शपथात् कृत्याश्च सुहृदोऽसुहृत् ।
जिह्वाः श्लक्ष्णाश्च दुर्हृदः समिद्धं जातवेदसम् २३ ३५०५
असपत्नं पुरस्तान्नः शिवं दक्षिणतः कृधि ।
अभयं सततं पश्चात् भद्रमुत्तरतो गृहे २४
परेहि कृत्ये मा तिष्ठ विद्धस्येव पदं नय ।
मृगस्य हि मृगारिप्रो न त्वा नीकर्तुमर्हति २५
अघ्न्यास्येव घोररूपे विषुरूपेऽविनाशिनि ।
जृम्भिता प्रतिगृभ्णीष्व स्वयमादाय चाद्भुतम् २६
त्वमिन्द्रो यमो वरुण—स्त्वमापोऽग्निरथानिलः ।
त्वं ब्रह्मा चैव रुद्रश्च त्वष्टा चैव प्रजापतिः २७
आवर्तध्वं निवर्तध्व—मृतवः परिवत्सराः ।
अहोरात्राश्चाब्दाश्च त्वं दिशः प्रदिशश्च मे २८(२००)
त्वं यमं वरुणं सोमं त्वमापोऽग्निमथानिलम् ।
अत्राहृत्य पशूंश्चैव—मुत्पादयासि चाद्भुतम् २९
ये मे दमे दारुगर्भे शयानं धिया सहितं पुरुषं निजघ्नुः ।
कुम्भीपाके नरके ग्रीवबद्धं हता एवं पुरुषासो यमस्य ३०
अभ्यक्ताक्ता स्वलङ्कृता सर्वं नो दुरितं दह ।
जानीथाश्चैवं कृत्यानां कर्तॄन् नूनं पापचेतसः ३१
यथा हन्ति पुरासीनं तथैवेष्वा सुकृत्भरः ।
तथा त्वया युजा वयं निकृण्म स्थास्नु जङ्गमम् ३२ ३५१४

उत्तिष्ठैव परेहीतो ऽज्ञाते किमिहेच्छसि।
ग्रीवास्ते कृत्ये पादौ चाऽपि कर्त्स्यामि निर्द्रव ॥ ३३ ३५१५

स्नायुसाः सन्ति नोऽसयो विद्म चैव परूंषि ते।
तैस्ते निकृंतस्तान्युग्रे यदि नो जीवयस्वरीन् ॥ ३४

मास्योच्छिषो द्विपदं मोत किञ्चिच्चतुष्पदम्।
मा ज्ञातीननुजान् पूर्वान् मा वेशि प्रतिवेशिनो ॥ ३५

शत्रूयता प्रहितासि दूत्येनाभि यथायतः।
ततस्तथा त्वा नुदतु योऽयमन्तर्मयि श्रितः ॥ ३६

एवं त्वं निकृतास्माभिर्ब्रह्मणा देवि सर्वशः।
यथेतमाश्रिता गत्वा पापधीनिव नो जहि ॥ ३७

यथा विद्युद्धतो वृक्ष आमूलादनु शुष्यति।
एवं स प्रतिशुष्यतु यो मे पापं चिकीर्षति ॥ ३८(२१०)

यथा प्रतिशुको भूत्वा तमेव प्रतिधावति।
पापं तमेव धावतु यो मे पापं चिकीर्षति ॥ ३९

यो नः स्वो अरणो यश्च निष्टयो जिघांसति।
देवास्तं सर्वे धूर्वन्तु ब्रह्म वर्म ममान्तरम् ॥ +४०

उरवां मन्दन्तु स्तोमाः कृणुष्व राधो अद्रिवः। अव ब्रह्मद्विषो जहि ॥ ४१

कुबेर ते मुखं रौद्रं नन्दिन्नानन्दमावह।
ज्वरमृत्युभयं घोरं विश नाशय मे ज्वरम् ॥ ४२

यो मे करोति प्रद्वारे यो गृहे यो निवेशने।
यो मे केशनखे कुर्याद्दुज्जने दन्तधावने ॥ ४३ ३५२५

प्रतिसर प्रतिधाव कुमारीव पितुर्गृहान्। मूर्धानमेषां स्फोटय पदमेषां कुले क्वधि ॥ ४४

ये नो रयिं दुश्चरितासो अग्ने जह्वुर्मतासो अनृतं वदन्तः।
तेषां वपूंष्यर्चिषा जातवेदः शुष्कं न वृक्षमभि सं दहस्व ॥ ४५

कृष्णवर्णे महद्रूपे बृहत्कर्णे महद्भये। देवि देवि महादेवि मम शत्रून् विनाशय ॥ ४६

खट् फट् जहि महाकृत्ये विधूमाग्निसमप्रभे।
जहि शत्रूंस्त्रिशूलेन कृध्यस्व पिब शोणितम् ॥ ४७(२११)

+ (१९।४०)= ऋ० ६,७५,१९; अथर्व० १,१९,३ (पाठभेदेन)

३३

ये द्रुह्युर्ऋजवे मह्यमग्ने कदाधियो दुर्मदा अश्मनासः।
आवृश्च्यैतान् शोचिषा विध्य तन्तून् वैवस्वतस्य सदनं नयस्व ४८(२२०)

(३०)

हिमस्य त्वा जरायुणा शाले परि व्ययामसि।
[उत हृदो हि नो धियो ऽग्निर्ददातु भेषजम्]× १
शीतहृदो हि नो धियो ऽग्निर्ददातु भेषजम्।
अन्तिकामग्निमजनय दूर्वादुः शशहागमत् २
अजातपुत्रपक्षायां हृदयं मम दूयते। विपुलं वनं बह्वाकाशं चरं जातवेदः कामाय ३
मां च रक्ष पुत्रांश्च शरणमभूत् तव। पिङ्गाक्ष लोहितग्रीव कृष्णवर्ण नमोऽस्तु ते ४
अस्मान्निबर्हैरस्येनां सागरस्योर्मयो यथा। इन्द्रः क्षत्रं ददातु वरुणमभि षिञ्चतु ५ ३५३५
शत्रवो निर्धनं यान्तु जय त्वं ब्रह्मतेजसा ६
कपिलजटीं सर्वभक्षं चाग्निं प्रत्यक्षदैवतम् ७
वरुणं च वशाम्यग्ने मम पुत्रांश्च रक्षतु [मम पुत्रांश्च रक्षत्वों नमः।] ८
साग्ने वर्षशतं जीव पिब खाद च मोद च ९
दुःखितांश्च द्विजांश्चैव प्रजा च पशु पालय १०(२३०)
यावदादित्यस्तपति यावद्भ्राजति चन्द्रमाः।
यावद्वायुः प्लवायति तावज्जीव जया जय ११
येन केन प्रकारेण को हि नाम नु जीवति।
परेषामुपकारार्थं यज्जीवति स जीवति।
एतां वैश्वानरीं सर्वदेवान्नमोऽस्तु ते १२
न चौरभयं न च सर्पभयं न च व्याघ्रभयं न च मृत्युभयम्।
यस्यापमृत्युर्न च मृत्युः सर्वं लभते सर्वं जयते १३

(३१)*

अथ मेधा-सूक्तम्।

मेधां मह्यमङ्गिरसो मेधां सप्त ऋषयो ददुः। मेधामिन्द्रश्चाग्निश्च मेधां धाता ददातु मे १
मेधां मे वरुणो राजा मेधां देवी सरस्वती। मेधां मे अश्विनौ देवावा धत्तां पुष्करस्रजा २ ३५४५

× (३०।१) नैष मन्त्रस्य भागः, अपि तु पाठभेदः।
* (३१।७-८)= वा० य० ३२।१३-१४; ९ (वा० य० ३२।१५ पाठभेदेन)

या मेधा अप्सरस्सु गन्धर्वेषु च यन्मनः। दैवी या मानुषी मेधा सा मामा विशतादिमाम् ३ ३५४६
यन्मे नोक्तं तद्रमतां शकेयं यदनुब्रुवे।
निशामतं नि शामहै मयि व्रतं सह व्रतेषु भूयासं ब्रह्मणा सं गमेमहि ४
शरीरं मे विचक्षणं वाङ्मे मधुमद् दुहाम्।
अवृद्धमहमसौ सूर्यो ब्रह्मणानी स्थः श्रुतं मे मा प्र हासीः ५
मेधां देवीं मनसा रेजमानां गन्धर्वजुष्टां प्रति नो जुषस्व।
मह्यं मेधां वद मह्यं श्रियं वद मेधावी भूयासमजराजरिष्णु ६
सदसस्पतिमद्भुतं प्रियमिन्द्रस्य काम्यम्। सनिं मेधामयासिषम् ७(२४०)
यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते। तया मामद्यमेधया ऽग्ने मेधाविनं कुरु ८
मेधाव्य१हं सुमनाः सुप्रतीकः श्रद्धामनाः सत्यमतिः सुशेवः।
महायशा धारयिष्णुः प्रवक्ता भूयासमस्मै शरयां प्रयोगे ९
नाशयित्री पलाशस्या—रुर्वसौ पथिकामसु। अथो ततस्य यक्ष्माण—मपापां रोगनाशिनी १०
ब्रह्मवृक्ष पलाश त्वं श्रद्धां मेधां च देहि मे। वृक्षाधिप नमस्तेऽस्तु अत्र त्वं संनिधौ भव ११

॥ इति मेधा-सूक्तम् ॥

(३२)

ऊर्ध्वरेखा प्र दहन्ते विष्णुरिमामिन्द्राग्नी अमृतं जुषेथाम्।
मह्यं दधाना उप दीर्घमायुरस्मे धत्तं पुरुभुजा पुरन्धिः १ ३५५५

(३३)×

येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत् परि गृहीतममृतेन सर्वम्।
येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु १
येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः।
यदपूर्वं यक्षमन्तःप्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु २
यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति। दूरंगमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे० ३
यत् प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु।
यस्मान्न ऋते किञ्चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ४
यस्मिन्नृचः साम यजूंषि यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः।
यस्मिंश्चित्तं सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ५(२५०)

× [३३।१—६] (वा० य० ३४।१—६)। ८ (वा० य० ३१।१८)

सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान् नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिन इव ।
हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं यविष्ठं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ६ ३५६१

ये पञ्च पञ्चाशतः शतं च सहस्रं च नियुतं चार्बुदं च ।
ते यज्ञचित्तेष्टकाटं शरीरं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ७

वेदाहमेतं पुरुषं महान्त—मादित्यवर्णं तमसः परस्तात् ।
तस्य योनिं परिपश्यन्ति धीरा—स्तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ८

येन कर्माणि प्रचरन्ति धीरा विप्रा वाचा मनसा कर्मणा वा ।
यत् स्वां दिशमनु संयन्ति प्राणिन—स्तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ९

ये मे मनो हृदयं ये च देवा ये अन्तरिक्षं बहुधा कल्पयन्ति ।
ये श्रोत्रं च चक्षुषी संचरन्ति तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु १०(२५५)

यस्येदं धीराः पुनन्ति कवयो ब्रह्माणमेतं व्यावृणत इन्दुम् ।
स्थावरं जङ्गमं च द्यौराकाशं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ११

येन द्यौरुग्रा पृथिवी चान्तरिक्षं येन पर्वताः प्रदिशो दिशश्च ।
येनेदं सर्वं जगद्व्याप्तं प्रजानत् तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु १२

अव्यक्तं चाप्रमेयं च व्यक्ताव्यक्तपरं शिवम् । सूक्ष्मात् सूक्ष्मतरं ज्ञेयं तन्मे मनः० १३

कैलासशिखरे रम्ये शंकरस्य गृहालयम् । देवतास्तत् प्रमोदन्ते तन्मे मनः० १४

आदित्यवर्णं तपसा ज्वलन्तं यत् पश्यसि गुहासु जायमानः ।
शिवरूपं शिवमुदितं शिवालयं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु १५ ३५७०

येनेदं सर्वं जगतो बभूव यद्देवा अपि महतो जातवेदाः ।
यदेवाग्र्यं तपसो ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु १६

गोभिर्जुष्टो धनेन ह्यायुषा च बलेन च । प्रजया पशुभिः पुष्कराक्षं तन्मे मनः० १७

योऽसौ सर्वेषु वेदेषु पठ्यतेऽनदु ईश्वरः । अकार्यो निर्व्रणो ह्यात्मा तन्मे मनः० १८

यो वेदादिषु गायत्री सर्वव्यापी महेश्वरः । तदुक्तं च यदा ज्ञेयं तन्मे मनः० १९

प्रयतप्राणं ओंकारं प्रणवं च महेश्वरम् । यः सर्वं यस्य चित् सर्वं तन्मे मनः० २० (२५५)

यो वै वेद महादेवं प्रणवं पुरुषोत्तमम् । ओंकारं परमात्मानं तन्मे मनः० २१

ओंकारं चतुर्भुजं लोकनाथं नारायणम् । सर्वस्थितं सर्वगतं सर्वव्याप्तं तन्मे मनः० २२

तत् परात् परतो ब्रह्मा तत् परात् परतो हरिः । परात् परतरं ज्ञानं तन्मे मनः० २३

य इदं शिवसंकल्पं सदाधीयन्ति ब्राह्मणाः । ते परं मोक्षमाप्स्यन्ति तन्मे मनः० २४
अस्ति नास्ति शयित्वा सर्वमिदं नास्ति पुनस्तथैव दृष्टं ध्रुवम् ।
अस्ति नास्ति हितं मध्यमं पदं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु २५ ३५८०
अस्ति नास्ति विपरीतौ प्रवादौ ऽस्ति नास्ति गुह्यं वा इदं सर्वम् ।
अस्ति नास्ति परात् परो यत् परं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु २६

(३४)

त्वष्टारूपकर्ता (नेजमेषः) । विष्णुः । अनुष्टुप् ।

नेजमेष परा पत सुपुत्रः पुनरा पत । अस्यै मे पुत्रकामायै गर्भमा धेहि यः पुमान् १
यथेयं पृथिवी मह्यु त्ताना गर्भमादधे । एवं तं गर्भमा धेहि दशमे मासि सूतवे २
विष्णोः श्रेष्ठेन रूपेणा स्यां नार्यां गवीन्याम् ।
पुमांसं पुत्राना धेहि दशमे मासि सूतवे ३

(३५)

वत्स आग्नेयः । अग्निः । गायत्री ।

अनीकवन्तमूतयेऽग्निं गीर्भिर्हवामहे । स नः पर्षदति द्विषः १(२७५)

(३६)

संज्ञानमुशनावदत् संज्ञानं वरुणोऽवदत् । संज्ञानमिन्द्रश्चाग्निश्च संज्ञानं सविताऽवदत् १
संज्ञानं वः स्वेभ्यः संज्ञानमरणेभ्यः । संज्ञानमश्विना युव मिहास्मासु नि यच्छताम् २
यत् कक्षीवां संवननं पुत्रो अङ्गिरसां भवेत् ।
तेन नोऽद्य विश्वे देवाः सं प्रियां समजीजनन् ३
सं वो मनांसि जानतां समाकूतिर्मनामसि ।
असौ यो विमना मनः सं समावर्तयामसि ४
नैर्हस्त्यं सेनादरणं परि वर्त्मेतु यद्धविः । तेनामित्राणां बाहून् हविषा शोषयामसि ५ ३५९०
परिवर्त्मान्येषामिन्द्रः पूषा च सस्रतुः ।
तेषां वो अग्निदग्धानामग्निमूळ्हाना मिन्द्रो हन्तु वरंवरम् ६
ऐषु नह्यवृषाजिनं हरिणस्य भियं यथा । परां अमित्रां ऐष त्व र्वाची गौरुपाजतु ७
आध्वराणां पते वसो होतर्वरेण्यक्रतो । तुभ्यं गायत्रमृच्यते ८

गोकामो अन्नकामः प्रजाकाम उत कश्यपः ।
भूतं भविष्यत् प्रस्तौति सह ब्रह्मैकमक्षरं बहुब्रह्मैकमक्षरम् ९
यदक्षरं भूतकृतं विश्वे देवा उपासते । महर्षिमस्य गोप्तारं जमदग्निरकुर्वतम् १० ३५९५
जमदग्निराप्यायते छन्दोभिश्चतुरुत्तरैः । राज्ञः सोमस्य भक्षेण ब्रह्मणा वीर्यावता ११
शिवा नः प्रदिशो दिशः सत्या नः प्रदिशो दिशः ।
अजो यत् तेजो ददृशे शुक्रं ज्योतिः परो गुहा १२
यदृषिः कश्यपः स्तौति सत्यं ब्रह्म चराचरं ध्रुवं ब्रह्म चराचरम् ।
त्र्यायुषं जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषमगस्त्यस्य त्र्यायुषम् १३
यद्देवानां त्र्यायुषं तन्मे अस्तु त्र्यायुषं सर्वमस्तु शतायुषं बलायुषम् । १४
तच्छंयोरा वृणीमहे गातुं यज्ञाय गातुं यज्ञपतये ।
दैवी स्वस्तिरस्तु नः स्वस्तिर्मानुषेभ्यः ।
ऊर्ध्वं जिगातु भेषजं शं नो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे १५(२९०)

(३७)

[१-७ निविदुपनिषदौ ब्रह्मवादिन्यौ । अश्विनौ, ७ इन्द्रावरुणौ । त्रिष्टुप्, ६ द्विपदा ।]

प्र धारयन्तु मधुनो घृतस्य यदविन्दथुः सुरीं उस्रियायाः ।
मित्रावरुणौ भुवनस्य कारू तावश्विना जुषतां समीके १
आ वां रथं शतयावानमाशुं प्रातर्यावाणं सुषदं हिरण्ययम् ।
अतिष्ठद्यत्र दुहिता विवस्वतस्तं मामवाश्रमवसे करामहे २
आ वामश्वासो रथिरा विपश्चितो वाग्धृषजः सुयुजो घृतश्चुतः ।
येभिर्याथोप सूर्यां वरेयं तेभिर्नो दस्रावक्तं समस्तु ३
यद्वा रेतो अश्विना पोषयित्नु यद्रासभो वध्रिमत्यै सुदानू ।
यस्माज्जज्ञे देवकामः सुदक्षस्तदस्यै दत्तं भिषजावभिद्यु ४
यन्नासत्या भेषजं चित्रभानू येनावथुस्तोककामां च घोषाम् ।
तदस्यै दत्तं त्रिषु पुंसुवर्ध्यै येनाविन्दत्तनयं सा सुहस्त्यम् ५ ३६०५
वषड् वां दस्रावस्मिन् सुतो नासत्या होता कृणोतु वेधाः ६
इन्द्रावरुणा सौमनसमदृप्तं रायस्पोषं यजमानेषु धत्तम् ।
प्रजां पुष्टिं भूतिमस्मासु धत्तं दीर्घायुत्वाय प्र तिरतं न आयुः ७

३६।१३-१४= (अथ० ५।२८।७; वा० य० ३।६२); १५= (तै० सं० २।६।१०।२)

(३८)

(अथर्व० २०।४९।१-७)

१—७ खिलम् । ४—५ नोधाः; ६-७ मेध्यातिथिः । गायत्री; ४-५ प्रगाथः=(विषमा बृहती+
समा सतो बृहती)।

यच्छक्रा वाचमारुहन्नन्तरिक्षं सिषासथः । सं देवा अमदन् वृषा १
शक्रो वाचमधृष्टायोरुवाचो अधृष्णुहि । मंहिष्ठ आ मंदर्दिवि २
शक्रो वाचमधृष्णुहि धामधर्मन्विराजति । विमदन् बर्हिरासरन् ३(३००)
तं वो दस्ममृतीषहं वसोर्मन्दानमन्धसः ।
अभि वत्सं न स्वसरेषु धेनव इन्द्रं गीर्भिर्नवामहे ४
द्युक्षं सुदानुं तविषीभिरावृतं गिरिं न पुरुभोजसम् ।
क्षुमन्तं वाजं शतिनं सहस्रिणं मक्षू गोमन्तमीमहे ५
तत्त्वा यामि सुवीर्यं तद्ब्रह्म पूर्वचित्तये
येना यतिभ्यो भृगवे धने हिते येन प्रस्कण्वमाविथ ६
येना समुद्रमसृजो महीरपस्तदिन्द्र वृष्णि ते शवः ।
सद्यः सो अस्य महिमा न संनशे यं क्षोणीरनुचक्रदे ७

॥ इति परिशिष्टानि ॥

१३७ अथ कुन्तापसूक्तानि।

(खिलानि।)

॥ १ ॥ (अथर्व० २०।१२७।१-१४)

इदं जना उप श्रुत नराशंस स्तविष्यते ।
षष्टिं सहस्रा नवतिं च कौरम आ रुशमेषु दद्महे १ ३६१५
उष्ट्रा यस्य प्रवाहणो वधूमन्तो द्विर्दश ।
वर्ष्मा रथस्य नि जिहीडते दिव ईषमाणा उपस्पृशः २
एष इषाय मामहे शतं निष्कान् दश स्रजः । त्रीणि शतान्यर्वतां सहस्रा दश गोनाम् ३
वच्यस्व रेभ वच्यस्व वृक्षे न पक्वे शकुनः । नष्टे जिह्वा चर्चरीति क्षुरो न भुरिजोरिव ४
प्र रेभासो मनीषा वृषा गाव इवेरते । अमोतपुत्रका एषाममोत गा इवासते ५
प्र रेभ धीं भरस्व गोविदं वसुविदम् । देवत्रेमां वाचं श्रीणीहीषुर्नावीरस्तारम् ६(३१०)

राज्ञो विश्वजनीनस्य यो देवोऽमर्त्याँ अति । वैश्वानरस्य सुष्टुतिमा सुनोता परिक्षितः ७
परिच्छिन्नः क्षेममकरोत् तम आसनमाचरन् ।
कुलायन् कृण्वन् कौरव्यः पतिर्वदति जायया ८
कतरत् त आ हराणि दधि मन्थां परि श्रुतम् ।
जायाः पतिं वि पृच्छति राष्ट्रे राज्ञः परिक्षितः ९
अभीवस्वः प्र जिहीते यवः पक्वः पथो बिलम् ।
जनः स भद्रमेधति राष्ट्रे राज्ञः परिक्षितः १०
इन्द्रः कारुमबूबुधदुत्तिष्ठ वि चरा जनम् । ममेदुग्रस्य चर्कृधि सर्व इत् ते पृणादरिः ११ ३६२५
इह गावः प्रजायध्वमिहाश्वा इह पूरुषाः । इहो सहस्रदक्षिणोऽपि पूषा नि षीदति १२
नेमा इन्द्र गावो रिषन् मो आसां गोप रीरिषत् ।
मासाममित्रयुर्जन इन्द्र मा स्तेन ईशत १३
उप नो न रमसि सूक्तेन वचसा वयं भद्रेण वचसा वयम् ।
वनादधिध्वनो गिरो न रिष्येम कदा चन १४

॥ २ ॥ (अथर्व० २०।१२८।१-१६)

यः सभेयो विदथ्यः सुत्वा यज्वाथ पूरुषः ।
सूर्यं चामू रिशादसस्तद् देवाः प्रागकल्पयन् १
यो जाम्या अप्रथयस्तद् यत् सखायं दुधूर्षति । ज्येष्ठो यदप्रचेतास्तदाहुरधरागिति २(३२०)
यद् भद्रस्य पुरुषस्य पुत्रो भवति दाधृषिः ।
तद् विप्रो अब्रवीदु तद् गन्धर्वः काम्यं वचः ३
यश्च पणि रघुजिष्ठ्यो यश्च देवाँ अदाशुरिः । धीराणां शश्वतामहं तदपागिति शुश्रुम ४
ये च देवा अयजन्ताथो ये च परादुदिः ।
सूर्यो दिवमिव गत्वाय मघवा नो वि रप्शते ५
योनाक्ताक्षो अनभ्यक्तो अमणिवो अहिरण्यवः ।
अब्रह्मा ब्रह्मणः पुत्रस्तोता कल्पेषु संमिता ६
य आक्ताक्षः सुभ्यक्तः सुमणिः सुहिरण्यवः ।
सुब्रह्मा ब्रह्मणः पुत्रस्तोता कल्पेषु संमिता ७ ३६३५
अप्रपाणा च वेशन्ता रेवाँ अप्रतिदिश्ययः ।
अयभ्या कन्या कल्याणी तोता कल्पेषु संमिता ८

सुमपाणा च वेशन्ता रेवान्त्सुप्रतिदिश्ययः ।
सुयभ्या कन्या कल्याणी तोता कल्पेषु संमिता ९
परिवृक्ता च महिषी स्वस्त्या च युधिंगमः । अनाशुरश्चायामी तोता कल्पेषु संमिता १०
वावाता च महिषी स्वस्त्या च युधिंगमः । श्वाशुरश्चायामी तोता कल्पेषु संमिता ११
यदिन्द्रादो दाशराज्ञे मानुषं वि गाहथाः ।
विरूपः सर्वस्मा आसीत् सह यक्षाय कल्पते १२(३३०)
त्वं वृषाक्षुं मघवन्नम्रं मर्याकरो रविः । त्वं रौहिणं व्यास्यो वि वृत्रस्याभिनच्छिरः १३
यः पर्वतान् व्यदधाद् यो अपो व्यगाहथाः ।
इन्द्रो यो वृत्रहान्महं तस्मादिन्द्र नमोऽस्तु ते १४
पृष्ठं धावन्तं हर्योरौच्चैःश्रवसमब्रुवन् । स्वस्त्यश्व जैत्रायेन्द्रमा वह सुस्रजम् १५
ये त्वा श्वेता अजैश्रवसो हार्यो युञ्जन्ति दक्षिणम् ।
पूर्वा नमस्य देवानां बिभ्रदिन्द्र महीयते १६

॥ ३ ॥ (अथर्व० २०।१२९।१-२०)

एता अश्वा आ प्लवन्ते १ प्रतीपं प्रातिं सुत्वनम् २ तासामेका हरिक्निका ३
हरिक्निके किमिच्छसि ४ साधुं पुत्रं हिरण्ययम् ५ क्वाहतं परास्यः ६ ३६५०
यत्रामूस्तिस्रः शिंशपाः ७ परि त्रयः ८ पृदाकवः ९ शृङ्गं धमन्त आसते १०
अयन्महा ते अर्वाहः ११ स इच्छकं सघाघते १२ सघाघते गोमीद्या गोगतीरिति १३
पुमां कुस्ते निमिच्छसि १४ पल्प बद्ध वयो इति १५ बद्ध वो अघा इति १६
अजागार केविका १७ अश्वस्य वारो गोशपद्यके १८ श्येनीपती सा १९
अनामयोपजिह्विका २०

॥ ४ ॥ (अथर्व० २०।१३०।१-२०)

को अर्य बहुलिमा इषूनि १ को असिद्याः पयः २ को अर्जुन्याः पयः ३
कः कार्ष्ण्याः पयः ४ एतं पृच्छ कुहं पृच्छ ५ कुहाकं पक्वकं पृच्छ ६(३६०)
यवानो यतिस्वभिः कुभिः ७ अकुप्यन्तः कुपायकुः ८ आमणको मणत्सकः ९
देव त्वप्रतिसूर्य १० एनश्चिपङ्क्तिका हविः ११ प्रदुद्रुदो मघाप्रति १२
शृङ्ग उत्पन्न १३ मा त्वाऽभि सखा नो विदन् १४ वशायाः पुत्रमा यन्ति १५
इरावेदुमयं दत १६ अथो इयन्नियन्निति १७ अथो इयन्निति १८
अथो श्वा अस्थिरो भवन् १९ उयं यकांशलोकका २० ३६८४

❀

॥५॥ (अथर्व० २०।१३१।१-२०)

आमिनोनिति भद्यते १ तस्य अनु निर्भञ्जनम् २ वरुणो याति वस्वभिः ३
शतं वा भारती शवः ४
शतमाश्वा हिरण्ययाः । शतं रथ्या हिरण्ययाः ।
शतं कुथा हिरण्ययाः । शतं निष्का हिरण्ययाः ५
अहल कुश वर्त्तक ६ शफेन इव ओहते ७ आय वनेनती जनी ८
वनिष्ठा नाव गृह्यन्ति ९ इदं मह्यं मदूरिति १० ते वृक्षाः सह तिष्ठति ११(३८५)
पाक बलिः १२ शक बलिः १३ अश्वत्थ खदिरो धवः १४ अरदुपरम १५
शयो हत इव १६ व्याप पूरुषः १७ अदूहमित्यां पूषकम् १८
अत्यर्धर्च परस्वतः १९ दौव हस्तिनो दृती २०

॥६॥ (अथर्व० २०।१३२।१-१६)

आदलाबुकमेककम् १ अलाबुकं निखातकम् २ कर्करिको निखातकः ३
तद् वात उन्मथायति ४ कुलायं कृणवादिति ५ उग्रं वनिषदाततम् ६ ३७१०
न वनिषदनाततम् ७ क एषां कर्करी लिखत ८ क एषां दुन्दुभिं हनत् ९
यदीयं हनत् कथं हनत् १० देवी हनत् कुहनत् ११ पर्यागारं पुनःपुनः १२
त्रीण्युष्ट्रस्य नामानि १३ हिरण्यं इत्येके अब्रवीत् १४ द्वौ वा ये शिशवः १५
नीलशिखण्डवाहनः १६(४१०)

॥७॥ (अथर्व० २०।१३३।१-६)

विततौ किरणौ द्वौ तावा पिनष्टि पूरुषः । न वै कुमारि तत् तथा यथा कुमारि मन्यसे १
मातुष्टे किरणौ द्वौ निवृत्तः पुरुषानृते । न वै कुमारि तत् तथा यथा कुमारि मन्यसे २
निगृह्य कर्णकौ द्वौ निरायच्छसि मध्यमे । न वै कुमारि तत् तथा यथा कुमारि मन्यसे ३
उत्तानायै शयानायै तिष्ठन्ती वाव गूहसि ।
न वै कुमारि तत् तथा यथा कुमारि मन्यसे ४
श्लक्ष्णायां श्लक्ष्णिकायां श्लक्ष्णमेवाव गूहसि ।
न वै कुमारि तत् तथा यथा कुमारि मन्यसे ५ ३७२५
अवश्लक्ष्णमिव भ्रंशदन्तर्लोममति ह्रदे । न वै कुमारि तत् तथा यथा कुमारि मन्यसे ६

॥८॥ (अथर्व० २०।१३४।१—६)

इहेत्थ प्रागपागुदगधराग् – अरालागुदभर्त्सथ १
इहेत्थ प्रागपागुदगधराग् – वत्साः पुरुषन्त आसते २
इहेत्थ प्रागपागुदगधराग् – स्थालीपाको वि लीयते ३
इहेत्थ प्रागपागुदगधराग् – स वै पृथु लीयते ४(४१०)
इहेत्थ प्रागपागुदगधराग् – आष्टे लाहणि लीशाथी ५
इहेत्थ प्रागपागुदगधराग् – अक्ष्लिली पुच्छिलीयते ६

॥९॥ (अथर्व० २०।१३५।१-१३)

भुगित्यभिगतः शलित्यपक्रान्तः फलित्यभिष्ठितः ।
दुन्दुभिमाहननाभ्यां जरितरोथामो दैव १
कोशबिले रजनि ग्रन्थेर्धानमुपानहि पादम् ।
उत्तमां जनिमां जन्यानुत्तमां जनीन् वर्त्मन्यात् २
अलाबूनि पृषातकान्यश्वत्थपलाशम् ।
पिपीलिकावटश्वसो विद्युत्स्वापर्णशफो गोशफो जरितरोथामो दैव ३ ३७३५
वीमे देवा अक्रंसताध्वर्यो क्षिप्रं प्रचर । सुसत्यमिद् गवामस्यसि प्रखुदसि ४
पत्नी यदृश्यते पत्नी यक्ष्यमाणा जरितरोथामो दैव ।
होता विष्टीमेन जरितरोथामो दैव ५
आदित्या ह जरितराङ्गिरोभ्यो दक्षिणामनयन् ।
तां ह जरितः प्रत्यायंस्तामु ह जरितः प्रत्यायन् ६
तां ह जरितर्नः प्रत्यगृभ्णंस्तामु ह जरितर्नः प्रत्यगृभ्णः ।
अहानेतरसं न वि चेतनानि यज्ञानेतरसं न पुरोगवामः ७
उत श्वेत आशुपत्वा उतो पद्याभिर्यविष्ठः । उतेमाशु मानं पिपर्ति ८(४३०)
आदित्या रुद्रा वसवस्त्वेनु त इदं राधः प्रति गृभ्णीह्यङ्गिरः ।
इदं राधो विभु प्रभु इदं राधो बृहत् पृथु ९
देवा ददत्वासुरं तद् वो अस्तु सुचेतनम् । युष्माँ अस्तु दिवेदिवे प्रत्येव गृभायत १०
त्वमिन्द्र शर्मरिणा हव्यं पारावतेभ्यः । विप्राय स्तुवते वसुवनिं दुरश्रवसे वह ११
त्वमिन्द्र कपोताय च्छिन्नपक्षाय वञ्चते । श्यामाकं पक्वं पीलु च वारस्मा अकृणोर्बहुः १२
अरंगरो वावदीति त्रेधा बद्धो वरत्रया । इरामह प्रशंसत्यानिराममप सेधति १३ ३७४५

॥१०॥ (अथर्व० २०।१३६।१-१६)

यदस्या अंहुभेद्याः कृधु स्थूलमुपातसत् । मुष्काविदस्या एजतो गोशफे शकुलाविव १
यदा स्थूलेन पससाणौ मुष्का उपावधीत् । विष्वञ्चा वस्या वर्धतः सिकतास्वेव गर्दभौ २
यदाल्पिकास्वल्पिका कर्कन्धुकेवपद्यते । वासन्तिकमिव तेजनं यन्त्यवाताय वित्पति ३
यद् देवासो ललामगुं प्रविष्टीमिनमाविषुः ।
सकुला देदिश्यते नारी सत्यस्याक्षिभुवो यथा ४
महानग्न्यतृप्नद्वि मोक्रदुदस्थानासरन् । शक्तिकानना स्वचमशकं सक्तु पद्यम ५(४४०)
महानग्न्युलूखलमतिक्रामन्त्यब्रवीत् । यथा तव वनस्पते निरघ्नन्ति तथैवति ६
महानग्न्युप ब्रूते भ्रष्टोऽथाप्यभूभुवः । यथैव ते वनस्पते पिप्पति तथैवति ७
महानग्न्युप ब्रूते भ्रष्टोऽथाप्यभूभुवः । यथा वयो विदाह्य स्वर्गे नमवदह्यते ८
महानग्न्युप ब्रूते स्वसावेशितं पसः । इत्थं फलस्य वृक्षस्य शूर्पे शूर्पं भजेमहि ९
महानग्नी कृकवाकं शम्यया परि धावति ।
अयं न विद्म यो मृगः शीर्ष्णा हरति धाणिकाम् १० ३७५५
महानग्नी महानग्नं धावन्तमनु धावति । इमास्तदस्य गा रक्ष यभ मामद्ध्यौदनम् ११
सुदेवस्त्वा महानग्नीर्बबाधते महतः साधु खोदनम् । कुसं पीवरो नवत् १२
वशा दुग्धामिमाङ्गुरिं प्रसृजतोऽग्रतं परे । महान् वै भद्रो यभ मामद्ध्यौदनम् १३
विदेवस्त्वा महानग्नीर्विबाधते महतः साधु खोदनम् ।
कुमारिका पिङ्गलिका कार्द भस्मा कु धावति १४
महान् वै भद्रो बिल्वो महान् भद्र उदुम्बरः ।
महाँ अभिक्त बाधते महतः साधु खोदनम् १५(४५०)
यः कुमारी पिङ्गलिका वसन्तं पीवरी लभेत् । तैलकुण्डमिमाङ्गुष्ठं रोदन्तं शुदमुद्धरेत् १६

॥ इति कुन्तापसूक्तानि ॥

१३८ अथ महानाम्न्यार्चिकः ।

(६४१—६५०) प्रजापतिः । इन्द्रस्त्रैलोक्यात्मा ।

विदा मघवन् विदा गातुमनुशँसिषो दिशः ।
शिक्षा शचीनां पते पूर्वीणां पुरूवसो १
आभिष्ट्वमभिष्टिभिः स्वऽ३र्नाँशुः । प्रचेतन प्रचेतयेन्द्र द्युम्नाय न इषे २
एवा हि शक्रो राये वाजाय वज्रिवः ।
शविष्ठ वज्रिन्नृञ्जसे मँहिष्ठ वज्रिन्नृञ्जसँ आ याहि पिब मत्स्व ३
विदा राये सुवीर्यं भुवो वाजानां पतिर्वशाँ अनु ।
मँहिष्ठ वज्रिन्नृञ्जसे यः शविष्ठः शूराणाम् ४ ३७६५
यो मँहिष्ठो मघोनामँशुर्न शोचिः ।
चिकित्वो अभि नो नयेन्द्रो विदे तमु स्तुहि ५
ईशे हि शक्रस्तमूतये हवामहे जेतारमपराजितम् ।
स नः स्वर्षदति द्विषः क्रतुश्छन्द ऋतं बृहत् ६
इन्द्रं धनस्य सातये हवामहे जेतारमपराजितम् ।
स नः वस्र्षदति द्विषः । स नः स्वर्षदति द्विषः ७
पूर्वस्य यत्ते अद्रिवोऽशुर्मदाय । सुम्न आ धेहि नो वसो पूर्तिः शविष्ठ शस्यते ।
वशी हि शक्रो नूनं तन्नव्यं संन्यसे ८
प्रभो जनस्य वृत्रहन्त्समर्येषु ब्रवावहै । शूरो यो गोषु गच्छति सखा सुशेवो अद्वयुः ९(६५०)

अथ पञ्चपुरीषपदानि ।

एवाह्यो ३ऽ३ऽ३ व । एवा ह्यग्ने । एवाहीन्द्र ।
एवा हि पूषन् । एवा हि देवाः । ओम् । एवा हि देवाः । ओम् ॥ १०

॥ इति पञ्च पुरीषपदानि ॥ इति महानाम्न्यार्चिकः समाप्तः ॥

इति दैवत-संहितायां

॥ तृतीयो भागः समाप्तः ॥